अलैक्ज़ैण्डर कुप्रिन की अमर कृति

"YAMA : THE PIT" का हिन्दी रूपान्तर

गाड़ीवालों का कटरा

अनुवादक : चंद्रभाल जौहरी

—संपादक—

श्रीपतराय

बनारस

सरस्वती प्रेस

समर्पण

उन बन्धुओं को

जो स्वतंत्रता की लड़ाई में पड़कर अपनी काम-वासनाओं को स्वतंत्र कर बैठे हैं ;

जो अपने मन में अपने आपको शायद क्रान्तिकारी समझते हैं, परन्तु वे वास्तव में पुराने घाघपन्थी और लोलुप हैं ;

जो 'क्रान्ति क्रान्ति' कहकर हमारे कान खाये लेते हैं, परन्तु स्वयं स्त्रियों के प्रति अपनी मनोवृत्ति में वैसे ही दक़ियानूस हैं ;

जो जायदाद के विरोधी तो हैं, परन्तु स्त्रियों के साथ ऐसा व्यवहार करते हैं मानो वह उनके इस्तेमाल के फर्नीचर हों ;

जो अपने आपको वीर और उदार मानते हैं, परन्तु एक ग़रीब बहिन की बेबसी का फ़ायदा उठाकर कुछ पैसे देकर, उसका सर्वस्व हरने में नहीं झिझकते ;

जो उस बोहरे को तो नीच समझते और उसके विरोध में कानून बनाते हैं जो एक ग़रीब किसान को कुछ रुपया देकर सूद में उसका खेत, खलिहान या बैल लेने का प्रयत्न करता है, परन्तु

जो उस गन्दे व्यापार के विरुद्ध कोई कानून नहीं बनाते जिसमें कुछ रुपये देकर माताओं का मातृत्व, बहिनों का बहिनपन और पत्नियों का सतीत्व ले लिया जाता है ; बल्कि,

जो अपने आपको देश-भक्त और क्रान्तिकारी मानते हुए भी स्वयं इस पाप में भाग लेते हैं ;

जो स्त्रियों को देखते ही आँख, मुँह और मनोवृत्ति उस चमार की-सी बनाने लगते हैं जो गाय के चमड़े का ग्राहक होता है, दूध का नहीं ;

जो अपनी हँसी-मज़ाक, व्यवहार और हर बात से उस मातृत्व का दिन रात अपमान करते हैं जिसको भगवान ने स्त्री का सुन्दर रूप दिया है ;

जो भगवान के उस रहस्यपूर्ण सौन्दर्य का, जिसका नाम स्त्रीत्व है, भेद न समझने से उसे तोड़-मरोड़कर और नष्ट करके उसी तरह देखने का प्रयत्न करते हैं जिस तरह अबोध नन्हें बच्चे खिलौनों को तोड़-फोड़कर उनका रहस्य जानने का प्रयत्न करते हैं ;

जो शायद अभी तक अपने पाप को पूरी तरह नहीं समझते ;

जो अपने आपको समाज का स्तम्भ, शिक्षित और सभ्य समझते हैं ;

जो समाज में उथल-पुथल मचाकर मानव-समाज की गन्दगियाँ दूर करना चाहते हैं

अलेक्ज़ैण्डर कुप्रिन की महाकृति का यह
हिन्दी स्वरूप समर्पित है।

इस आशा से कि इस उपन्यास के सच्चे और हृदयविदारक चित्र देखकर वेश्यावृत्ति का वास्तविक चित्र उनके और हमारे सभी के हृदय में अङ्कित हो जाये जिससे वह और हम मिलकर इस घोर सामाजिक रोग को अपनी पवित्र मातृभूमि से शीघ्र से शीघ्र नेस्तोनाबूद कर दें।

मूल लेखक की प्रस्तावना

इस उपन्यास की रूसी, फ्रान्सीसी, जरमन, स्पेनिश, इटालियन, जापानी, स्वीडिश, फिनिश, नारवीजियन, बोहीमियन, हन्गारियन, अंगरेजी, पोलिश, लिथूआनियन और दुनिया की लगभग सभी दूसरी भाषाओं में बीस लाख से अधिक प्रतियाँ बिक चुकी हैं।

इस पुस्तक की इतनी अधिक सफलता का कारण यह नहीं कहा जा सकता कि लोगों को केवल वेश्याओं का जीवन जानने का अस्वस्थ शौक है। मुझे विश्वास है इस उपन्यास को पढ़कर बहुत से आदमियों ने वेश्यावृत्ति की समस्या पर सहानुभूति-पूर्ण विचार किया है और करेंगे।

परन्तु लेखक को अपने इस उपन्यास पर कभी सन्तोष नहीं हुआ।

सचमुच मनुष्य-समाज के सामने बहुत-सी ऐसी कठिन, भयङ्कर और असाध्य दीखनेवाली समस्याएँ हज़ारों वर्षों से हैं, जिनके बोझ से उसकी कमर झुककर टूट रही है, जिनके कारण वह कभी-कभी तो झुककर पशु समाज की तरह नीच दीखने लगता है। युद्ध, वेश्यावृत्ति; फाँसी, अधपेट मज़दूरी के लिए तनतोड़ मेहनत, थोड़े से खाते-पीते लोगों का अधिकतर भुखमरे लोगों पर अधिकार इत्यादि मनुष्य समाज की ऐसी ही भयङ्कर समस्याएँ हैं।

परन्तु इन सब में स्त्री के शरीर का व्यापार, स्त्री के उस प्रेम का व्यापार जो कि भगवान की मनुष्य-जाति को सबसे उच्चतम देन है, मुझे सबसे बुरा लगता है। मुझे लगता है कि मनुष्य समाज की इस पुरानी बीमारी का इलाज भी आसानी से किया जा सकता है। मैं सोचता हूँ मनुष्य से कहने की ज़रूरत है कि,

'देखो भाई, तुम्हारे घर में भी एक सफ़ेद बालों की बूढ़ी दादी है जिससे तुमने बचपन में पहिले-पहिल लोरियाँ और कहानियाँ सुनी थीं, और जो अब तुम्हारे घर की छत्र और अभिमान है। तुम्हारे घर में भी एक मा है जिसके स्तनों का मीठा-मीठा दूध तुम बचपन में लोभ और आनन्द से अपना सिर उसकी छाती में घुसेड़कर

पिया करते थे। तुम्हारे घर में भी एक पत्नी है जो तुम्हारे बच्चों की जननी और तुम्हारे कुल की गृहिणी है। तुम्हारे घर में भी एक छोटी-सी बहिन है जिसका मधुर स्वर कोयल के सङ्गीत की तरह तुम्हारे कानों में गूजता है। इस बात के विचारमात्र से ही कि तुम्हारी प्यारी छोटी बहिन के सामने कोई बुरे शब्द मुँह से निकाले या बुरे हावभाव करे, तुम्हारी आँखों में खून उतर आता है और तुम्हारे जबड़े कांप उठते हैं और कोई ऐसी हरकत आपकी लाड़ली बेटी के सामने करने की कहीं हिम्मत करे तो फिर कहना ही क्या !

'परन्तु फिर भी आप बाज़ार में बैठनेवाली स्त्रियों के पास अपने रुपये ठनकाते हुए उनका प्रेम खरीदने के लिए जाने की हिम्मत करते हैं—उस प्रेम को खरीदने के लिए जिसका परिणाम और एकमात्र उद्देश्य नवजीवन का संचार है जो कि भगवान की सबसे रहस्यपूर्ण लीला है।

'आप कहेंगे कि आप तो बाज़ार में बैठनेवाली ऐसी स्त्रियों के पास जाते हैं जो पतित हैं, परन्तु आपने कभी यह भी सोचने का कष्ट किया है कि वे क्यों पतित हैं ? क्या यह सच नहीं है कि जिन स्त्रियों को आप पतित कहते हैं यदि उनको बचपन और जवानी में अच्छा लालन-पालन, स्नेह का बर्ताव और उचित शिक्षा मिली होती तो वे भी आज आपके घर में बैठनेवाली मा, आपकी स्नेहमयी बहिन और आपकी लाड़ली पुत्री की तरह ही ऊँची और पवित्र होतीं ?

'अथवा आप यह सोचते होंगे कि मेरा घर और बात है और दूसरे का घर और बात। दूसरे के घर से आपको क्या मतलब ? अगर आप ऐसा सोचते हैं तो क्या आपने कभी यह भी सोचने का कष्ट किया है कि आपमें और हिंसक पशु में ऐसी अवस्था में क्या फर्क रह जाता है ? आप यह क्यों भूल जाते हैं कि आप एक समाज में रहते हैं जिसका कायम रहना आपके हिंसक विचारों पर असम्भव है ! और आप यह कैसे भूलते हैं कि आप अपने आपको शिक्षित, शिष्ट और धार्मिक भी कहते हैं ?

'यह भी याद रखिए कि जिस समय आप अपनी पशुवृत्ति को पूरा करके वेश्या के घर से चलने लगते हैं उस समय आपके मन में आत्मग्लानि होती है और आप उस वेश्या से जिसे आप अधम समझते हैं, कहीं अधम होते हैं, क्योंकि आप जीवन में ग़रीबी और अमीरी के अभागे फर्क का फ़ायदा उठाकर एक स्त्री का सर्वस्व ?

तरह लूटते हैं जिस तरह कोई अन्धे को लूटता है, अथवा किसी अपाहिज के मुंह पर थप्पड़ मारता है अथवा किसी बालक को छलता है…'

मैंने, जो कुछ मैं जानता था और जो कुछ मैं लिख सकता था, वेश्यावृत्ति के विरुद्ध लिखा है। परन्तु मुझे कोई ऐसा अचूक नुसखा इस रोग के विरुद्ध नहीं मिला है जो मैं आपको बता दूँ। मैं तो सिर्फ इतना ही जानता हूँ कि वेश्यावृत्ति स्त्रियाँ खुशी से नहीं करतीं, मजबूरी से करती हैं। ग़रीबी, अज्ञान और प्रलोभन के कारण और रोटी पाने का और कोई ज़रिया न होने से ही स्त्रियों को यह अधम पेशा करना पड़ता है; अस्तु इन कारणों का जिक्र करना और इस अधम व्यवसाय और जीवन का हाल लिखना मैंने व्यर्थ नहीं समझा। मैं समझता हूँ सच्ची बातों और सच्चे दृश्यों का चाहे वह कितने ही भयंकर क्यो न हों, मनुष्य पर सच्चा ही असर होता है।

एक बार मैं सैण्टपीटर्सबर्ग से क्रीमिया को जा रहा था। रास्ते में, रेलगाड़ी में कुछ नौवजवान इन्जीनियरों ने मुझे पहिचान लिया और मुझसे कुछ वार्तालाप करने की इजाज़ेत चाही। बातचीत में वे कहने लगे :

'देखिए, आप वेश्यावृत्ति का विरोध तो करते हैं, परन्तु जवानी में आदमी को कामदेव मतवाला करता है। उस समय की काम-वासना की तृप्ति के लिए आप कौन-मार्ग दिखाते हैं?'

मैं जो मार्ग जानता था उन्हें दिखाने लगे :

'चौकी या कठोर चारपाई पर सोइए। खुरखुरी चादर बिछाइए, गुदगुदी या चिकनी नहीं। इतने कपड़े न ओढ़िए कि शरीर अधिक गरम हो जाय। सोने का कमरा खुला, हवादार और ठण्ढा होना चाहिए। नींद गहरी लेनी चाहिए, परन्तु अधिक देर तक नहीं। सुबह को जल्द उठना चाहिए, ठण्ढे पानी से स्नान करना चाहिए। खाना सादा और कम मसाले का हो। हो सके तो बिना मसाले का खाना चाहिए। अच्छा साहित्य, ओजस्वी और वीरतापूर्ण पढ़ना चाहिए। खूब परिश्रम करना चाहिए और खुली हवा में खेलना चाहिए। लड़के और लड़कियों की सहपाठशालाएँ होनी चाहिए जिनमें उन्हें साथ-साथ पढ़ना चाहिए। पच्चीस वर्ष की उम्र के लगभग विवाह हो जाना चाहिए।'

नौजवानों ने उत्तर में मुझसे कहा :

'यह सब तो हम भी जानत ह, परन्तु इन उपायों से मुख्य समस्या तो हल नहीं होती। कामवासना की तृप्ति के लिए आप कौन सा मार्ग बताते हैं ?'

इस पर मुझे क्रोध आ गया और मैंने भी उन्हे वही कठोर उत्तर दिया जो कि एक बार टाल्सटाय ने दिया था।

एक बार रूसी पढे-लिखे आदमियों की एक बड़ी सभा में टाल्सटाय अपने समय की रूसी सरकार की कड़ी आलोचना कर रहा था। एक नौजवान ने उठकर उससे प्रश्न किया :

'अच्छा टाल्सटाय, मान लो कि जैसा तुम कहते हो यह सरकार बिलकुल वैसी ही निकम्मी है और यह नष्ट कर डालने के योग्य है, परन्तु इसको नष्ट करने के बाद इसके स्थान पर तुम हमें क्या दोगे ?'

टाल्सटाय ने जलकर कहा :

'मान लो कि आपको, भगवान न करे ऐसा हो, आतशक हो जाती है। आप आकर मुझसे कहते हैं कि मुझे यह बुरी बीमारी हो गई है और मैं आपसे फौरन डाक्टर से जाकर इलाज कराने को कहता हूँ। इस पर आप मुझसे पूछते हैं, 'पर यह तो बताइये कि डाक्टर के यहाँ जाकर मैं इस बीमारी से तो मुक्त हो जाऊँगा परन्तु आतशक के स्थान में फिर आप मुझे देंगे क्या ?' मैं मानता हूँ भाई साहब, आपके ऐसे प्रश्न का उत्तर देना मुझे कठिन हो जायेगा...'

यही हाल मेरा भी है। मैंने, जैसा सच्चा वर्णन वेश्यावृत्ति का मैं कर सकता था, करने का प्रयत्न किया है। परन्तु मेरी कृति को पूर्ण स्वरूप में निकलने का अवकाश नहीं मिला। पुरानी रूसी सरकार के दक़ियानूस और छिपाने-लुकाने में विश्वास रखने-वाले अधिकारियों ने मेरी पुस्तक को छपने से पहिले ही इतना काटा-छाँटा को उसकी शक्ल ही बिलकुल बदल गई। उसी प्रकार सामाजिक बीमारियों को छिपा रखने में विश्वास रखनेवाली रूसी प्रजा पर भी मेरी वह पुस्तक एक बमगोले की तरह गिरी। हज़ारों गालियों से भरे गुमनाम खत मुझे मेरे रूसी भाइयों ने भेजे जिनका अधिक-तर आशय यह होता था कि मैंने इस उपन्यास को लिखकर समाज की नींव हिलाने का और घासलेटी साहित्य से नौजवानों की बुद्धि भ्रष्ट करने का प्रयास किया है। बहुत-से आदमियों ने मेरे इस सच्चे प्रयास को समझने का कोई प्रयत्न नहीं किया। सबसे पहिले इस उपन्यास के सम्बन्ध में स्नेहपूर्ण और मुझे उत्साहित करनेवाले पत्र

मेरे पास काफ़ी उम्र की समझदार और दुनियादार स्त्रियों के और ऐसे ईमानदार नौजवानों और युवतियों के आये जो अपनी अति काम-वासना पर सचमुच भयभीत और चकित होते थे। कुछ पत्र बाजारू वेश्याओं के भी मेरे पास आये जिनकी भाषा तो ग़लत-सलत ज़रूर थी मगर भाव बड़े ऊँचे और गहरे थे। ये पत्र मेरी निधि हैं जिनको सँभालकर मैंने अपने पास रख लिया है। और सबसे विचित्र बात यह हुई कि अपने इस उपन्यास के सम्बन्ध में मुझे सन्तोष तब मिला जब मैं पेरिस में प्रवासी था और फ्रान्सीसी भाषा में इस उपन्यास का पहिले-पहिल अनुवाद निकला। फ्रान्सीसी अखबारों और प्रजा ने मेरे इस दुखी उपन्यास का बड़ा अच्छा स्वागत किया और इसे अपनाया। आलोचकों ने इस उपन्यास की आलोचनाओं में, फ्रान्सीसी आलोचना के बारीक ढङ्ग पर, इस उपन्यास की त्रुटियाँ भी बतलाईं, परन्तु सबने एक स्वर से यह माना कि इस उपन्यास में कई भोंडी और विचित्र बातें होते हुए भी यह ग्रन्थ पूर्ण रूप से नैतिक है और पाठकों की आवश्यकताओं को पूरा करता है क्योंकि इसमें मनुष्य-समाज के लिए समवेदना है।

पहिली बार अपने उपन्यास के बारे में ऐसी सम्मति पेरिस में सुनकर मैंने सन्तोष से साँस ली थी और अब मुझे इस बात पर खुशी हो रही है कि आखिकार मुझे अपने इस उपन्यास 'यामा' को पूर्णरूप में प्रकाशित होते देखने का मौक़ा मिल रहा है जो कि आज तक मेरे देश के अधिकारियों की कृपा से कभी अपने पूर्णरूप में प्रकाशित न हो पाया।···मुझे इस बात पर भी बड़ा ही सन्तोष हो रहा है कि इसका अनुवाद एक ऐसे अनुवादक के हाथ से निकल रहा है जो सहानुभूतिपूर्ण और इस काम के सर्वथा योग्य हैं और जिनके इस उपन्यास के सफल अनुवाद पर मुझे पूर्ण विश्वास है।

—अलैक्ज़ैण्डर कुप्रिन

प्रस्तावना

अलैक्ज़ैण्डर कुप्रिन के जगत-प्रख्यात रूसी उपन्यास 'यामा' का, जिसको रूसी, फ्रान्सीस, जरमन, स्पेनिश, इटालियन, जापानी, स्वीडिश, फिनिश, नारवीजियन, बोहीमियन, हन्गारियन, अंगरेजी, पोलिश, लिथूआनियन और दुनिया की लगभग सभी भाषाओं में बीस लाख से अधिक प्रतियाँ बिक चुकी हैं, हिन्दी संस्करण पाठकों की सेवा में उपस्थित है। इस उपन्यास का अमर मूल लेखक अपनी प्रस्तावना में लिखता है कि, 'मनुष्य समाज के सामने बहुत-सी ऐसी कठिन, भयकर और असाध्य दीखनेवाली समस्याएँ हज़ारों वर्षों से हैं जिनके बोझ से उसकी कमर झुककर टूट रही है और जिनके कारण वह कभी-कभी तो इतना झुक जाता है कि बिल्कुल पशु समाज की तरह नीचा दीखने लगता है। युद्ध, वेश्यावृत्ति, फांसी, अधपेट मजदूरी के लिए तनतोड़ मेहनत, थोड़े से खाते-पीते लोगों का अधिकतर भुख-मरे लोगों पर अधिकार इत्यादि मनुष्य समाज की ऐसी ही भयङ्कर समस्याएँ हैं।' इन समस्याओं में दो समस्याएँ मनुष्य की दो मुख्य और मूल समस्याएँ लगती हैं, जिनके उचित समाधान पर हमारा सबका बहुत कुछ सुख-दुख निर्भर है। एक तो रोटी की समस्या जिसको हल करने के लिए आज अधिकतर मनुष्यों को अधपेट मज़दूरी के लिए तनतोड़ मेहनत करनी होती है और जो थोड़े से खाखे-पीते लोगों का अधिकतर भुखमरे लोगों पर अधिकार हो जाने से इतनी भयङ्कर बन गई है कि मनुष्य-समाज में चारों तरफ कलह ही कलह दीखता है जिसमें 'युद्ध' और 'फाँसियों' की नौबत आती है। दूसरी समस्या कामदेव की है जिसके बारे में कहा जाता है कि पूर्णरूप से भस्मीभूत उसको केवल एक शंकर भगवान ही कर सके हैं जो ताण्डव नृत्य करके अन्त में सृष्टि का संहार करते हैं।

'हंस पुस्तक माला' में पहिली पुस्तक मैक्सिम गोर्की की महाकृति 'मा' उपन्यास का मेरा किया हुआ हिन्दी स्वरूप आपके सामने रखा गया था जो कि 'रोटी की समस्या', 'अधपेट मजदूरी के लिए तनतोड़ मेहनत' और थोड़े से खाते-पीतों के अधिकतर भुखमरों पर अधिकार और उससे मुक्त होने के प्रयत्नों का एक अद्वितीय

चित्र था। उसी 'हंस माला' की तीसरी संख्या में आपके सामने एक दूसरे रूसी महाकलाकार अलैक्ज़ैण्डर कुप्रिन के उपन्यास 'यामा' का हिन्दी स्वरूप जिसमें कि मनुष्य समाज की दूसरी समस्या कामदेव और रोटी की समस्या से उत्पन्न होनेवाले मानव जाति के एक अत्यन्त अधम और प्राचीन रोग— वेश्यावृत्ति—के अद्वितीय और हृदय-विदारक चित्र हैं, आपके सामने रखा जाता है।

उपन्यास के मूल लेखक का विचार है कि वेश्यावृत्ति शरीर बेचनेवाली अभागी स्त्रियों के लिए रोटी की समस्या है और उन अभागिनियों का शरीर खरीदनेवालों के लिए उनकी अति-काम-वासना अर्थात् कामदेव की समस्या है। एक भूख से दुःखी मनुष्य आपके नन्हें बालक को सड़क पर सोने के कड़े पहिने जाता देखता है। वह कई दिन का भूखा है। दोपहर का समय है। सड़क पर आपका बच्चा अकेला ही जा रहा है। उस भूखे आदमी के सिवाय सड़क पर दूसरा कोई नहीं है। उसे लालच होता है और वह बालक के हाथ से सोने के कड़े उतारने लगता है। बालक चिल्ला-कर किसी को बुला न ले इस डर से वह उसके मुँह में कपड़ा ठूँस देता है जिससे [illegible] गिर पड़ता है और वह आदमी कड़े लेकर भाग जाता है। पकड़े जाने [illegible]से आदमी को हमारा समाज फाँसी देता है क्योंकि अपने पेट की आग बुझाने के लिए भी समाज किसी को किसी के बालक के कड़े छीन लेने अथवा उसे मार डालने का अधिकार नहीं मानता। ऐसा अधिकार सबका मान लिया जाये तो समाज का क़ायम रहना ही असम्भव हो जायेगा; तो फिर क्या किसी को अपनी अति-काम-वासना की भूख बुझाने के लिए किसी बच्ची को पैसे देकर अथवा ऐसे-वैसे मार्ग पर डाल देने का अधिकार है जो उसका जीवन सदा के लिए गन्दा और नारकीय बना दे—ऐसा जीवन जिससे मृत्यु कहीं अधिक अच्छी हो? लेखक आपको इस अद्वितीय उपन्यास में दिखाता है कि जो आज समाज में अधम और नीच समझी जानेवाली वेश्याएँ हैं, वे वेश्याएँ कैसे बनती हैं, कौन उन्हें वेश्या बनाता है? कौन उन्हें यह नारकीय जीवन व्यतीत करने के लिए मज़बूर करता है?

हमारे समाज के वे भद्र समझे और कहे जानेवाले पुरुष ही जो अपनी अति-काम-वासना को तृप्त करने के लिए मासूम बच्चियों को कुमार्ग पर ले चलते हैं या धन की सहायता से अपनी कामना को तृप्त करना चाहते हैं, वास्तव में वेश्यावृत्ति के लिए जिम्मेदार हैं। निस्सन्देह समाज के उन भद्र पुरुषों को, जो रुपया देकर अपनी काम-

वासनाओं को तृप्त करने के लिए बाज़ार में प्रेम खरीदना चाहते हैं, माँगें पूरी करने के लिए ही समाज में वेश्यावृत्ति का धन्धा चलता है जो कि कपड़ा बेचने, आटा-दाल या मिठाई बेचने या घोड़े-गायें, बकरियाँ बेचने की तरह ही एक धन्धा है। इस धन्धे की पेढ़ियाँ और दूकानें हैं जो चकले कहलाते हैं। चकलों के मालिक और मालकिनें दूसरे दूकानदारों की तरह बैठकर निस्सहाय, मूर्ख और छली हुई छोकरियों के शरीर दिन दहाड़े हमारे सभ्य कहलानेवाले समाज में खरीदते और बेचते हैं। इस व्यापार के आमतौर पर बड़े शहर होते हैं जहाँ भोली-भाली, नयी और पुरानी छोकरियों को भेड़-बकरियों की तरह ला-लाकर दलाल बेचते और अदलते-बदलते हैं और खूब रुपया कमाते हैं।

यह धन्धा बड़ा पुराना है और अभी तक केवल इसी लिए यह समाज में कायम है कि समाज के कुछ लोग अपनी अति-काम-वासना को पूरा करने के लिए इसे क़ायम रखना चाहते हैं। समाज की गन्दगी को बहाकर ले जाने के लिए कुछ मोरियों की जरूरत है। अतएव कुछ मानव शरीरों से, जिनको पाना दुर्लभ माना गया है, जबरदस्ती इन मोरियों का काम लिया जाता है। आप कहेंगे कि जबरदस्ती कहाँ है? आप धन देते हैं जिसके एवज में वेश्याएँ खुशी से आपको अपना प्रेम देती हैं; आप धन देते हैं यह सच जरूर है और आपके धन के लिए, जिससे वे बेचारी अपना निर्वाह चलाती हैं, वेश्याएँ आपको अपना शरीर देती हैं यह भी सच है, परन्तु वे ख़ुशी से आपको अपना शरीर देती हैं या आप से प्रेम करती हैं यह बिल्कुल ग़लत है। आप के धन में सच्चे प्रेम को खरीदने की शक्ति नहीं हैं। दिखावे के लिए, अपने ग्राहकों को खुश रखने के लिए जिससे उनका धन्धा चलता रहे, वेश्याएँ प्रेम का बहाना करतीं हैं, परन्तु वास्तव में वे धन लेकर भी आप से घृणा ही करती हैं। यह सत्य आप नहीं जानते तो इस उपन्यास को पढ़कर जान जायेंगे।

वेश्यावृत्ति का सबसे बुरा पहलू, जैसा कि मूल लेखक लिखता है, यह है कि हमारा सबका कुछ ऐसा विश्वास-सा हो गया है कि वेश्यावृत्ति हमेशा से संसार में रही है और रहेगी; अतएव हम इस भयङ्कर संस्था, इस अधम सामाजिक रोग की तरफ़ उतना ध्यान नहीं देते जितना हमें देना चाहिए। एक विद्वान और बड़े भारतीय आदमी की विदुषी और समझदार पत्नी से कुछ रोज हुए एक भारतीय विद्वान् और लेखक मिलने गये थे। बात ही बात में वेश्यावृत्ति की चर्चा चल पड़ी। विदुषी ने, जैसा

हमारा सबका विचार है, कहा कि वेश्यावृत्ति समाज का एक जरूरी अङ्ग है जिसका समाज की रक्षा के लिए रहना ज़रूरी है। इस पर वे विद्वान् वहाँ से तुरन्त उठकर चल दिये क्योंकि एक भारतीय महिला के मुँह से उन्हें ऐसे शब्द सुनाना गवारा नहीं हुए, परन्तु उस बेचारी ने ऐसी नई बात कौन-सी कही थी। हम और आप रोज़ यही कहते हैं। उसका ध्यान भी उसी तरह केवल अपने घर की रक्षा पर था जैसा कि हमारा आपका रहता है। यह ध्यान उन विदुषी को भी उसी तरह नहीं आया जैसा कि हमको आपको भी नहीं आता कि वह अपने घर की और समाज की रक्षा, मानव जाति के एक अङ्ग को सूली पर चढ़ाकर करना चाहती हैं। जिस प्रकार की दलीलें आज समाज में वेश्यावृत्ति को क़ायम रखने के लिए दी जाती हैं उसी प्रकार की दलीलें किसी ज़माने में गुलामी को प्रथा क़ायम रखने के लिए, बुर्दाफरोशी के हक़ में, और सती की प्रथा क़ायम रखने के लिए भी दी जाती थीं। मैं तो एक बार काशी में अखिल भारतीय सनातनधर्म सम्मेलन के मंच से, कई वर्ष हुए, एक विद्वान् शास्त्री के मुख से यह सुनकर दङ्ग रह गया था कि शास्त्रों के अनुसार अछूतों का रहना भी समाज के लिए जरूरी है। उन्होंने यह भी कहा था कि इन अछूतों को बस्ती से बाहर रहना चाहिए और उनके कपड़ों पर मल लगा रहना चाहिए। भगवान् की दया से, गान्धीजी के प्रयत्नों से हम लोग अब बहुत कुछ अछूतों को अछूत बनाये रखने के विरुद्ध हो गये हैं। इसी प्रकार वेश्यावृत्ति के सम्बन्ध में भी समाज की मनोवृत्ति बदली जा सकती है। ज़रूरत केवल इस बात की है कि हम यह अच्छी तरह समझ लें कि वेश्यावृत्ति का पुराना सामाजिक रोग भी उतना ही भयंकर है जितना कि गुलामी प्रथा और बुर्दाफरोशी थी, या अछूत समस्या है। सच तो यह है कि यह सामाजिक बीमारी उनसे भी कहीं अधिक क्रूर और अधमतर है। यही बात अलैक्ज़ैण्डर कुप्रिन ने अपना यह अद्वितीय उपन्यास लिखकर समझाने का प्रयत्न किया है। जिनका दिल और दिमाग़ बिलकुल ही सड़ और गल नहीं गया है उनकी समझ में यह बात कुप्रिन के इस अद्वितीय उपन्यास के हृदय-विदारक और सच्चे चित्र देखकर—हम समझते हैं—आसानी से आ जायेगी।

कुप्रिन ने अपने इस उपन्यास में वेश्यावृत्ति के सम्बन्ध में जो कुछ भी लिखा है वह भारतवर्ष के लिए भी वैसा ही सत्य है जैसा कि रूस अथवा किसी और देश के लिए। रूसी नाम और रूसी ज़मीन इस उपन्यास से हटाकर भारतीय नाम और

भारतीय ज़मीन रख दी जाय तो यह उपन्यास बिलकुल एक भारतीय उपन्यास हो सकता है। हाँ, मुझे एक स्थान पर शक अवश्य हुआ था—जहाँ पर कुप्रिन एक वेश्या के मुख से यह कहलवाता है कि पिता अपनी पुत्रियों और भाई अपनी बहनों तक को काम-वासना से पागल होकर खराब करते हैं। मैं सोचने लगा कि, 'मुमकिन है यूरोप में ऐसा होता हो, परन्तु हमारे धर्म प्रधान भारतवर्ष में ऐसा होना असम्भव है!' लेकिन फिर खोज करने पर शीघ्र ही धर्म-प्रधान भारतवर्ष का कच्चा चिट्ठा जानकर मैं दङ्ग रह गया। पता चला कि मेरे ही शहर के अनाथालय में कई स्त्रियाँ ऐसी थीं जिनके पिता और भाई उन्हें खराब करके, गर्भ रह जाने पर, छोड़ गये थे! अतएव, मैं समझता हूँ कि कुप्रिन ने जो कुछ भी इस उपन्यास में लिखा वह एक सार्वभौम सामाजिक रोग का प्रामाणिक और सच्चा चित्र है, जिसे देखकर हमारा हृदय द्रवित हो उठता है।

एक बात जानकर बड़ी खुशी और अभिमान भी हुआ। कुप्रिन-जैसा एक विदेशी विद्वान् भी अति काम-वासना के इलाज के लिए वही उपाय बता सका जो हमारे देश के विद्वानों ने अपने ब्रह्मचर्यव्रत-पालन के लिए बताये हैं। पाश्चात्य यान्त्रिक-सभ्यता हर समस्या का हल यान्त्रिक ढग पर करने का प्रयत्न करती है; परन्तु कुप्रिन ने जो कि एक रूसी लेखक था और जिसने शायद 'यामा' लिखने के पहले न जाने कितने दिनों तक स्वय चकलों की खाक छानी होगी, अति काम-वासना का इलाज कोई कृत्रिम या यान्त्रिक ढङ्ग का नहीं बताया। उसने कहा कि इसका इलाज यही है कि, 'कठोर बिस्तर पर हवादार स्थान में सोओ, प्रातःकाल उठो, शीतल जल से स्नान करो, सादा भोजन खाओ, अच्छे विचार रक्खो और खूब परिश्रम करो इत्यादि' जो कि हमारे यहाँ ब्रह्मचय-पूर्ण जीवन बिताने के लिए ज़रूरी बताये गये हैं।

अति काम-वासना को तृप्ति के लिए कुप्रिन कोई मार्ग नहीं बताता। वह तो इसे अति भोजन की तरह एक बुरी आदत ही समझता है जिसका इलाज इसके सिवा और कुछ नहीं कि जिनकी आदत बिगड़ गई है वह उसे सँभालें और ठीक करें। उसका इलाज यह हरगिज़ नहीं हो सकता कि मनुष्य समाज के एक अङ्ग को कुछ लोगों की इस बुरी आदत को सन्तुष्ट रखने के लिए घोर नरक में रखा जाये। ऐसा करना महा अन्याय है। यही कुप्रिन अपने इस उपन्यास में दिखाने का प्रयत्न करता है। और यह अन्याय किसके साथ? अबोध बच्चियों के साथ—जो कि आमतौर पर, जैसा

कि आप इस उपन्यास में देखेंगे, वेश्याएँ बनाई जाती हैं। अन्याय किसके साथ! उस स्त्रीत्व के साथ जिसका सृष्टि में महान उद्देश्य मातृत्व है! क्या हम सचमुच सभ्य और शिष्ट हैं! अलेक्ज़ैण्डर कुप्रिन अपने इस उपन्यास के द्वारा हमारे सामने यह प्रश्न रखता है। पाठकवृन्द इस उपन्यास को पढ़िए, सोचिए और उत्तर दीजिए।

अलैक्ज़ैण्डर कुप्रिन का यह उपन्यास सचमुच एक अद्वितीय पुस्तक है क्योंकि इस विषय पर आज तक ऐसी महान् पुस्तक दुनिया में दूसरी कोई नहीं निकली। कुप्रिन की कला का तो कहना ही क्या! उसका मुकाबला कुछ लोग रूस के दूसरे संसार-प्रसिद्ध कहानी-लेखक चेखोव से करते है जो कि शायद दुनिया का सबसे अच्छा कहानी-लेखक था। ख़ैर, कुप्रिन चेखोव की बराबरी का हो या कम, परन्तु इसमें तो कोई सन्देह ही नहीं है कि वह एक दिग्गज कलाकार है जिसके चित्र गोर्की की तरह ही सादे, सच्चे, हृदय को मसोस डालनेवाले और भयंकर हैं। ऐसे चित्र शायद रूसी कलाकार ही खींच सकते हैं और ऐसा उपन्यास लिखना भी एक रूसी कलाकार का ही [illegible] मेरा तो मत है कि जिसकी आत्मा इस उपन्यास को पढ़कर काँप नहीं [illegible] उसको परमात्मा से आत्मा मिली ही नहीं—वह बिना आत्मा का मनुष्य है। [illegible]ह इस मशीन-युग की कृति भले ही हो, उस परमात्मा की कृति नहीं है जिसकी हर कृति में उसका थोड़ा-बहुत अंश अवश्य रहता है।

मैंने 'मा' के अनुवाद की प्रस्तावना में कहा था कि इस अनुवाद में जितना मेरा समय गया और उससे जो आर्थिक हानि हुई उससे अब मेरा हृदय ऐसा कोई दूसरा काम हाथ में लेने को नहीं होता, परन्तु मेरा वह विचार उस शराबी का-सा ही रहा जो बोतल को सामने देखकर 'एक जाम और' पीने लगता है। अस्तु, भाई श्रीपतरायजी ने जब कुप्रिन के 'यामा' के अनुवाद का प्रस्ताव मेरे सामने रखा तो मुझसे इनकार न हो सका। मैंने सोचा, 'अच्छा एक जाम और सही।' परन्तु ईश्वर से प्रार्थना है कि मुझे इस दौर का आदी न करे।

अनुवाद के सम्बन्ध में मुझे सिर्फ इतना ही कहना है कि मैंने इस अनुवाद को भी उसी ढङ्ग पर किया है जिस ढङ्ग पर 'मा' का अनुवाद किया था। कई स्थानों पर अनुवाद में तुकबन्दियाँ भी की गई हैं जो कि मूल उपन्यास में जो तुकबन्दियाँ है उन्हीं का निकट से निकट अनुवाद हैं। आशा है उन तुकबन्दियों को पाठक कविता की दृष्टि से देखने का प्रयत्न न करेंगे क्योंकि वह मूल में भी ऐसी ही तुकबन्दियाँ

हैं जो कि ऐसे स्थानों और ऐसे पात्रों के द्वारा कही जाती हैं जहाँ ऊँची कविता के लिए जगह नहीं होती। मूल उपन्यास का नाम 'यामा' हिन्दी में क़ायम रखने से कुछ भ्रम का डर था, और भी कई दिक़्क़तें थीं जिससे उसका एक प्रकार से अनूदित नाम 'गाड़ीवालों का कटरा' ही उचित जँचा, अतएव अलेक्जेण्डर कुप्रिन का महान् उपन्यास 'यामा' हिन्दी पाठकों की भेंट 'गाड़ीवालों के कटरे' के नाम से किया जाता है। इसका हिन्दी में नाम चकला भी हो सकता था, परन्तु उससे डर था कि बहुत से 'भले' आदमी शायद नाम देखते ही उपन्यास को छूने तक की हिम्मत न करते जिनके लिए वास्तव में यह उपन्यास है और यह उपन्यास हिन्दी में केवल ऐसे थोथले पाठक ही पढ़ते जिनके लिए यह उपन्यास नही है। इस उपन्यास के चित्र बड़े भयकर हैं, क्योंकि वे एक भयङ्कर सामाजिक रोग के सच्चे चित्र हैं। अशा है उन पर 'भले गदमी' नाक-भी न सिकोड़ेगे क्योंकि भयङ्करता के चित्र भयङ्कर और गन्दगी के चित्र दे ही हो सकते हैं। भयङ्करता के चित्र हृदय-ग्राही और गन्दगी के चित्र पवित्र ाना जीवन के प्रति झूठ है जिसके प्रख्यात रूसी कलाकार आदी नहीं हैं। अतएव. उनको, जो गणिका को स्वर्ग भेजने का प्रयत्न करते हैं और वेश्याओं से भी पातिव्रत धर्म की आशा रखते हैं, यह उपन्यास दिल थामकर पढ़ना पड़ेगा; परन्तु अगर उनके दिल सचमुच में है तो हम विश्वास दिलाते हैं, उसमें इस उपन्याम को पढ़कर उथल-पुथल मच जायगी।

—चन्द्रभाल जौहरी।

पहला अध्याय

बहुत दिन हुए; रेलें निकलने से पहले, व्यापारी और सरकारी शिकरमें हाकनेवाले गाड़ीवान रूस देश के एक दक्षिणी नगर के छोर पर रहा करते थे। पीढ़ियाँ दर पीढ़ियों से वह वहीं रहते चले आये थे। इसलिए इस भाग का नाम ही गाड़ीवालों का कटरा अथवा कटरा पड़ गया था। धीरे-धीरे शिकरमों के स्थान में सवारियाँ और माल जब रेलों पर जाने लगा तो इन गाड़ीवानों का व्यापार ठंडा पड़ गया और गाड़ीवानों की यह झगड़ालू जाति अपनी झगड़ालू आदतें छोड़कर दूसरे धन्धों में लग गई और इधर-उधर बिखर गई। फिर भी गाड़ीवालों के कटरे का नाम तो क़ायम ही रहा और वहाँ की हवा से नाचोरङ्ग, ख़ुमारी और झगड़े-टण्टों की बू आती रही, जिससे रात को इस कटरे को तरफ़ जाना भी खतरनाक समझा जाता था।

बाद में न जाने कैसे इस पुराने स्थान पर, जहाँ कि सिपाहियों को चंचल स्त्रि- और तगड़ी विधवाएँ शराब, ताड़ी और लुक-छिपकर कभी-कभी प्रेम की तिजारत भी किया करती थीं, धीरे-धीरे खुले चकले ही बनने लगे जो कि सरकारी नियमों के अनुसार सरकारी अफ़सरों की देख रेख में चलने लगे। कटरे के बीच की सड़क के दोनों ओर के सभी घरों में वेश्याएँ रहने लगीं। केवल चार-पाँच घर बीच में बच गये थे जो ताड़ीख़ाने, शराबख़ाने अथवा वेश्यावृत्ति सम्बन्धी दूसरी वस्तुओं की बिक्री के केन्द्र बन गये। कटरे में कुल मिलाकर करीब तीस घर होंगे। इन तीसों घरों का रहन-सहन और रङ्ग-ढङ्ग एक-सा ही था। फ़र्क़ सिर्फ़ इतना था कि क्षणिक प्रेम के प्यासे जो इन घरों में आते थे, उनसे किसी घर में कम और किसी में अधिक दाम लिये जाते थे। अस्तु बाहरी दिखावे और ठाट-बाट में इन घरों में फ़र्क़ था। किसी घर में देखने में अधिक सुन्दर स्त्रियाँ थीं और उनकी पोशाकों और उनके कमरों की चमक-दमक भी दूसरों से अधिक आकर्षक होती थी।

कटरे में घुसते ही बाईं तरफ के पहले मकान में ट्रेपेल नाम के व्यापारी का चकला था, जो कटरे के दूसरे चकलों से बढ़िया था। यह पुरानी पेढ़ी थी। आजकल इसी पेढ़ी का मालिक ट्रेपेल के स्थान पर एक दूसरा आदमी था जो कि शहर की

चुङ्गी का सदस्य भी था। यह मकान दुमंजिला था, जिसकी एक मंजिल का रङ्ग सफेद था और दूसरी का हरा था। यह मकान रूसी गृह कलाकार रोपेद की ईजाद की हुई कला के अनुसार बना था, जिससे इसमें दरवाज़ों पर लकड़ी के घोड़े, मूर्तियाँ इत्यादि बने थे। द्वार से ऊपर जाती हुई सीढ़ियों पर सफेद किनारे की एक दरी बिछी थी, जिसके किनारे ऊपर की ड्योढ़ी में एक भुस भरा मृत रीछ खड़ा था। उसके हाथ में मेहमानों के कार्ड लेने के लिए एक लकड़ी की रकाबी थी। नाच और महफिलवाले कमरे में लकड़ी का रङ्ग-बिरङ्गा फर्श था और उसके दरवाजों और खिड़कियों पर भारी-भारी रेशमी पर्दे और जालिया लटकती थीं, और दीवारों के सहारे-सहारे सफेद और सुनहरी रङ्ग की बहुत-सी कुर्सियाँ लगी थीं। दीवारों पर आईने भी लगे थे जिनके चौखटों पर भेंट देनेवाले प्रेमियों के नाम खुदे थे। महफिल के ही कमरे से सटे हुए बैठने के दो और कमरे थे, जिनमें गलीचे और गुदगुदे गद्दीदार दीवान बिछे थे। सोने के कमरों में नीले और गुलाबी रङ्ग के कन्दील लटकते थे और रेशमी रजाइयाँ और सफ़ेद तकिये पलङ्गों पर रखे थे। इस मकान में रहनेवाली स्त्रियाँ नाचनेवाली और-... की पोशाकें, जिसमें क़ीमती बेलें और किनारे लगे होते थे, या मछुवाहों या ... लड़कियों की-सी पोशाकें पहनती थीं। पर यह स्त्रियाँ अधिकतर बाल्टिक सागर के किनारे के प्रदेशों की जर्मन स्त्रियाँ होती थीं, जिनके शरीर सुगठित, सुन्दर और गौर-वर्ण के थे और जिनके भारी-भारी स्तन थे। ट्रेवेन की पेढ़ी में एक वक्त के लिए तीन रुपये और रात-भर के लिए दस रुपये लिए जाते थे।

तीन पेढ़ियाँ—एक सोफिया वेसीलीवना की, दूसरी पुरानी कीव नाम की और तीसरी अन्ना मार्कोवना की—दो-दो रुपएवाली थीं जो ट्रेपेल से कुछ घटिया और दिखाव में ग़रीब थीं। कटरे की बाकी सारी पेढ़ियाँ एक-एक रुपयेवाली थीं जो इनसे भी दिखावे में ख़राब थीं। सड़क के दूसरी ओर के मकान छोटा कटरा कहलाते थे जिनमें अधिकतर सिपाही, गिरहकट, उठाईगीरे, कारीगर और छोटे दर्जे के आम लोग आते-जाते थे; क्योंकि यहाँ सिर्फ एक बार के आठ आना ही या उससे भी कम देने होते थे। इस तरह के सभी मकान बड़े ग़रीब और गन्दे थे जिनके कमरों के फर्श टूटे-फूटे थे और खिड़कियों पर फटी टूल के पुराने पर्दे लटकते थे। इन मकानों में सोने के कमरे, हल्के कपड़ों के ऐसे पर्दों से एक दूसरे से अलग किये हुए थे जो छत तक भी नहीं पहुँचते थे और इन कमरों में पड़ी हुई खाटों पर पुआल

के ऊँचे-नीचे गद्दों पर फटी और फलालेन की चादरें, पुराने कम्बल पड़े रहते थे, जिनमें से शराब और पसीने की गन्ध निकल-निकलकर हवा को बदबूदार बनाती थी। इन मकानों में रहनेवाली स्त्रियाँ रङ्गीन छींट की मछवाहों की फटी पोशाकें पहनती थीं और उनके गले आम तौर पर बैठे होते थे, नाकें दबी होती थीं और उनके चेहरों पर पिछली रात की चोटों और खुरचों के निशान दीखते थे जिनको छिपाने के प्रयत्न में वे बेचारी बड़ी होशियारी से सिगरेट के डिब्बों के ऊपर लगे हुए लाल रङ्ग को अपने थूक से भिगो-भिगोकर छुड़ातीं और अपने चेहरों पर लगाती थीं।

साल भर तक बराबर हर शाम को सिर्फ ईसाईयों के पवित्र सप्ताह के तीन चार दिन छोड़कर, जिनमें ईसाई धर्म के अनुसार चिड़ियाँ तक अपने घोंसले नहीं रखतीं—अँधेरा होते ही कटरे के हर घर के सामनेवाले रङ्गीन और चित्रकारी से ससज्जित गली के द्वारों पर लाल-लाल रङ्ग की लालटेन जलाकर लटका दी जाती थीं, जिनसे गली में दिवाली हो उठती थी। मकानों की खिड़कियों से चमचमाती हुई रोशनी और पियानो की तानें बहती हुई बाहर आती थीं और बाहर गली में गाड़ियों पर गाड़ियाँ आदमियों से भरी हुईं आती-जाती थीं। सभी मकानों के गलीवाले द्वार चौड़े खुल जाते थे। जिनमें एक तङ्ग और ढालू जीना ऊपर को जाता हुआ दीखता था जो ऊपर की एक तंग ड्योढ़ी में जाकर खत्म हो जाता था। वहाँ पर एक बहुत तेज लम्प जलता रहता था, जिसके इधर-उधर स्वीटजरलैण्ड के पहाड़ी दृश्यों के चित्र लटकते थे। न मालूम स्वीटज़रलैण्ड के इन पहाड़ी दृश्यों का मकानों से क्या सम्बन्ध था। सुबह तक सैकड़ों, बल्कि हजारों आदमी, इन तङ्ग जीनों पर चढ़ते और उतरते थे। सभी तरह के आदमी यहाँ आते थे। अधेड़, परिश्रम से थके हुए, बूढ़े जो कृत्रिम उपायों से जीवन की ज्योति ढूँढ़ने का प्रयत्न करते थे और कालिजों के विद्यार्थी जो निरे अनुभव-हीन बालक होते थे और दाढ़ीवाले बच्चों के बाप और सुनहरी चश्में लगानेवाले समाज के स्तम्भ और नवविवाहित प्रेम से लहलहाते हुए दूल्हे और प्रख्यात विद्वान, प्रोफेसर, चोर, कातिल और उच्च विचारों के लेखक, नेता या वकील जो समाज की नैतिक दशा सुधारने के लिए और स्त्रियों के समान अधिकारों के लिए बड़े-बड़े सुन्दर लेख लिखते और व्याख्यान देते थे। सरकारी नौकर, जासूस, जेलों से भागे हुए क़ैदी, विद्यार्थी, समाजवादी, किराये के टट्टू राजनीतिज्ञ, शर्मीले और बेशर्म, बीमार और चंगे, ऐसे जिनका स्त्री से पहली ही बार संसर्ग होता था और ऐसे कुमार्गी जो इस राह की

हर तरह से ख़ाक छाने होते थे, स्वच्छ नेत्रों के सुन्दर जवान और राक्षसी आकृति के मनुष्य, जिनको प्रकृति ने क्रुद्ध होकर अष्टावक्र, बहिरा-गूँगा, अन्धा या नकटा कर दिया होता था और जिनके शरीर और पेट लटके होते थे और जो हिलहिलकर बनमानसों की तरह अपने मुँहों से गन्ध उड़ाते हुए चलते थे। इस प्रकार के सभी तरह के लोग बड़ी आज़ादी से आते थे, मानों वे उपहारगृहों अथवा क्लबों में आते हों; और यहाँ बैठकर वे सिगरेट और शराब पीते और उछल-उछल और कूद-कूदकर खुश होने का दिखावा करते थे। वे नाचते और भयङ्कर प्रकार से अपने कूल्हे मटका-मटकाकर संभोग के विभिन्न दृश्य इशारों से बताते थे। कभी ध्यान-पूर्वक देर तक देखकर और कभी फौरन ही जानवर की तरह झपटकर यह लोग अपनी पसन्द की किसी औरत को पकड़ लेते थे जो वह अच्छी तरह जानते थे, उनको 'न' नहीं कह सकती थी। बड़ी बेसब्री से दाम पहिले ही अदा करके वे उसी सार्वजनिक खाट पर जो कि पहिले मनुष्य के शरीर की गर्मी से अभी तक गर्म ही होती थी, ईश्वर की उस महान और सौन्दर्यपूर्ण लीला को निरर्थक करने में सलग्न हो जाते थे, जिस ईश्वर की महान लीला से ससार में नवीन जीवन का सचार होता है। इन घरों में रहनेवाली स्त्रियाँ बेबसी ... से एक-से शब्दों और बाहुनर इशारों और मुस्कानों से इन आदमियों की लिप्साएँ पूरी करने का प्रयत्न करती थीं और एक एक रात में तीन-चार और यहाँ तक कि दस-दस तक ऐसे ही आदमियों का जो अक्सर बाहरी कमरे में बैठे हुए अपनी बारी की फिक्र में होते थे, बेचारी स्वागत करती थी। इस प्रकार रात बीतती थी और सुबह होते-होते कटरे में चारों ओर शान्ति छाने लगती थी। सूर्य निकलते-निकलते कटरा बिल्कुल ही खाली हो जाता था और वहाँ के तमाम घरों के द्वार और खिड़कियाँ बन्द हो जाती थीं और उनके निवासी सो जाते थे। शाम को स्त्रियाँ सोकर उठती थीं और फिर दूसरी रात के लिए तैयार होने लगती थीं।

अब इस प्रकार लगातार, रोज ब रोज़, महीनों और वर्षों तक ये बेचारी स्त्रियाँ इसी प्रकार का विचित्र और अविश्वसनीय जीवन इस कटरे के इन सार्वजनिक हरमों में बिताती थीं। समाज से बहिष्कृत, कुटुम्ब से वचित, समाज की मनोवृत्ति का शिकार, शहर की अति संभोग की बीमारी का अस्पताल, कुटुम्ब की मान और मर्यादा की रक्षक बनी हुई चार सौ मूर्ख, अलसी और बाँझ स्त्रियाँ इस कटरे में रहती थीं।

दूसरा अध्याय

आइए, आपको अब हम इन मकानों के अन्दर ले चलें। दोपहर के दो बजे हैं। अन्ना मार्कोवना की पेढ़ी में सभी सो रहे हैं। नाचने का कमरा, उसमें लटकते हुए बड़े-बड़े सुनहरी चौखटों के आईने और दीवारों के किनारे रखी हुई कुर्सियाँ, दावत और स्नान के दृश्यों के दीवार पर लटके हुए चित्र सभी सो-से रहे हैं। कमरे की ख़ामोशी और अर्द्ध अन्धकार में वे बड़े गम्भीर, चुप और किसी एक विचित्र रंज से ग़मगीन दीखते हैं। कल रात को इस कमरे में, हररोज की तरह कन्दील और बत्तियाँ जल रही थीं, संगीत की ऊँची-ऊँची तानें उठ रही थीं, सिगरेटों का श्याम धूम्र मँडरा रहा था और स्त्री-मर्द जोड़ों में अपने-अपने कूल्हे मटकाते हुए और टाँगें ऊपर को उछालते हुए नाच रहे थे। बाहर को गली इन घरों की खिड़कियों में से आनेवाले प्रकाश से और गली के द्वारों पर लटकनेवाली लाल लालटेनों की रोशनी से जगमगाती थी और सुबह होते तक गाड़ियाँ और आदमियों से ठसाठस भरी थी।

परन्तु इस समय गली बिल्कुल खाली थी। वह ग्रीष्म ऋतु के सूर्य भगवान् के प्रकाश में आनन्द से उन्मत्त-सी चमक रही थी। बन्द खिड़कियों पर पर्दे खिन्चे हुए थे, जिससे अन्दर के कमरों में अन्धकार और ठण्डक थी और वहाँ का वातावरण ऐसा आकर्षक था जैसा कि नाटक खत्म हो जाने पर नाट्य-गृहों का या अदालत उठ जाने पर कचहरियों का होता है।

कमरे के भीतर रखे हुए पियानों के काले-काले चमकदार तख्ते मन्द प्रकाश में धीमे-धीमे चमक रहे थे, और पियानो के पीले, पुराने, जगह ब जगह टूटे हुए परदे भी टिमटिमा रहे थे। बन्द, स्थिर वायु में कल की बदबू अभी तक भर रही थी। कमरे की वायु से इत्र, तम्बाकू और एक ऐसे बड़े कमरे को जिसमें कोई नहीं रहता, सड़ी हुई सील को, और अस्वस्थ और अस्वच्छ स्त्रियों के शरीर से निकलनेवाले पसीने की, चेहरे पर लगाने के पाउडर की, बोरिक थेरमल साबुन की और लकड़ी के फर्श पर लगी हुई पालिश की गन्ध आ रही थी। इस गन्ध में दलदलों में सड़नेवाली घास की गन्ध भी आकर मिल रही थी जो मन को एक विचित्र आनन्द देती थी। आज ईसाइयों का त्रिदेव का त्योहार है। अस्तु पुराने रिवाज के अनुसार इस पेढ़ी की नौकरानियों ने अपनी मालकिनों के जगने से पहले ही एक गाड़ी कुश घास

खरीदकर उसके मोटे-मोटे डन्ठल जो पैरों के नीचे पड़ते ही चरचराकर कुचल जायें, सारे कमरों और मकान के रास्तों में बिछा दिये थे। उन्होंने घर में रखी हुई देवी-देवताओं की मूर्तियों के आगे रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय के रिवाज के अनुसार बत्तियाँ भी जलाकर रख दी थीं। उनकी मालकिनें यह पवित्र काम स्वयं नहीं कर सकती थीं, क्योंकि उनके हाथ पिछली रात के अपवित्र कामों से गन्दे थे।

मकान के चौकीदार ने भी घर के नक्काशीदार द्वार पर सनौवर की दो टहनियाँ उसे सुसज्जित करने के लिए लाकर रख दी थी। दूसरे घरों के द्वारों पर भी सीढ़ियों के नीचे, लकड़ी के खम्भों के पास इस प्रकार सनौवर की पतली-पतली टहनियाँ रखी थीं, जिनसे धीमी-धीमी धूप की सी गन्ध निकलकर हवा में फैल रही थी।

अन्ना का घर बिल्कुल खामोश था, खाली था और ऊँघ रहा है। सिर्फ रसोई-घर में से कुछ खट-खट की आवाज आ रही है, जिससे मालूम होता था कि दोपहर के खाने की तैयारी हो रही है। त्यूब्का नाम की इस घर की एक चेचकरू लड़की जो सुन्दर तो नहीं, परन्तु शरीर से सुदृढ़ और ताजी है, नंगे पाँव, सिर्फ अपनी कुर्ती पहिने हुए और बाहों तक अपने हाथ उघाड़े हुए बाहर के सहन में बैठी थी। कल रात में उसे छः मेहमानों की खातिर करनी पड़ी थी। परन्तु उनमें से एक भी रात भर नहीं टिका था, जिससे वह आराम से फैलकर सो सकी थी, अपनी चौड़ी खाट पर अकेले ही मजे से वह लोट-पाटकर सोई थी। अस्तु आज वह सुबह दस बजे ही उठ बैठी थी। उसने बड़ी प्रसन्नता से नौकरानी को रसोई का फर्श और मेजें इत्यादि मल-मलकर साफ करने में पहिले तो सहायता की थी, अब सहन में बैठकर अपने कुत्ते को जो जंजीर से बँधा था, गोश्त की बची-खुची कतरन फेंक फेंककर खिला रही थी। चमकदार बालोंवाला काले मुह का बड़ा कुत्ता कूद-कूदकर, गर्दन में बँधी हुई जंजीर के सहारे पिछले पैरों पर खड़ा हो होकर, पीठ और दुम मोड़-मोड़कर लड़की की तरफ दाँत निकालता, भौंकता और झुक-झुककर बेसब्री से बार-बार जमीन सूँघता था। लड़की उसको गोश्त के टुकड़े दिखा दिखाकर चिढ़ा रही थी और बनावटी क्रोध से उस पर चिल्ला-चिल्लाकर कह रही थी—

'अरे मूर्ख! अरे बेवकूफ! मैं दे तो रही हूँ। इतना बेसब्र क्यों हो रहा है?'

परन्तु वह हृदय से उस कुत्ते की बेसब्री और शोर-गुल और उस पर अपना क्षणिक प्रभाव देखकर बड़ी खुश हो रही थी। उसकी खुशी का कारण यह भी था

कि आज वह अच्छी तरह सोई थी और रात को कोई आदमी उसके पास नहीं सोया था और आज त्रिदेव का त्यौहार था, जिसे वह अपने बचपन से खुशी लानेवाला समझती आई थी और आज धूप भी खूब निकल रही थी। जिसमें इस प्रकार बैठने का उसे सौभाग्य बिरले ही मिला था।

रात के मेहमान सब अपने-अपने रास्ते चले गये थे। दिन भर में सबसे शान्त काम और व्यापार का समय आ रहा था। सब लोग मालकिन के कमरे में बैठे काफी पी रहे थे। सब मिलाकर पाँच जीव वहाँ इस समय थे। एक तो मालकिन अन्ना-मारकोवना स्वयं, जिसके नाम से यह पेढ़ी सरकारी कागजों में दर्ज है और जो लग-भग साठ वर्ष की होगी। वह कद की बहुत नाटी, परन्तु मोटी औरत है। उसका शरीर तीन मांग के गोलार्धों का बना हुआ लगता था, जिसमें सबसे बड़ा गोलार्ध नीचे, उसके ऊपर उससे छोटा और सबसे ऊपर सबसे छोटा रखा हुआ लगता था। यह तीन गोलार्ध एक तो उसका लहँगा, दूसरा उसका पेट और तीसरा उसका सिर थे। विचित्र बात यह थी कि उसकी मुर्झाई हुई नीली-नीली आँखों में लड़कपन अथवा बचपन की-सी झलक है गो कि उसका मुँह बूढ़ा है, जिसका निचला होंट भींगा और रसभरी के रंग का, जीवन-हीन लटकता है। दूसरा उसका पति इसाय जो कि एक नाटा भूरा, शान्त स्वभाव का छोटा सा आदमी है और बेचारा अपनी पत्नी की उँगलियों पर नाचा करता है। जब अन्ना इस मकान में घर-गृहस्थी का काम चलाने के लिए नौकर थी तब वह इसी घर में चौकीदार था। बाद में उपयोगी होने के विचार से उसने अपने आप ही बेला बजाना सीख लिया था। अस्तु अब वह रात को, नाच के समय, बेला बजाया करता था और शराब के नशे में चूर हो जाने-वाले दूकानदारों को, जो रोने के लिए आतुर हो जाते थे, वह कुछ सोग की तानें भी बजाकर सुनाया करता था।

इन दो के अतिरिक्त दो घर-गृहस्थी का काम देखनेवाली स्त्रियाँ हैं, जिनमें एक बड़ी है और दूसरी छोटी। बड़ी का नाम ऐम्मा ऐडवार्डोवना है। वह क़द की लम्बी, छियालीस वर्ष की उम्र की पूरी औरत है जिसके बाल भूरे हैं और मोटापे के कारण तीन हड्डियाँ हैं। उसकी आँखों के चारों ओर काले-काले दायरे बन गये हैं जो उसकी पुरानी बीमारी के सूचक हैं। उसका चेहरा माथे से नीचे की तरफ नाशपाती की तरह चौड़ा है और उसका रङ्ग मटियार, आँखें छोटी और काली, नाक गूदेदार

और होठ सख्ती से मुड़े हुए हैं, जिससे उसके चेहरे पर हुक्मरानी आ गई है। इस घर में यह बात किसी से छिपी नहीं है कि एक-दो वर्ष में अन्ना अपना यह काम छोड़ देगी और अपनी पेढ़ी ऐम्मा को कुछ नकद और कुछ वायदे के दामों पर बेच देगी। अस्तु इस घर की लड़कियाँ ऐम्मा का भी उतना ही सम्मान करती हैं जितना कि मालकिन का और उससे कुछ-कुछ डरती भी हैं। जो कोई इस घर में कोई ग़लती करता है, ऐम्मा उसको ठोंकती है—बेरहमी से, ठण्डे दिल से, अपने ही हाथों बिना चेहरे पर बल लाये ठोंकती है। लड़कियों में हमेशा एक से वह खास तौर पर स्नेह करती है, जिसको वह अपने कठोर स्नेह और ईर्ष्या से बड़ा सताती है। उसका यह स्नेह उसकी मार से बड़ा कठोर होता है।

घर-गृहस्थी का काम देखनेवाली दूसरी स्त्री का नाम ज़ोसिया है। वह कुछ रोज़ पहिले तक इसी घर की एक लड़की थी। अस्तु इस घर की लड़कियाँ अभी तक उसे खुशामद और दोस्ती में भाववाचक शब्द 'छोटी चची' के नाम से पुकारती हैं। वह पतली, हँसोड़, आँखों से कुछ कुछ ऐंचाताना, गुलाबी रङ्ग की है और उसके [illegible] घरवाले हैं। उसे ऐक्टर बहुत पसन्द हैं—खासकर तगड़े मज़ाकिया ऐक्टर। [illegible]ना एडवार्टोवना के प्रति वह नाशुक्रगुजारी का रुख रखती है। पाँचवाँ शख्स जो इन लोगों के साथ बैठा काफी पी रहा है, इस जिले का सरकारी इन्सपेक्टर बर्केश है। वह खिलाड़ी आदमी है, जिसका सिर कुछ-कुछ गन्जा, दाढ़ी लाल और पखे की तरह फैली हुई, स्वच्छ नीली ऊँघती हुई आँखें और पतली प्रिय और कुछ-कुछ भर्राई हुई आवाज़ है। यह बात सभी को विदित है कि पहिले वह सरकारी खुफिया विभाग में काम करता था और उसके नाम से जरायमपेशा काँपते थे, क्योंकि वह शरीर से बड़ा मजबूत और प्रश्न पूछने में निरा बेरहम था। उसके सिर पर कई पापों का बोझ है। शहर भर जानता है कि दो वर्ष हुए उसने एक अमीर सत्तर वर्ष की बुढ़िया से शादी की थी और पिछले साल उसे गला घोंटकर मार डाला था। परन्तु इस मामले को किसी तरह उसने दबा दिया था। दूसरे चारों ने भी, जो इस समय बर्केश के साथ बैठे चाय पीते थे, इसी तरह के थोड़े-बहुत पाप अपनी रङ्गीन ज़िन्दगियों में किये थे। परन्तु उन छोटे-मोटे पापों के ध्यान पर उनके हृदय में कोई चोट नहीं होती थी, क्योंकि वे उन्हें अपने पेशों के अनिवार्य बुरे काम मानते थे।

यह लोग मालकिन के कमरे में बढ़िया मोटी मलाई काफ़ी में मिलाकर पी रहे

थे। इन्सपेक्टर दूसरों को धन्यवाद देता हुआ काफ़ी पी रहा था। सच तो यह है कि इन्सपेक्टर वास्तव में काफ़ी पी नहीं रहा था, बल्कि उनको अपने व्यवहार से ऐसा ज़ाहिर कर रहा था कि वह उनको खुश करने और आभारी करने के लिये उनके साथ काफ़ी पीने बैठ गया है।

'अच्छा, तो अब क्या करना चाहिए, इन्सपेक्टर साहब? इस व्यापार में अब कुछ मिलता नहीं। आपका जो हुक्म हो······'

बर्केश ने आधा ग्लास शराब को मुँह में उड़ेलकर ज़बान से तेज़ अर्गवानी शराब को तालू में ले जाते हुए धीरे-धीरे हलक़ में उतार लिया और पीछे से वह एक प्याला काफ़ी का चढ़ाकर बायें हाथ की बीचवाली उँगली से जिसमें एक जड़ी हुई अँगूठी थी, अपनी मूछों पर दायें-बायें ताव देने लगा।

'तुम्हीं सोचो श्रीमती अन्ना!' उसने मेज़ पर नीचे की तरफ देखते हुए और हाथ फैलाकर आँखें घुमाते हुए कहा, 'सोचो तो मैं कितने ख़तरे में हूँ। उस लड़की को धोखे से चकले में लाया गया है। उसके माँ-बाप उसे पुलिस के द्वारा ढूँढ़ रहे हैं। जगह-जगह ढूँढ़ने के बाद उसका पता यहाँ मिलता है। तुम्हारे घर में जो कि मेरे हल्के में है! देखो न मैं किस मुसीबत में हूँ! मैं क्या करूँ!'

'मगर इन्सपेक्टर साहब, वह बालिग़ है।' मालकिन बोली।

'हाँ, यहाँ भी सभी लड़कियाँ बालिग़ हैं, इसाय ने ज़ोर देते हुए कहा, 'उन सबने लिखकर दिया है कि वे अपनी मरज़ी से यह काम करती हैं।'

ऐम्मा मोटी आवाज़ में विश्वास दिलाती हुई बोली, 'ईश्वर की क़सम, हम लोग उसे यहाँ अपनी लड़की की तरह रखते हैं।'

'मगर मैं तो दूसरी ही बात कर रहा हूँ। इन सबका उससे क्या मतलब है?' इन्सपेक्टर ने चिढ़ते हुए कहा, 'मेरी स्थिति का विचार करो···मैं क्या करूँ? मेरा फ़र्ज़ है! मैं अपना फ़र्ज़ किये बिना कैसे रह सकता हूँ?'

मालकिन जल्दी से उठी और अपने स्लीपर पहिनकर द्वार की तरफ़ झपटती हुई इन्सपेक्टर की तरफ आँख मारती हुई बोली, 'इन्सपेक्टर साहब, इस कमरे को तो ज़रा देखिए! हम लोग चकले को ज़रा बढ़ा रहे हैं!'

'हाँ! अच्छा, अच्छा···!'

दस मिनट के बाद दोनों उस कमरे में से, एक दूसरे की तरफ न देखते हुए

लौट आये। इन्सपेक्टर का हाथ जेब में घुसा हुआ एक नये सौ रुपये के नोट को तह कर रहा था। फिर उस भगाई हुई लड़की का कोई ज़िक्र न हुआ। इन्सपेक्टर अपनी बची हुई शराब को खत्म करता हुआ आजकल के लड़कों के अशिष्ट व्यवहार का जिक्र करने लगा :

'मेरा लड़का पॉल स्कूल में पढ़ता है। वह बदमाश मुझसे आकर कहा करता है, 'पिताजी, लड़के मुझे स्कूल में चिढ़ाते हैं कि तुम्हारे बाप पुलिस में हैं और कटरे में काम करते हैं जहाँ वह चकलों से रिश्वतें लेते हैं! देखो तो कैसी गुस्ताखी की बातें हैं, श्रीमती अन्ना?'

'ऐं! भला हमारे यहाँ से आपको क्या रिश्वत मिल सकती है?'

'मैं उससे कहता हूं कि जा अपने हेडमास्टर से कह देना कि फिर मैंने ऐसी शिकायत सुनी तो सरकार में उन सबकी रिपोर्ट कर दूँगा। इस पर वह आकर मुझसे कहता है कि मैं तुम्हारा लड़का ही नहीं हूँ। जाओ, तुम अपने लिए कोई दूसरा लड़का ढूँढ़ लो। [illegible] सुनती हो। कैसी गुस्ताखी की बातें हैं! मैंने भी इस पर उसे ऐसा ठोंका [illegible] तक याद रहे! अब वह मुझसे बोलना भी पसन्द नहीं करता! [illegible] उसे और सिखाना है!'

'हाँ, हाँ, मैं सब कुछ जानती हूँ—' अन्ना ने आह भरकर कहा और उसका निचला होंठ लटक आया और उसकी मुर्झाई आँखों में पानी आ गया, 'हम भी अपनी चिड़िया को स्कूल में पढ़ाते हैं। यहाँ उसको रखना उचित नहीं। इसलिए हम उसे शहर में एक मान मर्यादावाले परिवार में रखते हैं। मगर स्कूल से वह ऐसी-ऐसी बातें सीखकर आती है कि उन्हें सुनकर मेरा चेहरा लाल हो जाता है।'

'ईश्वर की क़सम उसकी बातें सुनकर अन्ना का चेहरा तमतमा उठता है!' इसाय ने अन्ना की ताईद करते हुए कहा।

'अवश्य लाल हो जाता होगा!' इन्सपेक्टर ने हाँ में हाँ मिलाते हुए कहा, 'हाँ, हाँ, हाँ! मैं अच्छी तरह समझ सकता हूं! हे ईश्वर! हम लोग किधर जा रहे हैं! दुनिया किधर जा रही है! न जाने यह सब क्रान्ति, क्रान्ति पुकारनेवाले, यह सब विद्यार्थी इत्यादि और दूसरे लोग क्या करना चाहते हैं? किधर सबको ले जाना चाहते हैं? उन्हें अपने आप को ही सारा दोष देना चाहिए! जिधर देखो उधर ही बेईमानी

है, अनीति का ज़ोर बढ़ रहा है, लड़के मा-बाप की इज्जत नहीं करते ! इन लोगों को गोली से मार देना चाहिए !'

'हाँ, हाँ, देखो न ! परसों ही क्या हुआ !' ज़ोसिया बीच में बोल उठी, 'एक मेहमान आया...बड़ा तगड़ा आदमी था…'

'चुप रह...चुप !' ऐम्मा जो इन्सपेक्टर की बातें सुन रही थी, बड़ी-बूढ़ी की तरह सिर हिलाती हुई एक तरफ को झुककर उसकी बात काटकर कहने लगी, 'जाओ, छोकरियों के नाश्ते का इन्तज़ाम करो ।'

'किसी पर आजकल विश्वास करना मुश्किल हो गया है । मालकिन ने शिकायत करते हुए कहा, 'हर नौकर धोखा देने की कोशिश करता है । छोकरियों को हमेशा सिर्फ अपने प्रेमियों की ही चिन्ता रहती है। मज़ा वे चाहे जितना करें उसकी शिकायत नहीं है । परन्तु फिर उन्हे अपने काम का भी तो ध्यान रखना चाहिए ! उसका उन्हें कभी ख्याल नही रहता !'

इसके बाद कुछ देर तक एक विचित्र ख़ामोशी छाई रही । फिर एक पतली स्त्री की आवाज़ द्वार के उस ओर से आई, 'चची, प्यारी चची, यह लो रुपया और मेहर-बानी करके मुझे स्टाम्प दे दो । पीटे चला गया ।'

इन्सपेक्टर खड़ा हो गया और अपनी किरच ठीक करता हुआ कहने लगा, 'मुझे यहाँ बहुत देर हो गई । बड़ा काम करना है । अच्छा अन्ना, सलाम ! बन्दगी मिस्टर इसाय !'

'इन्सपेक्टर साहब, एक ग्लास और पी लीजिए । इससे काम में आपको थकान नहीं होगी ।' इसाय ने मेज की तरफ अपना शरीर घुसेड़ते हुए कहा ।

'नहीं ! नहीं ! धन्यवाद ! मैंने हलक तक भर ली है । अब ज़रा भी जगह नही है ! तुम्हारी मेहर- बानी के लिए धन्यवाद !'

'आपके यहाँ आने के लिए आपको धन्यवाद, इन्सपेक्टर साहब ! कृपया फिर भी आइयेगा !'

'आपके यहाँ आने से मुझे बड़ी खुशी होती है ! अच्छा फिर मिलूँगा ! बन्दगी !' यह कहकर वह चल दिया । परन्तु चलते हुए द्वार में एक मिनट रुका और मित्र की तरह सलाह देता हुआ बोला, 'मगर देखो, इस लड़की को फिर भी तुम वक्त रहते

अपने यहाँ से कहीं और भेज दो तो अच्छा ही है। वैसे तुम्हारी मरजी। मगर मित्र की हैसियत से मेरी तुम्हें यही सलाह है।'

यह कहकर वह चला गया। जीने पर से उसके उतरने की जब आहट खत्म हो गई और बाहर का द्वार उसको निकालकर बन्द हो गया तो अन्ना ने अपने नथनों से जोर की एक साँस लेते हुए घृणा से कहा, 'मक्कार! फरेबी कहीं का! अपनी मुट्ठी गरम करने के लिये आता है! आते भी मुट्ठी गरम और जाते भी···'

तीसरा अध्याय

धीरे-धीरे वे सब एक-एक करके कमरे में से उठ गये। घर में अँधेरा छा रहा है। मुर्झाती हुई कुश की भीनी-भीनी सुगन्ध फैल रही है। चारों तरफ शान्ति है।

शाम को छः बजे सब लोग खाना खाते हैं। तब तक वक्त धीरे-धीरे और बड़ी मुश्किल से गुज़रता है। यह दोपहर की छुट्टी का वक्त घर भर को बड़ा भारी और खाली लगता है— कुछ-कुछ यह वक्त उन स्कूलों की लम्बी छुट्टियों की तरह अथवा स्त्रियों के आश्रमों और उन स्त्रियों की संस्थाओं की तरह गुज़रता है जहाँ अधिक काम करने को न होने से आलस से मन उबता उठता है। सिर्फ पेटीकोट और एक-एक सफेद कुर्ती पहने हुए, नंगे हाथों और कभी-कभी नंगे पावों भी स्त्रियाँ इधर-उधर, इस कमरे से उस कमरे और उस कमरे से इस कमरे में घूम रही थीं। न तो किसी ने मुँह हाथ ही धोये थे और न किसी ने अपने बाल ही काढ़े थे। कोई आलस्य से पियानों के तारों पर उँगलियाँ रख रही थी; कोई ताश के पत्तों से अपनी किस्मत आज़मा रही थी और सभी आलस्य से एक दूसरे को कोसती हुई बड़ी बेसब्री से अपना समय गुजारती हुई आनेवाली शाम को बाट देख रही थीं।

ल्यूब्का नाश्ता ख़त्म करके बचन-खुचन उठाकर कुत्ते को देने गई थी। परन्तु अधिक देर तक कुत्ते के पास ठहरने को उसका जी नहीं चाहा। उसने और नियूरा ने कुछ खाँड के खिलौने और सूरजमुखी के बीज खरीद लिये थे, जिन्हें वे दोनों इस समय गली के पासवाले मकान की चहारदीवारी के निकट खड़ी-खड़ी खा रही थीं। सूरजमुखी के बीजों को चबा-चबाकर वे पोला करके गूदा खा लेती थीं और उनके छिलके उनके मुँह से निकल-निकलकर उनकी ठोड़ियों और सीने पर आ गिरते थे।

दोनों गली में जानेवालों के विषय में एक दूसरे से तरह-तरह की बातें करने में संलग्न थीं—बत्ती जलानेवाले के बारे में, जो अपना रोज़नामचा बगल में दबाये हुए चला जा रहा था, और किसी दूसरी पेढ़ी की चची के बारे में जो गली में दौड़ती हुई उस पार की दूकान से कुछ खरीदने झपटी जा रही थी।

नियूरा कम उम्र की लड़की है। उसकी आँखें नीली-नीली और निकली हुई हैं और उसके बाल भूरे और रेशमी हैं और उसकी कनपटियों पर नीली-नीली नसें दीखती हैं। उसके चेहरे में कोई चीज़ ऐसी मासूम और हठीली है कि उसे देखते ही खाँड़ के बने उस सफेद मेमने को याद आ जाती है जो कि ईस्टर के त्योहार में मिठाइयों पर बनाया जाता है। वह सजीव, चंचल, और उत्सुक है। हर बात में वह अपनी नाक घुसेड़ती है। हरएक से उसकी राय मिल जाती है, हर खबर उसके पास सबसे पहिले पहुँचती और जब वह बोलने लग जाती है तो इतना और ऐसी जल्दी-जल्दी बोलती है कि उसके मुँह से बच्चों की तरह फेन निकलने लगता है।

सामने की छोटी दूकान में से एक नौकर निकला जिसके बाल घुँघरवाले, परन्तु गुथे हुए थे और जिसकी आँख में भी थोड़ा-सा ऐब था। उसने गली में ज़रा ठिठक-कर इधर-उधर देखा और फिर पास के शराबखाने की तरफ लपका।

'प्रोखोर आइवानोविश, ओ प्रोखोर आइवानोविश!' नियूरा ने चिल्लाकर पुकारा: 'बीज खाओगे! आओ तुम्हें सूरजमुखी के बीज खिलायें।'

'हाँ आओ, आओ! हमारे घर आओ।' ल्यूब्का सुरीली आवाज़ में बोली।

नियूरा नाक से ज़ोर से खर्राटा भरकर खिलखिलाती हुई कहने लगी, 'हाँ जी, आओ। तुम भी हमारे यहाँ आकर अपने पैर ज़रा गरमा लो।'

मगर इतने ही में सामने का द्वार खुला और उसमें बड़ी चची की वृहत और कठोर मूर्ति दिखाई दी।

'हाय! यह क्या नङ्गानाच हो रहा है!' उसने उन्हें फटकारते हुए कहा, कितनी बार तुम्हें समझाया गया है कि दिन में गली की तरफ़ मत जाओ और वह भी, हाय, सिर्फ पेटीकोट और कुर्ती पहिनकर! मेरी समझ में नहीं आता कि तुम लोगों को अपनी इज्ज़त का जरा भी ख्याल क्यों नहीं है! भली लड़कियाँ, जिन्हें अपनी इज्जत का ख्याल होता है, इस तरह बाहर नहीं निकलतीं। तुम यह भूल जाती हो कि

ईश्वर की कृपा से तुम उस टकयारे चकले में नहीं हो, जिसमें सिपाही और गिरहकट भरे रहते हैं। बीबी, यह छोटा कटरा नहीं है, बड़ा कटरा है, बड़ा !'

लड़कियाँ यह फटकार सुनकर घर में चली गईं और रसोई में जाकर मूढ़ों पर बैठ गईं और पैर हिलाती हुई और बीज चबाती हुई रसोई बनानेवाली प्रास्कोविया नाम की स्त्री का क्रोधित चेहरा घूरने लगी। बड़ी देर तक वे इसी प्रकार बैठी घूरती रहीं।

छोटी मनका के कमरे में जिसे मनका गज़ट और सफेद ननकी मनका के नाम से भी पुकारा जाता है खासी भीड़ लग रही थी। चारपाई की पट्टी पर बैठी हुई वह एक दूसरी जो नाम की लड़की के साथ जो कि एक लम्बी सुन्दर टेढ़ी भौओं, भूरी और कुछ-कुछ निकली हुई आँखों, और ठीक रूसी वेश्याओं के से सफेद चेहरे-वाली स्त्री है, ताश खेल रही थी। शाहकट का खेल हो रहा था। ननकी मनका की दिली दोस्त जेनी उन दोनों की पीठ के पीछे चित्त लेटी हुई ड्रमा का एक फटा उपन्यास 'रानी का हार' पढ़ रही थी और सिगरेट पी रही थी। इस घर भर में सिर्फ एक जेनी को ही पढ़ने का शौक है। सच तो यह है कि उसे पढ़ने का व्यसन-सा है। जो कोई भी किताब उसे पढ़ने को मिल जाती है, उसी को वह पढ़ने लगती है। परन्तु इस प्रकार बहुत से अण्ड-बण्ड उपन्यास पढ़ने पर भी उनका उसके दिलो दिमाग पर, जैसी कि ऐसी दशा में आशा की जानी चाहिए थी, कोई असर नहीं हुआ है। उसे खासकर चन्द्रकान्ता की तरह रहस्य-पूर्ण उपन्यास अधिक प्रिय हैं जिनमें बड़ी होशियारी से धीरे-धीरे रहस्यों की ग्रन्थियाँ खोली जाती हैं। मारपीट की कहानियाँ जिनमें बहादुर अपनी आन से नहीं हटते अथवा उदारता के किस्से, जिनमें मुख्य अभिनेता सोने की मुहरों से ठमाठम भरी हुई थैलियाँ, अपने दायें बायें बिखराते हुए चले जाते हैं अथवा राजा महाराजाओं के स्त्रियों से प्रेम के किस्से उसे बहुत ही प्रिय थे। परन्तु अपने रोजमर्रह की ज़िन्दगी में वह ऐसे किस्से पढ़ते रहने के बाद भी संजीदा और ऐसी बातों का मजाक उड़ानेवाली, अमलो और भयंकर निराशावादी ही थी। इस घर की दूसरी लड़कियाँ उसके साथ वैसा ही व्यवहार करती थीं जैसा कि स्कूल में सबसे मज़बूत लड़के अथवा उसी दर्जे में फिर रहनेवाले लड़के अथवा सबसे सुन्दर लड़की का होता है जो कि सब पर हुक्म चलाती और जुल्म करती है, परन्तु फिर भी पुजती ही रहती हैं। वह लम्बी, पतली, सुनहरे बालों और सुन्दर

कन्जी आँखों को है और उसका मुँह छोटा और घमंडी है और उसके ऊपरी होंठ पर थोड़ी-सी रेख है और गालें पर गहरी अस्वस्थ लाली है ।

मुँह में सिगरेट दबाये, धुयें से बचाने के लिए आँखें घुमाती हुई, उँगली गोली करके वह पड़ी-पड़ी पृष्ठ पर पृष्ठ पलटती चली जा रही है । उसकी टाँगें टखनें तक खुली हुई हैं और टखने बहुत बड़े और देखने में भद्दे लगते हैं । पैर के अँगूठों के नीचे भी बुरे ढङ्ग के मांस के गट्ठे हैं ।

इन सबके साथ टमारा नाम की एक और लड़की भी पल्थी मारे, कमर झुकाये बैठी-बैठी कुछ सी रही थी । वह एक शान्त स्वभाव की, आराम पसन्द, सुन्दर लड़की है, जिसका रङ्ग थोड़ा लाल है और उसमें वह गहरी चमक है जो कि जाड़ें में लोमड़ियें की पीठ के बालें पर आ जाती है । उसका असल में नाम ग्लीसेरा या लुकेरिया है जैसा साधारण लोग पुकारते हैं । चकलें का पुराना रिवाज है कि वहाँ आनेवाली लड़कियें के साधारण गवाँर नाम बदलकर उनके आकर्षक और प्रिय नाम रख दिये जाते हैं । अस्तु लुकेरिया या ग्लीसेरा के स्थान में इस लड़की का नाम भी टमारा रख दिया गया था । टमारा पहिले एक ईसाई महिलाश्रम की निवासिनी थी, जहाँ धार्मिक काम करने के लिए पादरी स्त्रियाँ तयार की जाती हैं । वह शायद वहाँ कुछ दिन तक एक शिष्या की तरह ही रही थी ; क्योंकि उसके चेहरे पर अभी तक उस झिझक और चतुर लज्जा की झलक क़ायम थी जो कि ऐसे आश्रमों की नवीन निवासिनियों के चेहरों पर प्रायः होती है । टमारा इस घर में दूसरों से कटी-कटी रहती है, न तो किसी से वह अधिक बातें ही करती है और न किसी को अपने पिछले जीवन के भेद ही बताती है । आश्रम में जाने के पहिले उसके जीवन में अवश्य बहुत-सी घटनाएँ हुई होंगी ; क्योंकि उसके धीरे-धीरे बातें करने के ढङ्ग में, उसके निगाहें बचा-बचाकर अपनी लम्बी और झुकी हुई भृकुटियों के नीचे से गहरी और सुनहरी आँखें से देखने के तरीके में, उसके रङ्ग-ढङ्ग में और उसकी एक नई बननेवाली साधुनी की लज्जापूर्ण, परन्तु ढीठ चालाकी से भरी मुस्कानों और बातों में कोई बात बड़ी रहस्यपूर्ण, गुप्त और अपराधपूर्ण थी । एक बार इस घर की तमाम दूसरी लड़कियों ने भौंचक्क होकर सुना कि टमारा फ्रेंच और जरमन भाषा दोनों ही धाराप्रवाह बोल सकती है । उसके अन्दर एक प्रकार की गुप्त और दबी हुई शक्ति थी । वह अपने व्यवहार में ऊपर से नम्र है और किसी से कुछ नहीं कहती । फिर भी सब उससे सँभलकर बातें करते

हैं और दूर ही दूर रहते हैं—मालकिन, उसकी सहायक दोनों स्त्रियाँ और द्वारपाल जो कि चकलों का पूरा सुल्तान ही होता है और जिससे सभी डरते हैं, सबका टमारा के प्रति ऐसा ही व्यवहार है।

'यह लो मैंने काट लिया तुम्हारा शाह' यह कहते हुए ज़ो ने अपने पत्तों में से इक्का निकालकर उसके शाह पर लगा दिया। मनका ने खिसियाकर कहा, 'अच्छा! अच्छा! काट लो शाह! तुम सब दाँव-पेंच अच्छी तरह जानती हो न! अच्छा टमारा, अब तुम मेरी तरफ से पत्ते चलना। मैं चुपचाप देखूँगी।'

ज़ो ने पुराने, काले, चिकने पत्ते फेंटकर मनका से पत्ते कटाये और फिर अपनी उँगलियाँ मुँह से गीली करके उन्हें बाँटने लगी।

टमारा सीती-सीती इधर मनका को अपना हाल सुना रही थी, 'हम वेदी पर बिछाने के कपड़ों पर और देवताओं और गुरु जी के कपड़ों पर सुनहरे धागों से बेल, बूटे और क्रास के चिह्न काढ़ा करती थीं। जाड़ों के दिनों में खिड़कियों के पास बैठे-बैठे हम रेंब काढ़ती थीं। खिड़कियों के शीशे छोटे-छोटे होते थे और उनमें से बहुत कम रोशनी आती थी। कमरे के अन्दर लैम्प के तेल, धूप और सनौवर की महक भरी होती थी। बातें करने की हम लोगों को इजाजत नहीं होती थी, क्योंकि हमारी गुरु-आनी, हमारी धर्म-माता बड़ी सख्त थीं। हममें से कोई-कोई उबकर बाइबिल की एक-दो आयतें गाने लगती थी; हे ईश्वर तुम्हारे स्वर्ग में···हम लोग बहुत अच्छी तरह, बड़े सुन्दर राग गाते थे और चारों ओर ऐसी अच्छी सुगन्ध होती थी। खिड़कियों के बाहर गिरती हुई बर्फ के फाहेले दिखाई देते थे। बड़ा अच्छा लगता था! परन्तु अब तो यह सब एक स्वप्न···'

ज़ेनो ने अपना फटा हुआ उपन्यास पेट पर रखकर ज़ो के सिर के ऊपर से अपना सिगरेट फेंककर, चिढ़ाते हुए कहा, 'हाँ, आप लोगों के वहाँ के शान्त और सुखमय जीवन का हाल हम सभी को मालूम है। गुसलखानों में वहाँ भ्रूणहत्याएँ की जाती हैं। तुम्हारे इन पवित्र आश्रमों में खूब राक्षसी काण्ड होते हैं।'

'लो मैंने भी तुरुप लगाया! काट लिया तुम्हारा शाह! लाओ अब मैं पत्ते बाँटूगी।' नन्हीं मनका जोश से ताली बजाकर चिल्लाई।

जेनी के शब्द सुनकर टमारा मन ही मन मुस्काई जिससे उसके होठों के किनारों

पर ज़रा-ज़रा ऐसे बल पड़ गये जैसे कि प्रख्यात चित्रकार ल्योनार्डो डा विन्सी के प्रख्यात मोनालिज़ा के चित्र में सुन्दरी के मुख पर दीखते हैं।

'लोग इन आश्रमों के बहुत से किस्से सुनाते हैं। कभी एक-आध बार कोई ऐसी बात हो भी गई...'

'पाप न होगा तो फिर पछतावा करने के लिए क्या रह जायेगा' जो ने गम्भीरता से कहा और फिर अपनी उङ्गली मुँह से गोली की।

बैठकर सीने में आँखों पर ही ज़ोर पड़ता था, परन्तु सबेरे खड़े-खड़े प्रार्थना करने से पीठ दुखने लगती थी और टाँगों में दर्द होने लगता था। और शाम को फिर वैसी ही प्रार्थना में भाग लेना होता था। धर्म-माता के द्वार पर हम लोग जाकर खटखटाते थे और पुकारकर कहते थे, 'हे ईश्वर, हमारे मालिक और बाप, सन्तों की प्रार्थना सुन और हम पर रहम खा।' और अन्दर से धर्म-माता उत्तर में कहती थीं, 'आमीन।'

जेनी ने टमारा की तरफ़ टकटकी लगाकर कुछ देर तक ध्यान से देखा और फिर सिर हिलाती हुई कहने लगी :

'तुम भी बड़ी विचित्र औरत हो, टमारा! मुझे तुमको देखकर आश्चर्य होता है। ख़ैर, मैं उन मूर्खों की, सोन्का की तरह मूर्खों की प्रेम-क्रीड़ा तो समझ सकती हूँ; परन्तु तुम तो हर तरह की भूभल में झुलस चुकी हो, तुम तो हर तरह के पापड़ बेल चुकी हो, तुम इस मूर्खता में कैसे फँसती हो?'

टमारा धीरे-धीरे अपना सिलाई का काम अपने घुटने पर रखकर ठीक करती हुई, उसकी बखिया सुई से दबाकर सुधारती हुई, अपना सिर एक तरफ थोड़ा झुकाकर, आँखें नीची किये-किये बोली :

'कुछ तो करना ही चाहिए। बैठे-बैठे जी ऊबने लगता है। ताश खेलना मुझे पसन्द नहीं है।'

जेनी सिर हिलाती रही और बोली :

'सचमुच तुम बड़ी विचित्र हो! मेहमानों से भी तुम हम सबसे अधिक रुपया पाती हो। मगर तुम मूर्ख हो। रुपया बचाकर तो नहीं रखती, उससे व्यर्थ चीज़ें खरीद-खरीदकर उसे बर्बाद कर डालती हो। सात रुपये की एक शीशी इत्र की खरीद लेती हो। भला बताओ उसकी किसे ज़रूरत है? यह पन्द्रह रुपये का तुमने रेशम ले लिया है। यह तुमने अपने सेनका के लिए ही लिया है न?'

'हाँ ! सेनका ही के लिए, अवश्य !'

'कैसा अच्छा रत्न तुमने ढूँढ़ा है ! सेनका ! अभागा चोट्टा ! कैसा घोड़े पर चढ़ कर योद्धाओं की भाँति यहाँ आता है ! तुझे पीटता वह क्यों नहीं ? चोरों को पीटना बहुत पसन्द होता है । वह तुझे खूब लूटता है, समझती है ?'

मैं जो उसे देना चाहती हूँ, उससे अधिक वह मुझसे नहीं ले सकता ।' टमारा ने एक रेशम के धागे को दाँत में चीरकर दो भाग करते हुए नम्रता पूर्वक कहाः

'इसी पर तो मुझे आश्चर्य होता है । तुम्हारी-जैसी बुद्धि और सुन्दरता मेरे पास होती तो मैं ऐसे मेहमान के चारों ओर ऐसा जाल बिछाती कि वह मुझे लेकर घर-गृहस्थी बनाकर बैठ जाता और फिर मेरे पास अपने घोड़े होते जिन पर मैं रोज़ चढ़ती और हीरे और जवाहरात होते, जिन्हें मैं पहिना करती ।'

'हर एक को अपनी-अपनी पसन्द होती है, जेनेका ! तुम भी बड़ी सुन्दर और प्यारी छोकरी हो । तुम बड़ी बहादुर और स्वतन्त्र चरित्र की भी हो और फिर भी तुम और मैं दोनों ही इस अन्ना के घर में आ पड़े हैं !'

जेनी क्रोधित होकर चिढ़कर कहने लगी, 'हाँ । क्यों नहीं ! तुम्हें किस चीज़ की कमी है ?...अच्छे-अच्छे मेहमान सब तुम्हारे पास ही आते हैं । तुम्हारी जो इच्छा होती है, उनके साथ करती हो । मगर मेरे पास तो निरे बूढ़े खूसट या दुधमुहें बालक ही आते हैं । मेरा भाग्य ही बुरा है ! मेरे पास तो ऐसे ही आते हैं जो जीवन खो चुके होते हैं अथवा जिनमें अभी तक जीवन आया भी नहीं होता । मुझे छोटे-छोटे लड़कों से जो मेरे यहाँ आते हैं, बड़ी घृणा होती है । वे आते हैं और जल्दी-जल्दी कायर की तरह, काँपते हुए काम पूरा कर डालते हैं और फिर लज्जा के मारे आँखें भी ऊपर को नहीं उठाते । वे आत्मग्लानि से ही मरे जाते हैं । जी में तो आता है कि उनके मुँह पर तान-तान कर तमाचे लगाऊँ । रुपया भी देने से पहिले ऐसा दबाकर जेब में पकड़े रखते हैं कि हाथ में लेने पर वह बिल्कुल गर्म और पसीने से भरा होता है ! दुधमुँहें कहीं के । उनकी मा स्कूल में मिठाई खाने को दाम देती है जिसमें से बचा-बचाकर वे वेश्याओं के लिए रखते हैं । कुछ रोज़ हुए मेरे पास एक ऐसा ही सैनिक विद्यार्थी आया था । मैंने जान-बूझकर चिढ़ाने के लिए उसे कुछ मिठाई देकर कहा—मेरे प्यारे ! मैंने तुम्हारे लिए यह थोड़ी-सी मिठाई मँगाकर रखी है । इसे लिए जाओ ! रास्ते में इसे खाना !' पहिले तो उसने बुरा माना ! मगर फिर उसने वह

मिठाई मुझसे ले ली । जब वह घर से निकला तो मैं जीने पर से झुककर देखने लगी कि क्या करता है ! गली में पहुँचते ही उसने इधर-उधर देखा और गप्प मे मिठाई मुँह में ! सूअर कहीं का !'

'लेकिन बूढ़ों से तो पाला पड़ने पर और भी बुरा हाल होता है,' नन्हीं मनका ने कनंखियों से ज़ो की तरफ देखते हुए धीमी आवाज में कहा: 'क्यों न ज़ो ?'

ज़ो ताश खेलना खत्म कर चुकी थी और जँभाई लेने की तैयारी कर रही थी। उसको अब अपनी जँभाई रोकना कठिन हो गया ! उसे कुछ पता नहीं चल रहा था कि वह गुस्सा करना चाहती थी अथवा हँसना चाहती थी । उसके पास रोज एक बूढ़ा आया करता है जो कि बड़ी अच्छी हैसियत का आदमी है और जो बहुत से बच्चों का बाप है । परन्तु उसको अस्वाभाविक विषय-भोग की लत है । इस चकले के सभी निवासी उस बूढ़े के ज़ो के पास रोज़ आने का खूब मज़ाक उड़ाते हैं ।

ज़ो आख़िरकार जँभाई लेकर भर्राई आवाज़ से बोली : "भाड़ में जाओ तुम सब ! और तुम्हारे साथ वह बूढ़ा भी । मेरी समझ में उस बूढ़े की पहेली नहीं आती !'

मगर जेनी ने फिर भी अपनी बातचीत जारी ही रखी । वह कहने लगी, "मगर सबसे खराब तो ज़ो, तुम्हारे बूढ़े से भी खराब और मेरे छोकरे से भी खराब यह प्रेमी बननेवाले होते हैं ! बताओ तो इससे क्या खुशी किसी को मिल सकती है कि वह शराब पीकर आये, ढोंग करे, अपनी क्रीड़ाओं का तुम्हें शिकार बनाये और ऐसा बने मानों उसमें सचमुच कुछ है ; परन्तु तत्त्व उसमें कुछ नहीं होता । कैसा बना हुआ लौंडा है ! निरा गन्दा, मैला, बदबूदार और शरीर पर काले-काले दाग लिये हुए ! उसकी शान बस एक ही बात की है कि टमारा रेशम की कमीज उसके लिए काढ़ रही है, उसे पहिनकर वह निकलेगा । वह कुत्ता का बच्चा सबको माँ की गाली देता है और हर एक से लड़ाई मोल लेने को उसका हाथ खुजलाता रहता है ! छीः छीः छीः !' कहकर वह यकायक मज़ाकिया आवाज़ में बोल उठी, मेरी मनका ! मेरी प्यारी दूध की तरह सफेद नन्हीं मनका ! मैं तुझे जी-जान से प्यार करता हूँ ! और सदा ऐसा ही प्यार करती रहूँगी ! मेरी छोटी मनका ! मेरी हँसोड़ी गपोड़ी मनका !'

यह कहकर उसने मनका को अपने सीने से चिपटा लिया और उसे अपनी तरफ़ घसीटकर, खाट पर लिटा दिया और जोर-ज़ोर से उसके बाल, उसकी आँखों और

उसके होठों को चूमने लगी। मनका ने बड़ी मुश्किल से अपने आपको उससे छुड़ाया और अपने बिखरे हुए चमकीले बाल और खींचा-तानी से लाल हो जानेवाले चेहरे को लिये शर्म और हँसी के मारे आँखें नीची कर लीं।

'छोड़ो जेनी! छोड़ दो मुझे! हाय, मैं क्या करूँ! जाने दो मुझे!'

'नन्ही मनका इस चकले भर में सबसे नम्र और शान्त छोकरी है। वह सबसे स्नेहपूर्ण व्यवहार करती है, सबकी बात मान लेती है, और किसी की कोई प्रार्थना अस्वीकार नहीं कर सकती जिससे दूसरे सब भी उससे बड़ा स्नेह का व्यवहार करते हैं। वह ज़रा-ज़रा सी बात पर लजाती है और लजाते हुए विशेष सुन्दर लगती है। लेकिन जब वह तीन-चार ग्लास अपनी प्रिय शराब को चढ़ा जाती है तब उसकी शक्ल ही बिल्कुल बदल जाती है और वह मरने मारने पर उतारू हो जाती है और इतना ऊधम मचाती है कि अक्सर चकले की चची या खाला को या द्वारपाल को यहाँ तक कि पुलिस तक को उसको काबू में रखने के लिए आना पड़ता है। नशे में हो जाने पर मेहमान के मुह पर तमाचा जड़ देना, उसके मुँह पर शराब का गिलास मार देना या लैम्प उलट देना अथवा मालकिन को गालियाँ सुनाना उसके लिए बड़ी साधारण बातें होती हैं। जेनी को उससे एक विचित्र-सा स्नेह है यहाँ तक कि वह उसपर फ़िदा-सी है।

'खाना तैयार है! खाना तैयार है!' जोशिया रास्ते में से चिल्लाती हुई निकल गई। दौड़ते-दौड़ते उसने मनका का द्वार खोला और उसमें जल्दी से घुसकर बोली, 'खाना तैयार है, श्रीमती!'

सबकी सब छोकरियाँ उसी प्रकार पेटीकोट और कुर्तियाँ पहिने, बिना हाथ-मुँह धोये, स्लीपर पहिने अथवा नंगे पाँवों ही, रसोईघर में इकट्ठी हो गईं। अच्छा-अच्छा खाना सबके सामने रख दिया गया, परन्तु किसी को भूख नहीं मालूम देती क्योंकि सब लगभग दिन-भर बैठी रहती हैं और रात को ठीक-ठीक सो भी नहीं पातीं। दूसरी बात यह भी थी कि जिस प्रकार स्कूल की लड़कियाँ छुट्टी में मिठाइयों से पेट भर लेती हैं, इन छोकरियों ने भी बाजार से हलवा और मिठाइयाँ मँगाकर काफ़ी पेट भर लिये थे जिससे इस समय किसी को भूख नहीं लग रही थी। सिर्फ़ नोना नाम की एक छोटी, गद्दर नाकवाली, खुर्राटे भरनेवाली गंवारू लड़की, जिसको एक व्यापारी भगाकर दो ही महीने हुए चकले में बेच गया था, चार के हिस्से का खाना

खा रही थी। उसकी भूख—गांव की साधारण औरत की भूख – अभी तक मरी नहीं थी।

जेनी जो खाना चख-चखकर खाने का बहाना कर रही थी, दिखावटी स्नेह दिखाती हुई नीना से बोली :

'नीना प्यारी, मेरा खाना भी तुम्हीं खा लो। खा लो मेरी प्यारी। शर्माओ मत। तुम्हें अपनी तन्दुरुस्ती का ख्याल रखना चाहिए। मगर बहिनों देखो, मुझे तो इसके पेट में केंचुए लगते हैं। केंचुए जिसके भी पेट में होते हैं, उसे दुगना खाना खाना पड़ता है – आधा अपने लिए और आधा केचुओं के लिए।'

नीना क्रोधित होकर खुर्राटे भरती हुई ऐसी मोटी-आवाज़ में नाक से बोलती है कि उसका छोटा क़द देखते हुए उसके मुँह से इतनी मोटी आवाज़ का निकलना आश्चर्यजनक लगता है।

'मेरे पेट में तो केंचुए नहीं हैं। तुम्हारे पेट में लगते हैं। इसी से तुम इतनी सूखी-साखी हो!'

यह कहकर वह फिर निश्चित होकर खाने लगती है। खा चुकने पर उसे ऊँघ लगती है और वह एक अजगर साँप की तरह ज़ोर से साँसें भरने लगती है। बार-बार पानी पीती है, हिचकियाँ लेती है, और दूसरों की नज़रों से छिपाकर अपने मुँह के सामने उङ्गलियों से क्रास का चिह्न बनाती है जो कि उसकी एक पुरानी आदत है।

इतने में जोशिया की आवाज़ टनटनाती हुई आती है—'पोशाकें पहनिए श्रीमती! पोशाकें पहनिए! अब बैठने का समय नहीं रहा। काम का समय हो गया है!'

और कुछ ही मिनिटों में चकले के सभी कमरों से बालों के झुलसने की और बोरिक थायमल साबुन की और सस्ते क़िस्म के यू-डी-कोलोन की गन्ध आने लगती है। छोकरियाँ अपने-अपने कमरों में तैयारी करने लगती हैं।

चौथा अध्याय

सन्ध्याकाल की लालिमा आकाश में छा रही थी और अँधियारी और गरम रात अपने पंख फैलाती हुई आ रही थी। रात हो जाने पर भी, लगभग आधी रात तक, लालिमा आकाश में छाई रही। चकले के द्वारपाल सिमियन ने बैठक की सारी बत्तियाँ और कन्दील जला दिये थे और जीने के द्वार पर लटकनेवाली लाल लालटेन भी जला दी थी। सिमियन पतले, परन्तु सुगठित शरीर का, गम्भीर, कठोर, सीधे और चौड़े-चौड़े कन्धों और काले-काले बालों का, चेचकरूह आदमी था। उसकी भौएँ और मूँछें चेचक से जगह-जगह कुतरी हुई थीं और उसकी आँखें काली-काली सुस्त और गुस्ताख थीं। दिन भर वह खाली रहता था और सोया करता था, परन्तु रात को वह द्वार पर बत्ती के नीचे बराबर बैठा रहता था जिससे कि आनेवाले मेहमानों को फौरन कोट इत्यादि उतारने में सहायता करे, उन्हें खातिर से ले जाकर बैठक में बैठाये, और कोई झगड़ा बखेड़ा हो तो मुस्तैद रहे।

रात होते ही पियानो बजानेवाला उस्ताद भी आ जाता था। वह एक लम्बे क़द का शानदार नौजवान था, जिसकी भौंओं और पलकों के बाल सफेद थे और एक आँख में फूली थी। जब तक मेहमान नहीं होते थे, वह और इसाय मिलकर एक प्रचलित नाच की धुन की गतें अपने साज़ पर बजाते थे। परन्तु मेहमान जब उन्हें बजाने का हुक्म देते थे तो हर गत के लिए मेहमानों को इन्हें आठ आने या उससे कम, जैसी गत हो उसके अनुसार, देने होते थे। इसमें से आधे दाम मालकिन अन्ना के हो जाते थे और बाक़ी आधे इन दोनों उस्तादों में बराबर-बराबर बँट जाते थे। इस प्रकार पियानो बजानेवाले को जो कि वास्तव में उस्ताद था, इस कमाई का सिर्फ़ एक चौथाई भाग ही मिलता था जो कि सरासर अन्याय था, क्योंकि इसाय उस्ताद तो क्या, निरा ढोंगी था और जहाँ तक सङ्गीत का सम्बन्ध था, कुन्दये नातराश था—उसके कान सङ्गीत की धुनें उतनी ही समझते थे जितनी कि एक लकड़ी का टुकड़ा समझता है। बेचारे पियानो बजानेवालों को बार-बार उसे इशारे कर-करके स्वर में लाना होता था और जब ऐसा करने पर भी यह स्वर में नहीं बजा पाता था तो बेचारा पियानो बजानेवाला मज़बूरन ज़ोर-ज़ोर से पियानो की टंकारें निकालने लगता था और इन ज़ोर-ज़ोर की टङ्कारों में उसके ऊटपटांग स्वरों

को डुबो देता था। इस चकले की छोकरियाँ मेहमानों से अपने पियानो के उस्ताद का ज़िक्र अभिमान से करती हुई कहती थीं कि हमारे उस्ताद ने संगीत विद्यालय में बाक़ायदा शिक्षा पाई थी और वे हमेशा अपने दर्जे में अव्वल रहते थे। चूँकि वे यहूदी थे और उनकी आँखें भी खराब रहने लगी थीं इससे वे वहाँ से अपनी शिक्षा पूरी करने की उपाधि नहीं ले सके। पियानो के उस्ताद का सभी छोकरियाँ ख्याल रखती थीं और उससे सँभलकर कुछ-कुछ तरस खाने का-सा, ज़रा नागवार मालूम होनेवाला सा, स्नेह का व्यवहार करती थीं जो कि चकलों के शिष्टाचार के अनुसार भी होता था ; क्योंकि चकलों में भी तो आखिर ऊपरी बेहूदगियों और गाली-गलौज के नीचे वही ज़नाना और मीठा स्नेह रहता है जो कि स्त्रियों के आश्रमों में और जैसा कि सुना जाता है कि स्त्रियों की जेलों में भी रहता है।

अन्ना के चकले की सारी लड़कियाँ पोशाकें पहिनकर मेहमानों के स्वागत के लिए तैयार हो चुकी थीं और बेकाम बैठी-बैठी इन्तज़ारी से ऊब रही थीं। यद्यपि यहाँ की स्त्रियों की सभी आदमियों के प्रति, सिर्फ़ अपनी पसन्द के कुछ चाहनेवालों को छोड़ कर — बिल्कुल उदासीनता, यहाँ तक कि नाक भौंएँ सिकोड़नेवाली उदासीनता-सी रहती थी ; फिर भी शाम होते ही उनके मन में तरह-तरह की धुँधली आशाएँ उठने लगती थीं जिससे उनमें एक नया जीवन-सा आ जाता था। यह किसी को मालूम नहीं रहता था कि आज रात को उसका किससे पाला पड़ेगा। अस्तु हर शाम को आशाएँ होने लगती थीं कि मुमकिन है आज रात को कोई ख़ास बात हो जाये। कोई असाधारण आनन्ददायक, आकर्षक घटना हो जाये, शायद कोई मेह मान अपनी उदारता से आश्चर्य-चकित कर दे अथवा कोई ऐसा अनहोना करिश्मा हो जावे कि जिससे बिल्कुल शायद जीवन ही एकदम बदल जाय। इन आशाओं और कल्पनाओं के पीछे भी वही भावना होती थी जो एक अनुभवी जुआरी के हृदय में जुआ खेलने के लिए चलने से पहिले रुपये गिन-गिनकर अपनी थैली में भरने के समय होती है। यद्यपि विषय-भोग इन अभागी स्त्रियों का पेशा ही हो गया था फिर भी उनमें स्त्री जाति की मनुष्य को प्रसन्न करने की परम भावना अभी तक मरी नहीं थी।

और वास्तव में रोज़, तरह-तरह के विचित्र हास्यास्पद लोग आते थे, तरह-तरह की घटनाएँ घटा करती थीं। एकाएक जासूसों के साथ पुलिस आ धमकती थी और

आकर रईस और दीखनेवाले मेहमानों को गिरफ्तार कर लेती थी और उन्हें धकि-याती हुई बाहर निकाल ले जाती थी। कभी-कभी चकलों के द्वारपालों और शराबी मेहमानों की आपस में फौजदारियाँ होती थीं। किसी एक द्वारपाल से झगड़ा शुरू होता था और दूसरे द्वारपाल उसकी मदद को दौड़ते थे और गली में भारी जमाव हो जाता था, जिससे सिर-फुटव्वल होने के साथ खिड़कियों के शीशे टूट जाते थे। पियानो के तख्ते और कुर्सियों के पाये हवा में उड़ते दिखाई देते थे और बैठकों के लकड़ी के फर्श खून से लाल हो जाते थे और फटे हुए सिरों और टूटी हुई पस-लियों के लोग, द्वार के बाहर गली की धूल में लोटते हुए नज़र आते थे। यह नज़ारे जेनी को बहुत पसन्द थे और इस प्रकार के झगड़े शुरू होते ही वह खुशी से कूद उठती थी और अपने कूल्हे पीटती हुई बिल्कुल भीड़ में जा घुसती थी और वहाँ खड़ी होकर सबको खूब गालियाँ सुनाती थी। जब कि उसकी सङ्गिनियाँ डर से चीखती और चिल्लाती हुई चारपाइयों के नीचे छिप जाने का प्रयत्न करती थीं।

कभी-कभी ऐसा भी होता था कि किसी मज़दूर-संस्था का कोई सदस्य अपने पिट्ठुओं की टोली के लिए आ धमकता था या कहीं से रुपया ग़बन करके व्यभिचार और जुये में उड़ा देनेवाला, भागा हुआ मुनीम आ पहुँचता था जो कि जेल में जाने अथवा खुदकुशी करने से पहिले, शराब के नशे में बुत्त आखिरी रुपयों को बर्बाद कर देने के लिए होता था। ऐसे मौकों पर चकले के द्वार और खिड़कियाँ कसकर बन्द कर दिये जाते थे और लगातार दो-दो रात और दिन तक रूसी वीभत्सता का ताण्डव-नृत्य होता था, जिसमें एक भयंकर स्वप्न की तरह, उबा देनेवाली क्रूर चीत्कारों और रुदन के साथ स्त्रियों के अङ्गों से क्रीड़ाएँ होती थीं। यह स्वर्गीय रातें कहलाती थीं जिनमें नंगे, नशे से चूर, कमान के-से पैरोंवाले, बालोंदार, बड़ी-बड़ी तोंदवाले आदमी और लटके हुए शरीरों की, सूखी और पीली स्त्रियाँ साज़ पर वीभत्स नाच रचते थे। वे शराब पी-पीकर चारपाइयों और फ़र्शों पर सुअरों की तरह लुढ़कते फिरते थे और कमरों की हवा शराब और गन्दे शरीरों से निकलनेवाले पसीने की बदबू से सड़ उठती थी।

कभी-कभी सरकस या अखाड़ों के पहलवान भी आते थे जिनके आने पर यहाँ के निवासियों पर वैसा ही असर होता था जैसा कि एक घोड़े को कमरे के भीतर लाकर खड़ा कर देने पर होता है। कभी-कभी नीली पतलून और सफ़ेद मोज़े चढ़ाये

हुए कोई चीनी आ जाता था जिसकी लम्बी चोटी पीछे लटकती होती थी। कभी किसी होटल का हब्शी नौकर चारखाने की पतलून पहिने और अपनी जाकेट के बटन के एक छेद में फूल घुसेड़े आ जाता था। उसके सीने पर लगा हुआ कालर बड़ा सख्त और चमकता हुआ सफेद होता था। छोकरियों को आश्चर्य होता था कि उसका यह चमकदार सफेद कालर उसके काजल की तरह काले चमड़े से लगकर काला तो नहीं होता था, बल्कि उलटा और अधिक सफेद चमकता था।

ऐसे विचित्र आदमी इन सम्भोग-लिप्त वेश्याओं को फिर से उकसाते थे और उनको थकी हुई इच्छाओं को और उनकी पेशेवर उत्कण्ठाओं को उत्तेजित कर देते थे। सभी छोकरियाँ उनके पीछे-पीछे एक दूसरे को धकियाती हुई दौड़ती थीं।

एक बार सिमियन एक काफ़ी उम्र के, अच्छी हैसियत के आदमी को लेकर बैठक में दाख़िल हुआ। उस आदमी में कोई ख़ास बात न थी—उसका चेहरा पतला, कठोर और मनहूस लगता था, जिसमें गालों की हड्डियाँ बड़ी-बड़ी और बाहर को फोड़ों की तरह निकली हुई थीं; उसका माथा छोटा, दाढ़ी नुक्कल, भृकुटियाँ भारी और एक आँख दूसरी से कुछ ऊपर उठी हुई थी। कमरे में घुसते ही उसने हाथ उठाकर क्रॉस का चिह्न बनाने की चेष्टा की और कनखियों से कमरे के कोनों की तरफ देखा, परन्तु वहाँ किसी की मूर्ति नहीं थी। मूर्ति न होने से वह परेशान नहीं हुआ। उसने अपना हाथ नीचे गिरा लिया और फौरन व्यावहारिक ढङ्ग पर सबसे मोटी छोकरी किटो की तरफ़ बढ़ा और एक कमरे के द्वार की तरफ इशारा करके रूखी आवाज़ से हुक्म देता हुआ बोला, 'चलो अन्दर!'

उसके अन्दर चले जाने पर सिमियन ने, जिसके बारे में समझा जाता था कि दुनिया-भर का ज्ञान उसे है, नियूरा को, जो इस समय उसकी मालकिन थी, फ़क्र और रहस्य के साथ बतलाया कि आज का मेहमान वह मशहूर नागरिक है, जिसने पिछले वर्ष सरकारी जल्लाद की गैरहाजिरी में उसका काम अजाम देने के लिये स्वयं-सेवक होने की सरकार को अर्जी दी थी और ग्यारह बलवाइयों को दो दिन में सबेरे ही अपने हाथों से फाँसियों पर लटका दिया था। नियूरा ने भय से आँखें घुमाते हुए यह खबर अपनी सभी सङ्गिनियों के कानों में कह दी। वीभत्स बात तो अवश्य थी परन्तु यह ख़बर सुनते ही सब छोकरियाँ मोटी किटी के प्रति ईर्ष्या करने लगीं और उन सबका मन एक सिर फिरा देनेवाली उत्कण्ठा से दुख उठा।

आध घण्टे बाद जब जल्लाद कमरे से निकला और गम्भीरता-पूर्वक जाने लगा तो सब छोकरियाँ भौंचक्की-सी द्वार तक आप से आप उसके पीछे गईं और जब वह गली में चला गया तो खिड़की में से उसे, जब तक वह आँखों से ओझल नहीं हो गया, देखती रहीं। फिर वे दौड़ती हुई किटी के कमरे में घुस गईं जहाँ वह अभी तक अपने कपड़े पहिन रही थी और उस पर तरह-तरह के प्रश्नों की बौछार कर दीं। वे एक नये भाव से, लगभग आश्चर्य से, किटी के मोटे, लाल, नगे हाथों, सिमटे हुए विस्तर और पुराने चिकने नोट को देखने लगीं जो किटी उन्हें अपने मोजे में से निकालकर दिखा रही थी। किटी कोई खास बात उन्हें उनके प्रश्नों के उत्तर में नहीं बता सकी। उसने उनके प्रश्नों का कारण न समझते हुए इतना ही कहा कि 'जैसे और आते हैं वैसा ही यह भी था।' मगर जब उसे मालूम हुआ कि उसके पास आनेवाला मेहमान कौन था तो वह न जानें क्यों फूट-फूट कर रोने लगी।

यह मनुष्य जो कि अछूतों में भी अछूत था, इतना गिरा हुआ जितना कि मनुष्य कल्पना कर सकता है, यह मनुष्यों को फाँसी लगाने के लिए स्वयसेवक बननेवाला मनुष्य उसके पास आता है और उससे गुस्ताखी का व्यवहार तो नहीं करता, परन्तु ऐसा रूखा, हिक़ारत और काठ का-सी लापरवाही का व्यवहार करता है जैसा कि कोई मनुष्य से कभी न करेगा। मनुष्य तो दूर, किसी कुत्ते, घोड़े, छाते, ओवरकोट या टोप के साथ भी ऐसी लापरवाही का व्यवहार नहीं किया जाता। उसने उसके साथ एक गन्दे चीथड़े या ऐसे अपवित्र पदार्थ की तरह बर्त्ताव किया है, जिसका अनिवार्य होने पर इस्तेमाल तो कर लिया जाता है, परन्तु इस्तेमाल के बाद ज़रूरत निकल जाने पर, बेकार और गन्दी वस्तु समझकर उसे दूर फेंक दिया जाता है। इस विचार ने मोटी किटी को भी, जिसका दिमाग़ एक मोटी मुर्गी का-सा था, रुला दिया। यद्यपि उसकी समझ में बिलकुल न आया कि वह व्यर्थ में क्यों रो रही है!

इसी प्रकार की और भी घटनाएँ इस चकले में होती थीं जो यहाँ की अभागी, मूर्ख, बीमार निवासियों के गन्दे नाले की तरह बहनेवाली जीवन में खलबली पैदा करती थीं। कभी क्रूर ईर्ष्या के कारण पिस्तौलें चल उठती थीं और कभी किसी को ज़हर खिलाकर मार डाला जाता था। कभी-कभी परन्तु बहुत कम, इस कूड़े के ढेर पर सच्चे प्रेम का भी फूल खिल उठता था और कभी-कभी कोई छोकरी अपने किसी प्रेमी के साथ भाग जाती थी। परन्तु आम तौर पर कुछ रोज बाद ही वह फिर वहाँ

लौट आती थीं। दो-तीन बार ऐसा भी हुआ कि कुछ स्त्रियों के हमले रह गये जो कि चकलों में बड़ी शर्म की बात समझी जाती है, परन्तु साथ ही गम्भीर थी।

ख़ैर कुछ भी हो, रोज़ शाम को तो चकले में ऐसा उत्तेजित, नमकीन और वसन्ती जीवन होता था कि उसके मुकाबले में यहाँ की आलसी स्त्रियों को जिन्होंने अपना चरित्र और बुद्धि नष्ट कर डाली थी, दुनिया के और सारे जीवन फीके लगते थे।

पाँचवाँ अध्याय

अन्ना मारकोवना के घर में एक एसी घटना घटो, जिसका प्रारम्भ तो साधारण तौर पर हर रोज़ का-सा था, परन्तु जिसका अन्त एक एसी विचित्र पहेली में हुआ जो इस कटरे के निवासियों की समझ में न आ सकी।

जाड़े के दिनों में एक दिन शाम को, कोई छः बजे होंगे, किसी ने ज़ोर से अन्ना के द्वार की घण्टी बजाई।

द्वारपाल सिमियन ने दरवाज़े के छेद में से देखा कि एक स्त्री द्वार पर खड़ी थी। अस्तु, उसने द्वार खोलकर पूछा :

'किसको चाहती हो?'

'इस घर की मालकिन को।'

'क्या काम है?'

'उन्हीं से काम है। मैं भी इस घर में शामिल होना चाहती हूँ।'

'ज़रा ठहरो—मैं अभी मालकिन से कहता हूँ।'

उसने दरवाज़ा बन्द कर दिया और दौड़ा ऐम्मा ऐडवार्डोवना के पास गया। ऐम्मा ने उससे विस्तार से पूछा कि औरत किस तरह की लगती है, कैसा उसका चेहरा है, कैसी पोशाक है, कहीं कोई सरकारी जासूस तो नहीं है? आखिरकार वह बोली :

'अच्छा, उसे यहाँ ले आओ। मगर तुम भी पास में ही मुस्तैद रहना, जिससे ज़रूरत पड़ते ही फौरन आ जाओ। मुझे ज़रूरत पड़ी तो मैं चिल्लाकर तुम्हें बुला लूँगी।'

औरत अन्दर आई। खाला की तेज़, सब कुछ देख लेनेवाली दृष्टि क्षण भर में

उसके सारे शरीर पर घूम गई। ज़ाहिर था कि आनेवाली औरत पेशेवर नहीं थी। वह काले रेशमी कपड़े पहिने थी। उसके चेहरे पर किसी क़िस्म के बनावटी शृङ्गार के चिह्न भी नहीं थे। उसका क़द ऊँचा नहीं था, परन्तु उसके अङ्गों का गठन सुन्दर था और उसमें नज़ाकत थी। उसका चेहरा भी चतुर और सुन्दर था, जिस पर पीले रङ्ग की सुन्दर झलक थी। आँखें चमकदार नीले रङ्ग की हिरनी की तरह चौकन्नी थीं।

'लगभग बीस वर्ष की होगी शायद', ऐम्मा ने अपने मन में सोचा और फिर पूछा।

'आपकी क्या उम्र है, श्रीमती ?'

'छब्बीस साल की।'

'सच ? परन्तु इतनी उम्र तुम्हारी लगती तो नहीं है! क्या तुम्हें अपने कपड़े उतार देने में कुछ कठिनाई होगी ?'

'सारे कपड़े उतार दूँ ?'

'हाँ, सारे ही उतार दो—चोली भी। कमरा काफ़ी गरम है। ठण्ड नहीं लगेगी!'

'बहुत अच्छा।'

औरत सारे कपड़े उतारकर बिल्कुल नङ्गी खड़ी हो गई और अपने नंगेपन पर ज़रा भी न शर्माई।

'बड़े अच्छे स्वभाव की हो!' खाला ने उसकी तारीफ़ करते हुए कहा, 'ऐसे मौक़ों पर स्त्रियाँ मर्दों से अधिक स्त्रियों के आगे शर्म दिखाया करती हैं!'

ऐम्मा ने औरत के अङ्ग-अङ्ग का अच्छी तरह शान्ति-पूर्वक उसी प्रकार मुआयना किया जैसे पशुओं के व्यापारी बैलों को ख़रीदने से पहिले उनकी अच्छी तरह देख-भाल करते हैं।

'शरीर ताज़ा है।' ऐम्मा कहने लगी, 'छातियाँ भी कड़ी हैं। जाँघें और पिण्डलियाँ बहुत सख़्त हैं। किसी ख़राब बीमारी के भी कोई चिह्न नहीं दीखते गोकि इसका ठीक पता तो डाक्टरी मुआयना हो जाने के बाद ही लग सकेगा। ज़रा अपने दाँत तो दिखाओ। अच्छा, सिर्फ़ एक ही बना हुआ दाँत है। बस, अब अपने कपड़े पहिन लो!' उसने डाक्टर की तरह अपना मुआयना ख़त्म करते हुए कहा।

'तो फिर आप मुझे अपने यहाँ रखेंगी ?' औरत ने पूछा।

'ऐम्मा मुस्कराती हुई बोली :

'हाँ ! मगर बड़ी मुसीबत यह है कि हम उन औरतों को अपने यहाँ लेने से बहुत ही डरते हैं जो कि आज़ादी की ज़िन्दगी बसर कर चुकी होती हैं। हम उनसे बहुत घबराते रहते हैं !'

'घबराने की क्या बात है ? मैं तो अपनी मरज़ी से तुम्हारे यहाँ आई हूँ, कोई मुझे जबरदस्ती तो यहाँ लाया नहीं है।'

'मान लो कि ऐसा ही है, परन्तु पीछे से ऐसे रिश्तेदार हमेशा निकल सकते हैं जो तुम्हें ढूँढ़ते हुए यहाँ आ पहुँचेंगे या तुम्हारे दोस्त जिनसे तुम ख़त किताबत करोगी, तुम्हें लेने आ जावेंगे या कोई तुम्हारे जान-पहिचान का ही यहाँ आया तो वह तुम्हें पहिचान लेगा और जाकर सबको तुम्हारे यहाँ होने को ख़बर कर देगा।'

'नहीं, इसका डर नहीं है क्योंकि मैं तो सेण्टपीटर्सबर्ग की रहनेवाली हूँ और इस शहर में पहिली ही बार आई हूँ।'

'मुमकिन है ऐसा ही हो।' अविश्वास से एम्मा ने उसकी बात मानते हुए कहा : 'मगर एक और भी सन्देह की बात है। देखने से तुम किसी भले घर की लगती हो। तुम्हारे घर-गृहस्थीवाले होंगे, शायद तुम्हारे बाल-बच्चे भी होंगे।'

'नहीं, मैं अकेली हूँ' औरत ने बहादुरी से कहा, 'मैं बिल्कुल आज़ाद हूँ। न मेरे घर-गृहस्थी ह और न बाल-बच्चे और न कोई दोस्त। बहुत दिन हुए तभी मैंने अपने पति से तलाक़ ले ली थी। अधिक बात की क्या जरूरत है। मैं तुम्हारी सारी शर्तें मजूर करती हूँ। बिल्कुल तुम्हारे रिवाज़ और नियमों के अनुसार ही रहूंगी। तुम मुझे काम में बड़ी उत्साही, बहुत आज्ञाकारी और सबसे नम्र पाओगी।'

'तुम्हारे इन वायदों को सुनकर मुझे बड़ी ख़ुशी हो रही है' मालकिन ने कहा, 'और इससे भी अधिक ख़ुशी मुझे तब होगी जब तुम्हारे यह सारे वायदे पूरे होंगे; क्योंकि अभी तक तुमने आज़ादी की ज़िन्दगी ही बिताई है और यहाँ जिस तरह तुम्हें रहना होगा, उसका तुम्हें अभी तक पूरा ज्ञान नहीं है।'

'मसलन !'

'मसलन तुम्हारा पासपोर्ट तुमसे ले लिया जायगा और पुलिस में भेज दिया जायेगा। पासपोर्ट तुम्हारे पास है ?'

'हाँ, मैं उसे तुम्हें अभी दे सकती हूँ।'

'सही पासपोर्ट है ?'

'बिल्कुल सही ।'

'अहा! तब तो बड़ा ही अच्छा है, क्योंकि उसके बारे में पुलिस बहुत झंझट करती है ।···तुम्हारा पासपोर्ट तुमसे ले लिया जायेगा और उसके स्थान में तुम्हें पीला टिकट दे दिया जायगा, जिसमें साफ़ अक्षरों में तुम्हारा नाम, तुम्हारे बाप का नाम, तुम्हारे कुटुम्ब का नाम और तुम्हारा पेशा—वेश्या—लिख दिया जायेगा। तुम्हारा पुराना पासपोर्ट पुलिस के पास ही रहेगा और उसे जब कभी वापिस लेना होगा तो बड़ी कठिनाइयों का सामना करना होगा ।'

'मुझे उन मुसीबतों का सामना करने की कभी नौबत नहीं आवेगी ।'

'अच्छी बात है और हर हफ़्ते पुलिस की तरफ़ से डाक्टर आकर तुम्हारा मुआयना करेगा !'

'हाँ, यह मैंने सुना है । यह तो अक़्लमन्दी का काम है !'

'ठीक है, यह अक़्लमन्दी का काम है । मगर और भी बातें हैं । मैं समझती हूँ, यह तो जानती ही होगी कि बाइज़्ज़त औरतों को, ख़ासकर उनको जो प्रेम का व्यापार करती हैं; अपना शरीर ठीक रखने के लिए क्या-क्या करना होता है ? ख़ैर, यह बात छोड़ो ? तुम्हें यह पता है कि जो आदमी तुम्हें पसन्द कर लेगा उसके साथ तुम्हें बिस्तर पर सोना पड़ेगा, चाहे वह कितना बदसूरत या बदबूदार क्यों न हो ?'

'हाँ, यह बड़ी कड़ी शर्त है ; ख़ैर मैं अपनी आँखें बन्द कर लिया करूँगी या मुँह फेर लिया करूँगी । बस यही सारी बातें हैं या और भी कुछ ?'

'यही मुख्य बातें हैं । छोटी-मोटी कुछ और भी हैं । एक बात और साफ़ साफ़ पहिले ही से बता दो— जिससे हममें तुममें पीछे कोई ग़लतफ़हमी न हो—तुम्हें किसी नशे का शौक है ?'

'नहीं, मैंने आज तक कभी, स्वाद जानने के लिए भी, कोई नशा नहीं किया है । मैंने देखा है, नशे का लोगों पर कितना ख़राब असर होता है, जिससे मैं नशों से हमेशा दूर रही हूँ ।'

'कभी थोड़ी शराब भी नहीं पीतीं ?'

'साथ में पड़कर, दूसरों के बहुत ज़ोर देने पर पी लेती हूँ, मगर अपने आप अकेली कभी नहीं ।'

'यह बड़ा अच्छा गुण है।' मालकिन ने कहा, 'देखो श्रीमती, मैं तुमसे ऐसे ही बातचीत कर रही हूँ जैसे एक समझदार औरत दूसरी समझदार औरत से बातचीत करती है। तुम शराब नहीं पीतीं, यह तो बड़ी अच्छी बात है, परन्तु हमारी इस सम्मानित पेढ़ी में तुम मेहमानों से—खासकर अमीर मेहमानों से—शराब पर खर्च करा सको तो यह बात बुरी नहीं समझी जायेगी। यह ज़रा-सी काबलियत और चटपटी बातचीत से बड़ी आसानी से किया जा सकता है, जिससे तुम्हें भी बड़ा फ़ायदा हो सकता है; क्योंकि शराब की हर बोतल पर पाँच फीसदी कमीशन तुम्हें भी मिलेगा। हाँ मगर मेहमानों को इतना अधिक नशा न होने देने के लिए कि वे जानवर ही बन जावें, चरित्र और समझदारी की ज़रूरत होगी।'

'मैं भरसक प्रयत्न करूँगी।'

'अच्छा, तो मैं अब तुमसे एक समझ और दोस्ती की बात भी कह दूँ। बहुत से मेहमान ऐसे भी आवेंगे जो तुमसे तरह-तरह का गन्दा विषय-भोग करने का प्रयत्न करेंगे! मुझे इन शब्दों के लिए आप क्षमा करें! परन्तु हमारी पेढ़ी को इससे कोई गरज़ और मतलब न होगा कि तुमको कमरे में किसी मेहमान के साथ रहकर लौट आने के बाद, फिर तुम्हारे गुणों के लिए अथवा तुम्हें पसन्द करने के कारण वह तुम्हें क्या-क्या तोहफ़े देता है। हमें तो सिर्फ़ अपनी निश्चित फीस के और जो खाने पीने का सामान मेहमान हमसे मँगायेगा, उसके दामों से ही ताल्लुक रहेगा। अस्तु कोई अच्छा मेहमान तुमसे अस्वाभाविक विषय-भोग करना चाहे तो तुम चाहो तो उसे टका सा जवाब दे सकती हो। हम उसके लिए तुम्हें मजबूर नहीं कर सकते और न हमें ऐसा करने का अधिकार ही है। हाँ, हमारे मुआहिदे के अनुसार तुम किसी मेहमान से साधारण विषय-भोग के लिए 'न' नहीं कह सकतीं। ऐसा तुम करोगी तो वह हमारे मुआहिदे के खिलाफ़ होगा। मगर मैं तुम्हें ऐसा गन्दा विषय-भोग चाहनेवालों के बारे में एक बात बता दूँ कि ऐसे लोग रुपया खूब देते हैं—तुम्हें मालामाल कर सकते हैं—और खाने-पीने पर रुपया उड़ाने में तो ज़रा भी नहीं झिझकते! जो कुछ तुम उनसे पाओगी वह लूट तुम्हारी होगी! हमें तो जो कुछ भी अधिक मिलेगा, वह सिर्फ़ खाने-पीने की क़ीमत से ही मिलेगा। मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप इन सब बातों पर और अच्छी तरह, गौर से, सोच लें।'

'मैं और भी सोचूँगी—गौर करूँगी।' मगर फिर भी एक बात तो मैं अभी

कह दूँ—मेरी स्पष्टता के लिए मुझे माफ़ करना—कि हरएक के साथ विषय-भोग करना मेरे लिए बड़ा कठिन होगा—क्या हर एक के साथ करना ही होगा...?'

'मैं तुम्हारी कठिनाई समझती हूँ। मगर तुम्हारी जैसी प्रिय सङ्गिनियों के लिए कभी-कभी इस नियम में ढील भी कर दी जाती है। किसी खास आदमी से तुम विषय-भोग न करना चाहोगी तो तुम्हें उसकी फीस के दाम और आठ आने खाने-पीने के मुनाफ़े के लिये पेढ़ी को देने होंगे और तुम उस आदमी से विषय-भोग न करने के लिए आज़ाद होगी। हम मेहमान को यह कहकर टाल देंगे कि तुम्हारे महीने के दिन हैं।

वह कुड़बुड़ करेगा तो हम उसे पुलिस के क़ायदे दिखा देंगे जिसमें, बड़ी दूरद-र्शिता से, इस काल के लिए यह काम वर्जित कर दिया गया है। मगर यह सहूलियतें हम उन्हीं छोकरियों को देते हैं जो कि हमारी पेढ़ी की शोहरत बढ़ाती हैं।'

'मैं आपकी पेढ़ी की शोहरत बढ़ाने की अज़हद कोशिश करूँगी जिससे कि आप मुझे ये सहूलियत आसानी से दे सकें।'

'सब ठीक है।' एम्मा ने शाही अदा से सिर हिलाते हुए कहा, 'मगर एक बात मैं तुमसे और पूछने की इज़ाजत चाहूँगी—तुम यहाँ क्यों आना चाहती हो ! आसानी से कमाई करने के विचार से ? या तुम किसी कारण से अपने जीवन से निराश हो गई हो ? या तुम किसी को चिढ़ाने, या किसी का मानमर्दन करने के लिए यह सब कर रही हो ? अथवा इस प्रकार का जीवन देखने की एक महज़ पागलपन की उत्क-ण्ठा तुम्हारे हृदय में हो उठी है ?'

'आह, श्रीमतीजी—यह कारण तो मेरे लिए बहुत हक़ीर है।' आगन्तुक स्त्री ने दृढ़ता से कहा, 'मैं तुम्हें एकान्त में अपना भेद बता दूँगी। है तो एक साधारण-सा ही कारण—मेरे मन में मर्दों के लिए एक हविश रहती है जो बुझाये नहीं बुझती। रोज़ नये-नये मर्द मुझे चाहिए। मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ कि यह कोई विषय-भोग-सम्बन्धी मुझमें मानसिक रोग नहीं है। अधिकतर मर्दों को भी औरतों के लिए ऐसी ही इच्छा रहती है। मगर समाज में रहने के कारण लोगों को इस प्रकार की विषय-लोलुपता पूरी करना सम्भव नहीं होता, क्योंकि समाज के सैकड़ों और हजारों लोगों से हर आदमी की जान-पहिचान होती है। प्रेम करने के लिए समाज में पहिले तो लम्बी जान-पहिचान की आवश्यकता होती है, जिसमें काफ़ी विघ्न और बाधाएँ पड़ा

करती हैं ; फिर प्रेम की उड़ानें जो धीरे-धीरे नीचे होकर ज़मीन से आ लगती हैं और एकदम सपाट हो जाती हैं ; तब नाटक का अन्तिम परन्तु अनिवार्य दृश्य आता है जो उदासीन और पेचीदा होता है जिसमें ईर्ष्या, उलाहने, धमकियाँ और आँसुओं का मेंह बरसता है । भाड़ में जाये ऐसा रोना-धोना ! मैं तो कभी नहीं रोती ! मेरे मर्द को ही रोना होता है--वही रो-रोकर आत्म हत्या की धमकी देने लगता है ; और फिर जिस घटना का वर्षों से इन्तजार होता है, वह होती है--नाटक का पटाक्षेप होता है--दोनों एक दूसरे से अलग हो जाते हैं अथवा वह चुपचाप छोड़कर भाग जाता है ! छीःछीः धिक्कार है ऐसा जीवन ! ऐसे जीवन से बचने के लिए ही मैं तुम्हारे यहाँ आ रही हूँ । तुम्हारे यहाँ यह कठिनाइयाँ मुझे न उठानी होंगी और आसनी से नित्य मर्द मिल सकेंगे । हाँ, मुझे बीमारियाँ हो जाने का ज़रूर डर लग रहा है…।'

'उसकी फिक्र मत करो । हमारे घर में बीमारियाँ होने को शहर से भी कम सम्भावना है । मैं तुम्हें कुछ तरकीबें भी बता दूँगी । खाला ने व्यवहारिक ढङ्ग पर कहना शुरू किया :

'सच तो यह है कि तुम मुझे बहुत पसन्द आ गई हो । हमारी पेढ़ी में र..र तुम चमक उठोगी । मगर जाओ एक दिन और अच्छी तरह सारी बातों पर ·चि लो । शायद अच्छी तरह सोचने पर तुम्हारा मन फिर जाये ? सोचकर कल फिर इसी समय आकर जवाब देना । तब मैं तुम्हें मालकिन से मिला दूँगी । हमसे तुम्हारा बस एक ही बात का मुआहिदा होगा और वह यह कि तुम किसी ख़ास मर्द को अपना प्रेमी न बनाओगी--और सबसे अच्छा तो यह होगा कि रोज़ आनेवाले मेहमानों में भी किसी खा़स से अधिक लगाव न रखना--सभी का सिर फिरा देने की एक-सी कोशिश करती रहना--बस !'

'मैं यह काम बहुत अच्छी तरह बड़ी खुशी से करूँगी ! तुम देखोगी, तुम्हें मेरे काम से सन्तोष होगा ।'

'ऐसा करोगी तो तुम यहाँ बड़ी सन्तुष्ट और ख़ुश रहोगी ।'

'परन्तु एक छोटी सी प्रार्थना मेरी तुमसे है प्यारी…'

'मेरी प्यारी ऐम्मा ऐडवार्डोवना, मैंने अपना, मर्दों के लिए मेरी हविस का, जो भेद तुम्हें बता दिया है, वह मेरे और तुम्हारे बीच में ही बना रहे !'

'ज़रूर, ज़रूर ! मरते दम तक तुम्हारा भेद मेरे ही साथ रहेगा । मेरे और

तुम्हारे, दोनों के हक़ में यही ठीक होगा। अच्छा तो अब बन्दगी! कल तक तुमने अपना विचार न बदल दिया तो कल इसी वक्त फिर मुलाक़ात होगी।'

'मेरा विचार बदलना असम्भव है।'

दूसरे दिन यह नई औरत आकर अन्ना के चकले में शामिल हो गई और इसको पाकर अन्ना भी ख़ुश हुई। अकेला इसाय उसके वहाँ आकर रहने पर आश्चर्य-चकित था।

'यह पढ़ी-लिखी और अच्छे घर की लगती है।' वह कहता, 'ऐसे लोग बड़े लाभरहित और निकम्मे होते हैं। ऐसे लोगों से आज तक न कोई काम बना और न बन सकता है। काम पड़ने पर ऐसे लोग जी चुराने लगते हैं। उनमें मेहनत और बर्दाश्त का माद्दा नहीं होता। ज़रा मेहनत पड़ी नहीं कि बीमार पड़े।' मगर कुछ दिन बाद वह भी उसका आदी हो गया और उसने अपना कुड़बुड़ाना बन्द कर दिया।

इस नई छोकरी का चकले में नाम मगदा रखा गया।

शुरू में चकले की दूसरी छोकरियों ने, जो पहिले से वहाँ रहती थीं, मगदा को डराने, धमकाने और उसका मज़ाक उड़ाने का प्रयत्न किया। वे उस पर तरह-तरह के ताने कसतीं और उसे छोटी-छोटी बातों में सतातीं जैसे कि नये आनेवालों को हर जगह, स्कूलों में, कालिजों में, सैनिकों के दस्तों में और जेलों में भी—सताया जाता है। दुनिया का यही दस्तूर है।

मगर मगदा की आँखों और आवाज़ में एक ऐसी छिपी हुई ताकत-सी थी, जिससे उस पर इस प्रकार के सारे हमले व्यर्थ हो जाते थे। अस्तु मगदा और दूसरी छोकरियों में झगड़े की कभी नौबत नहीं आती थी। मगदा सबसे नम्रता का व्यवहार करती थी और किसी की ख़ुशामद और चापलूसी न करके सभी को ख़ुश करने की कोशिश करती थी, परन्तु फिर भी किसी से उसकी घनिष्ठता न हुई। और वह अकेली, सबसे अलग-सी, न तो किसी की मित्र और न किसी की शत्रु, इस विचित्र दुनिया में अपनी जगह बनाकर रहने लगी। यह बात ज़रूर थी कि सभी उसको वहाँ इज्ज़त की नज़र से देखते थे; क्योंकि वह हमेशा सबकी मदद करने, फ़ायदा पहुँचाने, खिलाने-पिलाने और कर्ज़ा देने के लिए तत्पर रहती थी। मगर धीरे-धीरे चकले के निवासियों का उसमें रस कम हो गया—शायद कभी कोई खास रस उनका उसमें था भी नहीं। वे उसको भूल-से गये, यद्यपि वे हर घड़ी उसको वहाँ देखते

थ। एक टमारा अवश्य कभी-कभी मगदा के पास आ जाती थी और उसके बिस्तर पर बैठकर, दस पाँच मिनट बात करती और फिर असन्तुष्ट होकर चल देती।

'तुम तो पत्थर की तरह हो, मगदा!' वह उससे कहती, 'तुम्हारे दिल नहीं सुलगता?'

ऐम्मा वार्डोवना अपनी बात की पक्की निकली। उसने मगदा की मर्दों के लिए हविस का रहस्य किसी को नहीं बताया। मगर धीरे-धीरे ऐम्मा को एक बड़ी परेशानी होने लगी। मगदा कामयाब तो ज़रूर हुई, क्योंकि अक्सर मेहमान उसे चुनते थे। वह आकर्षक थी और उन पर अपना प्रभाव डालती थी। अक्सर सबसे अमीर, हुनर में होशियार और शिष्ट मेहमान उसी को पसन्द करते थे।

परन्तु आश्चर्य की बात यह थी कि गोकि सभी उसकी तारीफ़ करते थे, कोई भी एक बार चुनने के बाद दूसरी बार फिर नहीं चुनता था। 'यह क्या अजीब बात है?' अनुभवी ऐम्मा के मन में बड़ी चिन्ता रहने लगी, 'समझ में नहीं आता! सुन्दर है, चतुर है, बातचीत भी अच्छी करती है, प्रभावशाली है, मेहमानों से रुपया भी काफ़ी खर्च करा लेती है—फिर भी दूसरी बार उसे कोई नहीं चुनता!'

उसने कुछ मेहमानों से, जिनसे उसकी घनिष्ठता थी, जानने का प्रयत्न भी किया कि मगदा क्यों लोगों को ऐसी जल्दी अपने चंगुल में फँसा लेती है और दुबारा वे उसे क्यों नहीं चुनते हैं; परन्तु उसे यही उत्तर मिलता जो उसकी समझ में न आता था कि,

'इस छोकरी के खिलाफ़ कुछ भी कहना तो बिल्कुल पाप ही होगा; क्योंकि वह बड़ी प्यारी, बड़ी मीठी, हँसमुख और नज़ाकतवाली है। मगर कैसे तुम्हें कोई समझावे?......प्रेम करने में वह बड़ी शर्मीली और मानिनी है और प्रेमी के दिल में आग नहीं लगती। अगर वह बहाना ही करे...मगर वह ऐसा नहीं कर सकती अथवा करना नहीं चाहती।'

बाहुनर और अनुभवी व्यभिचारी ऐम्मा से सीधे और संक्षेप में कहते, 'सुन्दर है, मगर निरी चटनी है! अच्छे खाने के साथ ठीक रहेगी!

आखिरकार ऐम्मा ऐडवार्डोवना ने मगदा से स्वयं साफ़-साफ़ बातें करने का निश्चय किया।

'कहो मगदा यहाँ की ज़िन्दगी तुम्हें कैसी लगती है? तुम सन्तुष्ट तो हो?'

'बड़ी सन्तुष्ट हूँ। अगर हज़रत मुहम्मद ने बहिश्त आदमियों के लिए न बनाकर औरतों के लिए बनाया होता तो मैं कहती कि बहिश्त में हूँ।'

'मगर क्या तुम्हारे मेहमान भी तुमसे सन्तुष्ट होते हैं?'

मगदा ने हँसते हुए :

'यह मुझे क्या पता? सच तो यह है कि मैं इस बात का पता लगाने का प्रयत्न भी नहीं करती। मुझे उनके मन के भावों से क्या मतलब? मैं तो ईमानदारी से सिर्फ़ अपना फ़र्ज़ अदा कर देती हूँ।'

खालाजान ने घृणा से उलाहना देते हुए कहा,

'यह तो बड़ी ख़ुदगर्ज़ी की बात है—मगदा—कि तुम सिर्फ़ अपना ही ख़्याल रखती हो। मर्दों को प्रेम करते वक़्त औरतों का सी सी करना, कराहना, चिल्लाना, नोंचना-खसोटना और गाली-गलौज करना अच्छा लगता है। किसी को पत्थर की मूर्तियों से प्रेम करना अच्छा नहीं लगता। तुम्हें थोड़ा बहुत सी-सी, सू-सू करना सीख लेना चाहिए, बीच-बीच में थोड़ी सी कर दिया करो।

मगदा ने मुँह बनाते हुए कहा,

'धन्यवाद, आपकी सलाह के लिए! मैं पड़ोस के कमरों से ऐसी बनावटी प्रेम की चीत्कारें सुना करती हूँ जो मुझे बड़ी हास्यास्पद और घृणोत्पादक लगती हैं। मैं ऐसी बनावटी बातें नहीं कर सकती...'

'अच्छा, जैसी तुम्हारी मरज़ी', खालाजान ने कहा और फिर चेहरे की आकृति बदलकर कहने लगी, 'तुम नायक नहीं बनना चाहती तो जाओ फिर तुम सैनिक ही रहो। आज से तुम्हारी सब रियायतें बन्द! अब अधिक तुम्हारी खातिर न की जायेगी। आज से जो आदमी भी तुम्हें बैठक में चुन लेगा, उसी के साथ तुम्हें जाकर लेटना होगा—चाहे वह राक्षसों का राजा ही क्यों न हो—चाहे वह कितना ही घृणित और गन्दा हो।'

'और मैं इसके लिए राज़ी न होऊँ तो?' मगदा ने बिगड़कर पूछा।

'तुमको राज़ी करा लिया जायेगा, मेरी प्यारी? हाँ! तुम्हें राज़ी होना ही पड़ेगा।'

'कौन मुझे राज़ी कर लेगा?'

'कौन राज़ी करेगा? यही सिमियन करेगा और कौन! तुमने अभी तक उसका

बैलों की रगों से बना हुआ कोड़ा नहीं देखा है ? उसका मज़ा भी तुम्हें चखने को मिल जायेगा। परेशानी की कोई बात नहीं है। तुमसे भी कहीं सख़्त और भयङ्कर स्त्रियों को हम ठीक करके रास्ते पर ला चुके हैं!'

'मैं तुम्हारे खिलाफ़ रिपोर्ट कर दूँगी!'

'किससे ?'

'पुलिस से···गवर्नर से!'

'गवर्नर तक तुम्हारी पहुँच न हो सकेगी और पुलिस सब हमारी खरीदी हुई है। तुम यहाँ से एक खत तक बाहर न भेज सकोगी। अब से तुम हमारी कड़ी निगरानी में रहोगी।'

'मैं निकलकर भाग जाऊँगी!' मगदा क्रोध से चिल्लाकर बोली।

'कहाँ भागकर जाओगी मेरी परम प्यारी! तुम्हारे लिए कौन-सी जगह है ? मैं जानती हूँ तुम भागना चाहोगी! मगर यहाँ से तुम भाग भी न सकोगी। हम तुम्हें जान से नहीं मारेंगे, मगर तुम्हारी यह शान तो हमें नीची करनी ही होगी। बेहतर तो यही होगा कि तुम अपने आप ही ठीक रास्ते पर आ जाओ और हमें यह सब करने के लिए मजबूर न करो। तुम्हारे लिए भी यही ठीक होगा। उठो, चलो, बैठक में जाकर बैठो।'

तीन दिन के बाद एक अजीब घटना हुई। दोपहर के समय कामदेव की तरह एक सुन्दर नौजवान, फ़ौज के कप्तान की पोशाक में अन्ना के यहाँ आया और सीधा बैठक में घुसता हुआ चला आया। उससे एक क़दम पीछे, वर्दी में बाक़ायदा 'अटेन्शन' मानो परेड पर हो, इन्सपेक्टर बरकेश था। आज तक कटरेवालों ने कभी भयङ्कर और ढीठ बरकेश को इस प्रकार दबकर किसी के पीछे-पीछे चलता हुआ नहीं देखा था।

'मैं इस घर की मालकिन से मिलना चाहता हूँ।' फ़ौजी अफ़सर ने आकर नम्रतापूर्वक कहा :

'वह इस वक्त. यहाँ हैं नहीं।' सिमियन ने झुकते हुए कहा, 'आधे घण्टे में आती होंगी।'

बरकेश ने अफ़सर के पास अदब से जाकर कहा :

'हुज़ूर, इस काम को मुझे सँभालने की इज़ाजत दीजिए। इन टुच्चों से आपका बातें करना ज़ेब नहीं देता। हम पुलिसवालों की बात दूसरी है। हमें हर तरह की

गन्दगियों से पाला पड़ता है। अस्तु हमें ऐसे काम सँभालने का मुहावरा है। यह हमारा रोज़ का काम है!'

'अच्छा, जैसी तुम्हारी मरज़ी।' अफसर ने कहा।

'इस घर की ख़ाला को फौरन इधर लाओ!' बरकेश ने इतने ज़ोर से चिल्लाकर सिमियन से कहा कि खिड़कियों के शीशे और कन्दीलों के काँच हिल गये।

मगर ऐम्मा ऐडवार्डोवना अपने कमरे में से कछुए की तरह मुँह निकालकर आधे खुले हुए द्वार में से बैठक के कमरे में घबराई हुई झाँक रही थी। और घर भर की छोकरियाँ परेशान एक कमरे में, रात के कपड़ों में ही इकट्ठी एक दूसरे द्वार में से एक के ऊपर से एक बैठक में झाँक रही थीं।

'अभी आई! अभी आई।' खाला अपनी गर्दन को हाथों से ढाँकती हुई बड़-बड़ाई 'ज़रा क्षमा कीजिए! एक मिनट ठहरिए! मैं अभी आई। कपड़े पहिन लूँ।'

'एक सेकण्ड भी हम नहीं ठहर सकते! बरकेश ने दहाड़कर उसको उङ्गली दिखाकर डराते हुए कहा, 'हम यहाँ तुम्हें सराहने नहीं आये हैं, खूसटजान!'

अफ़सर ने हाथ के इशारे से बरकेश को रोकते हुए कहा,

'इतना ज़ोर से क्यों चिल्लाते हो?'

'हुज़ूर, ये पशु मीठी-मीठी बातें नहीं समझते। इन लोगों से बिना सख़्ती के काम नहीं निकलता।' फिर उसने आवाज़ एक दम धीमी करके कहा, 'हुज़ूर' इस कमरे में तशरीफ़ ले चलें!

वे उसी मालकिनवाले कमरे में घुसे, जिसमें त्रिदेव के त्योहार को बरकेश ने, उस रोज, काफ़ी और शराब उड़ाई थी। ख़ाला कमरे में अभी तक हाथ में कुछ चिथड़े और पिनें लिये दौड़ रही थी, बरकेश ने उसे ठीक करने के लिए घुसते ही कहा:

'पुराना जूता फिर नया नहीं हो सकता! तुम कितनी ही बनने की कोशिश करो, मगर उससे तुम अब जवान न हो सकेगी। बैठो! देखो, यह क्या है?' यह कहकर उसने एक क़ाग़ज़ ख़ाला की नाक से लगा दिया जिसमें परमात्मा के समान शक्तिमान् ज़िला सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस के हस्ताक्षर थे। 'बोलो तुम इस औरत को जानती हो?' वह उस काग़ज़ में से हुलिया और बयान पढ़ता हुआ उससे पूछने लगा।

'जानती हूँ, हुज़ूर।'

'उसका पीला टिकट लाओ। हुज़ूर, उस टिकट को यहीं फाड़कर फेंक दिया जाय या हुज़ूर पसन्द करेंगे कि मैं उसे हुज़ूर को दे दूँ?'

'मुझे दे दो।'

'क्या नाम उसका यहाँ था?'

'मागदा, हुज़ूर!'

'तुम्हारी छिनालों में से कौन सबसे होशियार और तेज़ है?'

'टमारा!'

'टमारा? ठीक है! बुलाओ उसे यहाँ फौरन्!' उसने स्वयं द्वार में से मुँह निकालकर चिल्लाकर कहा – टमारा, फौरन् इधर आओ! क्या कहा, कपड़े नहीं पहनी हुई हो! कुछ हर्ज नहीं, जैसी हो वैसी ही चली आओ! फौरन आओ!'

टमारा लपकती हुई उसके पास पहुँच गई।

'फौरन तुम श्रीमती···मगदा के पास जाओ और उनका मुँह-हाथ धुलाकर, उन्ही के कपड़े पहनवाकर यहाँ ले आओ। दूसरी सब छिनालों से कह दो कि अपने कमरों में चली जायें! अपनी शक्लें हमें दिखाने की कोशिश न करें, वरना सबको ले जाकर हवालात में बन्द कर दिया जायेगा!'

कुछ देर बाद मगदा आई। वह बिल्कुल डरी हुई नहीं थी– हमेशा की तरह शान्त थी। उसको देखते ही फौज़ी अफ़सर उठकर खड़ा हो गया और उसने बड़े अदब से मगदा का आगे बढ़ा हुआ हाथ चूमा। बरकेश सतर्क होकर लैम्प के खंभे की तरह अटेन्शन खड़ा हो गया।

'इनको एक बिल के दाम देने हैं'···खालाजान ने धीरे से कहा।

'कैसा बिल? चुप रहो!' उत्साही बरकेश ने खाला पर भौंकते हुए कहा। मगर अफ़सर ने उसे इशारे से चुप कर दिया।

खालाजान को बिल के दाम, काफ़ी इनाम के साथ चुका दिये गये। बाहर एक शानदार गाड़ी इन्तज़ार कर रही थी जिसमें बरकेश ने फ़ौजी अफसर और श्रीमती मगदा को चढ़ने में बड़े अदब से मदद करते हुए बैठाया और गाड़ी उन दोनों को लेकर चल दी।

टमारा जब मगदा को कपड़े इत्यादि पहनाकर तैयार कर रही थी तब उसको मगदा से बड़ी मज़ेदार बातें हुई थीं।

'अच्छा मगदा, तो तुम छिनाल नहीं हो ?' टमारा ने पूछा ।

'नहीं, वह तो मैं कभी नहीं थी ।'

'तो तुम भले, मान-मर्यादावाले घर की हो ?'

'नहीं, मैं भले कहानेवालों और मानमर्यादावालों की शत्रु हूँ ।'

'अच्छा खैर, यह तो बताओ कि फिर तुम ऐसी बुरी जगह क्यों आईं ? क्या तुम्हें जहाँ तुम आजादी से रहती थीं, वहाँ ही, जितने आदमी चाहिए, नहीं मिल सकते थे ? तुम्हें बहुत से आदमियों की ही हविस थी तो यह हविश वहाँ भी तो निकल सकती थी !'

मगदा मुस्कराई, परन्तु उसकी मुस्कराहट में उदासी भी मिली हुई थी । वह कहने लगी :

'आह टमारा ! तुम्हें विश्वास न आयेगा कि मैं अभी तक बिल्कुल सती हूँ ।'

टमारा हँसी से लोट-पोट हो गई । वह बोली, 'छःछः सात-सात आदमियों के साथ एक-एक रात में तो तुम इस घर में सोई और फिर भी तुम अभी तक सती ही बनी हो ? बड़ी अच्छी सती हो ।'

मगदा का चेहरा एकदम गम्भीर हो गया । वह टमारा की तरफ़, जो अपनी एड़ियों पर बैठी हुई थी, झुकी और उससे शान्त भाव से पूछा :

'टमारा, तुम चतुर लड़की हो ! मेरे एक प्रश्न का उत्तर दो···मान लो कि तुम एक जवान और तुम्हारे शब्दों में 'सती' लड़की हो और कोई नीच तुम्हें पकड़कर तुमसे ज़बरदस्ती बलात्कार कर डाले। उसके बाद तुम सती रहीं कि नहीं ?'

'क्या व्यर्थ का प्रश्न तुम पूछती हो ? मैं फिर अपने को कुँवारी कैसे कह सकती हूँ ?'

'नहीं, मेरा मतलब कुँवारी से नहीं है । मैं तो सिर्फ़ यह जानना चाहती हूँ कि ईश्वर और एक भले पति की नज़र में, जो कि समझदार है, अथवा अपनी नज़रों में स्वयं तुम ऐसी दशा में सती रहीं या नहीं ?'

'हाँ ईश्वर की नज़रों में और अपनी नज़रों में तो सती मैं ज़रूर रहूँगी ।'

'बस, तो मेरा भी यही हाल हुआ है ! समझना तुम्हें ज़रूर कठिन है···'

टमारा कुछ देर तक चुप रही । फिर उसने धीरे से पूछा :

'यह अफ़सर जो आया है, तुम्हारा कौन है ? तुम्हारा पति है, अथवा इससे तुम्हारी शादी होनेवाली है अथवा यह तुम्हारा कोई भाई इत्यादि है ?'

'नहीं, उनमें से वह कोई नहीं है । वह मेरा बन्धु है ।'

'आह मगदा ! मुझे लगता है कि तुम मुझसे झूठ नहीं बोलती हो, परन्तु मेरी समझ में तुम्हारी बातें नहीं आतीं । तुम मुझे बड़ी विचित्र और भोली लगती हो । तुम भले घर की हो, यह तो मैं बहुत दिनों से सोचती थी, परन्तु तुम अपनी इच्छा से, जान-बूझकर, हमारे इस भँवर में क्यों आईं, यह मेरी समझ में नहीं आता । अपनी कहानी तो मैं तुम्हें बता सकती हूँ । मैंने लड़कपन में शिक्षा भी पाई थी— यद्यपि वह शिक्षा ऐसी ही अधकचरी थी । मैं अभी तक दो भाषाएँ अच्छी तरह जानती हूँ । मैं जिस ज़बान का इस घर में इस्तेमाल करती हूँ, वह बनावटी है— मेरी असली ज़बान नहीं है । तुमसे भी जान-बूझकर मैं इसी भाषा में बोलती रही । मैं बड़ी फिरनेवाली, बड़ी आवारा तबियत की हूँ - चिड़िया की तरह उड़ती फिरती रहती हूँ । मुझे कभी पता नहीं रहता कि मेरा मन मुझे कहाँ उड़ाये लिये जाता है और कहाँ ले जाकर मुझे बैठायेगा । मगर तुम ! तुम्हें तो अपने मन पर बड़ा क़ाबू है ! तुम यहाँ क्यों आईं ?'

मगदा का चेहरा एकदम पत्थर की तरह ठण्डा हो गया ।

'हाँ' उसने रूखी आवाज़ में कहा—मैं भी समझती थी कि तुम जान-बूझकर भोंडी बनकर रहती हो जिससे कि तुममें और दूसरों में यहाँ कोई फ़र्क न रहे । अच्छा, तुम्हें मेरा भेद जानने का इतना ही शौक़ है तो लो, मैं तुम्हें बताये देती हूँ । मैं लेखक हूँ । मैं ऐसे जीवन के सम्बन्ध में एक ऐसा उपन्यास लिखना चाहती थी, जिसमें यहाँ की दशा का बिलकुल सच्चा-सच्चा हाल हो । अस्तु मैंने सोचा कि मैं स्वयं ही यहाँ के जीवन का अनुभव करूँ तो ठीक होगा और मैं यहाँ आ गई ।'

टमारा जो उसे कपड़े पहना चुकी थी, सीधी खड़ी होकर बोली, 'तुम्हारे उद्देश्यों की सचाई पर तो मुझे पूरा विश्वास होता है, परन्तु तुम्हारे लेखकवाले इस किस्से पर विश्वास नहीं होता । तुमने मुझसे बड़ी दून की हाँकी है ! ख़ैर, मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ कि जो कुछ भी तुमने मुझसे कहा है, मुझ ही तक सीमित रहेगा । मैं इस बात की क़सम खाती हूँ ।'

'अच्छा तो जैसा तुम समझो, वही ठीक है । मगदा ने रुखाई से कहा, 'तुम्हारी

कृपा के लिए धन्यवाद !' परन्तु फिर यकायक, मानों वह गिर पड़ी हो, उसने टमारा को पकड़कर सीने से लगा लिया और स्नेह से चूमकर धीमे स्वर में कहा, 'मैं तुम्हें खत लिखूँगी।'

इस घटना के आठ महीने गुज़र गये। रूस में गेपन* देशव्यापी हड़ताल और नई राज-व्यवस्था के दिन आ गये। सूक्ष्म में, रूस की हवा से क्रान्ति की गन्ध आ रही थी। चारों तरफ़ राजनैतिक तलाशियों और गिरफ्तारियों की धूम मची हुई थी।

एक दिन अन्ना के घर पर भी, आधी रात को, पुलिस ने धावा बोला। मकान चारों तरफ़ से घेर लिया गया। मेहमानों को नम्रता से उठाकर बड़े कमरे में कर दिया गया और मकान के कोने-कोने की तलाशी ले डाली गई। क्रान्तिकारी पर्चों, एलानों और बमों के लिए अन्ना का घर टटोला जा रहा था। मगर ऐसी कोई चीज़ वहाँ नहीं मिली। घर भर की स्त्रियों को, पुलिस के बड़े अधिकारी ने एक कमरे में एक-एक करके बुलाया और धमका-धमका और फुसला-फुसलाकर मगदा के विषय में तरह-तरह के प्रश्न पूछे। वह क्या करती रहती थी? क्या कहती थी? किससे मिलती थी? किसको ख़त लिखा करती थी? कभी किसी को इस घर में उसने कोई किताब पर्चा पढ़ने को दिया?

यहाँ की स्त्रियों की समझ में इन प्रश्नों का कोई मतलब न आया। वे परेशानी से लाल हो जातीं, आँखें मिचकाने लगतीं, पसीने में डूब जातीं और अक्सर पुलिस अधिकारी के चरणों में माथा नवाकर कहतीं, 'हमने कोई बुराई की हो तो हम पर गाज गिरे! हमने न तो कोई ख़ून किया है और न किसी की कोई चीज़ ही चुराई है!...' अफ़सर उनके ऐसे विलाप सुनते ही उन्हें अपने पास से भगा देता।

टमारा चाहती तो अफ़सर से मगदा के साथ हुई अपनी आख़िरी बातचीत के बारे में बहुत कुछ कह सकती थी। अधिकतर वेश्याओं को, जिन्हें कोई ख़ास बात करके अपनी तरफ़ ध्यान खींचने का रोग-सा हो जाता है, उस बातचीत को अफ़सर से कहने का लालच रहता। परन्तु टमारा ने कुटिलता-पूर्वक कहा:

'मुझे, श्रीमान, उस राँड के बारे में इससे अधिक और कुछ नहीं मालूम कि वह

---

* गेपन रूसी सरकार का एक जासूस था, जिसने क्रान्तिकारियों की टोलियों में घुस-घुसकर बहुत-सी व्यर्थ की हड़तालें करा-कराकर बहुत से क़त्लेआम रूस में कराये।

सोलह आने की कुतिया थी। दुनिया में उसके लिए मर्द काफ़ी नहीं थे···उसे कुत्ते-घर में रहना चाहिए था!···'

पुलिसवाले तलाशी लेकर और छानबीन करके चले गये। परन्तु इसके बाद बहुत दिनों तक तमाम कटरेवाले अन्ना के घर की छोकरियों को 'सोशलिस्ट' कह-कहकर चिढ़ाते रहे। उन्हें उन पर सचमुच बड़ा गुस्सा था।

एक दिन टमारा ने बड़े आश्चर्य से बरकेश को मालकिन के कमरे में बैठे, शराब पीते हुए, मालकिन और उसके पति और ख़ालाजान से इस प्रकार बातचीत करते सुना—

'याद है तुम्हें, अपनी उस मगदा की? बड़ी ऊँची चिड़िया थी वह! बड़ा भारी शिकार हाथ से निकल गया! उसके लगभग दस नाम थे, जिनमें से एक वह भी था जो उसके उस पासपोर्ट में लिखा था जिसको हमारे दफ़्तर में देकर तुम उसका पीला टिकट ले गई थीं। उस पासपोर्ट में उसका नाम ओल्गा लेविन्सकाया लिखा था और पेशा सङ्गीत की शिक्षक। मगर जानती हो वह इस घर में आकर क्यों रही थी? बड़े आश्चर्य की बात है! विश्वास होना असम्भव हो जाता है! वह तुम्हारे यहाँ वेश्यावृत्ति की शिक्षा लेने आई थी? परेशान मत हो! आह-ऊह मत करो! बाद को जो कुछ उसने किया वह और भी आश्चर्यजनक है! तुम्हारे यहाँ से उसने वेश्या का काम इतना अच्छा सीख लिया था कि होशियार से होशियार आदमी भी उसके व्यवहार से यह नहीं मालूम कर पाता था कि वह वेश्या नहीं है। यहाँ से वह सेबेस्टोपोल[1] बन्दरगाह के एक ऐसे चकले में जाकर रही, जिसमें जहाज़ों पर काम करनेवाले मज़दूर और सैनिक आते थे और वहाँ दूसरे उसी प्रकार के कई चकलों में जाकर रही। ओडेसा[2] और निकोलवे[3] में भी उसने यही काम जारी रखा। उसने इस प्रकार सभी सरकारी सैनिक बन्दरगाहों में अपने अड्डे बनाये और अपने पीले टिकट का फ़ायदा उठाकर, वेश्या के रूप में सरकार के विरुद्ध जहाज़ी सैनिकों में भयङ्कर प्रचार कर-करके, उनको बादशाह और सरकार के सारे साथियों खासकर ज़मींदारों और पैसेवालों के विरुद्ध जाने और उनको विध्वंस कर डालने के लिए भड़काती रही। उसकी सहायता से क्रान्तिकारियों ने इन बन्दरगाहों में अपने लाखों पर्चे और ऐलान लोगों में फैला दिये। पुलिस उसकी बड़ी फिराक़ में रहने पर भी, लाखों कोशिशें करने पर भी, उसे पकड़ न पाई। हर जगह उसकी सहायता के लिए

१, २, ३ रूसी बन्दरगाहों के नाम।

उसके मित्र-बन्धु मौजूद रहते थे। देखो न उसी रोज़ वह जो फौजी अफ़सर बनकर यहाँ आया था और हम सबको उल्लू बनाकर दिन-दहाड़े उसे यहाँ से ले गया, वह एक क्रान्तिकारी विद्यार्थी था जो कि सिर्फ़ फ़ौजी अफ़सर की वर्दी डाटकर यहाँ आ गया था। उसका नाम नौवीकॉव था। और देखो तो उस जालिये को! कैसा मूर्ख उसने हम सभी को बनाया! वह हमारे पुलिस-कप्तान साहब के पास गवर्नर साहब का एक खत लेकर पहुँचा। गवर्नर साहब के सरकारी क़ाग़ज़ पर, उनकी मोहर के साथ बिल्कुल उन्हीं के-से दस्तखतों की यह चिट्ठी थी! कितनी हिम्मत उस बदमाश ने की! ख़ैर, आख़िरकार उसको मज़ा चखने को मिल ही गया! एक जगह पुलिस ने उसको पकड़ा और कालापानी कर दिया। अब वह हज़रत साइबेरिया की सरकारी खानों में सोना खोदने का काम जलावतनी में करते हैं। बदमाश को काफ़ी सज़ा नहीं मिली!

'और मगदा कहाँ है?' अन्ना ने आश्चर्य से पूछा।

'मगदा? मगदा अब इस दुनिया में नहीं है! उसने गवर्नर पर बम फेंका और फाँसी दे दी गई!'

छठा अध्याय

अन्ना के घर की खिड़कियाँ खुली हुई हैं, जिनमें होकर सन्ध्याकाल की सुगन्धित पवन अन्दर आ रही है। खिड़कियों पर लटके हुए रेशमी परदे धीरे धीरे हवा के अदृश्य झोकों से हिल रहे हैं। घर के सामने की छोटी, सूखी-सी वाटिका से ओस से भींगी घास की महँक आ रही थी, जिसमें कुछ-कुछ बकाइन घास और घर के द्वार पर त्रिदेव के त्योहार के कारण रखी हुई, मुर्झाती हुई, सनौवर की टहनियों से निकलनेवाली गन्ध भी मिली हुई थी। लियूवा नीली मखमल की एक छोटी कुरती पहिने हुए और नियूरा बच्चों का-सा गुलाबी चोगा नीचे घुटनों तक पहिनकर, सिर के चमकीले बाल फैलाये हुए, जिनकी कुछ घुँघराली लटें माथे पर आ पड़ी हैं, एक दूसरे को सीने से लगाये हुए, खिड़की की चौखट से अड़ी हुई लेटी हैं और धीरे-धीरे एक अस्पताल से सम्बन्ध रखनेवाला एक गीत गा रही हैं जो आजकल गली-गली और कूचे-कूचे में गूँज रहा है और जिसकी हर तरफ़ माँग है और जिसे सभी

वेश्याएँ अच्छी तरह जानती हैं। नियूरा नाक से स्वर निकालकर ज़ोर से गीत शुरू करती है और लियूबा धीमी आवाज़ से उसका समर्थन करती हुई गाती है :

'हाय आ गया फिर सोमवार !
प्रीतम कहें चलो उस पार !
इधर डाक्टर बिगड़े मुझ पर
कहो सखी मैं जाऊँ क्योंकर ?*

कटरे के सभी घरों की खिड़कियाँ तेज़ रोशनी से जगमगा रही हैं और द्वारों पर लटकी हुई लालटेनें जल रही हैं। अस्तु नियूरा और लियूबा को सामनेवाले सोफ़िया वासीलीवना की पेढ़ी का भीतरी दृश्य अच्छी तरह दिखाई दे रहा है— सोफ़िया के कमरों का नक्काशीदार पीली रङ्गीन लकड़ी का फ़र्श, दर्वाज़ों पर पड़े हुए हरे व लाल रङ्ग के पर्दे, जो रेशमी डोरियों से सिमटे हुए बँधे थे, बड़े काल रङ्ग के पियानो का एक कोना, जड़ाऊ चौखटे में लगा हुआ एक आईना और भड़कीली पोशाकें पहिनी हुई स्त्रियाँ जो कभी खिड़कियों पर आकर खड़ी होती हैं और फिर ग़ायब हो जाती हैं और उनकी आईनों में पड़नेवाली छायाएँ उन्हें साफ़ दीख रही हैं। दाहिनी तरफ ट्रेपेल की पेढ़ी के नक्काशीदार ज़ीने में नीले बिजली के एक कन्दील से ज़ोर की रोशनी हो रही है।

सन्ध्या शान्तिपूर्ण और रूस देश की ठण्डक को देखते हुए काफ़ी गर्म भी है। पश्चिम में दूर कहीं पर, रेल की पटरी के बहुत उधर, मकानों की काली-काली छतों और दरख़्तों के काले तनों के उस पार श्यामवर्ण पृथ्वी में जहाँ अभी तक वसन्त का राज्य रहता है, अस्त होते हुए सूर्य भगवान अपनी सुनहरी लालिमा बिखराये हुए हैं जो अन्धकारपूर्ण पृथ्वी पर एक सुनहरी चीर की तरह लिपटी हुई लग रही है। और इस स्पष्ट, दूरवर्ती प्रकाश में मुखों को चूमती हुई वायु में, आती हुई रात्रि की सुगन्धों में, छिपी हुई एक मीठी और सज्ञान उदासीनता थी जो वसन्त और ग्रीष्म के मध्य-काल में सन्ध्याकाल में आम तौर पर अधिक नाज़ुक लगती है। शहर का अस्पष्ट कोलाहल बहता हुआ आ रहा था—वहीं से अरगन बाजे की करुणध्वनि और गोधूलि पर घरों को लौटती हुई गायों के रँभाने की आवाज़ें आ रही थीं; कोई अपने पैरों के तलवों से किसी ख़ुश्क चीज़ को खुरच रहा था; और कोई एक बेंत गली के

* गीत रूसी भाषा में है, जिसका हिन्दी में ठीक अनुवाद करना कठिन है।

पत्थरों पर पटवा रहा था ; बीच-बीच में धीरे-धीरे कटरे में घुटती हुई किसी गाड़ी के लुढ़कते हुए पहियों की आवाज़ आने लगती थी और यह सारी आवाज़ें सन्ध्याकाल की विचारपूर्ण सुस्ती में एक सौन्दर्य और माधुर्य में मिल रही थीं। रेल की पटरी पर चलते हुए इञ्जन, जिनकी लाल और हरी-हरी बत्तियाँ अन्धकार में चमकती थीं, धीमे-धीमे सीटी की आवाज़ में से गा रहे थे। नियूरा और लियूबा पड़ी-पड़ी अपना गीत गाये जा रही थीं—

'आई नर्स प्यारी आई,
सबको मक्खन रोटी लाई,
सबको दूध-बताशे लाई
प्यारी नर्स सबको भाई।

'प्रोखोर इवानिश !' नियूरा यकायक गीत बन्द करके सामने की दूकान पर काम करनेवाले घूँघरवाले बालों के एक नौकर की तरफ चिल्लाई जो कि एक भूत की छाया की तरह लपकता हुआ गली पार कर रहा था।

'ओ, प्रोखोर इवानिश !'

'क्यों जान खा रही है !' उसने गली में से भर्राई हुई आवाज़ से गुर्राकर कहा 'क्या चाहती है ?'

'तुम्हारे दोस्त ने तुम्हें सलाम कहा है। उससे मेरी आज मुलाकात हुई थी।'

'किस दोस्त ने ?'

'वह देखने में बड़ी ख़ूबसूरत थी ! बड़ी आकर्षक छोकरी थी···मगर तुम शायद पूछोगी कि मैं उसे कहाँ मिली ?'

'हाँ, हाँ बताओ तुम्हारी उससे कहाँ मुलाक़ात हुई ?' प्रोखोर ने पल-भर के लिए ठिठककर पूछा।

'यहाँ, वह देखो अल्मारी के पाँचवें खाने में जहाँ कीलों पर पुराने टोपों के साथ मरी हुई बिल्लियाँ हम लोग लटकाकर रखते हैं !'

'धत्तेरी की ! निपट मूर्खा !'

नियूरा खिड़की पर लोट गई और लम्बे काले-काले मोज़ों से ढँकी अपनी टाँगें पीछे की तरफ़ हवा में हिलाती हुई ज़ोर-ज़ोर से खिल-खिलाकर हँसने लगी। उसकी हँसी की तेज़ आवाज़ हवा को चीरती हुई कटरे-भर में फैल गई। कुछ देर के बाद

हँसना बन्द करके वह यकायक आश्चर्य से आँखें गोल करके धीमी आवाज़ में बोली—'मगर बहिन, देखो इसी प्रोखोर ने पार साल उस औरत का गला घोंट डाला था! सच! ईश्वर की क़सम इसी ने! खबर है क्यों?'

'सच कहती हो? वह औरत मर गई?'

'नहीं, मरी तो नहीं। वह बच गई।' नियूरा ने इस प्रकार कहा मानो उसके बचने पर उसे अफ़सोस था, 'मगर वह दो मास तक अस्पताल में पड़ी रही। डाक्टरों का कहना था कि ज़रा-सा घाव और गहरा हो गया होता तो वह अवश्य मर गई होती। उसकी 'राम नाम सत्य' ही हो गई होती।'

'इसने उसका गला क्यों घोंटा?'

'मुझे क्या खबर? शायद उस औरत ने इससे रुपया छिपाकर रख लिया हो या किसी और से यारी गाँठी हो। यह आदमी उसका प्रेमी था—और उसका दलाल भी था।'

'अच्छा, तो फिर इस आदमी को क्या सज़ा मिली थी?'

'सज़ा? कोई भी सज़ा नहीं। एक बलवा-सा हुआ था, जिसमें क़रीब सौ लोग भिड़े थे। क्या पता किसने किसको मारा? उस औरत ने भी पुलिस से कहा कि उसे किसी ख़ास आदमी पर शुबहा नहीं था, परन्तु इस आदमी ने ही बाद में एक दिन शेख़ी बघारते हुए कहा था कि उस रोज़ तो डनका बच गई। मगर अबकी बार मेरे हाथों से बचकर नहीं निकल पावेगी। मैं उसे बिना मज़ा चखाये न छोड़ूँगा!'

लियूबा के सारे शरीर में यह सुनकर कँपकपी दौड़ गई।

'यह दलाल बड़े भयङ्कर जन्तु होते हैं!' उसने धीमे से डरी हुई आवाज़ में कहा।

'बड़े भयङ्कर! साल भर तक मैं भी इस सिमियन से फँसी रही। नीच गुण्डा कहीं का! मुझे रोज़ इतना नोचा और मारा करता था कि मेरे शरीर भर काले और नीले धब्बे हमेशा बने रहते थे। मैं कोई क़सूर नहीं करती थी, जिसके लिए वह मुझे मारा करता था। उसे मुझे सताने में मज़ा आता था। रोज़ सबेरे वह मुझे लेकर एक कमरे में घुस जाता था और अन्दर से ताला लगाकर मेरे शरीर को दुखाना शुरू कर देता था—मेरी बाहें खींचता था, मेरी छातियाँ नोचता था और मेरा गला ज़ोर से पकड़कर घोंटने लगता था अथवा मुझे वहशी की तरह बार-बार चूमता था और मैं चीखकर रो उठती थी। वह इसी की राह देखता था, क्योंकि वह मेरे ऊपर जानवर

की तरह काँपता हुआ चढ़ बैठता था। वह मेरा सारा रुपया भी मुझसे छीन लिया करता था— एक फूटी कौड़ी भी मेरे पास नहीं रहने देता था। सिगरेट का एक पैकेट खरीदने के लिए भी मेरे पास दाम नहीं रहते थे। यह सिमियन बड़ा सूम, पूरा मक्खीचूस है ; जो कुछ पाता है, बैंक में जाकर फ़ौरन जमा कर देता है कहता है कि जैसे ही एक हज़ार रुपये जमा हो गये, वैसे ही साधु बनकर बैठ जायेगा।'

'कहे जाओ !'

'ईश्वर की क़सम ! तुम उसकी कोठरी में जाकर देखो— रात-दिन चौबीस घण्टे देवी की मूर्ति के आगे दिया जलता दीखेगा। बड़ा ईश्वर का भगत है···शायद इसी लिए ईश्वर का बड़ा भगत है कि उसके सिर पर बहुत-से गुनाहों का बोझ है। उसने कत्ल भी किये हैं।'

'क्या कहती हो ?'

'अरे, छोड़ो भी इस कम्बख़्त की बातें, प्यारी लियूबोच्का ! आओ अन्ना गीत गायें। यह कहते हुए नियूरा ने गीत आगे चलाया—

'लाऊँ अफ़ीम की पुड़िया,
मिट जावे झंझट सारा।'

जेनी पीठ के पीछे हाथ बाँधे कमरे में इधर-उधर टहल रही है और घूम-घूम-कर अपना शरीर सारे आईनों में देखती है। वह नारंगी रङ्ग की एक छोटी कुर्ती पहिने हुए है और उसके लँहगे की चुन्नटें चलने पर उसके कूल्हों पर इधर-उधर होती हैं, जिससे उसके कूल्हों की हरकत साफ़ दिखाई देती है। छोटी मनका जिसे ताश खेलना इतना पसन्द है कि सुबह-शाम तक बिना रुके बराबर खेल सकती है, इस समय भी पाशा के साथ बैठी शाहकट खेल रही है। दोनों ने पत्ते बाँटने और चलने के लिए अपने बीच में एक खाली कुर्सी रख ली है और अपने जीते हुए पत्ते वे अपने लहँगों पर, जो उनकी टाँगों के बीच में बिछे हुए हैं, इकट्ठे कर-कर रख रही हैं। मनका एक साधारण ख़ाकी और स्याह रङ्ग की पोशाक पहने हुए है जो उसके सुन्दर व नाजुक छोटे सिर और नाटे शरीर पर बहुत फब रही है। वह इस पोशाक में अपनी उम्र से कहीं कम, बिल्कुल एक स्कूल की छोकरी की तरह लगती है।

उसकी साथिन पाशा नाम की छोकरी बड़ी विचित्र और अभागी लड़की है। उसको तो बहुत दिन पहले ही किसी चकले में न होकर किसी मानसिक अस्पताल में

होना चाहिए था, क्योंकि उसको किसी भी मर्द के साथ जो उसे पकड़ ले, चाहे वह कितना ही गन्दा और कुरूप क्यों न हो, बडे उत्साह से विषय-भोग करने की एक बीमारी-सी है। उसके साथ की इस घर की सारी छोकरियाँ इस बात के लिए उसका मज़ाक उड़ाती हैं और उससे भीतर ही भीतर घृणा भी करती हैं, क्योंकि वह उनकी मर्दों के प्रति घृणा में उनको साथिन नहीं है। पाशा की आहों, पुकारों, चीखों और स्नेह के शब्दों की, जिन्हें पाशा मर्दों से संभोग करते समय बिना निकाले नहीं रह सकती और जो मकान के दूसरे और तीसरे कमरों तक में सुनाई देते हैं, नियूरा बड़ी चतुरता से नकलें किया करती है। पाशा के बारे में यह भी अफ़वाह मशहूर है कि वह चकले में किसी लालच या मजबूरी के कारण शामिल नहीं हुई थी, बल्कि संभोग की अपनी इस अपार लिप्सा को तृप्त करने के लिए ही आई थी। मगर चकले की मालकिन और छोटी और बड़ी दोनों खालाएँ पाशा का हर तरह से खयाल रखती हैं और उसकी इस कमज़ोरी को बढ़ावा देती हैं, क्योंकि उसकी इस बीमारी के कारण ही चकले में आनेवाले ग्राहक उसकी बड़ी माँग करते हैं और वह दूसरी छोकरियों से रोज़ चौगुना और पँचगुना कमाती है। यहाँ तक कि तीज त्योहार के दिनों में तो मामूली ग्राहकों को उसे पाना ही असंभव हो जाता है, क्योंकि चकले की मालकिन उसे अच्छे और बँधे हुए ग्राहकों के लिए रखकर दूसरों से उसकी मासिक बीमारी का बहाना कर देती है वह ऐसा न करे तो बँधे हुए ग्राहकों के अपनी प्रिय छोकरी को न पाने पर नाराज़ हो जाने का भय रहता है। और इस प्रकार के बँधे ग्राहक पाशा के बहुत-से हैं। बहुत-से तो सचमुच ही उस पर फ़िदा हैं। यहाँ तक कि दो ने तो कुछ दिन पहले ही एक साथ ही उससे विवाह कर लेने के प्रस्ताव भी किये थे – एक शराब की दुकान में क्लर्क था और दूसरा रेल का एक ठेकेदार था जो कि बड़ा घमंडी और गरीब 'खानदानी रईस' था, जो कफ़ोंदार गुलाबी रङ्ग की एक कमीज़ पहिनकर आया करता था और जिसकी एक आँख मसनूई थी। पाशा किसी भी मर्द के साथ जो उसे बुलाये, जाने को सदा तैयार रहती थी। परन्तु चकलेवाले अपनी जायदाद की अच्छी तरह निगरानी रखते थे। एक प्रकार का पागलपन-सा पाशा के चेहरे पर झलकता था। उसकी आँखें आधी खुली और आधी बन्द रहती थीं; एक नशीली, आनन्दमय, विनम्र और शर्मीली मुस्कान उसके कमज़ोर, कोमल और तर होठों पर जिन्हें वह चाटती रहती थी, हमेशा बनी रहती थी; जब वह हँसती तो

'नहीं, नहीं, वह जार्जियन है। बड़े आश्चर्य की बात है कि तुम इस तरह...'

मैं कहती हूँ तुमसे, वह एक साधारण आरमीनियन है। मैं तुमसे अधिक पहिचान सकती हूँ, मूर्खा ?'

'मगर मुझे तुम इस तरह गाली क्यों देती हो, जेनी। मैं तुमसे अच्छी तरह बोल रही हूँ, क्यों ?'

'तुम भी गाली देकर मुझे देखो तो। मूर्ख कहीं की। तुझे क्या ? चाहे वह आरमीनियन हो चाहे जार्जियन ? क्या तू उसे चाहती है ? क्यों ?'

'हाँ, हाँ मैं उसे चाहती हूँ।'

'तभी तो मैं कहती हूँ कि मूर्खा है, मूर्खा। और वह जो अपनी टोपी में फुनगो लगाये हुए लँगड़ा आता है, उसे भी तू चाहती है ?'

'हाँ, तो क्या हुआ ? मैं उसकी बहुत इज्ज़त करती हूँ। वह बड़ा सम्मानित पुरुष है ?

'और वह जिल्दसाज, उसको भी तू चाहती है ? और उस ठेकेदार को भी तू चाहती है ? और उस आलू बेचनेवाले को भी तू चाहती है ? और उस मोटे नट को भी तू चाहती है ? उह, उह निर्लज्जा !' जेनी ने क्रोध से चिल्लाकर कहा, 'मैं तो तेरे चेहरे की तरफ़ बिना घृणा के देख भी नहीं सकती। कुतिया कहीं की। मैं तेरी जगह पर होती तो अपना गला ख़ुद घोंटकर, ख़ुद फाँसी लगाकर मर जाती। नरक की कीट !'

पाशा ने आँसुओं से भरी अपनी आँखों के चुपचाप पलक गिरा लिये, परन्तु मनया उसका पक्ष लेती हुई बोली—

'यह क्या बक रही हो तुम जेनी ? क्यों इस प्रकार इस पर फट पड़ी हो ?...'

'हाँ, हाँ, तुम बड़ी भली हो।' जेनी ने कटुता से उसकी बात काटते हुए कहा, 'कोई लाज-शर्म बाक़ी रह गई है क्या ? कोई भी कुत्ता तुम्हें आकर दो कौड़ी में मांस के एक टुकड़े की तरह ख़रीद लेता है, एक गाड़ी की तरह निश्चित दर पर तुम्हें एक घण्टे के लिए किराये ले लेता है और तुम उस पर फ़िदा हो जाती हो, उस पर लट्टू हो जाती हो और कहती हो, 'आह, मेरे प्यारे। ओहो, कैसा तुम्हारा स्वर्गीय प्रेम है।' थू। थू। थू। कहते हुए उसने घृणा से ज़मीन पर थूक दिया।

फिर वह उनकी तरफ़ से पीठ मोड़कर कमरे के एक कोने से दूसरे कोने तक टहलने लगी और आइने में अपना चेहरा देख-देखकर आँखें मिचकाने लगी।

पास के नाच-घर में बैठा हुआ पियानो का उस्ताद आइज़क बेतुका बेला बजानेवाले इसाय से सिर खपा रहा था।

'नहीं, नहीं, इसाय! इस तरह नहीं। ज़रा बेला रख दो और सुनो मैं कौन-सा स्वर बजाता हूँ। देखो यह स्वर बजाओ!' यह कहकर एक हाथ से पियानो बजाता हुआ बकरों की-सी उस भयङ्कर आवाज़ में जो अक्सर गाने के उस्ताद अपने कण्ठ से किया करते हैं, 'स रे ग म प, प म ग रे स रे' कहता हुआ इसाय को सिखाने लगा, देखो, देखो, यह स्वर निकालो'।

इन दोनों की इस रिहर्सल को भूरी आँखों, गोल चेहरे और टेढ़ी भौंओं की ज़ो नाम की छोकरी देख रही थी, जो सस्ते लाल और सफ़ेद रङ्ग अपने चेहरे पर पोते पियानो पर कुहानियाँ टेके खड़ी थी। उसके पास कुछ दूर पर पतली-दुबली वीरा नाम की छोकरी खड़ी थी, जिसके चेहरे पर अधिक शराब के नशे के परिणाम स्पष्ट दीखते थे। वह घोड़ों को दौड़ानेवाले सवारों की पोशाक में थी—सिरपर सीधे किनारों की एक छोटी-सी टोपी थी, शरीर पर एक छोटी-सी जाकेट थी, जिसपर नीली और सफ़ेद धारियाँ थीं और पाँवों में उसके लम्बे-लम्बे बूट थे, जिनका सामने का हिस्सा पीले रङ्ग का था। लम्बे चेहरे, चमकीली, नीली-नीली तेज़ आँखों और कटे हुए छोटे-छोटे बालों और उठी हुई चिन्तित परन्तु बड़ी सुन्दर नाकवाली वीरा सचमुच ही एक घुड़सवार-सी लग रही थी। दोनों उस्तादों का जब आखिरकार स्वर मिल गया तब छोटे शरीर की वीरा विशाल शरीरवाली ज़ो की तरफ़ मटकती हुई चाल से अपने शरीर का पिछला भाग बाहर को निकाले हुए, जो स्त्रियों के मर्दानी पोशाक चढ़ा लेने पर अनिवार्य हो जाता है, आगे को हाथ फैलाये हुए मानो वह उड़ने की कोशिश कर रही हो, बढ़ी। और मर्दों की तरह झुककर उसने ज़ो को फ़र्शी सलाम किया। इसके बाद ये दोनों छोकरियाँ हाथ में हाथ डाले, हँसती हुई, कमरे में इधर-उधर फिरने लगीं।

फुर्तीली नियूरा, जो सारी खबरें सबसे पहिले लाकर सुनाया करती थी, एकाएक खिड़की पर से उछलती हुई और आवेश और जल्दी से बड़-बड़ाती हुई पुकारने लगी:

'अरी छोकरियों! ट्रूपेल के घर किसी बड़े अमीर की गाड़ी आई है…उसमें

बिजली की बत्तियाँ जल रही हैं···तुम्हारी क़सम···उसमें बिजली की बत्तियाँ हैं।'

सारी छोकरियाँ खिड़कियों से झुक-झुककर बाहर देखने लगीं — सिर्फ़ घमण्डी जेनी देखने नहीं गई। सचमुच ट्रपेल की पेढ़ी के द्वार पर एक कोचवान एक बहुत सुन्दर गाड़ी लिये खड़ा था। गाड़ी नये बार्निश के रंग चमक रही थी और कोचवान के दोनों तरफ़ दो छोटी-छोटी नीले रंग की बिजली की बत्तियाँ जल रही थीं। गाड़ी में जुता हुआ सफेद रङ्ग का ऊँचा घोड़ा जिसकी नाक पर एक गुलाबी धब्बा था, खड़ा-खड़ा अपना सुन्दर सिर हिला रहा था और पाँवों से ज़मीन खुरच-खुरचकर, कान उठा-उठाकर इधर-उधर देखता था। दाढ़ीवाला, हृष्ट-पुष्ट गाड़ीवान कोचबक्स पर, अपने हाथ आगे को फैलाये हुए, मूर्ति की तरह बैठा था।

'हाय, मुझे कोई इस गाड़ी पर बिठाकर ले जाता!' नियूरा चिल्लाई। 'अरे ओ चाचाजी! ओ भाग्यवान गाड़ीवान!' उसने खिड़की से शरीर निकालकर गाड़ीवान से चिल्लाकर कहा,

'मुझ ग़रीब छोकरी को भी ज़रा इस गाड़ी पर बिठाओ!···महरबानी करके हम लोगों को भी ज़रा-सी सैर इस गाड़ी पर करा दो!'

कोचवान हँसने लगा और उसने अपनी उङ्गलियों से ज़रा सा इशारा किया कि झट सफ़ेद घोड़ा, मानो वह उसके इस इशारे का ही इन्तज़ार कर रहा था, अपनी जगह से मुड़ा और टपटप करता हुआ गाड़ी और कोचवान को लेकर अँधेरे में ओझल हो गया।

'ओफ़! ओफ़! कैसे ग़ज़ब की यह बदतमीज़ी है!' ऐम्मा की घृणापूर्ण आवाज़ उसके कमरे से आती हुई सुनाई दी, 'क्या भले घरों की छोकरियाँ कहीं इस तरह खिड़कियों में से लटक-लटककर गलियों में चिल्ल-पों मचाती हैं? कैसा ग़ज़ब ढाया है? और यह सब नियूरा ही करती है! उसकी करतूतें ऐसी ही होती हैं!

ऐम्मा यह कहती हुई कमरे में से निकलकर आई। वह एक काली पोशाक पहिने थी, जिसमें वह बड़ी शानदार लग रही थी; उसके चेहरे का मांस लटक रहा था, उसकी आँखों के नीचे काले-काले धब्बे बन रहे थे और उसकी तीन ठुड्डियाँ सामने लटकती हुई काँप रही थीं। सारी छोकरियाँ, मास्टरनी के आने पर स्कूल की छोक-रियों की तरह दीवारों के पास पड़ी हुई कुर्सियों पर चुपचाप जा बैठीं। मगर जेनी टहलती हुई आईनों में अपना शरीर देखती रही। इतने में दो और गाड़ियाँ आकर

सोफिया की पेढ़ी के आगे रुक गईं । कटरे में चहल-पहल शुरू हो चली। आखिर-कार एक गाड़ी धीरे-धीरे लुढ़कती हुई अन्ना के द्वार पर भी रुकी । द्वारपाल सिमियन ने उठकर ड्योढ़ी में किसी को कोट इत्यादि उतारने में मदद दी । जेनी ने किवाड़ों को पकड़े-पकड़े ड्योढ़ी में झुककर देखा और फिर फौरन मुड़कर, कन्धे मटकाटे हुए कहा,

'न जाने कौन है ! कोई बिल्कुल नया आदमी लगता है। हमारे यहाँ तो पहिले वह कभी नहीं आया । कोई शौकीन मोटा है ! वर्दी चढ़ाये है और सुनहरी ऐनक लगाये है ।'

ऐम्मा ने फौजी अफ़सर को हुक्म देने की-सी आवाज़ में कड़ककर कहा, 'श्रीमतियो ! बैठक में जाओ !' और एक-एक करके सारी छोकरियाँ, अभिमान और नज़ाकत से चलती हुई बैठक में चली गईं । टमारा जिसके सफ़ेद-सफ़ेद हाथ निरे उघरे थे और गर्दन भी बिल्कुल उघरी थी— सिर्फ़ उसमें मोतियों की माला पड़ी थी; मोटे और चौखूटे चेहरेवाली मोटी किटी जो इसी तरह थी, मगर जिसका रङ्ग लाल और जिसके मुख लाल मुहासों की भरमार थी ; भोंडी नाक और स्वभाववाली नोना, जो हाल ही चकले में शरीक हुई थी और एक गहरे हरे रङ्ग की पोशाक में बिल्कुल तोता बनी हुई थी ; बड़ी मनका, जिसको इस घर में मगरमच्छ के नाम से पुकारा जाता था ; और आखिर में लाल, भद्दे चेहरेवाली यहूदिन सोनका, जिसकी नाक बहुत बड़ी थी, जिसके कारण उसको बड़नक्कू के नाम से भी पुकारा जाता था, परन्तु जिसकी आँखें बड़ी-बड़ी और सुन्दर थीं, जिनमें नम्रता के साथ साथ किसी ग़म की एक अग्नि-सी झलकती थी— जैसी कि आम तौर पर दुनिया भर की स्त्रियों में और अधिकतर यहूदिनियों की आँखों में ही पाई जाती है— सभी बैठक में चली गईं ।

सातवाँ अध्याय

सरकारी वर्दी पहिनकर आनेवाला काफ़ी उम्र का आगन्तुक शाह ज़ार के धर्माद विभाग की वर्दी में था । वह हिचकिचाता हुआ, धीरे-धीरे अपने हाथों को इस प्रकार मलता हुआ घुसा मानो वह अपने हाथ धो रहा हो । सारी छोकरियाँ ऐसी गम्भीर

शान्ति धारण किये हुए थीं, मानो उनको उसके आने की कोई खास चिन्ता नहीं थी। अस्तु आगन्तुक कमरा पार करता हुआ जाकर चुपचाप लियूबा के पास की ख़ाली कुर्सी पर बैठ गया। लियूबा ने शिष्टाचार के अनुसार अपना लहँगा ठीक करते हुए उसकी तरफ़ भले घर की छोकरियों की तरह स्वतन्त्रता से देखा।

'कहिए श्रीमती, अच्छी तो हैं ?' आगन्तुक ने पूछा।

'बड़ी अच्छी तरह हूँ, धन्यवाद !' लियूबा ने उत्तर में कहा।

'कैसी गुज़रती है ?'

'अच्छी तरह, धन्यवाद। एक सिगरेट पिलाइए।'

'माफ़ कीजिए—मैं सिगरेट नहीं पीता।'

'अच्छा ! मर्द होते हुए भी सिगरेट नहीं पीते ? अच्छा तो विलायती शराब और लेमनेड ही पिलाइए। मुझे विलायती शराब और लेमनेड बहुत ही पसन्द हैं।'

आगन्तुक खामोश हो रहा।

'बड़े कन्जूस हो, दादाजी ! कहाँ काम करते हो ? किसी सरकारी दफ़्तर में क्लर्क हो ?'

'नहीं, मैं शिक्षक हूँ। मैं जर्मन भाषा सिखाता हूँ।'

'मगर दादा, मैं शायद तुमसे पहिले कहीं मिली हूँ। तुम्हारी शक्ल मुझे परिचित लगती है। मैंने तुम्हें कहाँ देखा होगा ?'

'कहीं बाज़ार में यहाँ सड़क पर देखा हो तो देखा हो।'

'हाँ, बाज़ार में या सड़क पर हो सकता है और नहीं भी हो सकता है। अच्छा, एक देशी बोतल ही कम से कम पिलाओ ! देशी तो पिलाओगे ; या वह भी नहीं :'

वह फिर चुप हो गया और इधर-उधर बगलें झाँकने लगा। उसके चेहरे पर पसीना छलक आया और माथे के मुहाँसे लाल हो गये। वह मन ही मन सारी छोकरियों को देख-देखकर सोच रहा था कि किसी को अपने लिए पसन्द करे। साथ ही वह अपनी ख़ामोशी पर परेशान भी हो रहा था। बातें करने के लिए उसके पास कोई खास विषय नहीं था और लियूबा के बार-बार आग्रह से भी उसे चिढ़ हो रही थी। उसे मोटी किटी का गाय-सा भारी बदन पसन्द आया। मगर फिर उसने सोचा कि अन्य तमाम तगड़ी स्त्रियों की तरह वह भी सभोग-प्रेम में बड़ी ठण्डी होगी। इसके अतिरिक्त उसका चेहरा भी आकर्षक नहीं था। एक छोटे लड़के की-सी शक्लवाली

और सुडौल जाँघोंवाली वीरा ने, जिसकी जाँघें एक तङ्ग जाँघिये में साफ़ दीखती थीं, उसको उत्तेजित किया। छोटी सफेद मनया, जो स्कूल की छोकरी की तरह भोली दीखती थी और तेज़, बलवान् और सुन्दर चेहरेवाली जेनी भी उसे पसन्द थी। एक मिनट तक तो उसने क़रीब-क़रीब जेनी को चुन लेने का निश्चय भी कर लिया, मगर वह कुर्सी में थोड़ा-सा उठकर ही रह गया। उसकी अधिक आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं हुई, क्योंकि जेनी की तरफ़ बिल्कुल लापरवाही का रुख देखकर उसने समझा कि इस चकले की सारी छोकरियों में सबसे अधिक बिगड़ी हुई वही है, जिससे वह उसके पास आनेवालों से अपने ऊपर ख़र्च भी बहुत कराती होगी। मगर यह शिक्षक महाशय, जिनकी गृहस्थी काफ़ी बड़ी थी और पत्नी जनाब की मर्दानी ख़्वाहिशों को पूरा करते-करते भर्ता बन गई थी और बहुत से स्त्री-रोगों की शिकार हो गई थी, काफ़ी हिसाब-किताब और जोड़-तोड़ के आदमी थे। यह महाशय स्त्रियों की एक संस्था में अध्यापक का काम करते थे जिससे वह बराबर एक प्रकार के गुप्त विषय-सन्निपात में रहा करते थे, परन्तु उनकी जर्मन शिक्षा। कजूसी और कायरता उनकी इच्छाओं को बहुत कुछ दाबे रखती थी। परन्तु साल में दो-तीन बार बड़ी तकलीफ़ सहकर और अपनी शाम की शराब का अद्धा भी, जो उसे बहुत प्रिय था, छोड़कर और दफ़्तर से घर तक का लम्बा रास्ता पैदल चलकर, गाड़ी का भाड़ा बचाकर वह पाँच-दस रुपये अपनी छोटी आमदनी में से बचा लिया करता था। इस बचत को वह स्त्रियों पर खर्च करने के लिए अलग रख दिया करता था। और उसको धीरे-धीरे बड़े उत्साह के साथ, जितना अधिक और सस्ता मज़ा वह उससे पा सकता था, पाने की कोशिश किया करता था। मगर उसको इस मज़े से हो जानेवाली बीमारियों का भय रहता था और अपने थोड़े से दामों से वह इतना ख़रीदने की कोशिश करता कि वह असम्भव होता। उसकी भावुक जर्मन आत्मा किसी मासूम, शर्मीली, कवि-कल्पित प्रेमिका के लिए तरसती थी। मगर एक मर्द की हैसियत से वह यह भी इच्छा करता था और स्वप्न देखा करता था कि उसे किसी ऐसी स्त्री का प्रेम मिले, जिसका दिल उसके चुम्बनों से सच-मुच धड़क उठे और जो एक स्वर्गीय आनन्द-सा अनुभव करती हुई, उससे विषय-भोग करके एक मीठी थकान में डूब जाय।

सभी मर्दों को ऐसी ही इच्छा रहती है—कम्बख़्त से कम्बख़्त, कुरूप से कुरूप, भोंड़े से भोंड़े और मर्दानगी से हाथ धोये हुए मर्दों को भी यही इच्छा रहती है—

जिससे अनन्त काल से अनुभवी स्त्रियाँ अपने हृदयों से बनावटी प्रेम की ज्वालाएँ निकालकर अपने-हाव-भावों से मर्दों को ख़ुश करना और तूफ़ानी से तूफ़ानी क्षणों में भी ठण्डी रहना अच्छी तरह जानतीं हैं।

'अच्छा ज़रा उस्तादजी से कहकर एक पोल्का* नाच ही कराइए, मास्टर साहब! इन छोकरियों को थोड़ा सा नाच का ही मज़ा मिले!' लियूबा ने बड़बड़ाते हुए कहा।

यह प्रस्ताव मास्टर साहब को पसन्द आ गया। नाच के शोरो-गुल और दौड़-धूप में चुपचाप हिम्मत बाँधकर, उठकर किसी एक छोकरी को पकड़कर नाच-घर से निकालकर दूसरे कमरे में ले जाना अधिक सुभीते का काम था। नाच घर के इस समय के शान्त दृश्य में, जिसमें सभी छोकरियाँ चुपचाप बैठी उसकी तरफ़ देख रही थीं, ऐसा करना उसे कठिन हो रहा था।

'पोल्का, नाच कराने में क्या दाम लगते हैं?' उसने फिर भी सतर्क होकर पूछा।

'सिर्फ़ आठ आने! तो फिर कराओगे?'

'जैसी तुम्हारी मर्ज़ी···तुम्हारा हुक्म तो मुझे पूरा करना ही होगा।' व फ़ैय्याज़ी दिखाता हुआ बोला, 'किससे नाच कराने के लिए कहना होता है?'

'वह जो उस्ताद बैठे हैं, उनसे।'

'अच्छा, अभी लो! उस्तादजी, थोड़ा-सा नाच होने दीजिए।' उसने पियानो पर दाम रखते हुए कहा।

'कौन-सा नाच हुज़ूर को पसन्द है?' इसाय ने दाम जेब में डालते हुए पूछा, बाल्ज़ या पोल्का?

'कोई...कोई भी होने दो···'

'बाल्ज़! बाल्ज़ होने दो!' वीरा ने, जिसे नाचने का बड़ा शौक़ था, अपनी जगह से चिल्लाकर कहा।

'नहीं पोल्का! नहीं, नहीं वाल्ज़!' इत्यादि चारों तरफ़ से कई आवाज़ों ने कहा।

'पोल्का का नाच करो!' लियूबा ने सबके लिए निश्चय करते हुए कहा 'उस्तादजी, पोल्का का नाच कराइए! मेरे पति महाशय मेरे लिए नाच करा रहे

* एक प्रकार का रूसी नाच।

हैं।' उसने मास्टर साहब की गर्दन से चिपटते हुए कहा, 'क्यों मास्टर दादा, ऐसा ही है न ?'

मगर मास्टर साहब ने उसके हाथों से अपनी गर्दन छुड़ाकर कछुये की तरह अपनी गर्दन सिकोड़ ली। लियूवा ने उसकी इस बात का कुछ बुरा न माना और उठकर नियूरा के साथ नाचने लगी। छः छोकरियाँ और जोड़ों में नाच रही थीं। नाच से सभी छोकरियाँ अपनी कमरें सीधी और सिर निश्चल रखने का प्रयत्न करती हुई बड़ी लापरवाही-सी दिखा रही थीं जो कि चकले की तहज़ीब में अच्छी चीज़ समझी जाती है। नाच शुरू होते ही शिक्षक महोदय उठे और छोटी मनका के पास जाकर हाथ बढ़ाते हुए बोले :

'चलो जी !'

'चलिए !' मनका ने हँसते हुए उत्तर में कहा।

मनका उसको लेकर अपने कमरे में चली गई जो कि मामूली हैसियत के एक चकले को सजधज से सुसज्जित था—एक तरफ़ एक आईना लटक रहा था, एक काग़ज़ के फूलों का गुलदस्ता और उसके पास एक पाउडर का डिब्बा रखा हुआ था। दीवार पर सफेद भौहों के एक अभिमानी नौजवान का मैला चित्र टँगा था। पलँग के सिरहाने, जिस पर एक लाल रङ्ग का कम्बल पड़ा था, एक तुर्की सुल्तान का अपने हरम में आनन्दोत्सव का चित्र लगा था, जिसमें सुल्तान एक सुन्दर फर्शी हुक्के की निगाली अपने मुँह में लिये बैठा था। दीवालों पर और भी कई चित्र, होटलों के खानसामों और सिनेमा के ऐक्टरों के-से चित्र टँगे हुए थे ; और एक गुलाबी रङ्ग का कन्दील छत में से लटक रहा था। पलँग के उस तरफ एक गोलमेज़, वीयना शहर की बनी तीन कुर्सियाँ और मेज़ के ऊपर एक काँच की सुराही और उस पर काँच का गिलास रखे हुए थे।

'प्यारे, मुझे विलायती शराब और लेमोनेड पिलाओ।' मनका ने अपनी कुर्ती के बटन खोलते हुए चकले की रिवाज के अनुसार कहा।

'बाद में।' शिक्षक महाशय ने गम्भीरता से कहा, 'तुम्हारा काम देखकर तय करूँगा। मगर यहाँ तो सड़ियल शराब मिलती होगी ?'

'नहीं, हमारे यहाँ बड़ी अच्छी शराब मिलती है।' मनका ने कहा, दो रुपये की

एक बोतल मिलती है। मगर तुम इतने कंजूस हो तो कम से कम मुझे देशी शराब ही पिलाओ। ठीक है, क्यों ?'

'अच्छा, देशी शराब पिला दूँगा···'

'लेमोनेड और देशी नारंगी शराब, क्यों ?'

'अभी एक बोतल लेमोनेड ही मँगाओ, समझो! शराब के बारे में बाद में देखा जायगा। मैं तो तुम्हें शैम्पेन की बोतल तक पिला सकता हूँ। मगर उसका पाना तुम्हारे हाथ में है। अगर तुम मेहनत करोगी और मुझे .खुश करोगी तो···'

'अच्छा दादाजी, तो मैं चार बोतल देशी शराब की और दो बोतल लेमोनेड की मँगाती हूँ ? क्यों ? और अपने लिए एक चाकलेट की केक भी ? क्यों, ठीक है ? हां ?'

'दो बोतल शराब और एक बोतल लेमोनेड काफ़ी है···अधिक नहीं। मुझे ऐसे मामलों में सौदा करना नहीं भाता। और ज़रूरत होगी तो मैं .खुद ही मँगाने को कहूँगा।'

'अच्छा तो मैं अपनी एक सहेली को भी पीने बुला लूँ ?'

'नहीं, नहीं, मैं तुम्हारे साथ अकेला ही रहना चाहता हूँ।' मनका ने खिड़की में से सिर निकालकर, गूँजती हुई आवाज़ में कहा, 'प्यारी खालाजान! दो बोतल देशी शराब और एक बोतल लेमोनेड मेरे लिए मेहरबानी करके भिजवा दो।'

सिमियन एक ट्रे लिये हुए आया और आदत के अनुसार जल्दी-जल्दी बोतलों की कार्क खोलने लगा। उसके पीछे-पीछे लगी हुई जोसिया भी आई और आकर कहने लगी, अच्छा-अच्छा आप तो यह घर बिल्कुल अपना ही घर बनाकर बैठे हैं। बधाई है आपको, आपके इस बाक़ायदा विवाह पर!'

'दादाजी, मेरी इन खाला को थोड़ी शराब पिलाओ न!' मनका ने प्रार्थना करते हुए कहा और .खाला से बोली, 'बैठी खालाजान, थोड़ी शराब पियो!'

'अच्छा-अच्छा धन्यवाद महाशयजी, ऐसा लगता है कि मैंने आपको कहीं देखा है।'

मास्टरजी अपनी मूछों को चाटते हुए शराब पीने और .खालाजान के वहाँ से चले जाने की राह देखने लगे। मगर खालाजान ने धन्यवाद देने के बाद शराब का एक गिलास उठाकर अपने सामने रख लिया और बोली :

'महाशयजी, शराब और जितना वक्त आप लें ; उसका रुपया मेहरबानी करके

पहिले चुका दीजिए। यह आपके लिए भी अच्छा होगा और हमारे लिए भी सुभीते का है।'

रुपये का तकाज़ा मास्टर साहब को बहुत बुरा लगा। प्रेम-वासना के मनमोदकों पर उनको यह यकायक वज्राघात-सा लगा। अस्तु वह चिढ़कर कहने लगे :

'यह क्या चोट्टापन है! क्या तुमने समझा है कि मैं तुम्हारा रुपया बिना चुकाये ही यहाँ से भाग जाऊँगा? क्या तुम्हें आदमियों की भी पहिचान नहीं है? दीखता नहीं है कि मैं सरकारी वर्दी में हूँ, कोई उठाईगीर नहीं हूँ। अजीब माँग आप मेरे सामने पेश करती हैं!'

ख़ालाजान ज़रा दबकर बोलीं, 'श्रीमान, नाराज़ न हों। आप इस लड़की को तो उसकी उजरत दे ही देंगे। आप इसके साथ दग़ा थोड़े ही करेंगे। यह हमारे घर की अच्छी छोकरियों में से है। मगर शराब और लेमोनेड के दाम मुझे चुका देने के लिए तो मुझे आपसे प्रार्थना करनी ही होगी। आप मुझे इस तकलीफ़ के लिए माफ़ करें। मजबूरी है! मुझे फ़ौरन मालकिन को जाकर हर बिक्री का रुपया दे देना होता है। दो बोतल शराब के दो रुपये और एक बोतल लेमोनेड का चार आना··· सवा दो रुपए मुझे देने की आप मेहरबानी करें!

'क्या कहा? एक बोतल देशी शराब का दाम एक रुपया?' मास्टर साहब ने घृणा से कहा, 'किसी भी स्थान से दस आने में एक बोतल मैं ले सकता हूँ!'

'शराब की दुकान में आपको शराब सस्ती मिलती है तो आप वहीं जाकर पी सकते हैं, जोसिया ने नाराज़गी दिखाते हुए कहा, 'मगर किसी अच्छी जगह जायँगे तब तो हर जगह एक बोतल का एक रुपया ही देना होगा। हम किसी से ज़्यादा दाम नहीं लेते हैं। लाइए, धन्यवाद! तीन रुपए में से बाक़ी बारह आने जाकर मैं अभी भेजती हूँ।'

'हाँ, अभी जाकर फ़ौरन बारह आने भेजो!' जर्मन शिक्षक ने जोर देते हुए कहा, 'और अब यहाँ और कोई न आये।'

'जी नहीं, जी नहीं, अब यहाँ कोई न आयेगा। दिल भरकर आप मज़ा लूटिए! ईश्वर आपकी ताक़त बढ़ाये।'

मनका उठी, दर्वाज़ा बन्द कर उसने चटखनी लगा दी। फिर आकर वह मास्टर साहब की गोद में बैठ गई और अपने उघरे हाथों से उन्हें अपने सीने से चिपटा लिया।

'तुम यहाँ कितने दिनों से हो ?' मास्टरजी ने शराब की चुस्की लेते हुए उससे पूछा। उन्हें लगा कि उस नवीन प्रेम-क्रीड़ा के लिए जो अब शुरू ही होनेवाली थी, एक मानसिक मित्रता और एक दूसरे से अधिक जानकारी की ज़रूरत थी। अस्तु हृदय में बेसब्री होते हुए भी उसने मनका से ऐसी बातें शुरू कीं जैसी कि लगभग सभी पुरुष अकेले में वेश्याओं से किया करते हैं और जिनके उत्तर में, बड़े प्राचीन काल से, वेश्याएँ मजबूरन झूठ बोला करती हैं—वे मशीनों की तरह झूठे उत्तर देती हैं, जिनसे न तो उनके हृदयों में कोई दुःख उत्पन्न होता है और न किसी प्रकार का क्रोध या उत्साह, क्योंकि वे अपने अनुभव से अच्छी तरह जानती हैं कि पुरुष उनसे क्षणिक उत्साह में यों ही ऐसे प्रश्न पूछते हैं।

'तीन मास ही मुझे अभी इस चकले में बीते हैं।' मनका ने उत्तर में कहा।

'तुम्हारी क्या उम्र है ?'

'सोलह साल की।' मनका ने पाँच साल अपनी उम्र में से घटाकर कहा।

अच्छा, अभी सोलह ही साल की हो !' मास्टरजी आश्चर्य से झुककर अपने बूट खोलते हुए बोले, मगर तुम यहाँ आई कैसे ?'

'एक सरकारी अफ़सर ने मेरी अज़मत ख़राब कर डाली। मेरी मा बड़ी सख़्त हैं। उसे पता लग जाता तो वह अपने हाथ से ही मेरा गला घोंट डालती। अस्तु मैं घर से भागकर यहाँ चली आई। . '

'तुम उस अफ़सर को चाहती थीं ? वही तुम्हारा पहिला प्रेमी था ?'

'चाहती न होती तो ऐसी नौबत ही क्यों आती ? उस बदमाश ने मुझसे विवाह करने का वायदा किया था। मगर मेरी अज़मत बिगाड़कर वह मुझे छोड़कर चला गया। वह जो चाहता था, उसे मिल ही गया था।

'उससे ऐसा करने में पहिले दिन तुम बड़ी शर्माई होगी ?'

'ज़रूर, तुहें भी शर्म आई होगी···आपको रोशनी में पसन्द है कि बिना रोशनी के ? ज़रा रोशनी कम कर दूँ···ठीक है न ?'

'यहाँ तुम्हारा जी तो ज़रूर ऊब जाता होगा ? तुम यहाँ किस नाम से पुकारी जाती हो ?'

'मुझे मनया कहते हैं ! जी तो मेरा यहाँ बड़ा ऊबता है। यह भी कोई ज़िन्दगी है !'

'मास्टरजी ने मनका को पकड़कर जोर से होंठों पर चूम लिया और फिर पूछा, 'यहां अपने पास आनेवाले मर्दों को भी तुम चाहती हो क्या? क्या कोई ऐसे भी आते हैं जिन्हें पाकर तुम्हें .खुशी होती है? तुम्हें आनन्द देनेवाले भी कोई आते हैं?'

'हाँ, हाँ!' मनका ने हँसते हुए कहा, 'आप जैसे गुदगुदे आदमी मुझे खास तौर पर पसन्द हैं!'

'अच्छा! मेरे जैसे आदमी तुम्हें खासकर पसन्द हैं? क्यों?'

'न जाने क्यों! आप भी मुझे बड़े अच्छे लगते हैं!'

मास्टरजी धीरे-धीरे शराब चुसकते हुए कुछ क्षण तक विचार-मग्न होकर कुछ सोचते रहे और फिर उन्होंने मनका से वही बात कही जो लगभग हर एक वेश्या-गामी वेश्या के शरीर पर अपना अधिकार जमाने से पहिले कहता है:

'मेरी प्यारी, मैं तुम्हें बहुत चाहता हूँ। मैं तुम्हें बड़ी .खुशी से ले जाकर एक घर में बिठाकर रखूँगा!'

'मगर तुम्हारी तो शादी हो चुकी है!' छोकरी ने उसकी अँगूठी छूते हुए कहा।

'हाँ, मगर मैं अपनी स्त्री के साथ अब नहीं रहता। वह अपना—स्त्रियों का—फ़र्ज़ पूरा करने के योग्य अब नहीं है।'

'बेचारी! दादाजी, उसको पता लगा कि आप कहाँ-कहाँ जाते हो तो वह ज़रूर रोयेगी।'

'खैर, यह बातें छोड़ो। देखो प्यारी, इसी लिए मुझे बहुत दिनों से तुम्हारी जैसी सुन्दर और मासूम-सी छोकरी की तलाश है। मैं अच्छा कमाता हूं। तुम्हें एक अच्छे किराये के मकान में अलग रख दूँगा, जिसमें बिजली और नल इत्यादि सब होंगे। खाने-पीने के अच्छे प्रबन्ध और मकान के किराये के अलावा चालीस रुपया मासिक जेब खर्च को तुम्हें दिया करूँगा! चलोगी मेरे साथ?'

यह कहकर उसने मनका को पकड़कर ज़ोर से चूमना शुरू कर दिया, परन्तु फिर फौरन ही उसके कायर हृदय में एक भयप्रद विचार आया और उसने काँपती हुई आवाज़ से, वैर भाव से पूछा, 'तुम्हें कोई बीमारी तो नहीं है?'

'नहीं, मुझे कोई बीमारी नहीं है। हर शनिवार को सरकारी डाक्टर आकर हम लोगों का मुआयना करता है।'

पाँच मिनट बाद वह उससे अलग हो गई और उससे जो रुपया मिला था, उसे

अन्ध-विश्वासो रिवाज के अनुसार उस पर थूककर उसने अपने लम्बे मोजों में रख लिया। इसके बाद उन दोनों में न तो एक दूसरे के प्रति स्वाभाविक प्रेम की चर्चा हुई और न साथ मिलकर एक घर में रहने की। मास्टरजी को मनका की शुष्कता के कारण ज़रा भी सन्तोष नहीं हुआ था, जिससे उन्होंने फौरन खालाजान को अपने पास भेज देने के लिए मनका से कहा।

'खालाजान! प्यारी खालाज़ान! मेरे मालिक आपको बुलाते हैं!' मनका ने बैठक में घुसते हुए कहा और एक आईने के आगे खड़ी होकर अपने बाल ठीक करने लगी।

जोसिया मास्टरजी के पास चली गई। कुछ देर में लौटने पर उसने रास्ते में ही पाशा को बुलाया और फिर अकेली बैठक में दाखिल हुई।'

'क्यों मनका, तुम मास्टरजी को सन्तुष्ट नही कर सकीं?' जोसिया ने हँसते हुए पूछा, 'वह तुम्हारी बड़ी शिकायत्त करते हैं। कहते हैं कि औरत है कि काठ का शुष्क लट्ठा! अब मैंने उन्हे सन्तुष्ट करने के लिए पाशा को भेजा है।

छिः, छिः, कैसा गन्दा आदमी है।' मनका ने मुँह बनाते हुए थूककर कहा, 'सवालों की झड़ी लगा देता है। पूछता है, 'क्यों, मेरा चमना तुम्हें पसन्द है? तुम्हें मज़ा आ रहा है? खूसट कहीं का! कहता है कि मुझे ले जाकर घर में बिठायेगा!'

'सभी इस प्रकार कहते हैं' ज़ो ने लापरवाही से कहा।

मगर जेनी जो आज सबेरे ही से गुस्से में दीखती थी, फट पड़ी।

'ख़ुशामदी, दब्बू, कम्बख़्त कही का!' वह लाल-पीली होकर, कमर पर अपने दोनों हाथ रखती हुई चिल्लाई, 'मैं उस खूसट, गन्दे पशु की गर्दन पकड़कर उसे एक आईने के सामने ले जाकर उसकी थुथड़ी उसे दिखाकर पूछना पसन्द करूँगी। 'कहो! कितने सुन्दर हो तुम? और जब तुम्हारे मुँह से लार टपकने लगेगी और तुम्हारी आँखें टेढ़ी-मेढ़ी चला करेंगी और तुम्हारी नाक और गले से गुर्राहट निकल-निकलकर तुम्हारी प्यारी के मुँह पर पड़ेगी तब तुम और कितने अधिक सुन्दर लगोगे? क्यों? और इसी पर तुम चाहते हो कि तुम्हारे दो-चार गन्दे रुपयों के लिए प्रेम से मैं तुम्हारे आगे पिघलकर पानी हो जाऊँ और तुम्हें निहारने के लिए आँखें चढ़ाकर अपनी पेशानी में ले आऊँ? फिर बदमाश के मुँह पर दो थप्पड़ इधर से और दो थप्पड़ उधर से, इतने ज़ोर से लगाऊँ कि वह मुँह से ख़ून उगल दे!'

'चुप जेनी, चुप ! अरे चुप ! छीः छीः !' ऐम्मा ने उसकी बातों पर घृणा दिखा-कर, उसे चुप करते हुए कहा ।

'मैं नहीं चुप होऊँगी !' जेनी ने उसकी बात काटकर कहा । मगर फिर वह आप ही चुप हो गई और नथने चढ़ाये हुए गुस्से से कमरे में टहलने लगी । उसकी सुन्दर, गहरी आँखों से आग बरस रही थी ।

आठवाँ अध्याय

धीरे-धीरे अन्ना की बैठक में भीड़ होने लगी । रोलीपोली नाम से चकले में पुकारा जानेवाला रङ्गीला बूढ़ा भी झूमता हुआ आ गया था । वह लम्बे क़द का और छरहरे बदन का था । उसकी नाक हमेशा लाल रहती थी और वह महकमा जङ्गलात के अफ़सरों की-सी एक वर्दी पहिने हुए, ऊँचे-ऊँचे बूट चढ़ाये और बगल में लकड़ी का एक गज़ दबाये घूमा करता था । तमाम दिन और साँझे वह किसी ऐसे चकले में बिताया करता था, जहाँ पीने को शराब और खेलने को बिलियर्ड भी मिल सकते थे । शराब के नशे से हमेशा झूमता हुआ, चकलों के दरबानों, ख़ालाओं और छोकरियों से हँसी-ठठोली करता हुआ और अपनी कहावतें और तुकबन्दियाँ सबको सुनाता हुआ वह चकलों में विचरा करता था। चकलों के सभी निवासी, मालकिनों से लेकर नौकरा-नियाँ तक, उसका मज़ाक उड़ाती थीं और उसको एक प्रकार की लापरवाही और घृणा की दृष्टि से देखती थीं—जिसमें अवश्य वैर-भाव नहीं होता था । कभी-कभी रोलीपोली इन लोगों के काम का साबित होता था—छोकरियों के प्रेमियों के पास उनके ख़त पहुँचा देता था अथवा बाज़ार से उनके लिए ज़रूरत की चीज़ें और दवाएँ ला देता था। अपनी लम्बी चटोरी ज़बान के कारण जिसे वह लटकाये फिरता था और अपना सारा स्वाभिमान नष्ट कर चुकने के कारण वह अक्सर अजनबियों की शराब-ख़ोरी में शरीक होकर उनका ख़र्च बढ़वा दिया करता था और ऐसे मौक़ों पर, वह जो कुछ 'उधार' पा जाता था, उसे भी वह चकलों की स्त्रियों पर ही ख़र्च कर डालता था । सिगरेट-बीड़ी के लिए थोड़े से पैसे अपने पास भले ही रख लेता था । अस्तु सब लोग उसको एक प्रकार से पसन्द भी करते थे ।

"रोलीपोली आया !" नियूरा ने घोषित किया । ड्योढ़ी में घुसकर दरबान

सिमियन से मित्रतापूर्वक हाथ मिला चुकने के बाद टेढ़ी टोपी लगाये, बैठक के द्वार पर आकर खड़े हुए रोलीपोली से नियूरा ने कहा, "अच्छा रोलीपोली, सुनाओ कुछ !"

'हुज़ूर के दर्बार में ।' रोलीपोली ने नाटक करते हुए कहना शुरू किया, 'चकलों का नारदमुनि, बेमुल्क का बादशाह, खान्दानी शाहज़ादा, दस्तबस्ता हाज़िर होता है ।' फिर उसने दोनों उस्तादों को सम्बोधित करते हुए कहा, 'तानसेनजी ! ध्रुपद का राग मुझे बजाकर सुनाइए ! इस घर की वज़ीर आज़म ख़ालाजान जोसिया को दस्तबस्ता बन्दगी ! ओहो ! आप तो सिर्फ़ ईस्टर के त्योहार में ही बोसा देती हैं ! यह तो मैं भूल ही गया था ! ख़ैर, अब मैं डायरी में लिखे लेता हूँ ताकि आयन्दा भूलने का मौक़ा न आये !'

इस तरह हँसी-ठठोली करता हुआ वह सारी छोकरियों का चक्कर लगा गया और आख़िर में जाकर मोटी किटी के पास बैठ गया । किटी ने अपनी मोटी टाँग उठाकर उसकी टाँगों पर रख दी और उसके घुटनों पर अपनी कुहनियाँ टेककर बैठ गई और लापरवाही से उसके चेहरे की तरफ़ देखने लगी । रोलीपोली जेब में से तम्बाकू का डिब्बा और काग़ज़ निकालकर अपने लिए एक सिगरेट बनाने लगा ।

'रोलीपोली, तुम कभी सिगरेट पीते-पीते थकते नहीं ? जनाज़े की कीलों की तरह मैं तुम्हें हमेशा ही सिगरेट बनाते देखती हूँ ।'

रोलीपोली ने उत्तर में फौरन अपनी भौंहें और अपने सिर की खाल सिकोड़ते हुए अपनी एक तुकबन्दी शुरू कर दी :

'मुझको भाती सिगरेट-बत्ती,
बड़ी ही प्यारी ! बड़ी ही सच्ची !
कैसे छोड़े इसको कोई !
जिसने पाई उसको भाई !'

'छोड़ दो अब रोलीपोली, कुछ दिन बाद तुम्हें मरना है !' मोटी किटी ने बड़ी लापरवाही से कहा ।

'सभी को एक दिन मरना है !'

'रोलीपोली, और इससे भी मज़े की चीज़ सुनाओ !' वीरा ने कहा ।

फ़ौरन रोलीपोली ने मज़ाकिया हावभाव से एक दूसरी तुकबन्दी सुनाना शुरू कर दिया :

'आस्मान के असंख्य तारे,
पगले उनको गिननेवाले!
हवा गुनगुनाती गिन ले! गिन ले,
पर मैं कहता रे पगले! पगले!
कलियाँ हँस हँसकर खिलती हैं,
चिड़ियाँ गा-गाकर मिलती हैं!'

'एक प्रेम का गीत भी मैं तुम्हें सुना सकता हूँ! वह तुम्हे शायद पसन्द आयेगा!' यह कहकर उसने लरजती हुई आवाज़ में गाना शुरू कर दिया :

'कहाँ चले तुम, बाँके बीर,
काला घोड़ा, नीला चीर।
पूछें ग्राम-वधू बढ़-बढ़कर,
ग्राम्य छोकरी हो न्योछावर।
पर सवार उत्तर न देवै,
ऍड़ लगाता बढ़ता जावै।
मूँछें मरोड़े पर मुँह नहि मोड़े,
ग्राम छोकरियों का दिल तोड़े।'

इसी प्रकार विदूषक का पार्ट खेलता हुआ, रोलीपोली, शाम-शाम भर और रात रात-भर चकलों की बैठकों में बैठा जीवन बिताया करता था। और उससे एक विचित्र प्रकार की मानसिक एकता हो जाने से छोकरियाँ उसको अपना ही-सा समझने लगी थीं और अक्सर उसकी थोड़ी बहुत रुपये-पैसे से भी मदद कर दिया करती थीं—कभी उसे शराब ख़रीद देती थीं और कभी ताड़ी मोल ले देती थीं।

रोलीपोली के अन्ना के यहाँ आने के कुछ देर बाद ही दूकानों पर काम करने-वाले नाइयों की एक टोली भी जो आज छुट्टी मना रही थी, घूमती-घामती वहाँ आई। यह लोग आनन्द से शोरगुल कर रहे थे और चकले में दाख़िल हो जाने के बाद भी अपना हिसाब-किताब और गप-शप करते रहे। वे आपस में एक दूसरे से अपनी ऊपरी और असली आमदनी और अपने मालिकों और उनकी स्त्रियों के बारे में बातें करने में लगे हुए थे। यह बिल्कुल आचरणहीन, झूठे और बकवासी लोग थे जो अपने भविष्य के बारे में ऊटपटाँग स्वप्न देखते थे—जैसे कि उनमें से कई किसी

अमीर विधवा सेठानी की नौकरी करके धीरे-धीरे उसके यार बन जाने का स्वप्न देखते थे। यह लोग अपनी गाढ़ी कमाई के पैसों का पूरा फ़ायदा उठाना चाहते थे, अस्तु वे कटरे के सभी चकलों का पहिले मुआयना कर रहे थे। हाँ, एक ट्रेपेल की पेढ़ी में घुसने की ज़रूर उनकी हिम्मत नही हुई थी, क्योंकि वह उनकी हैसियत के बहुत बाहर की थी, परन्तु अन्ना की पेढ़ी में घुसते ही उन्होंने नाच शुरू कर देने का हुक्म दिया जिसमें यह लोग पेरिस के रईसों की नक़्ल बना बनाकर स्वय भी खूब नाचे। मगर उन्होंने कोई छोकरी पसन्द नहीं की और दूसरे चकले देख चुकने के बाद वे आने का वायदा करके चले गये।

इनके अलावा सरकारी दफ्तरों के क्लार्क, जो पेटेण्ट लैदर के बूट पहिने हुए छैला बने थे, कई विद्यार्थी और ऐसे अफसर भी आये, जिन्हे चकले की मालकिन और दूसरे मेहमानो की दृष्टि में अपना स्वाभिमान खोने का बडा भय लग रहा था। धीरे-धीरे अन्ना की बैठक में शोरगुल और चहल-पहल का एक ऐसा समा बध गया कि किसी को वहाँ आना या रुकना बुरा नहीं लगता था। सोनका से बिना नागा रोज़ आकर मिलनेवाला उसका प्रेमी भी आया जो सोनका के पास रोज घण्टों बैठा-बैठा स्नेह-पूर्ण, बीमार की सी आँखों से उसे घूरा करता था और जो सिसकियां भर-भर-कर और बेहोश हो-होकर उसका इसलिए नाक में दम किये रहता था कि वह चकले में रहती है और रविवार के दिन भी व्रत नहीं रखती और ठीक तरह पर हलाल किया हुआ मांस नहीं खाती और घर, कुटुम्ब और धर्म के पथ से भटक आई है।

लगभग रोज़ ही, शोरोगुल हो जाने पर, जोसिया चुपचाप उसके पास आकर, होंठ चबाती हुई, पूछती थी :

'यहाँ बैठे-बैठे क्या करते हो, मिस्टर? मुफ्त में गर्मा रहे हो? जाओ छोकरी को अन्दर ले जाकर ज़रा मजा लूटो।'

सोनका और उसका प्रेमी, दोनों ही यहूदी थे और एक ही क़स्बे के रहनेवाले थे। इन दोनों को ऐसा लगता था, ईश्वर ने ख़ास तौर पर एक दूसरे से इश्क करने के लिए ही सिरजा था। मगर भाग्य की मार! कुछ ऐसे वाक़यात हो गये कि इन दोनों का एक दूसरे से वियोग हो गया। उनके कस्बे में यहूदियों के ख़िलाफ़ वह भयङ्कर बलवा हो गया जिसमें यूरुप की दूसरी जातियाँ यहूदियों को ख़ासकर लूटा और कत्ल किया करती हैं। इस घटना से यह बेचारे कुछ समय के लिए एक दूसरे

से अलग हो गये। मगर प्रेम का बन्धन भी बड़ा ज़बरदस्त होता है, जिसने इस नीमान नाम के नौजवान को गली-गली की ख़ाक छनवाकर आख़िरकार अपनी प्रेमिका से ला मिलाया। अब यह नौजवान इसी शहर में एक दवाई की दूकान में नौकर था और रोज़ अपनी प्यारी के पास आया करता था। वह जप-तप करनेवाला एक धार्मिक यहूदी था। वह जनता था कि सोनका को उसकी मा ही ने अपने हाथों से एक बुर्दा-फ़रोश के हाथों बेच डाला था जिससे सोनका की बड़ी दुर्गति हुइ थी — वह बेचारी एक के बाद दूसरे के हाथ बहुत से हाथों में बेची गई और उसे बहुत-सी भयङ्कर और दर्दनाक स्थितियों में गुज़रना पड़ा। इन तमाम बातों और घटनाओं के विचार से इस धार्मिक यहूदी की आत्मा में बड़ी ग्लानि उत्पन्न होती थी। मगर इश्क़ बुरी बला है, जिसके कारण वह रोज़ शाम को अन्ना की बैठक में नज़र आता था। जैसे ही वह किसी तरह, पेट काट-कूटकर, अपनी आमदनी में से, जिसमें उसकी बड़ी मुश्किल से गुज़र होती थी, एक-दो रुपया बचा लेता था, वैसे ही फ़ौरन वह सोनका को लेकर एक कमरे में चला जाता था। मगर इससे न तो उसे ही कोई ख़ुशी हासिल होती थी और न सोनका को। क्षणिक आनन्द और एक दूसरे का शरीर प्राप्त कर लेने के बाद वे दोनों दुःखी होकर रोने लगते थे और एक दूसरे को बुरा-भला कहते हुए आपस में लड़ने लगते थे। बाद में सोनका मुँह लटकाये और आँखें लाल किये बैठक में लौटतो थी।

मगर आम तौर पर उसके पास रुपया नहीं रहता था, जिससे वह शाम को अपनी आशना के पास बैठा-बैठा, उसको देख-देखकर समय ही गुज़ारा करता था। अगर इत्तफ़ाक से कोई मेहमान कभी सोनका को पसन्द कर लेता था और उसे अन्दर कमरे में ले जाता था तो यह अभागा नौजवान, बड़े सब्र और ईर्ष्या से सोनका के लौटने का इन्ताज़ार किया करता था। और जब वह लौटकर फिर उसके पास आकर बैठ जाती थी तब धीरे-धीरे, बिना उसकी तरफ़ देखे, जिससे कि दूसरों का ध्यान उसकी तरफ़ न जाय, वह सोनका को लानत-मलामत करने लगता था। सोनका बेचारी की सुन्दर आँखों से ऐसे अवसरों पर कसाई की गाय की-सी बेबसी टपका करती थी।

चश्मे की दूकान में काम करनेवाले जर्मनों की एक टोली भी अन्ना के यहाँ आई; और मछलियाँ और खाने-पीने का सामान बेचनेवाली दूकान के क्लार्कों की एक टोली भी आई; और कटरे के बड़े परिचित दो नौजवान भी आये जिनके

सिर के बाल झड़-झड़ाकर जगह ब जगह गञ्ज के निशान बन रहे थे। इनमें से एक का नाम निकी था। वह जिल्दसाज़ी का काम करता था। दूसरे का नाम किशका था और वह गवैया था। इन्हीं के नामों से उनको कटरे के चकलों में भी पुकारा जाता था। उनका भी चश्मे की दूकान के कार्ल कार्लोविश और मछली की दूकान के बोलोदका की तरह, बड़ी ख़ुशी की आवाज़ों, चीखों और बोसों के साथ अन्ना की बैठक में स्वागत किया गया जो उन लोगों को ख़ुश करने के लिए था। फुर्तीली नियूरका यह जानते ही कि कौन आया है, उछलकर अपनी आदत के अनुसार जेनी के पास जा पहुँचती और कहती :

'जेनका, तुम्हारा पति आ गया!'

अथवा कूदती हुई मनका के पास जाकर कहती :

'नन्हीं मनका, तुम्हारा आशिक़ आ गया!'

किशका गवैया-सवैया तो क्या था—मादक वस्तुओं की एक दूकान का मालिक था। मगर वह अपने आपको शायद तानसेन का भी उस्ताद समझता था और अन्ना के यहाँ घुसते ही, बकरे की तरह, गले में से आवाज़ निकालता हुआ अलापना शुरू कर देता था। यह उसकी हमेशा की आदत थी।

बैठक में बराबर गाना और नाच हो रहा था। टमारा का प्रेमी सेनका भी आया। मगर आज अपनी रोज की आदत के अनुसार उसने शान-बान नहीं दिखाई; न तो उसने उस्तादजी से बाजा बजवाया, न छोकरियों को चॉकलेट खिलवाई और न कोई तबाही ख़रीदी। न जाने क्यों वह आज बड़ा सुस्त था और अपने दाहिने पाँव पर लँगड़ाता हुआ-सा सबसे आँख बचाता हुआ घुसा था। शायद उसके धन्धे में कोई गड़बड़ी खड़ी हो गई थी जिससे वह परेशान था। उसने घुसते ही एक बार सिर्फ अपना सिर हिलाकर टमारा को अपने पास बुला लिया और उसको लेकर उसके कमरे में चला गया। ऐग्मोन्ट लावरेत्सको नाम का ऐक्टर भी आया जो दाढ़ी मूँछ मुड़ाये, लम्बे क़द का, राजदर्बार का विदूषक-सा लगता था। उसका चेहरा भोंडा और घृणोत्पादक था।

मछली की दूकान के क्लार्क नौजवानों के जोश से और व्यावहारिक सभ्यता की किताबों से सीखे हुए तमाम शिष्टाचार के हाव-भावों को दिखाते हुए नाच रहे थे। छोकरियाँ भी उनके साथ इसी प्रकार का व्यवहार करती हुई, हाथ लटकाये हुए और

अभिमान से गर्दनें ऊँची एक तरफ को नज़ाकत से ज़रा सिर झुकाये हुए मानो भले घरों की कोमलांगियाँ नाचते-नाचते थक गई हों, वे नाच रही थीं ; क्योंकि यह लोग उनसे भी इसी प्रकार का शिष्ट व्यवहार चाहते थे। वे यह नाटक करते हुए, अपने मन में अपने आपको पेरिस के अमीरों के दर्जे का समझ रहे थे—जो शायद चकले की छोकरियों को खुश करने के लिए ही मानो उनके साथ नाचने को राजी हो गये थे। बीच-बीच में नाच बन्द करके, इस अभिनय में रूमालों से मुख पर पङ्खा झलते हुए अपना सीना सुखाना और लापरवाही से थकान कम करना भी ज़रूरी था। मगर फिर भी वे इतने जोश-खरोश से नाच रहे थे कि क्लार्क पसीने से लथपथ हो रहे थे।

कई चकलों में दो-तीन बखेड़े भी इसी बीच में हो गये थे। कोई आदमी ख़ून से लथपथ, जिसका चेहरा फीकी चाँदनी में ख़ून से काला दीखता था, गालियाँ बकता हुआ, गली में से भागा जा रहा था। अपने घावों की चिन्ता से अधिक उसे अपनी टोपी की चिन्ता दीखती थी जो कहीं झगड़े में खो गई थी और जिसे वह इधर-उधर ढूँढ़ता हुआ दौड़ रहा था। छोटे कटरे में कुछ सरकारी दफ़्तरों के बाबू जहाज़ों पर काम करनेवालों से भिड़ पड़े थे। थके हुए उस्ताद ऊँघते हुए, मानों सन्निपात में हों, आदत के अनुसार बेचारे मशीनों की तरह पियानो बजा रहे थे। रात ढल चुकी थी।

अचानक सात कालिज के विद्यार्थी, एक प्रोफेसर और एक अखबार का संवाददाता अन्ना के चकले में दाखिल हुए।

नवाँ अध्याय

यह सब लोग, सिवाय एक संवाददाता को छोड़कर, आज सबेरे से ही पहली मई का त्योहार कुछ अपनी परिचित स्त्रियों के साथ मना रहे थे। नावें खेते हुए वे नीपर नदी के उस पार गये थे और वहाँ सुगन्धित घनी झाड़ियों में बैठकर, उन्होंने खाना पकाकर खाया था ; और धूप हो जाने पर नदी के गरम और तेज़ पानी से वे और स्त्रियाँ बारी-बारी से तैरे और नहाये थे ; घर की बनी मसालेदार ब्रान्डी पी थी ; अपने देश के रसीले गीत गाये थे ; और अँधेरा हो जाने पर घर लौटे थे जब

कि नदी की काली-काली लहरें उनकी नावों से टकरा-टकराकर, तारों की छायाओं को अपने दामन में बिजली की रुपहली बत्तियों की तरह उछालने लगी थीं। नावों से उतरकर जब वे किनारों पर आये तो उनकी हथेलियां पतवारों को चलाते-चलाते जलने लगी थीं और उनके हाथ-पाँवों में एक मीठा मीठा दर्द हो रहा था, जिससे उनके शरीरों में एक आनन्दपूर्ण थकान हो रही थी।

वे अपनी मित्र युवतियों को पहुँचाने उनके घर तक गये थे और उनकी वाटिकाओं के द्वार पर उनसे देर तक बातें कर-करके, हँस-हंसकर और इस प्रकार ज़ोर-ज़ोर से हाथ मिलाकर मानों वे पहिया घुमा रहे हों, बिदा हुए थे।

सारा दिन उनका आनन्द और ऊधमचौकड़ी में बीता था जिसमें शोरोगुल तो उन्होंने इतना काफी मचाया कि थोड़े-थोड़े थक भी गये थे, मगर उन्होंने जवानी का संयम क़ायम रखा था—न तो वह नशे में धुत्त हुए थे और न उन्होंने आपस में, जो जवानी की चौकड़ी में ज़रा असाधारण-सी बात है, ईर्ष्या से गाली-गलौज और हाथा-पाई ही की थी। हाँ, उनका स्वभाव आज दिन भर ऐसा बने रहने के कई कारण भी थे। एक तो धूप बड़ी सुहावनी थी; दूसरे दरिया के किनारे की जीवनदायिनी हवा मे, घास और झाड़ियों की सुगन्ध में वह दिन भर रहे थे; तीसरे तैरने और नाव खेने के कारण वे अपने शरीरों में एक मस्त ताक़त और फुर्ती का आभास पा रहे थे और चौथे उनके साथ परिचित भले घरों की चतुर, दयावान्, पवित्र और सुन्दर लड़कियाँ थीं। मगर उनके अज्ञान में—उनके बिल्कुल न जानते हुए—उनका मस्तिष्क ठीक रखते हुए भी, उनकी कामवासना—स्वस्थ और स्वाभाविक नवयुवकों की लीलापूर्ण कामवासना, स्त्रियों के हाथ पकड़ने और उन्हे उठा-उठाकर नाव में चढ़ाते वक्त उनके सीने से लग जाने से, स्त्रियों के कपड़ों से आनेवाली सुगन्धों से, स्त्रियों की जल-क्रीड़ाओं और गहरे पानी में चले जाने पर डर-डरकर चिल्लाने से, उनके शरीरों की लापरवाही से सेमोवार के चारों ओर घास पर झुके देखने से, और इसी प्रकार की दूसरी आज़ादियों से, जो उस प्रकार के सैर-सपाटों में अनिवार्य होती हैं, जग चुकी थी, क्योंकि पृथ्वी, घास, पानी और सूर्य की धूप से निर्द्वन्द्व सपर्क होने पर आदमी में वह प्राचीन, शानदार और आज़ाद पशु फिर जागने लगता है, जिसको मनुष्यों ने डरा-डराकर कुरूप कर दिया है।

अस्तु, आधी रात के लगभग जब यह आठों आदमी, खूब खा-पीकर, विद्यार्थियों

के एक विश्राम-गृह के गरम कमरे में से निकलकर, बाहर की मीठी, शीतल और सुगन्धित वायु में आये तो उन्हें गली की अँधियारी बड़ी खली और आकाश और मकानों में इधर-उधर जलनेवाली बत्तियों और अँगोठियों ने, और न जाने कहाँ से आनेवाली वायु में मिली उन सुगन्धों ने जो उनका माथा फेरे दे रही थीं, उन्हें अपनी ओर बुलाया। उनको अपने हृदयों में एक आग जलती हुई लगी जो उन्हें घुलाये-सा दे रही थी—किसी बात की उनको बड़ी अभिलाषा और उत्कण्ठा हो रही थी। दिन-भर की थकान के बाद, आराम और खान-पान से पुट्ठों में नई ताक़त आ जाने और फेफड़ों में बहुत-सी हवा भर जाने और रगों में लाल लाल ख़ून फुरती से बह उठने से उन्हें बड़ा आनन्द और आत्मविश्वास हो रहा था। बिना कुछ कहे, सोचे या समझे, आज की रात—सोते हुए उस जङ्गल में, कपड़े शरीर से उतारकर किसी बनबाला के घास पर पड़नेवाले क़दमों के पीछे, सूँघते हुए दौड़ते और उस बाला को आख़िरकार पकड़कर छाती से चिपटाकर अपनाने के लिए—चीख-चीखकर बुला रही थी।

मगर इन आठों को अब एक-दूसरे से अलग होना असम्भव था। दिन-भर वह साथ-साथ रहकर भेड़ों के एक झुण्ड की तरह बन गये थे, जिसमें जिधर एक का रुख होता था, उधर ही सब जाने को तैयार हो जाते थे। अस्तु वे साथ-साथ विश्राम-गृह के द्वार के आगे, सड़क के खरंजे पर खड़े अपना वक्त ख़राब कर रहे थे और विश्राम-गृह में थोड़े बहुत घुसनेवालों का मार्ग भी रोक रहे थे। वे इस बात की आपस में दिखावटी चर्चा कर रहे थे कि बाक़ी रात कहाँ बिताई जाये। सरकस में जाने का विचार हुआ। मगर वह बहुत दूर था। वक्त भी ज़्यादा हो चुका था। अब तक बहुत-सा तमाशा ख़त्म हो चुका होगा और टिकटों के दाम भी वहाँ अधिक थे। वोलोद्या पावलोव ने अपने घर जाकर वहाँ रखी हुई एक दर्जन शराब की बोतलें ख़त्म करने का प्रस्ताव किया। मगर इतनी रात को किसी गृहस्थ के घर जाकर दवे पाँवों घुसकर, घुसपुस-घुसपुस धीरे से एक दूसरे के कान में बातें करते हुए, शराब पीने का प्रस्ताव भी पसन्द नहीं किया गया।

'मैं बताऊँ, यारो!' लिखोनिन नाम के काफ़ी उम्र के, लम्बे क़द और झुकी कमर के, दाढ़ीवाले, मनहूस सूरत के विद्यार्थी ने कहा, 'चलो यार, एक गाड़ी में बैठकर किसी चकले में छोकरियों के पास, चलें!' वह विचारों में अराजकता का पक्षपाती था,

परन्तु बिलियर्ड की मेज़ों, ताशों और घुड़दौड़ों में जुआ खेलने का उसे बड़ा शौक़ था। सच तो यह है कि वह बड़ा खुला खिलाड़ी था। परसों ही उसने व्यापारियों के क्लब में जुए की मेज़ पर एक हज़ार रुपये जीते थे जो उसकी जेबों में, बाहर आने के लिए उछल रहे थे।

'ज़रूर! ज़रूर! ठीक कहा बन्धु, तुमने!' किसी ने उसका समर्थन करते हुए कहा, 'चलो चलें!'

'अरे भाई, रात क्या यों ही थकावट के कामों में बीतेगी...' दूसरे ने अक़्ल-मन्दी दिखाते हुए बनावटी थकान का ज़िक्र करते हुए कहा।

तीसरे ने एक दिखावटी जँभाई लेते हुए कहा, 'नहीं यार, चलो अपने-अपने घर चलें...चलो...बन्दगी.. आज भर के लिए काफ़ी हो चुका!'

'हाँ, हाँ तुम तो सोने में ही बड़े बहादुर हो!' लिखोनिन ने उसकी हँसी उड़ाते हुए कहा, 'कहिए प्रोफेसर साहब, आप चलेंगे?' प्रोफेसर यारचेन्को ज़िद्दी और इस समय सचमुच ग़ुस्से में भी दीखता था। परन्तु शायद उसको भी इस समय पता नहीं था कि उसके दिल के एक कोने में कौन-सी ख़्वाहिश घर कर रही थी।

'मुझे तो माफ़ करो, लिखोनिन। मुझे दीखता है कि अब हम लोग बिल्कुल सूअरपन पर उतर आये हैं। अभी तक का समय तो हमने सब बड़ा अच्छा, स्नेह-पूर्वक और सरलता से बिताया, मगर अब आप, शराब पी लेने पर जानवरों की तरह, कीचड़ में लोटने की तैयारी कर रहे हैं! मैं तुम्हारे साथ नहीं जाऊँगा।'

'अगर मेरी याददाश्त मुझे धोखा नहीं दे रही है,' लिखोनिन ने शान्तिपूर्ण ताना देते हुए कहा, 'तो मुझे याद पड़ता है कि पिछले हेमन्त में ही हम दोनों एक प्रोफ़ेसर के साथ, एक चकले में बैठे-बैठे पियानोफोर्ट में एक गिलास बरफ़ का पानी उडेल रहे थे और छोकरियों के साथ भा रहे थे।'

लिखोनिन ने सच कहा था। यारचेन्को ने अपने विद्यार्थी-काल में और उसके बाद भी जब वह विश्वविद्यालय में रहता था, बड़ी औघड़ ज़िन्दगी बिताई थी। शहर के सभी शराब-खानों, नाचघरों और आनन्द की जगहों में उसके छोटे-मोटे, गोल-मटोल शरीर और उसके गुलाबी, कामदेव के-से रँगे हुए गालों और उसकी चमकीली, तर, दयार्द्र आँखों से सभी-परिचित थे और उसकी जल्दबाज़ी की गड़बड़ बातें और तेज़ हँसी सबको याद रहती थी।

उसके साथियों की समझ में ही नहीं आता था कि वह पढ़ने के लिए वक़्त कहाँ से निकाल लेता था, क्योंकि वह अपने इम्तहान हमेशा ही अच्छे नम्बरों से पास किया करता था और प्रोफ़ेसर उससे बड़े ख़ुश रहते थे। परन्तु अब धीरे-धीरे यारचेन्को अपने पुराने दोस्तों और बोतल के साथियों से अलग रहने लगा था। वह अब विद्वान् प्रोफ़ेसरों की सङ्गति में अधिक रहने लगा था, क्योंकि उसका मान भी बढ़ रहा था और उसको अगले वर्ष के लिए एक बड़े प्रोफ़ेसर का दर्जा भी दिया जानेवाला था। अक्सर वह साधारण बातचीत में 'हम विद्वान् लोग...' वाक्य का भी प्रयोग करने लगा था। विद्यार्थियों से दोस्ती, उनके साथ फिरना और उनकी सभाओं, जुलूसों और हड़तालों में शरीक होना, अब उसे कठिन हो गया था। मगर विद्यार्थियों को ख़ुश रखने के फ़ायदे भी वह जानता था, जिससे एकाएक वह अपने पुराने दोस्तों को छोड़ भी नहीं सकता था, परन्तु लिखोनिन के शब्दों से उसे बड़ी चोट पहुँची।

'हे भगवान, नासमझी में हम लोगों ने क्या क्या काम किये, उन्हें गिनने से क्या फ़ायदा? बचपन में हम लोग अपने घर से शक्कर चुराकर भी खाते थे, अपने कपड़े गन्दे कर लेते थे, तितलियों को पकड़कर उनके पाँव उखाड़ लेते थे।' यारचेन्को ने ग़ुस्से से बड़बड़ाते हुए कहा, 'मगर उस सबको भी एक इन्तहा होती है। मैं आपको किसी क़िस्म की सलाह या शिक्षा देना नहीं चाहता। मगर आख़िर हम लोगों को अपने विचारों के अनुसार तो चलना ही चाहिए। हम सब मानते हैं कि वेश्यावृत्ति मनुष्य-समाज की एक बड़ी भयंकर बीमारी है। साथ ही हम लोग यह भी मानते हैं कि इस बीमारी के लिए स्त्रियों से अधिक मर्द ज़िम्मेदार हैं, क्योंकि बाज़ार में जिस चीज़ की माँग होती है, वही बिका करती है—उसी को लाकर दूकान पर रखा जाता है। ऐसी हालत में शराब के नशे में होकर मैं वेश्याओं के पास जाऊँ तो मैं तीन के प्रति पापी बनता हूँ—एक तो उन अभागी, मूर्ख स्त्रियों के प्रति जिनसे मैं अपने रुपये के बल पर यह निकृष्ट कार्य करवाऊँगा, दूसरे मनुष्य-समाज के प्रति, क्योंकि घण्टे दो घण्टे के लिए अपनी पशुवृत्तियाँ तृप्त करने के लिए किसी औरत को भाड़े पर लेकर मैं वेश्यावृत्ति की अधम संस्था को क़ायम रखने में साझीदार होता हूँ; और तीसरे स्वयं अपनी आत्मा और अपनी बुद्धि के प्रति भी यह बड़ा कुकर्म और पाप है।'

'ओ हो हो हो !' लिखोनिन ने एक तरफ़ को गर्दन लटकाकर अपना सिर उसके शब्दों की तान में हिलाते हुए धीमी आवाज़ में कहा, 'हमारे फ़िलासफ़र साहब ने तो एक डाकगाड़ी ही छोड़ दी !'

'हाँ, तुम्हारे लिए इस तरह मज़ाक उड़ाना बड़ा आसान है ।' यारचेन्को ने उत्तर में कहा, 'मगर मेरा विचार है कि हमारे दुःखी रूसी जीवन में इससे अधिक दुःख की और कोई बात नहीं है कि हम लोग अच्छे से अच्छे विचारों को मज़ाक में उड़ा देते हैं । आज हम लोग यह कह सकते हैं कि ऊँह ! हमारे चकले में न जाने से चकले थोड़े ही बन्द हो जायेंगे !' तो फिर पाँच बरस बाद हम यह भी कहेंगे कि 'ऊँह ! हमारे एक रिश्वत न लेने से सरकारी दफ्तरों में रिश्वत चलाना थोड़े ही बन्द हो जायेगी, है तो रिश्वत लेना बड़ी बुरी चीज ! मगर हमारे भी तो घर-गृहस्थी और बाल-बच्चे हैं ! और फिर हम भी कोरे विचारों की दुनिया में ही विचरने और अमल कुछ न करने के कारण दस बरस बाद नरम दल में शरीक होकर बड़े बड़े आदमियों के पिछलग्गू बने फिरेंगे और अपनी आरामगाहों में बैठे-बैठे व्यक्तिगत स्वाधीनता पर व्याख्यान झाड़ते हुए कहा करेंगे, 'जैसा देस वैसा भेस ।' ईश्वर की क़सम किसी नेता ने कुछ रोज़ पहिले ही रूसी विद्यार्थियों को रूस के भावी क्लार्क कहकर ठीक ही सम्बोधित किया था !'

'नहीं, नहीं, भावी प्रोफ़ेसर कहा होगा !' निखोनिन ने कहा, मगर यारचेन्को उसके इस कटाक्ष की परवाह न करके बोलता ही गया, ख़ास बात तो यह है कि आज सुबह से मैं तुम्हें देख रहा हूँ । कितनी अच्छी तरह, सरल व्यवहार से तुम लोग दिन भर नदी के पानी में और तट पर उन सुन्दर और अच्छी युवतियों के साथ खेलते रहे ! मगर उनसे अलग होते ही तुम बाज़ारू औरतों के पास जाने का विचार करते हो ! ज़रा सोचो कि हम लोग अपनी-अपनी सुन्दर और अच्छी बहिनों से मिलने गये होते और उनके पास से लौटते होते और उनके पास से लौटते ही चकलों में चले जाते तो उसका क्या अर्थ होता ? क्या ऐसा विचार भी हमको प्रिय हो सकता है ?

'हाँ, हाँ, मगर मर्दों को जाने के लिए फिर और जगह ही कौन-सी रह जाती है ?' लम्बे क़द और दिखावटी चालढाल के बोरिस सोबॉशनिकोव ने कहा जो फ़ौजी फ़ेशन की पतलून के ऊपर एक छोटी जाकेट पहिने हुए था, जिसमें से उसका पेट निकला

पड़ रहा था—और जिसकी नाक पर एक शानदार सुनहरा चश्मा रेशमी फ़ीते से लटक रहा था और सिर पर पतले किनारों की रूसी टोपी थी, 'चकले में किराये की स्त्रियों के पास जाना उससे तो अच्छा ही है कि घर में लुक-छिपकर नौकरानी, महाराजिन या पड़ोसी की औरत से चूमाचाटी की जाय! तुम्हीं बताओ कि विषय-भोग के लिए औरतों की हमें ज़रूरत हो तो हम क्या करें?'

'विषय-भोग के लिए स्त्रियाँ चाहिए?' यारचेन्को ने चिढ़ी हुई आवाज़ में कहा। 'यह तो कम से कम हमें ईमानदारी से मान ही लेना चाहिए कि हम पढ़े लिखे रूसी आदमी अपने स्कूलों और कालिजों से ही अपनी जवानी से हाथ धोकर, चपटे कन्धे और मुड़ी हुई कमरें लेकर निकलते हैं। हम लोगों में विषय-भोग के तूफ़ान की सामर्थ्य ही कहाँ होती है? हम लोगों की विषय-कामना सच्ची भूख की तरह स्वाभाविक नहीं होती, बल्कि एक लत और मज़ाक की तरह हमारे दिलबहलाव की चीज़ होती है! स्वाभाविक विषय-कामना का एक सच्चा उदाहरण मुझे स्वयं अपनी आँखों से देखने वाले एक आदमी ने एक बार सुनाया था। कोहक़ाफ का रहनेवाला एक बलिष्ठ पहाड़ी नौजवान एक बार काम की तलाश करता-करता दक्षिण के फ़ैशनेबल बन्दरगाह में आ निकला। बन्दरगाह में चारों तरफ़ पैसेवालों के मकान थे। शाम का समय था और शीतल मन्द-सुगन्ध वायु बह रही थी। पहाड़ी नवयुवक ने एक तरफ़ से मधुर संगीत के स्वर आते हुए सुने। और वह उस तरफ़ को चल पड़ा। चलते-चलते वह एक ऐसे मकान की खिड़की के पास जिसमें नाच हो रहा था, पहुँचा। उस खिड़की के पास हो, कमरे में एक स्त्री इतने झीने कपड़े पहिने हुए नाच रही थी कि उसका सारा बदन दिख रहा था।

नाचनेवाली, नाचती हुई बार-बार उसी खिड़की के पास, जिसपर वह सुन्दर पहाड़ी जवान घुड़सवार खड़ा था, आती थी—यहाँ तक कि उसके लहँगे की कोर उसके मुँह से छू जाती थी।

यह नौजवान कुछ देर तक खड़ा-खड़ा उसे देखता रहा। मगर फिर भागकर उछला और खिड़की में होता हुआ उस स्त्री के पास जा पहुँचा। उसने उस स्त्री के साथ-साथ नाचनेवाले छोटे क़द के आदमी को अपने हाथों से झटककर अलग कर दिया और स्त्री के झीने वस्त्र फाड़-फूड़कर उसे नंगा कर दिया। लोग शोरगुल मचाते हुए उसकी तरफ़ दौड़े और बेतों और छातों से मारने लगे। एक आदमी ने हवा में

पिस्तौल के वार भी किये और एक फौजी अफसर ने उसे तलवार से भी मारा। मगर उसने किसी की परवाह न करते हुए, सबके देखते-देखते उस स्त्री को ज़मीन पर डाल दिया। उसके साथ वहीं विषय-भोग किया। बाद में जब पुलिस ने उसे पकड़कर मारना शुरू किया तो वह कहने लगा :

'तुम मुझे जितना चाहो मार सकते हो! जेल भी डाल दो! मुझे ज़रूर सजा मिलनी चाहिए! मगर वह स्त्री नङ्गी क्यों नाच रही थी?'

उस बेचारे उजड्ड पहाड़ी को जेल में डालने या मारने में क्या लाभ था? वह अपनी स्वाभाविक शक्ति को ही तो क़ाबू में नहीं रख सका? उसका कोई दोष था तो इतना ही तो था? मगर आप औरतों को अपनी ज़रूरत समझते हैं! सच तो यह है कि हम बुद्धि-जीवी लोग बुद्धि से विषय करते हैं, स्वाभाविक इच्छा से नहीं! हम लोग अपने मन से मैथुन करनेवालों में हैं, शरीर से करनेवालों में नहीं।

'सौ-सौ चूहे खाकर बिल्ली हज को चली! सोबाशनोकोव ने कहा, 'प्रोफेसर साहब, आपकी आत्मा तो उस पठान की तरह है जो औरत को उठाकर भाग जाता है, मगर आपका मन दूकान पर बैठनेवाले बनिये का-सा है जो हाथ मलकर पछताता है!'

मगर यहाँ पर रामसेस ने उसकी बात काट दी। रामसेस हृष्ट-पुष्ट पीले, रङ्ग, मोटी नाक और छोटे क़द का एक विद्यार्थी था जिसका मुड़ा हुआ सफाचट चेहरा, उसके चौड़े माथे, जिसकी कनपटियों पर गञ्ज के दो निशान बन चले थे, और बैठे गालों और नुकीली ठुड्डी के कारण एक त्रिखूँट की तरह दीखता था। विद्यार्थियों की दृष्टि से उसका जीवन बड़ा विचित्र था। उसके साथ के दूसरे विद्यार्थी तो अपना समय राजनीति, प्रेम, सिनेमा और थियेटर और बीच-बीच में कुछ कुछ पढ़ने में बिताया करते थे मगर रामसेस अपना समय अधिकतर मुक़दमों की छानबीन और अदालत माल के फ़ैसलों, जायदादों और व्यापार के झगड़ों, वारिसी की बारीकियों के अध्ययन में बिताया करता था। अपने आप ही, रुपये की उसको ज़रूरत न होते हुए भी, उसने एक नोटरी के यहाँ क्लर्की की और फिर एक मैजिस्ट्रेट का सेक्रेटरी बनकर रहा और पिछले पूरे साल भर तक अदालतों के मुक़दमों की एक अखबार को रिपोर्टें भेजता रहा और एक शक्कर के कारख़ाने के मन्त्री के सहायक की तरह काम करता रहा। बाद में इस कारख़ाने की तरफ से एक साझीदार के ख़िलाफ़ मुकदमा चला तो

रामसेस ने ऐसी होशियारी से काम किया कि अदालत से बिलकुल अपनी इच्छा के अनुसार ही फैसला लिखा लिया।

उसकी उम्र कम होते हुए भी, अच्छे-अच्छे वकील—यद्यपि ज़रा बड़प्पन के साथ—उसकी राय को सुना करते थ। रामसेस को अच्छी तरह जाननेवाले शुरू से ही समझते थे कि रामसेस अवश्य एक दिन किसी अच्छे रुतबे पर होगा—बल्कि रामसेस ख़ुद भी अपने इस विश्वास को गुप्त नहीं रखता था कि पैंतीस वर्ष की उम्र होते-होते वह दस लाख रुपया अपनी माल की वकालत से कमा लेगा। रामसेस के साथी अक्सर उसको अपनी सभा-सोसायटियों और कक्षा का प्रधान चुन लेते थे, मगर वह ऐसे सम्मानों को धन्यवाद सहित वक़्त न होने का बहाना करके स्वीकार नहीं करता था। मगर जब कभी उसके किसी मित्र का कोई मुक़दमा होता था तो वह उसमें अवश्य भाग लेता था और ऐसी अच्छी और समझदारी की बहस करता था कि अक्सर दोनों पक्ष ख़ुश हो जाते थे और आपस में समझौता कर लेते थे। यारचेन्को की तरह वह भी कालिज के विद्यार्थियों को ख़ुश रखने के फ़ायदे अच्छी तरह समझता था। यद्यपि वह अपने आपको दूसरों से कहीं ऊँचा समझने के कारण दूसरों को हिकारत की नज़र से देखा करता था, परन्तु वह अपना यह भाव कभी भूलकर भी अपने चेहरे पर लाने की ग़लती नहीं करता था।

'देखो, पेट्रोविश, तुम्हें तो कोई ज़बर्दस्ती गिराने की कोशिश नहीं कर रहा है!' रामसेस ने सुलह कराने की चेष्टा करते हुए यारचेन्को से कहा, 'इतने रञ्जो-मातम की क्या ज़रूरत है? बात बड़ी मामूली-सी है, कुछ रूसी भद्र पुरुष हँसी-खेल में, गाते-नाचते हुए और शराब पीते हुए बाक़ी रात बिताना चाहते हैं। मगर सब आनन्द की जगहें और शराबख़ाने इस वक्त बन्द हैं। सिर्फ़ चकले ही इस वक़्त ऐसी जगहें हैं, जहाँ उनको यह सुविधाएँ मिल सकती हैं। तो क्या…'

'तो क्या चकलों में जाकर बिक्री के लिए बैठी हुई स्त्रियों से हम हँसी-खेल करें? वेश्याओं से? चकलों में जाकर? क्यों?' यारचेन्को ने उसकी मज़ाक उड़ाते हुए उसको चिढ़ाया।

'ऐसा भी हो तो क्या? एक दार्शनिक का अपमान करने के लिए उसे एक दावत में गवैयों के साथ बैठा देने पर उसने कहा था, 'चलो, मेरे यहाँ बैठने से इस जगह की हैसियत तो बढ़ जायेगी!' उसी तरह मैं भी तुमसे कहता हूँ कि तुम्हारी

आत्मा बिक्री की स्त्रियों के साथ क्रीड़ा करने के लिए तैयार नहीं है तो तुम वहाँ चलकर अलग बैठ जाना और अपनी फूलती हुई पवित्रता को भङ्ग न करके वैसे ही लौट आना।'

'तुम्हारी दलीलें तो रामसेस, ऐसी ही हैं' यारचेन्को ने नाराज़गी से कहा, 'जैसी कि वह घृणित तमाशबीन 'बूर्जुआ' दिया करते हैं जो कि लोगों को बाज़ार में फाँसी के तख़्तों पर लटकता देखने जाते हैं, मगर कहते यही जाते हैं कि हम तो मौत की सज़ा के एकदम खिलाफ़ हैं, हमसे और इस फाँसी देने से कोई सम्बन्ध नहीं। इसकी सारी ज़िम्मेदारी सरकार पर है।'

'ख़ूब कहा यारचेन्को, तुमने! और जो कुछ तुमने कहा, वह कुछ हद तक सही भी है। मगर तुम्हारी मिसाल हम लोगों पर लागू नहीं होती। किसी बीमारी का इलाज बिना उसको अच्छी तरह देखे और समझे नहीं किया जा सकता। हम लोग जो इस समय यहाँ इस विश्राम-गृह के द्वार पर खड़े लोगों के आने-जाने का रास्ता रोक रहे हैं, हम सब को ही एक दिन इस वेश्यावृत्ति की समस्या को हल करने का काम हाथ में लेना पड़ेगा! लिखोनिन को, मुझको, बोरया सोबाशनीकॉव और पावलोव को न्यायाचार्यों की दृष्टि से और पेट्रोवस्की और टोल्पीजिन को डाक्टरों की दृष्टि से, इस समस्या को एक दिन हाथ में ले लेना ही है। हाँ, वेल्टमैन अवश्य गणितशास्त्र पढ़ता है। मगर गणित पढ़कर वह किसी विद्यालय में शिक्षक होगा और अपने विद्यार्थियों की उसे रहनुमाई करनी ही होगी—कम से कम उसे अपने बाल-बच्चों की तो रहनुमाई करनी ही होगी। अस्तु वह भी इस विषय को अच्छी तरह समझ ले तो अच्छा है! और तुम्हें लाठी लेकर इस बला को बाहर निकाल देना है, तो तुम्हारे लिए भी यही अच्छा है कि तुम भी इसे अच्छी तरह देख और समझ तो लो। तुम तो इतिहास और पुरातत्त्ववेत्ता हो! तुम्हें भी क्या यह जानने की ज़रूरत नहीं है कि प्राचीनकाल में और इस समय की वेश्या-वृत्ति में क्या-क्या भेद हैं? क्या यह ज्ञान प्राप्त करके तुम दुनिया का भला नहीं कर सकते?'

'शाबाश रामसेस, वाह! वाह! वाह!' लिखोनिन ने चिल्लाकर कहा, 'वाह! ख़ूब कहा! अब और सोच-विचार की और रुकने की क्या देर है। पकड़ो टाँग प्रोफ़ेसर साहब की ओर ले चलो एक गाड़ी में डालकर!'

विद्यार्थी हँसते हुए यारचेन्को को पकड़कर ले चले। सभी को हृदय से स्त्रियों के पास

जाने की ख़्वाहिश हो रही थी। मगर लिखोनिन के सिवाय और किसी को इतनी हिम्मत न थी कि खुलकर प्रस्ताव करता। मगर अब यारचेन्को की मज़ाक उड़ाने के बहाने सारा मामला बड़ा आसान हो गया था। यारचेन्को ने हाथ पैर पटके और वह गुस्सा दिखाता और हँसता हुआ छूटने की कोशिश करने लगा। इतने में एक लम्बा, मुच्छन्दर कानिस्टबल जो इन लोगों को कुछ देर से सड़क के उस पार खड़ा, ध्यानपूर्वक देख रहा था, उनके पास आकर बोला:

'देखिए बाबू लोग, आप यहाँ भीड़ लगाकर रास्ता न रोकिए! चलते-फिरते रहिए!'

नौजवानों की टोली आगे बढ़ गई। यारचेन्को धीरे-धीरे ठण्डा पड़ने लगा था। वह कह रहा था:

'देखो भाई, अगर तुम मुझे मजबूर ही करते हो तो मैं चलने को तैयार हूँ··· मगर यह न समझना कि मैं रामसेस महाशय की अक़्लमन्दी की बातें स्वीकार करता हूँ···मुझे सिर्फ इस टोली को बिगाड़ना पसन्द नहीं है। मगर मेरी एक शर्त तुम्हें माननी होगी·· वहाँ हम लोग थोड़ी शराब पीकर गपबाज़ी और हँसी-मज़ाक से अधिक और कुछ न करेंगे। अपने मुँह पर वहाँ हम-लोग कालिख नहीं पोतेंगे! सोचो तो, हम लोग रूसी समाज के स्तम्भ—क्या वेश्याओं के साथ अपना मुँह काला करेंगे?'

'बिल्कुल ठीक! मान लिया! मैं क़सम खाता हूँ कि जो कुछ तुम कहते हो उससे अधिक कुछ न होगा!'

'ठीक है! ठीक!' सबने दुहराते हुए कहा, 'यारचेन्को ठीक कहता है! हम सब भी क़सम खाते हैं कि और कुछ न होगा!'

इसके बाद वे सब दो-दो तीन-तीन करके उन गाड़ियों में बैठ गये, जिनके गाड़ीवान, एक दूसरे से झगड़ते हुए, बहुत देर से उनके पीछे आ रहे थे। लिखोनिन यारचेन्को को ढाढ़स दिलाने के लिए उसी गाड़ी में, स्नेह से उसकी कमर में हाथ डाले हुए, उसके और उसके पास में बैठे हुए टोलपीजिन नाम के गुलाबी मुख के एक ग्रामीण लड़के जो बाईस बरस का होता हुआ भी निरा छोकरा ही लगता था, घुटनों पर बैठ गया। फिर बाहर सिर निकालकर उसने दूसरे गाड़ीवानों से कहा, 'डोरशेन्को के पीठे पर चलो! समझे? वहाँ पहुँचकर रुक जाना!'

गाड़ियाँ चलीं और धीरे-धीरे डोरशेन्को की शराब की दूकान पर जाकर रुक गईं, जो रात भर खुली रहती थी। गाड़ियों से उतर-उतरकर सब नौजवान दूकान में घुसे और घुसते ही शराब पीने लगे। वैसे तो सब शराब काफ़ी पी चुके थे और किसी का इस समय और कुछ खाने-पीने को जी नहीं चाह रहा था; मगर चूँकि अभी तक हर एक की आत्मा में यह ज्ञान बाक़ी था कि वे कुकर्म करने जा रहे हैं, आनन्द करने नहीं वे शराब पीकर शराबी की समाधि की वह रँगीली अवस्था प्राप्त कर लेना चाहते थे, जिसमें मन में कोई खटका नहीं रहता और बुद्धि को यह पता भी नहीं रहता कि हाथ और पाँव क्या कर रहे हैं अथवा ज़बान क्या बक रही है। इन विद्यार्थियों के ही क्या, कटरे में आनेवाले प्रायः सभी लोगों के दिल में थोड़ी बहुत इसी प्रकार की खटक होती थी, जिससे कटरे में घुसने से पहिले वहाँ के सभी मेह-मान इस दूकान में घुसकर शराब पी लेते थे। अस्तु, यह शराब की दूकान शाम से लेकर रात भर तक ख़ूब चलती थी। दूकान पर आम तौर पर शराब पीनेवाले अधिक टिकते नहीं थे—जल्दी-जल्दी शराब पी और भागे, मानो सफ़र तय करने की जल्दी में हों, अथवा डरते हों कि कोई उन्हें वहाँ देख न ले।

सब नौजवान तो शराब पीने में जुट गये, मगर रामसेस बड़े गौर से दो आद-मियों की तरफ़ घूरने लगा जो पीठे के उस कोने में एक मेज़ पर बैठे हुए थे। इनमें से एक तो लम्बा-चौड़ा, सफ़ेद बालों और टूटे हुए स्वास्थ्य का बूढ़ा आदमी था जो बिना बाहों की एक जाकेट पहिने हुए था। दूसरा, जो उसके सामने, दूकानवाले की तरफ़ पीठ किये और मेज़ पर अपनी कुहनियाँ टेककर उन पर अपना मुँह रखे बैठा था—एक कुबड़ा, बलिष्ठ, छोटे-छोटे बालों वा और खाकी सूट पहिना हुआ आदमी था। बूढ़ा अपने सामने रखा हुआ चिकाड़ा बजाता हुआ, भर्राई आवाज़ में, परन्तु अच्छे स्वर में कुछ गा रहा था।

'माफ़ करना मुझे ज़रा! मेरा एक साथी यहाँ है', कहता हुआ रामसेस अपने साथियों को छोड़कर खाकी सूटवाले आदमी से मिलने चला गया। एक मिनट के बाद वह उसे लिये हुए लौटा और उसका अपने साथियों से परिचय कराता हुआ बोला, 'मित्रो, यह मेरे साथी आइवानोविश प्लेटोनोव हैं, जो अखबारों का काम करते हैं और सबसे आलसी, मगर सबसे होशियार अखबारनवीस हैं।'

एक-एक करके सबने अपने नाम बताते हुए उसको अपना परिचय दिया।

'अच्छा, अच्छा अब आओ पियें !' लिखोनिन ने कहा और यारचेन्को ने बड़ी मिलनसारी और शिष्टता से, जो वह कभी नहीं छोड़ता था, प्लेटोनोव से पूछा, 'माफ़ कीजिए मुझे, आपसे पहिले कभी स्वयं मिलने का सौभाग्य तो नहीं मिला, मगर मैं आपको पहिले से जानता हूँ ! आप ही ने के विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर प्रिक्लोन्स्की को उस सारगर्भित वक्तृता की रिपोर्ट अखबार में भेजी थी न ?'

'जी हाँ ।' अख़बारनवीस ने कहा ।

'बड़ी सुन्दर रिपोर्ट थी !' यारचेन्को ने स्नेह से मुस्कराते हुए, न जाने क्यों प्लटोनोव का हाथ दबाकर कहा, 'मैंने उसे कई बार पढ़ा । बड़ी सुन्दर, सही, अच्छी भाषा में, चतुरता से लिखो गई थी···लीजिए, एक गिलास शराब पीजिए न ?··· धन्यवाद !'

'मुझे भी आपको थोड़ी शराब पिलाने का मौक़ा दीजिए ।' प्लेटोनॉव ने कहा, ओ दूकानदार, एक·· दो···तोन...चार···नौ गिलास कौग्नेक शराब के दो ।'

'नहीं, नहीं, जी नही !' लिखोनिन ने उसको मना करते हुए कहा, 'आप ऐसा नहीं कर सकते ! आप हम लोगों के मेहमान हैं···हमारे साथी हैं !'

'वाह ! वाह ! मैं कैसे आपका साथी हो सकता हूँ ।' प्लेटोनोव ने हँसते हुए कहा, 'मैंने तो स्कूल में सिर्फ़ एक दर्जे तक ही पढ़ा और वह भी सिर्फ छः मास तक । लीलिए···लीजिए···शराब लीजिए···मुझ पर मिहरबानी करके पीजिए···'

क़िस्सा यह है कि आध घण्टे में ही लिखोनिन और यारचेन्को प्लेटोनोव से इतने घनिष्ठ हो गये कि उसको किसो तरह छोड़ने को ही तैयार न थे । अस्तु, वह उसे भी अपने साथ घसीटकर चकले में ले चले । उसने भी इन्कार नहीं किया ।

'अगर मैं आपका हर्ज न करूँ तो मुझे भी आपके साथ जाने में ख़ुशी होगी ।' उसने सरलता से कहा, 'खासकर आज, क्योंकि आज मेरे पास मुफ़्त का रुपया आ गया है । एक अखबार ने मुझे आज कुछ रुपया दिया है जो कि ऐसी ही अचम्भे की बात है जैसा कि किसी नाटक के टिकट पर दो हज़ार रुपया इनाम मिल जाये । क्षमा कीजिए ! मैं अभी आया···'

यह कह वह उस बूढ़े के पास गया जिसके साथ वह पहिले बैठा था और कुछ रुपया उसको पकड़ाकर उससे छुट्टी लेते हुए कहा :

'बाबा, अब मैं जहाँ जा रहा रहूँ, वहाँ तुम्हें जाना ठीक न होगा···कल हम लोग फिर वहीं मिलेंगे जहाँ आज मिले थे, अच्छा ? बन्दगी !'

फिर सब शराब की दूकान में से निकलकर चले। दरवाज़े पर बोरिया सोबाशनी-कोव ने, जो हमेशा दूसरों को नीची नज़र से देखा करता था और साथ ही औचित्य का बड़ा ख़्याल रखता था, लिखोनिन को रोका और उसे एक तरफ ले जाकर उससे कहा :

'यह क्या कह रहे हो, लिखोनिन ? मुझे तुम्हारे ऊपर बड़ा आश्चर्य होता है। अभी तक तो हम लोग सिर्फ़ अपने खास दोस्तों के साथ ही थे ! मगर अब तो तुम बाहरवालों को भी अपने साथ घसीटने लगे हो ! न मालूम यह कैसा आदमी है ?'

'चलो ! चलो, बोरिया !' लिखोनिन ने स्नेह-पूर्वक कहा, 'यह बड़े अच्छे हृदय का आदमी है ?'

दसवाँ अध्याय

'अरे यारो, यहाँ कहाँ इस गन्दगी में चल रहे हो ?' यारचेन्को ने अन्ना के द्वार पर शिकायत करते हुए कहा, 'अगर चलना ही है तो कहीं अच्छी जगह चलो···ऐसी गन्दी जगह में क्यों चल रहे हो ? चलो, ट्रेपल की पेढ़ी में चलें, वहाँ कम से कम सफाई और रोशनी तो ठीक है।'

'मेहरबानी करके, अन्दर दाख़िल हूजिए, जनाब !' लिखोनिन ने द्वार खोलकर अदब से यारचेन्को की तरफ झुककर हाथ फैलाते हुए कहा—'आइए अन्दर आइए, जनाब···'

'अरे यार, यह तो बड़ी ही गन्दी जगह है। ट्रेपेल के यहाँ कम से कम स्त्रियाँ तो अच्छी शक्ल की हैं ?'

रामसेस उसके पीछे-पीछे घुसता हुआ सूखी हँसी हँसा। 'हाँ, हाँ, ठीक है पेट्रो-विश ! भूखा आदमी किसी खोमचे से कुछ चुराकर खा ले तो उसे सज़ा ज़रूर मिलनी चाहिए, मगर कोई बैंक का डायरेक्टर लोगों का लाखों रुपया सट्टे में बर्बाद कर दे तो लोगों को चुपचाप आँखें फिरा लेनी चाहिएँ।'

'माफ़ कीजिए ! मैं आपके इस उदाहरण का अर्थ नहीं समझा !' यारचेन्को

ने संयम से उत्तर देते हुए कहा, 'ख़ैर, मुझे क्या ? कहीं भी ! चलो, यहीं चलें।'

'यह घर ख़ास तौर पर हमें आकर्षक है।' लिखोनिन ने कहा, "इस घर की ऐतिहासिक अहमियत है, क्योंकि इस घर की दीवारों में से विद्यार्थियों की बहुत सी पीढ़ियाँ हमारे ऊपर अपनी कृपा-दृष्टि डालती हैं। दूसरे, जिस तरह थियेटर और सिनामाओं में विद्यार्थियों के और बच्चों के आधे टिकट लगते हैं वैसे ही यहाँ भी विद्यार्थियों को आधे दाम ही देने होते हैं, क्यों, श्रीमान सिमियन ?'

सिमियन को इस तरह लोगों का भीड़ में इकट्ठा होकर आना अच्छा नहीं लगता था, क्योंकि इससे आसानी से बलवा हो जाने का डर रहता था। इसके अलावा उसे विद्यार्थियों से ख़ासकर घृणा थी, क्योंकि वे लोग एक तो ऐसी बातें करते थे, जो उसकी समझ में नहीं आती थीं, दूसरे बात-बात में मज़ाक करते थे और नास्तिकता की बातें करते थे, तीसरे सरकारी अफ़सरों और अमन के भी यह लोग आम तौर पर विरोधी होते थे। एक बार बाज़ार में झगड़ा हो जाने पर पुलिस के सवारों, कसाइयों, परचूनियों और खोमचेवालों ने मिलकर विद्यार्थियों को ख़ूब पीटा। उसकी खबर जैसे ही सिमियन को मिली, वैसे ही उसने फ़ौरन एक घोड़ा-गाड़ी किराये की की और उसमें खड़ा होकर पुलिस के अफसरों की तरह गाड़ी दौड़ाता हुआ लड़ाई के स्थान पर जा पहुँचा। वहाँ पहुँचते ही वह भी विद्यार्थियों को ठोक पीट में फ़ौरन शरीक हो गया। उसको आम तौर पर संजीदा, मज़बूत और काफ़ी उम्र के आदमी पसन्द थे जो कि चकले में अकेले और लुकते-छिपते आते थे और जाते समय कमरे में से झाँककर पहिले बैठक में देख लेते थे कि कहीं कोई जान-पहिचान का आदमी तो वहाँ नहीं बैठा है। जाते समय वे सिमियन को अच्छा इनाम देकर जाते थे। सिमियन ऐसे मेह-मानों को 'हुज़ूर' कहकर सम्बोधित करता था।

यारचेन्को का ओवरकोट उतारते हुए सिमियन ने लिखोनिन के प्रश्न के उत्तर में गुर्राकर कहा :

'मैं श्रीमान् नहीं हूँ। इस घर का द्वारपाल हूँ।'

'आपके इस ओहदे पर मैं आपको बधाई देता हूँ,' लिखोनिन ने नम्रता से सिमि-यन की तरफ़ झुकते हुए कहा।

अन्ना की बैठक में काफ़ी आदमी थे। क्लार्क नाचते-नचते थककर, लाल मुँह और पसीने से तर अपनी-अपनी स्त्रियों के पास बैठे रूमालों से अपने ऊपर हवा कर रहे

थे। उनके शरीरों से बूढ़े बकरों के बालों की सी गन्ध निकल रही थी। गवैया मिशका और उसका साथी जिल्दसाज़ जिन दोनों के सिर के बाल झड़कर गंज निकल आये थे और जिनकी सीप की-सी धुँधली आँखें शराब के नशे से लाल हो रही थीं, एक सङ्गमरमर की मेज़ पर कुहनियाँ टेके, एक दूसरे के सामने बैठे, इस प्रकार काँपती और उछलती हुई आवाज़ से बार-बार मिलकर राग अलापने का प्रयत्न कर रहे थे, मानो उनकी पीठ पर कोई डंडा मार रहा हो, जिससे वह चिल्ला उठते थे। ऐम्मा और जोसिया उन्हें भरसक समझाने का प्रयत्न कर रही थी कि उस प्रकार का व्यवहार करना ठीक नहीं है। रोलीपोली एक कुर्सी में, एक टाँग पर दूसरी टाँग का घुटना अपने हाथों में पकड़े, शान्तिपूर्वक सो रहा था।

छोकरियों ने कुछ विद्यार्थियों को घुसते ही पहिचान लिया और उनसे मिलने के लिए दौड़ीं।

'टमारा, तुम्हारा पति आ गया! और मेरा भी आ गया! मिशका!'

न्यूरा तीक्ष्ण आवाज़ से चिल्लाती हुई, लम्बे क़द और बड़ी नाकवाले गम्भीर पेट्रौवस्की की गर्दन में लटककर बोली, 'मेरे प्यारे! इतने दिनों तक तुम क्यो नहीं आये? मैं तो तुम्हारी बाट देखते-देखते थक गई।'

यारचेन्को परेशानी से अपने चारों ओर सिर घुमा घुमाकर देख रहा था।

'हम लोगों के लिए एक अलग कमरा मिल सकता है?' उसने झिझकते हुए ऐम्मा से पूछा, जो उसके पास आकर खड़ी हो गई। 'और कुछ शराब और काफी भी हमें मिल सकेगी?'

यारचेन्को से होटल के नौकर और मालिक हमेशा उसके अच्छे कपड़े और तपाक के व्यवहार के कारण बड़े अदब और उत्साह से बातचीत किया करते थे। ऐम्मा उसकी बातें सुनते ही उसकी तरफ़ सरकस के बूढ़े घोड़े की तरह सिर हिलाती हुई बोली, 'जी हाँ, सब मिल सकता है···इधर इस कमरे में तशरीफ ले चलिए। कौन-सी शराब जनाब के लिए मँगाई जाये? हमारे यहाँ सिर्फ एक ही क़िस्म की शराब रहती है···वही मँगाई जाये? वह तो फ़ौरन ही आ सकती है···और लड़कियों को भी इसी कमरे में हाज़िर किया जाये?'

'हाँ, अगर उनका आना भी ज़रूरी ही है तो?' यारचेन्को ने एक गहरी साँस लेकर हाथ फैलाते हुए कहा।

एक-एक करके फ़ौरन ही छोकरियाँ भी उसी कमरे में आ गईं। कमरे में रखी हुई कुर्सियों और कोचों पर रेशमी गद्दियाँ लगी हुई थीं और नीले लैम्प जल रहे थे। लड़कियों ने कमरे में घुसकर हर एक को हाथ मिलाने के लिए बढ़ते हुए, जल्दी-जल्दी अपने नाम धीमी आवाज़ में बता दिये···मनया, केटी, लियूबा···और कोई किसी की गोद में और कोई किसी की गर्दन में हाथ डालकर बैठ गईं और रीति के अनुसार कहने लगीं :

'तुम बड़े अच्छे लगते हो! मुझे शराब पिलाओ!'

'मेरे लिए थोड़ी चाकलेट मँगाओ!'

'मेरे लिए मिठाई मंगाओ!'

वीरा ने जो एक जवान घुड़सवार की पोशाक में भटक रही थी, यारचेन्को की गोद में बैठते हुए कहा, 'मेरी एक सहेलो अन्दर कमरे में बीमार पड़ी है, बेचारी बाहर नहीं आ सकती। मैं उसे वहीं थोड़े से सेब और चाकलेट दे आऊँ? क्यों?'

'अच्छा-अच्छा आप मुझे अपनी यह सहेलीवाली कहानी न सुनाइए! और न मुझपर इस तरह से चढ़िए! इस पास की आराम-कुर्सी पर तहज़ीब से, बच्चे जैसे बैठते हैं, बैठिए और अपने हाथ ठीक करके अपने ऊपर ही रखिए।'

'ओह, यदि मैं तुम्हें देखकर आपे में न रह सकूँ तो?' वीरा ने आँखें मटकाते हुए कहा, 'तुम इतने सुन्दर क्यों हो?'

मगर लिखोनिन ने ऐसी माँगों के उत्तर में सिर्फ़ गम्भीरता से सिर हिलाते हुए कहा 'सब कुछ मिल सकता है। सब मिल सकता है!'

'अच्छा प्यारे, तो मैं नौकर से कहूँ कि मेरी सहेली को थोड़ी सी मिठाई और सेब उसके कमरे में दे आये?' वीरा जान खाने लगी।

इस प्रकार की मेहमानों से प्रार्थनाएँ करना भी इन छोकरियों का फ़र्ज समझा जाता था—बल्कि छोकरियों में इस बात की आपस में एक प्रकार की होड़ रहती थी कि कौन मेहमानों से अधिक खर्च करा सकती है। यह थी आश्चर्य की बात क्योंकि ऐसा करने से उन्हें इसके सिवाय और कोई फ़ायदा नहीं होता था कि खालाजान खुश होकर स्नेह से बोले अथवा मालकिन उन्हें पसन्द करे। उनके क्षुद्र, रसहीन और कृत्रिम खेलवाड़ के जीवन में बहुत-सी ऐसी अर्थहीन मूर्खता और पागलपन की बातें थीं।

सिमियन काफ़ी से भरा बर्तन, प्याले, शराब की बोतलें, फल और मिठाइयों की

रकाबियाँ एक बड़े बर्तन में रखकर लाया और आकर जल्दी-जल्दी बोतलों की डाटें फुर्ती से खोलने लगा।

'आप क्यों नहीं पीते?' यारचेन्को ने प्लेटोनॉव की तरफ़ मुड़कर पूछा, 'माफ़ कीजिए, आपका शुभ नाम···सरजी आइवानोविश?'

'जी हाँ।'

'लीजिए, यह काफ़ी पीजिए – सरजी आइवानोविश। इसे पीकर आप ताज़ा हो जायेंगे। अथवा आइए, इस शराब को ही पीकर देखें कैसी है?'

'नहीं, मुझे तो आप माफ़ी दें···मैं अपनी चीज़ मँगाकर पिऊँगा···सिमियन, लाओ तो···'

'कागनेक[1]!' नियूरा जल्दी से चिल्लाई।

'और नाशपाती[2] के साथ!' नन्हीं मनका ने जल्दी बोलकर उसका साथ दिया।

'मैंने आपकी आवाज़ सुनते ही उसका इन्तज़ाम कर लिया था, सरजी आइवा-नोविश, यह हाज़िर है लीजिए।'

सिमियन ने सरलता से झुककर, अदब से गुनगुनाते हुए, एक बोतल की डाट फट से खोली।

'आज अपनी ज़िन्दगी में पहली ही बार मैं इस कटरे में कागनेक दी जाती देख रहा हूँ!' लिखोनिन ने आश्चर्य से कहा, 'मैं इतना माँगता था तो भी ये लोग मुझे इनकार ही करते रहते थे।'

'शायद सरजी आइवानोविश को कोई ऐसा गूढ़ मन्त्र मालूम है जो तुम्हें नहीं मालूम,' रामसेस ने मज़ाक करते हुए कहा।

'या इनकी इस जगह पर ख़ास तौर से इज्ज़त की जाती है?' बोरिस सोबाश-निकॉव ने ज़ोर देकर बात साफ़ करते हुए कहा।

प्लेटोनॉव ने लापरवाही से सोबाशनिकॉव की तरफ़ नज़र घुमाई और उसकी सफेद व ढीली जाकेट के निचले बटनों को देखकर गुनगुनाता हुआ कहने लगा।

'इसमें कोई ख़ास इज्ज़त की बात तो नहीं है। जिस तरह घोड़े पानी पीते हैं, उसी तरह मैं शराब पीता हूँ। फिर भी अपने होश-हवास नहीं खोता हूँ – न तो कभी किसी से झगड़ा-बखेड़ा करता हूँ और न किसी तरह का शोरोगुल मचाता हूँ।

---

१ एक प्रकार की ब्रांडी २ लेमोनेड की तरह नाशपाती।

ऐसे मिल जाने पर लोग इन लोगों की शक्ति और दृढ़ता की तारीफ़ करते हुए इनके छोटे-छोटे से मज़ाकों को सराहते और खुश होते थे और अपनी बीती हुई जवानी पर हाथ मलते थे। मगर प्लेटोनोव का व्यवहार इन नवयुवकों के प्रति सिर्फ़ ऐसा ख़ुशामदी ही नहीं था, बल्कि एक प्रकार से लापरवाही का था। यही शायद बोरिस को खटक रहा था।

इसके अतिरिक्त बोरिस सोबाशनिकोव को यह भी बुरा लग रहा था कि अन्ना घर में, दरबान सिमियन से लेकर मोटी किटी तक सभी, प्लेटोनोव का ख़ास लिहाज़ कर रहे थे। जिस तरह यह सब लोग प्लेटोनोव की बात ध्यान से सुनते थे, जिस तरह टमारा ने बहुत सँभालकर उसके लिए गिलास में कॉगनेक भरी और नन्हीं मनका ने उत्साह से नाशपाती छीली, जिस ख़ुशी से ज़ो ने सिगरेट की वह डिब्बी उससे ली जो उसने अपने पास के नौजवान से, जो अपनी बातों में मशगूल था, वह कई बार माँगने पर भी नहीं मिल सकी थी और जिस तरह छोकरियाँ उसके उदार व्यवहार के कारण उससे कोई भी चीज़ माँगने में हिचकती न थीं, उन सब कारणों से प्लेटोनांव के प्रति उनके एक ख़ास लिहाज़ की झलक टपकती थी ; अस्तु बोरिश ने घृणा से अपने मन में एक बार सोचा कि यह आदमी दलाल है, मगर फिर उसी को अपना यह विचार ठीक नहीं लगा, क्योंकि प्लेटोनांव जैसी लापरवाही की पोशाक में था और जैसा लापरवाही शराफत का व्यवहार कर रहा था उससे वह साफ़ एक भला आदमी लगता था। वेश्याओं का दलाल नहीं लगता था।

प्लेटोनोव ने बोरिस की बेहूदी बातें फिर अनसुनी करते हुए अपने हाथ का रूमाल काँपती हुई उङ्गलियों से ज़ोर से दबाया और उसके पलक बोरिस की तरफ़ देखते हुए हिले।

'हाँ, सच है, मेरा एक तरह से यह घर हो-सा हो गया है, उसने शान्तिपूर्वक अपना गिलास मेज़ पर धीमे-धीमे घुमाते हुए कहा, 'मैंने लगातार चार महीने तक रोज़ इस घर में खाना भी खाया है।'

'नहीं, सच ?' यारचेन्को ने आश्चर्य से हँसते हुए पूछा।

'सच ! यहाँ का खाना ख़राब नहीं होता ! काफ़ी स्वादिष्ट होता है ! क्योंकि तेल और घी ज़रूर उसमें यह लोग अधिक डालते हैं !'

'मगर आप यहाँ खाना क्यों खाते···'

'मैं यहाँ रोज़ अन्ना की लड़की को पढ़ाने आता था। अतएव मुझे यही सुभीते का लगा कि मेरे वेतन में से खाने के दाम काट लिये जाया करें और मैं यहीं रोज़ खाना खा लिया करूँ।'

'बड़ा अज़ीब इन्तज़ाम आपने सोचा!' यारचेन्को ने कहा, 'यह इन्तज़ाम आपको सुभीते का क्यों लगा? माफ़ कीजिए...शायद मैं आपके जीवन में बहुत अन्दर घुसने की कोशिश कर रहा हूँ! क्या आप उस समय तकलीफ में थे? और ग़रीबी की वजह से आपको यह इन्तज़ाम सुभीते का लगा...'

जो नहीं यह बात नहीं थी, अन्ना जितना दाम मुझसे खाने के लिए ले लेती थी, उसके एक तिहाई दाम में मैं बड़े मज़े से विद्यार्थियों के किसी भी भोजनालय में खाना खा सकता था, परन्तु बात यह थी कि मैं ख़ुद इस घर के निवासियों के अधिक से अधिक निकट आना चाहता था। मैं उनकी दुनिया को अच्छो तरह जानना चाहता था।'

'अच्छा! अच्छा! अब मैं समझा!' यारचेन्को ने हँसते हुए ज़ोर से कहा, अब मेरी समझ में आ गया! आप शायद उनकी जिन्दगी से अपने लिए मसाला इकट्ठा कर रहे हैं। अच्छा तो कुछ दिनों के बाद हम लोगों को इस विषय पर एक नया ग्रन्थ...'

'एक नया शोकान्त नाटक पढ़ने को मिलेगा!' बोरिस ने उसकी बात काटकर अभिनेता की तरह ज़ोर से बोलते हुए कहा।

प्लेटोनोव यारचेन्को को उत्तर देने लगा, मगर टमारा चुपचाप उठी और मेज़ का चक्कर लगाती हुई बोरिस के पास पहुँची और झुककर उसके कान में बोली:

'मेरे प्यारे, इस आदमी से न अटको। सच कहती हूँ, यही तुम्हारे लिए अच्छा है!'

'क्या कहा?' बोरिस ने अपना चश्मा आँखों पर ठीक करते हुए बड़प्पन से भौहें चढ़ाकर कहा, 'क्यों? क्योंकि यह तुम्हारा यार है? या तुम्हारा दलाल है?'

'मैं ईश्वर की क़सम खाकर कहती हूँ, आज तक कभी यह आदमी हममें से किसी के भी साथ नहीं लेटा है। मैं तुमसे फिर कहती हूँ, प्यारे इससे उलझना तुम्हारे लिए ठीक नहीं है!'

'ज़रूर! ज़रूर! जो कुछ भी तुम कहती हो ज़रूर सच है।' उसने मुँह बनाते

बनाते कहा, 'इन महानुभाव की सफ़ाई देने के लिए तुम अकेली क्या चकले के सभी सम्मानित लोग तैयार हो जायँगे, क्योंकि यहाँ के सभी खिलाड़ी इनके हमजोली लगते हैं।'

'नहीं, यह बात नहीं है।' टमारा ने धीरे से कहा, 'मैं तुमसे यह बात इसलिए कहती हूँ कि यह आदमी कहीं तुमसे नाराज़ हो गया तो अभी तुम्हारी गर्दन पकड़कर तुम्हें पिल्ले की तरह खिड़की में से निकालकर बाहर गली में फेंक देगा। मैंने ऐसा होते कई बार अपनी आँखों देखा है। ईश्वर न करे किसी के साथ फिर वैसा हो, क्योंकि उसमें शर्म तो उठानी पड़ती ही है, साथ ही शरीर में चोट भी लगती है!'

'भाग जा यहाँ से, चुड़ैल कहीं की!' सोबाशनिकोब ने अपनी कुहनियाँ उसकी तरफ़ हिलाते हुए ज़ोर से चिल्लाकर कहा।

'अच्छा, लो मैं जाती हूँ, प्यारे!' टमारा ने नम्रता से उत्तर दिया और वहाँ से धीरे-धीरे चली गई।

सब लोग क्षण भर के लिए मुड़कर बोरिस की तरफ़ देखने लगे, लिखोनिन ने उसकी तरफ़ उङ्गलियाँ हिलाकर धमकाते हुए कहा :

होश से बाहर मत होइए?' और फिर प्लेटोनॉव की तरफ़ घूमकर उसने कहा, 'कहे जाइए। आप कहे जाइए। आपकी बातें मुझे बड़ी अच्छी लग रही हैं।'

'नहीं, मैं तो कोई किताब लिखने के लिए मसाला यहाँ से इकट्ठा नहीं कर रहा हूँ।' प्लेटोनॉव ने गम्भीरता-पूर्वक शान्ति से कहा, 'मगर हाँ, यहाँ मसाला है सचमुच ऐसी पुस्तक के लिए बहुत-सा भयङ्कर और हृदय विदारक! स्त्रियों के व्यापार और वेश्यागमन इत्यादि की, बड़े-बड़े शहरों में रोज़ाना इस प्लेग की जो कहानियाँ हम लोग अक्सर सुनते रहते हैं, जिनके बारे में कुछ लोगों ने कुछ पुस्तकें भी लिखी हैं, यहाँ के रोज़ाना की छोटी-छोटी बातों की, हज़ारों वर्ष से चले आनेवाले इस प्रेम-व्यापार के रात दिन के हिसाबकिताब की, रस्म-रिवाज़ और तरीक़ों की भयङ्करता के सामने वे तुच्छ लगने लगती हैं। यहाँ की उन छोटी-छोटी बातों में, जो हमारी आँखों के सामने रोज़मर्रह घटने से हमारा ध्यान नहीं खींचतीं, यहाँ के वास्तविक दुःख, यहाँ की लज्जा और यहाँ के आन्तरिक क्रोध की कहानी छिपी हुई है। वेश्यावृत्ति भी इस दुनिया के और पेशों की तरह ही एक पेशा बन गया है जिसकी बुनियाद बाक़ायदा क़ानूनी इक़रारनामों और साख पर उसी तरह रहती है, जिस तरह कि शक्कर या

अनाज के व्यापार की। सबसे बड़ी भयङ्करता वेश्यावृत्ति की यही है कि इसको भी एक पेशा समझा जाता है — एक भयङ्कर अपराध नहीं माना जाता।'

'ठीक कहते हैं आप!' लिखोनिन ने उसका अनुमोदन करते हुए कहा—मगर प्लेटोनोव अपने गिलास में ध्यानपूर्वक घूरता हुआ बोलता रहा—

'हम लोग अक्सर अखबारों में चिन्तित आत्माओं के इस संबन्ध में अग्रलेख पढ़ते हैं। और कुछ डाक्टर स्त्रियाँ भी इस सम्बन्ध में बड़ी चीख़-पुकार मचाती और प्रयत्न करती फिरती हैं। 'रोको! बन्द करो! इसका ख़ात्मा करो! इन लालची ख़ालाओं को हटाओ! मनुष्य-समाज का ख़ून चूसनेवाली इन अधम जीवों को मिटाओ!' इत्यादि आवाज़ें उठाने से ही यह समाजिक बीमारी ख़त्म नहीं हो सकती। इस तमाम शोरगुल का नतीजा कुछ नहीं होता! भयङ्कर शब्दों से कहीं भयङ्कर, सौगुनी भयङ्कर, इस व्यापार को वे छोटी-छोटी घटनाएँ हैं जो आत्मा को बेध देती हैं। इस दरबान सिमियन को ही लिजिए। आप शायद समझते होंगे कि इससे अधम इस चकले में दूसरा और कोई जीव नहीं हो सकता, क्योंकि वह निरा पशु लगता है···शायद क़ातिल भी है···वेश्याओं को सताता और पीटता है। मगर आप जानते हैं, मेरी उससे किस सम्बन्ध में मुलाक़ात हुई और कैसे हम दोनों एक दूसरे के दोस्त हो गये हैं? ईश्वरोपासना और बाइबिल इत्यादि धर्मसम्बन्धी बातों पर ही हम दोनों एक दूसरे से बातचीत किया करते हैं और इस विषय में एक-सा रस होने के कारण ही हम दोनों दोस्त हैं। सिमियन हृदय से बड़ा ही धार्मिक आदमी है···ऐसा धार्मिक है कि आसानी से ऐसा धार्मिक आदमी देखने को नहीं मिलता! मैं जब उसके साथ ईश्वरप्रार्थना करता था, तब मैंने कई बार देखा कि प्रार्थना करते-करते उसकी आँखों में आँसू आ जाते थे। शायद दुनिया में रूसी आत्माओं में ही ऐसी विरोधी बातें एक साथ देखने को मिलती हैं।'

'हाँ, इस क़िस्म का आदमी ईश्वरोपासना करेगा, फिर किसी का गला भी घोंटेगा और फिर हाथ धोकर बड़ी भक्ति से मूर्ति की आरती उतारेगा!' रामसेस बोला।

'हाँ, हाँ, बिल्कुल ठीक कहते हैं आप। मगर मनुष्यों में इस प्रकार की ईश्वर-भक्ति और उसी के साथ-साथ अपराध-वृत्ति देखकर बड़ा आश्चर्य और परेशानी होती है। आपसे सच-सच कहूँ? मैं जब-जब सिमियन से अकेले में बैठकर बातें करता हूँ और हम लोग अक्सर अकेले बैठकर घण्टों बातें किया करते हैं—तब-तब मुझे बड़ा

भय लगने लगता है। मुझे ऐसा लगता है, मानो गोधूलि के समय एक अन्धकार-पूर्ण और गूँजते हुए, कुँए के मुँह पर रखे हुए एक तख़्ते पर खड़ा हूँ जो हिल रहा है और नीचे कुँए में साँप लोट रहे हैं जो अँधेरे में मुझे धुँधले-धुँधले दीख रहे हैं। फिर भी सिमियन निस्सन्देह भक्त है और एक दिन अवश्य वह साधु हो जायेगा और बैठकर तप, भजन और उपवास इत्यादि किया करेगा। ईश्वर ही जाने, कैसे उसकी आत्मा में धार्मिक भक्ति के साथ-साथ संसार की सारी पवित्र वस्तुओं को अपमानित और नष्ट-भ्रष्ट करने और विकृत विषय-भोग करने की शक्ति भी एक साथ मिश्रित रह सकती है!'

'कुछ भी हो, आप अपने दोस्तों की फ़िक्र ख़ूब रखते हैं,' यारचेन्को ने छोकरियों की तरफ़ आँखें मारते हुए कहा।

'नहीं, अब मेरी और उसकी दोस्ती नहीं है। वह ख़त्म हो चुकी है!'

'कैसे?' वोलोदया पावलोव ने, जिसने इस बातचीत का सिर्फ आख़िरी हिस्सा ही सुना था, पूछा।

'ऐसे ही!···कोई ख़ास बताने लायक़ वजह नहीं है!' प्लेटोनोव ने मुस्कराते हुए बात टालकर कहा, 'लाइए मिस्टर यारचेन्को, आपका गिलास और भर दूँ!'

मगर नियूरा, जिसको ऐसे मौकों पर अपनी ज़बान बन्द रखना कठिन होता था, अचानक बोल पड़ी :

'इन्होंने उसकी थुथड़ी पर एक दिन ज़ोर से घूँसा जड़ दिया तब से वह इनसे दूर रहती है···उस निनका के लिए!···उस रोज़ एक बूढ़ा आकर रातभर निनका के पास रहा था और बेचारी को रातभर सताता रहा, यहाँ तक कि वह रोने लगी और उठकर उसके पास से भाग आई।'

'छोड़ो नियूरा उस क़िस्से को! अच्छा नहीं है।' प्लेटोनोव ने सूखे मुँह से कहा।

'चुप रह!' टमारा ने ज़ोर से नियूरा को डाँटा।

मगर नियूरा की ज़बान जब चल पड़ती थी, तब किसी को भी उसे चुप करना असम्भव हो जाता था। अस्तु वह बोलती ही रही :

'निनका ने आकर कहा कि मेरे टुकड़े-टुकड़े भी कोई कर डाले तो भी मैं उस खूसट के पास लेटने नहीं जाऊँगी। उसने मेरे सारे शरीर पर अपने मुँह की लार रात भर टपका-टपकाकर मेरा शरीर गीला और गन्दा कर डाला है। बूढ़े ने सिमियन से निनका के उसके पास से उठकर आने की शिकायत की जिस पर वह निनका को पीटने

लगा। उस वक्त यह मेरे पास बैठे मेरी तरफ़ से मेरे घर को एक खत लिख रहे थे। इन्होंने जैसे ही निनका के रोने और चिल्लाने की आवाज़ें सुनीं, वैसे ही······

'ज़ो, बन्द कर दो उसका मुँह!' प्लेटोनाव ने कहा।

'वैसे ही उठकर बाहर गये और तड़···तड़··' नियूरा इतना ही कह पाई कि ज़ो की हथेली आकर उसके मुँह पर लग गई जिससे उसका मुँह बन्द हो गया।

सब हँसने लगे। मगर बोरिस सोबाशनीकोव हँसने के शोर में, घृणापूर्वक प्लेटोनाव की तरफ़ देखता हुआ, बड़बड़ाया।

'ओहो! क्या कहने हैं आपकी वीरता के!' बोरिस काफ़ी शराब पी चुका था जिससे उसको नशा हो चला था। वह दीवार से अपनी पीठ टेके इस प्रकार खड़ा था, मानों लड़ने के लिए आमादा हो और जल्दी-जल्दी अपने मुँह से सिगरेट का धुँआ निकाल रहा था।

'निनका कौन-सी हैं?' यारचेन्को ने उत्सुकता से पूछा, 'यहाँ हैं?'

'नहीं, वह यहाँ नहीं है। वह छोटे क़द की मोटी नाकवाली छोकरी है। बड़ी सीधी है, मगर तेज़ मिजाज़ है।' प्लेटोनाव ने कहा और फिर यकायक खिलखिलाकर बोला, 'मुझे उस बूढ़े की याद आ रही है-- कैसा बेचारा डरकर अपने कपड़े और जूते उठाकर बेतहाशा कमरे से निकलकर भागा था! बेचारा शरीफ़ बूढ़ा! सूरत-शक्ल से देखने में बिल्कुल ऋषियों की तरह लगता था! मैं जानता हूँ वह कहाँ काम करता है। आप सब लोग भी उसे जानते होंगे। सबसे मज़े की बात तो यह रही कि जब वह बैठक में पहुँच गया और अपने आपको खतरे से बाहर समझने लगा तब कपड़े पहिनता हुआ—गो कि घबराहट के मारे पतलून में उसके पाँव भी ठीक-ठीक नहीं पड़ते थे—चिल्लाने लगा, 'यह बदमाशी! यह शोहदापन! मज़ा चखवा दूँगा!··· चौबीस घण्टे में यहाँ से निकालकर छोड़ूँगा!···' बेचारे की घबराहट देखकर और उसके साथ-साथ उसकी इस प्रकार की धमकियाँ सुनकर मुझे बड़ी हँसी आने लगी। यहाँ तक कि गम्भीर-मुख सिमियन भी हँसने लगा। ख़ैर आपसे सिमियिन के बारे में कह रहा था!···सच तो यह है कि मनुष्यजीवन ऐसा विचित्र है कि उसे देखकर आश्चर्य से आँखें विस्फारित होने लगती हैं। हम और आप बहुत से दलालों और बहुत सी ख़ालाओं के चित्र अपने मन में सोच सकते हैं; मगर एक ऐसे सिमियन का चित्र सोचना हमको कठिन हो जायेगा। मनुष्य भी इस दुनिया में कैसे-कैसे हो

सकते हैं ! पेढ़ी की मालकिन अन्ना को ही ले लीजिए। वह समाज का ख़ून चूसने-वाली एक नाटकीय कुटनी है। परन्तु साथ ही वह एक बड़ी स्नेहपूर्ण मा भी है। उसकी बर्था नाम की एक छोटी-सी लड़की है, जो पाँचवे दर्जे में पढ़ती है। अन्ना को इस बात की हमेशा बड़ी ही चिन्ता रहती है कि कहीं उसकी लड़की को, किसी तरह, अन्ना का पेशा न मालूम हो जाय। जो कुछ अन्ना करती है और जो कुछ उसके पास धन-सम्पत्ति है वह सब उसकी इस 'चिड़िया' के लिए ही है। वह अपनी लड़की के सामने बातचीत तक करती डरती है कि कहीं उसके मुँह से, उसकी पुरानी आदत के अनुसार, कोई ऐसे गन्दे और अश्लील शब्द न निकल जायें, जिन्हें वह सीख ले, अतएव वह केवल उसकी आँखों में स्नेहपूर्वक चुपचाप देखा करती है, मानो वह उस लड़की की कोई बूढ़ी, मूर्ख, स्वामि-भक्त दाई हो जो उस पर अपना सब कुछ वार देने को तैयार हो। अन्ना काफ़ी बूढ़ी हो चुकी है; अब उसे यह काम छोड़कर आराम से बैठ जाना चाहिए था। मगर नहीं, उसे अभी और रुपया इकट्ठा करने की हविश है, क्योंकि 'चिड़िया' के लिए एक हज़ार रुपये, फिर इसके लिए एक हज़ार और एक हज़ार उसके लिए चाहिये। 'चिड़िया' के लिए चढ़ने को घोड़े हैं। एक अँग्रेज़ दाई है। हर साल देश से बाहर वह हवा बदलने के लिए भेजी जाती है और चालीस हज़ार की क़ीमत के हीरे-जवाहरात भी उसके पास हैं—गो कि ईश्वर ही जाने वह किसके हैं? मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि अपनी इस 'चिड़िया' की ज़िन्दगी भर की ख़ुशी और आराम के लिए ही नहीं बल्कि उसकी अँगुली से निकल आने-वाली छोटी सी एक फुन्सी को अच्छा करने के लिए तक यह अन्ना—ज़रा सोचिए तो - हमारी बहिनों और बेटियों को, मन से ज़रा भी मैल न लाकर बाज़ार में व्यभि-चार के लिए बेच सकती है और हमारे लड़कों को आतशक का शिकार बना सकती है। समझते हैं; बड़ी पिशाच है आप कहेंगे? मगर सोचिए तो कि वह यह पिशाच-लीला क्यों करती है!...माता की उस महान्, अन्धी, अज्ञान-पूर्ण ममता और प्रेम के लिए ही न जिसके लिए हम लोग अपनी माताओं को देवियाँ मानते और पूजते हैं!

'देखिए, मोड़ पर इतनी तेज़ी से मत दौड़िए!' बोरिस ने दाँत पीसते हुए कहा।

'माफ़ कीजिए। मैं लोगों की तुलना नहीं कर रहा हूँ। मैं तो सिर्फ़ साधारण मातृस्नेह का ज़िक्र कर रहा हूँ। अन्ना का उदाहरण न देकर मैं किसी पशु या पक्षी की

मा का उदाहरण दे सकता हूँ। लेकिन सचमुच में बड़ी टेढ़ी और रूखी बातों में पड़ गया हूँ। छोड़िए इन बातों को !'

'नहीं, नहीं, अपनी बात पूरी करिए' लिखोनिन ने कहा, 'आप बड़ी असाधारण बात कह रहे थे।'

नहीं, बड़ी साधारण बात थी। उस रोज़ एक प्रोफेसर ने मुझसे पूछा कि 'क्या आप यहाँ की ज़िन्दगी कुछ लिखने की ग़रज़ से देखने और समझने आते हैं' मेरे मन में आया कि कहूँ, 'देखता तो ज़रूर हूँ। मगर समझ में ठीक-ठीक कुछ नहीं आता।' मैंने भी आपको सिमियन और कुटनी के दो उदाहरण दिये। न जाने क्यों मुझे इन लोगों के जीवन में हमारे सभी के जीवन की जड़ता का एक बहुत बड़ा अंश छिपा हुआ लगता है, मगर मैं उसे ठीक तौर पर किसी को समझा या बतला नहीं सकता। इस काम के लिए बड़ी योग्यता की ज़रूरत है। छोटी-छोटी घटनाओं और साधारण बातों से भयङ्कर सत्य के ऐसे शब्दचित्र तैयार करने के लिए जिन्हें पढ़कर लोग आश्चर्य से अवाक् रह जायँ, बड़ी योग्यता की ज़रूरत है। लोग भयंकर घटनाओं के वृत्तान्त पढ़ना चाहते हैं। अतएव, क़त्लेआमों के, जेलों में मारपीट के और विद्रोह के वृत्तान्त हमें पढ़ने को मिलते हैं जिनमें सैनिकों और पुलिस-वालों को, जो कि निरकुशता और जायदाद और मिलकियत को क़ायम रखने के हथियार माने जाते हैं, प्रजा के रक्त से रंजित चित्रित किया जाता है। ठीक भी है ! और चित्र भी ऐसी दशाओं के क्या हो सकते हैं ? ऐसे चित्र हमारे मन में दुःख, चिन्ता और घृणा उत्पन्न करते हैं। मगर यह दुःख, चिन्ता और घृणा हमारे दिमागों में ही होती है। ऐसे चित्र हमारे हृदयों को नहीं छूते ; लेकिन मैं एक सड़क पर जा रहा हूँ और एक जगह पर कुछ भीड़ इकट्ठी देखता हूँ। पास जाकर देखता हूँ कि भीड़ के बीच में एक चार-पाँच बरस की बच्ची बैठी रो रही है जिसको उसके माता-पिता या तो जान-बूझकर छोड़कर चले गये हैं या जो उनसे किसी तरह बिछुड़ गई है। बच्ची के सामने एक पुलिस का सिपाही बैठा उसे पुचकार-पुचकारकर पूछ रहा है, 'बच्ची, तुम्हारा क्या नाम है ? तुम कहाँ रहती हो ? बाबा को क्यों पुकारती हो ? अम्माँ को क्यों पुकारती हो ? सिपाही बेचारा पूछते-पूछते थककर पसीने से लथपथ हो गया है, उसका टोप उलटकर गर्दन पर लटक आया है, उसके बड़ी-बड़ी मूछोंवाले चेहरे से दया का भाव टपक रहा है और उसकी आवाज़

मोठी, स्नेहपूर्ण और नम्र है। मगर लड़की फिर भी रो-रोकर अपना गला फाड़े डाल रही है और उसके प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं देती। शायद वह भीड़ और सिपाही को देखकर बहुत डर गई है। अतएव बेचारा पुलिस का सिपाही लाचार होकर अपनी शान-शौकत भूल जाता है और लड़की को हँसाकर ठीक करने के लिए बकरे को नक़ल करता है। वह अपने मुँह पर हाथ रखकर बकरे की बोली बोलने का प्रयत्न करता है और उस लड़की को एक बच्ची का गीत गाकर सुनाता है!...मैं यह सुन्दर दृश्य देखता हूँ। परन्तु फिर तुरन्त जब मैं सोचने लगता हूँ कि यही दयालु दीखनेवाला सिपाही शायद आधे घण्टे के बाद थाने में किसी ऐसे आदमी से, जिसे उसने पहिले कभी देखा भी न होगा और जिसके गुनाह से वह बिल्कुल अनभिज्ञ होगा, उसके मुँह और सीने पर चढ़-चढ़कर और लातें मार-मारकर, गुनाह इक़बाल कराने का प्रयत्न कर रहा होगा, तब मेरा हृदय दुःख से बैठने लगता है। मनुष्य-जीवन एक विचित्र विरोधाभास का सम्मिश्रण है! आइए, थोड़ी कागनेक और पियें!

'हम लोग अब एक दूसरे से 'आप' न कहकर 'तुम' कहें तो ठीक होगा!' लिखो-निन ने एकाएक प्रस्ताव किया।

'बहुत अच्छा। मगर यहीं तक रहे तो ठीक है। कहीं हम लोग एक दूसरे का कुछ देर में मुँह भी न चूमने लगें! लीजिए! पीजिए, एक गिलास मेरे कहने से और पीजिए! बस एक ही और! मैं भी पीता हूँ...एक और यह लीजिए! एक फ्रांसीसी उपन्यास में मैं ऐसे मनुष्य के विचारों और भावों का वर्णन पढ़ता हूँ जिसे फाँसी की सज़ा का हुक्म सुनाया जा चुका है। लेखक उसका वर्णन बड़ा सुन्दर और ज़ोरदार भाषा में करता है। मगर फिर भी उसके वर्णन को पढ़कर मेरे मन में न तो कोई भाव ही उठने हैं और न कोई घृणा ही उत्पन्न होती है। सिर्फ़ जी घबरा उठता है। मगर कुछ दिन हुए मैंने एक अखबार में एक आदमी को कहीं फ्रांस में फाँसी दिये जाने का वर्णन पढ़ा था। जेल के सिपाही उसे फाँसी पर चढ़ाने के लिए लेने गये। वह उनके साथ चलने के लिए बिना मोजा पहने ही पाँव में जूता पहनने लगा। कमअक़्ल सिपाही ने उसे टोंका, 'अरे! मोजे बिना पहने ही जूता पहन रहे हो? मोजे नहीं पहनोगे?' अपराधी ने उनकी तरफ़ ध्यान-पूर्वक देखा और पूछा, 'मोजे पहनने की भो ज़रूरत है?' उसके इस प्रश्न ने मेरा हृदय बेध दिया। अस्वाभाविक मृत्यु की सारी भयंकरता मेरे आगे एकदम आ गई।'

'इसी प्रकार मृत्यु का मुझे एक दूसरा उदाहरण भी याद है। एक बार मेरे एक मित्र की मृत्यु हो गई। वह फौज में कप्तान था। वह था तो शराबी और अवारा, परन्तु उसकी आत्मा बड़ी ऊँची थी। न जाने कैसे हम लोग उसे 'बिजली कप्तान' कहकर पुकारने लगे थे। जब वह मरा तो मैं उसके निकट था। अतएव मुझे ही उसको कपड़े इत्यादि पहनाकर उसकी आखिरी सवारी के लिए सुसज्जित करना पड़ा था। मैं उसकी फ़ौजी वर्दी पहना चुकने पर तमगों की डोरियाँ उसके कन्धों पर बाक़ायदा बाँधने लगा। यह डोरियाँ एक खास तरह के फन्दे लगाकर बाँधी जाती हैं, जो मैं बार-बार कोशिश करके भी नहीं बना सका। अतएव मैं सोचने लगा कि उसी ख़ास फन्दे की चिन्ता करने की इतनी क्या ज़रूरत है। यह डोरियाँ अब फिर तो कोई खोलेगा ही नहीं। साधारण गाँठ ही मैं क्यों न लगा दूँ जो मजबूत भी रहेगी? यह विचार आते ही मेरी आँखों के आगे एकाएक मृत्यु की सच्ची तस्वीर खिच गई—जो कितनी देर से अपने मित्र की निस्तेज आँखों और ठण्डे माथे को देखकर भी अभी तक मेरे आगे नहीं खिच पाई थी। डोरियों का बाक़ायदा फन्दा बनाने के बजाय साधारण गाँठ लगा देने का विचार मन में आते ही मृत्यु की वास्तविकता से मैं एक दम बिंध-सा गया। अन्त में निश्चय ही एक दिन मृत्यु द्वारा हमारे सारे शब्दों, कार्यों और भावों के नष्ट हो जाने के विचार के बोझ से मेरा मस्तक भारी हो गया। इस तरह की बहुत-सी छोटी-छोटी बातें मैं बता सकता हूँ.. जैसे कि युद्ध में भाग लेनेवालों के मन पर क्या क्या बीतती है इत्यादि। परन्तु मैं अपने सारे विचार एक चीज़ पर ही लगाना चाहता हूँ। हम लोग ऐसी रोज़मर्रह की छोटी-छोटी घटनाओं को देखते हुए, अन्धों की तरह उनके पास से होते हुए गुज़र जाते हैं। मगर एक कलाकार ऐसी ही छोटी-छोटी घटनाओं से ऐसे चित्र बनाकर हमारे सामने रख देता है कि हम आश्चर्य से कह उठते हैं, 'अरे, इन बातों को तो रोज़ हम देखते थे, परन्तु यह बात तो कभी हमारे ध्यान में आई ही नहीं। इस समस्या के उस पहलू पर तो हमने कभी सोचा ही नहीं।' रूस के लेखकों ने जो कि दुनिया में सर्वश्रेष्ठ और सबसे सच्चे कलाकार माने जाते हैं, आज तक वेश्यावृत्ति की वास्तविकता के चित्र हमारे सामने कभी नहीं रखे। न जाने क्यों उन्होंने ऐसी भयङ्कर सामाजिक बीमारी को अभी तक नहीं छुआ? इसका ज़िक्र करते उनकी आत्मा को दुःख होता था! या वे अपने आपको इतना बड़ा समझते थे कि ऐसी छोटी चीज़ों पर अपनी क़लम चलाना पसन्द नहीं करते थे? या इस डर से कि

कहीं लोग उन्हें घासलेटी-साहित्य का लेखक न कहने लगें अथवा इस ख़्याल से कि कहीं लोग यह समझकर कि जिन घटनाओं का लेखक ने ज़िक्र किया है, वे उसी के जीवन में शायद हुई होंगी, वे उसके निजी जीवन की छानबीन में लग जायेंगे ? किस विचार से उन्होंने यह विषय नहीं छुआ, मैं नहीं कह सकता ? हो सकता है, उन्हें इस काम के लिए समय नहीं मिला। अथवा वे इतना आत्म-त्याग और हिम्मत नहीं कर सके कि इस ज़िन्दगी में स्वयं घुमकर इसका अनुभव करते और वेश्यावृत्ति की दुनिया में प्रवेश करके निकट से इसे चुपचाप देखते और न तो यों ही रहमदिली दिखाते और न किसी को व्याख्यान सुनाते! ऐसा कोई लेखक करता तो एक बड़ी सच्ची, महत्त्वपूर्ण और मनुष्यों के हृदयों को हिला देनेवाली पुस्तक इस भयङ्कर व्यापार पर लिखी जा सकती थी!'

'रूसी लेखकों ने इस विषय पर भी लिखा तो है!' रामसेस ने अनमना होकर कहा।

'हाँ, लिखा है' प्लेटोनोव ने भी उसी स्वर में उत्तर देते हुए कहा, 'मगर अभी तक जो कुछ लिखा गया है, वह या तो सच्चा नहीं है, या बच्चों के लिए नाटकों के ढङ्ग पर लिखा गया है अथवा इस प्रकार की उपमाओं और सूत्रों से भरा हुआ है कि उसे सिर्फ़ भावी ऋषि-मुनि ही समझ सकते हैं। किसी ने अभी तक इस सम्बन्ध में जैसा जीवन है उसको बिलकुल वैसा ही चित्रण करने का प्रयत्न नहीं किया है। रूस के सिर्फ़ एक महान् लेखक ने, जिसकी आत्मा स्वच्छ और जिसकी कला थी महान्, इस विषय पर केवल एक बार लिखने का प्रयत्न किया; परन्तु उसके अद्वितीय चित्रों में भी इस विषय में उसकी आत्मा पर पड़नेवाले उन अक्सों की ही झलक दीखती है जो कि वेश्यावृत्ति की दुनिया को बाहर से देखनेवाले कलाकार की आत्मा पर पड़ते हैं। उस महान् कलाकार के लिए असत्य लिखना और लोगों के हृदय में डर बैठाना असम्भव था। अतएव वह चकले के दरबान के कुत्ते के से मोटे मोटे बाल देखकर सोचता हुआ सिर्फ़ इतना ही कहता है, 'इसकी भी तो कोई मा होगी!' वह वेश्याओं के चेहरों को अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से घूर-घूरकर देखता है और अपने मन में उनके चित्र भी उतारता है। मगर वह उनके जीवन पर जिसे वह अच्छी तरह समझता नहीं था, लिखने की हिम्मत नहीं करता। इसी प्रकार यह महान् लेखक, जो अपनी पूर्ण आत्मा से सत्य का पुजारी था, रूसी किसान के जीवन पर भी दृष्टिपात करके ही रह जाता है। वह जानता था कि रूसी किसानों की भाषा और रुझान वह नहीं

समझता और उनकी आत्मा को अच्छी तरह नहीं पहचानता अतएव वह आश्चर्यजनक चतुरता से रूसी जनता की वास्तविक आत्मा का चक्कर लगाता हुआ निकल जाता है और अपनी अनोखी सूझ को शहरी लोगों के जोवन के चित्र, जिन्हें वह अच्छी तरह जानता और पहचानता था, खींचने में ख़र्च कर देता है। मैं इस बात की चर्चा आप से जान-बूझकर कर रहा हूँ। हम लोग अभी तक जासूसों, वकीलों, सरकारी नौकरों, शिक्षकों, पुलिसवालों, इंजीनियरों, ज़मींदारों और विषय-लिप्त स्त्रियों के जीवन के बारे में ही लिखते रहे हैं। इन लोगों के जीवन के, हमारे साहित्य में, बड़े सच्चे, सुन्दर चित्र और अद्वितीय चित्र मिलते हैं। मगर इन लोगों के जो कि कृत्रिमता और शिष्टाचार के सन्निपात से भरे होते हैं, किसानों और वेश्याओं के जोवन के मुक़ाबले में, जो कि अत्यन्त प्राचीन काल से मनुष्य-जीवन के अङ्ग रहे हैं, बिल्कुल कूड़ा कर्कट सा लगते हैं। फिर भी किसानों और वेश्याओं के जीवन के थोथले, असत्य, चटपटे, अथवा भोग-विलासपूर्ण चित्रों के सिवाय हमारे साहित्य में सच्चे चित्र अभी तक नहीं मिलते। दोस्तोवेस्की के केवल सोनेच्का मार्मेलाडोवा के चित्र के अतिरिक्त और हमारे रूसी साहित्य में वेश्याओं के जीवन का कौन-सा चित्र है? किसानों के जीवन के भी उनके दोषों के असत्य चित्रों और ग्रामीण जीवन के वर्णन के अतिरिक्त और हमारे साहित्य में सच्चे चित्र कहाँ हैं? हाँ, एक पुस्तक अवश्य इस विषय पर है जो कि वास्तव में अपने ढङ्ग को एक ही पुस्तक है। रूसी साहित्य में ही नहीं बल्कि दुनिया के साहित्य में, मैं समझता हूँ, वह अपने ढङ्ग की अनोखी पुस्तक है। इस विषय पर ऐसी भयङ्कर शोकान्त कृति, जिसकी सत्यता पर हमारा दिल बैठने लगता है और शरीर के रोंगटे खड़े हो उठते हैं, मेरे विचार से दुनिया में दूसरी नहीं है। मैं समझता हूँ, आप समझ गये होंगे कि मैं किस पुस्तक की तरफ़ इशारा कर रहा हूँ...'

'हाँ, टाल्सटाय की...' लिखोनिन ने धीरे से कहा—

'हाँ, हाँ' प्लेटोनोव ने कहा और वह स्नेह से लिखोनिन की तरफ़ देखने लगा।

'मगर दोस्तोवेस्की की सोनेच्का भी वेश्या का केवल एक कल्पित चित्र है...एक प्रकार से वेश्या की मनोवृत्ति का अध्ययन है...' यार्चेन्को ने कहा।

यह सुनकर प्लेटोनोव जो अभी तक अनमना-सा बोल रहा था, एकदम जोश में बोला :

'मैं यह राय सैकड़ों ही बार सुन चुका हूँ ! मगर यह बात बिलकुल ग़लत है। वेश्यावृत्ति के बेहूदा और अश्लील पेशे के नीचे, गन्दी मा-बहिन की गालियों के नीचे, शराबखोरी की भयङ्करता के नीचे, दोस्तोवेस्की की सोनेच्का आज भी हमारे जीवन में मौजूद है ! रूसी वेश्या का भाग्य कितना भयङ्कर, कितना करुण, कितना रक्तरंजित, कितना मूर्खतापूर्ण और हास्यास्पद है ! रूसी वेश्या के जीवन में हमें रूसी भगवान, रूसी लोगों की दार्शनिक लापरवाही, जीवन में गिरे हुए रूसियों की निराशा, रूसी अशिष्टता, रूसी सब्र और रूसी निर्लज्जता सभी एक साथ देखने को मिलते हैं। उन सारी बाज़ारू स्त्रियों को, जिन्हें लेकर हम उनके साथ कमरे में लेटने चले जाते हैं, हम ध्यान से देखें, अच्छी तरह विचार-पूर्वक देखें तो हमें पता चलेगा कि वे सब बुद्धि में बिल्कुल बच्ची की तरह हैं। ग्यारह वर्ष की बालिका से अधिक बुद्धि में उनमें से शायद ही कोई हो। भाग्य ने उन्हें कम उम्र में ही वेश्या बना दिया और तब से वे एक विचित्र, इन्द्र-सभा की, गुड़ियों की-सी दुनिया में रहती हैं, जहाँ उनको किसी प्रकार के विकास और अनुभव का मौक़ा नहीं मिलता और वे भोली, सरल, विश्वासी और लोभी बनी रहती हैं। उन्हें अपने बारे में यह भी पता नहीं रहता कि आध घण्टे बाद वे क्या कहेंगी या करेंगी—बिल्कुल बालकों की सी उनकी ज़िन्दगी होती है। मैंने यह बालकों की-सी हास्यास्पद मनोवृत्ति बूढ़ी, नीच से नीच, टूटी से टूटी और कंगाल से कंगाल वेश्याओं में देखी है। वेश्याओं के मन में मनुष्य-जीवन के दुःखों के लिए सदा एक निस्सहाय दया रहती है···उदाहरण के लिए···'

यह कहकर प्लेटोनोव ने नीची दृष्टि से कमरे में बैठे हुए तमाम लोगों को एक बार चुपचाप देखा और फिर बेसब्री से हाथ मलता हुआ वह बोला :

'ख़ैर···जाने दीजिए इन बातों को ! आज तो मैं दस बरस के लिए काफ़ी बकवाद कर गया···व्यर्थ ही में···'

'मगर, सरजी !' सचमुच तुम्हीं इस विषय पर ख़ुद क्यों नहीं लिखते ?' यार-चेन्को ने पूछा, 'तुम्हारा ध्यान तो इस समस्या पर इतना गया है !'

'मैंने लिखने का प्रयत्न किया है !' प्लेटोनोव ने रूसी हँसी हँसते हुए कहा, 'मगर मैं लिख नहीं सकता। मैं जब लिखने बैठता हूँ तो लिखते-लिखते अपने ही ऐसे शब्दजाल में फँसने लगता हूँ कि उससे मेरे लिए निकलना कठिन हो जाता है और मुझे अपना लिखा हुआ फीका लगने लगता है। एक बार हमारे देश का एक

प्रख्यात कहानी-लेखक यहाँ आया था। मैं उससे मिला और मैंने उसे भी यहाँ के जीवन के सम्बन्ध में बहुत-सी ऐसी ही बातें बताईं जैसी मैं आपको आज बता रहा हूँ, जिन्हें सुनकर—मुझे डर है कि—आपका जी भी उकता उठा होगा। मैंने उस महालेखक से प्रार्थना की कि वह मेरे दिये हुए मसाले को अपनी कहानियों में इस्तेमाल करे। उसने मेरी तमाम बातें बड़े ध्यान से सुनीं, मगर आखिर में वह बोला, 'बुरा न मानना, प्लेटोनोव ! जो कोई मुझे मिलता है वही मुझे मेरे उपन्यासों और कहानियों के लिए मसाला देने लगता है और मुझे यह बताने का प्रयत्न करता है कि मुझे किस विषय पर लिखना चाहिए। तुमने आज जो कुछ भी मसाला मेरे सामने रखा है, वह अपार और अत्यन्त महत्त्व का है। मगर मैं इसका उपयोग नहीं कर सकता हूँ, क्योंकि ऐसा महान् ग्रन्थ लिखने के लिए जैसा तुम सोचते हो, किसी दूसरे के शब्द, वे चाहे कितने ही सच्चे क्यों न हों, काफ़ी नहीं हो सकते और इधर-उधर कुछ देख-सुनकर और पेन्सिल से अपनी नोटबुक में दूसरों के देखे-सुने अनुभवों को लिख लेने से ही कोई ऐसा महान् ग्रन्थ नहीं लिख सकता और न लिखने के योग्य ही हो सकता है। वेश्यावृत्ति पर सच्ची पुस्तक लिखने के लिए वेश्याओं की ज़िन्दगी में घुसने की आवश्यकता है। चतुरता से उनके जीवन को देखने या उनके बारे में कुछ लिखने के विचार से उनके जीवन में घुसा नहीं जा सकता। स्वाभाविक तौर पर ही यह काम हो सकता है। कोई अच्छा लेखक ऐसा कर सके, तभी इस विषय पर एक महान् पुस्तक लिखी जा सकती है, अन्यथा नहीं।' मुझे उस लेखक के इन शब्दों को सुनकर बड़ी निराशा हुई। परन्तु साथ ही उसके इन शब्दों ने मुझे इस काम में लगने के लिए उत्साहित भी किया। मेरे मन में ऐसा विश्वास-सा हो उठा कि एक न एक दिन, शायद पचास वर्ष के बाद, अवश्य कोई बड़ा कलाकार जिसने वेश्या-जीवन के सभी पहलुओं को स्वयं देखा और अनुभव किया होगा, और शायद यह कलाकार कोई रूसी ही होगा, इस अधम जीवन के हृदय-विदारक सच्चे चित्रों को एकत्र करके एक ऐसे महान् ग्रन्थ में दुनिया के आगे रखेगा जिसको पढ़कर लोग कह उठेंगे, 'अरे यह सब तो हम भी रोज़ देखते थे। फिर भी हमें यह कभी नहीं लगा कि यह जीवन ऐसा भयङ्कर है !' मेरा मन बराबर कहता है कि एक दिन एक ऐसा महान् कलाकार अवश्य रूस में उत्पन्न होगा।'

'आमीन् !' लिखोनिन ने गम्भीरता से कहा, 'आइए उसके नाम पर हम लोग आज शराब पियें !'

'ख़ुदा की क़सम' एकाएक नन्हीं मनका ने कहा, 'अगर कोई हमारी ज़िन्दगी की हक़ीक़त लिखे···हम अभागी छिनालों की ज़िन्दगी की हक़ीक़त···'इतने में कमरे का द्वार खटका और जेनी अपनी चमकदार नारङ्गी रङ्ग की पोशाक पहिने हुए कमरे में दाखिल हुई।

ग्यारहवाँ अध्याय

जेनी ने कमरे में घुसकर सब आदमियों को ऐसी आज़ादी से सलाम किया मानो वही इस घर की मालकिन हो और फिर सरजी के पीछे एक कुर्सी पर वह बैठ गई। वह अभी उस जरमन से अपना पिण्ड छुड़ाकर आ रही थी जिसने आज ही शाम को नन्हीं मनका से सन्तुष्ट न होने पर खाला की सिफारिश को अपने कमरे में बुलाया था। मगर ऐसा मालूम होता है, जेनी के सौन्दर्य पर भी वह लट्टू होकर इस घर से गया था, क्योंकि तीन घण्टे तक शराब की भट्टियों का चक्कर लगाने के बाद वह फिर हिम्मत बाँधकर इसी घर में लौट आया था और बैठक में बैठा-बैठा तब तक चुपचाप इन्तज़ार करता था, जब तक कि जेनी का रोज़मर्रह का प्रेमी उसके कमरे में से निकलकर चला नहीं गया था। उसके चले जाने के बाद वह जेनी को अपने साथ कमरे में ले गया था।

टमारा ने जेनी से आँखों ही आँखों में कुछ पूछा। उत्तर में जेनी ने घृणा से मुँह सिकोड़कर सिर हिलाया और उसकी पीठ काँप उठी। धीरे से वह बोली, 'हाँ, चला गया·· छी····· !'

प्लेटोनोव जेनी को बहुत ध्यानपूर्वक देख रहा था। वह जेनी के साथ दूसरी छोकरियों से बिलकुल भिन्न बर्ताव करता था; क्योंकि जेनी के लापरवाह, घमण्डी और विद्रोही स्वभाव के लिए उसके हृदय में ख़ास इज्जत थी। इस समय बार बार जेनी की तरफ़ घूम-घूमकर देखने पर प्लेटोनोव को लगा कि जेनी की बड़ी-बड़ी और सुन्दर आँखें जल सी रही हैं, उसका चेहरा विकृत होकर लाल हो रहा है और उसके होंठ सूखे जा रहे हैं। प्लेटोनोव ने समझ लिया कि जेनी के हृदय में बहुत दिनों से आग जल रही है, वह इस समय इतनी भड़क उठी है कि उसके धुँए और ज्वालाओं से जेनी का कंठ रूँधा जा रहा है। इस दशा में जेनी जैसी सुन्दर उसे लगी, वैसी आज तक कभी वह उसे नहीं लगी थी। बाद में भी फिर प्लेटोनोव ने जब-जब इस समय की

घटना को याद किया, तब-तब वह इसी नतीजे पर पहुँचा। प्लेटोनोव ने यह भी देखा कि इस समय जितने आदमी कमरे में मौजूद थे, वे सभी केवल एक लिखोनिन को छोड़कर, जेनी की तरफ़ बड़े ध्यान से देख रहे थे। कोई सीधे-सीधे, तो कोई आँखें बचाते हुए। मगर वह सभी को एक-सा बेध रही थी। ऐसा लगता था कि इस स्त्री के सौन्दर्य को देखकर और यह जानकर कि जिस क्षण चाहें वे उसे तुरन्त पा सकते हैं, सभी के मन मैले हो रहे थे।

'किसी चीज़ से तुम बड़ी उत्तेजित दीखती हो, जेनी।' प्लेटोनोव ने धीरे से कहा।

जेनी ने स्नेह-पूर्वक अपनी उङ्गलियों से प्लेटोनोव की बाँह छूकर कहा, 'मेरी चिन्ता मत करो! कुछ नहीं है···स्त्रियों की बातें तुम्हारी समझ में नहीं आयेंगी।'

मगर यह कहकर वह फ़ौरन ही टमारा की तरफ़ घूमी और उससे इस प्रकार की ठगों और उठाईगीरों की-सी साङ्केतिक और विचित्र भाषा में, आवेश में भरकर, बातें करने लगी जो वहाँ पर बैठे हुए लोगों में से किसी की समझ में नहीं आईं।

'इस बुद्धिमान् मनुष्य को धोखा देने की कोशिश मत करो···यह बड़ा ही चतुर है' टमारा ने मुस्कराते हुए जेनी की बातें काटकर प्लेटोनोव की तरफ़ आँखों से इशारा करते हुए कहा।

सच तो यह है कि प्लेटोनोव सारा मामला समझ भी चुका था। जेनी टमारा को घृणा-पूर्वक बता रही थी कि आज पाशा के पास इतने आदमी आये थे कि दिन और रात में कुल मिलाकर उस अभागी को दश बार से भी अधिक उनके साथ कमरों में जाना पड़ा था। हर बार एक नये आदमी के साथ उसे जाना पड़ा था जिसका फल यह हुआ था कि वह बेचारी कुछ देर पहिले मूर्छित होकर गिर पड़ी थी। मगर ख़ालाजान ने दवा पिलाकर उसे होश में कर लिया था और फिर फ़ौरन ही बैठक में भेज दिया था। जेनी ने ख़ालाजान से पाशा का पक्ष लेते हुए कहा था, जिस पर ख़ालाजान उससे बिगड़ उठी थीं और सज़ा देने की धमकियाँ देने लगी थीं।

'यह सब क्या झगड़ा है?' यारचेन्को ने परेशानी से भौंहें सिकोड़ते हुए पूछा।

'जनाब परेशान न हों···कोई ख़ास बात नहीं है।' जेनी ने और भी उत्तेजित होकर कहा, 'हमारा मामूली···रोज़मर्रह का एक घरेलू मामला है। सरजी आईवानोविश क्या मैं तुम्हारी शराब में से थोड़ी-सी पी सकती हूँ?'

यह कहकर उसने आधा गिलास शराब गिलास में उड़ेलकर एक घूँट में गट-गट ढकोस ली।

प्लेटोनोव चुपचाप उठकर द्वार की तरफ चला।

'नहीं सरजी, कोई ऐसी बात नही है ! रहने दो।...' जेनी ने उसे रोककर कहा।

'नहीं, मुझे रोको मत।' प्लेटोनोव ने कहा, 'मैं एक बहुत साधारण काम करने जा रहा हूँ—पाशा को सिर्फ यहाँ लिवा लाऊँगा...ज़रूरत होगी तो उसकी क़ीमत भी दे दूँगा। यहाँ इस दीवान पर लेटकर वह कुछ देर आराम कर सकेगी, गो कि यहाँ भी...खैर नियूरा, दौड़कर जल्दी से उसके लिए एक तकिया ले आओ?' यही कहकर वह चला गया।

प्लेटोनोव की जैसे ही पीठ फिरी, जैसे ही वह कमरे के बाहर हुआ वैसे ही बोरिस ने घृणापूर्ण क्रोध से बड़बड़ाना शुरू कर दिया।

'यारो, इस अवारा को हम लोग अपने साथ यहाँ क्यों घसीट लाये हैं? क्या सब तरह का कूड़ा-कर्कट भी अपने साथ लिये घूमना हमारे लिए ज़रूरी है! शैतान हो जाने यह कौन है? न जाने क्या काम करता है? कहाँ का है? लिखोनिन, तुम हमेशा इसी तरह की गड़बड़ किया करते हो?'

'लिखोनिन को दोष क्यों देते हो? मैंने उसका तुम लोगों से परिचय कराया है, रामसेस ने कहा, 'मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि वह एक बहुत ही शरीफ आदमी है! बड़ा ही अच्छा साथी है।'

'हूँ! क्या कहने हैं! मुफ्त को शराबख़ोरी में शरीक होने के लिए ही अच्छा होगा! मुझे तो साफ वह एक मामूली आवारागर्द दीखता है जिसने इस चकले को अपना घर बना रखा है। या वह यहाँ का एक साधारण दलाल है जिसे मेहमानों से ख़ातिरदारी पर ख़र्च कराने के लिए कमीशन मिलता होगा।'

'रहने भी दो बोरिस, बेवकूफी की बातें मत करो,' यारचेन्को ने उसे झिड़कते हुए कहा।

मगर बोरिस चुप न हुआ। उसके स्वभाव की यह विचित्रता थी कि शराब का नशा उसकी जबान और टाँगों पर असर न करके उसके दिमाग़ पर असर करता था जिससे उसका जी किसी न किसी से लड़ने को होता था। प्लेटोनोव के लापरवाह व्यवहार, उसकी साफ़ और गम्भीर बातों से, जो चकले में बिलकुल अनुचित-सी लगती

थीं, वह काफ़ी चिढ़ गया था। उसकी तीखी और तानेजनी की बातों को भी प्लेटोनॉव ने लापरवाही से अनसुनी कर दिया था, जिसको अपनी उपेक्षा समझकर बोरिस का दिमाग़ और भी गरम हो उठा था।

'देखो तो, किस तरह की बातें हम लोगों से करता है!' बोरिस उबला हुआ कहता रहा, 'कैसे घमण्ड और मिजाज से ऊँची-ऊँची हाँकता है! अवारा और मक्कार कहीं का! बड़ा घुटा हुआ बदमाश है!'

जेनी की आँखें जो बड़े ध्यान से इस विद्यार्थी को घूर रही थीं, ईर्ष्यापूर्ण ख़ुशी से एकाएक चमक उठीं। वह तालियाँ पीटती हुई चिल्लाई, ठीक कहा! वाह रे बहादुर विद्यार्थी! तुम बड़े बहादुर हो!···ठीक कर दो उसे!···सचमुच कैसी बेहूदा बातें करता है! आने दो उसको, जो कुछ तुमने अभी कहा है मैं उससे स्पष्ट करके कह दूँगी!'

'ज़रूर! ज़रूर! तुमको क़सम है, ज़रूर कहना!' बोरिस ने बड़प्पन से मुँह चिढ़ाते हुए नाटक में पार्ट करनेवाले ऐक्टर की तरह ज़ोर से चिल्लाकर कहा, 'बल्कि मैं ही ख़ुद उससे साफ़-साफ कहूँगा!'

'इसको कहते हैं मर्दाना! मेरे प्यारे, मैं तुम पर निसार हूँ!' जेनी ने एक हँसी हँसते हुए मेज़ पर हाथ पटककर कहा, 'उल्लू की उड़ान और मर्दों की नाक छिप नहीं सकती!'

नन्हीं मनका और टमारा जेनी के मुँह की तरफ़ आश्चर्य से देखने लगीं। उसकी आँखों में चमकनेवाली घृणा और उसके उठे हुए नथनों को देखकर वे दोनों उसकी इच्छा समझ गईं और मुस्कराने लगीं।

नन्हीं मनका ने हँसते हुए सिर हिलाकर जेनी को बात बढ़ाने का प्रयत्न करने पर झिड़का। जेनी की झगड़ालू आत्मा को जब यह विश्वास होने लगता था कि अब वह फजीता होने ही वाला है, जिसको यह रच रही थी, तब उसका चेहरा ऐसा ही हो जाता था, जैसा इस समय था।

'ऐसी बड़प्पन की बातें मत करो, बोरिस,' लिखोनिन ने कहा, यहाँ सभी बराबर हैं—कोई किसी से कम नहीं है।'

इतने में नियूरा एक तकिया लिये आई। तकिया लाकर उसने दीवान पर रख दिया।

'यह तकिया किसके लिए लाई हो?' बोरिस ने उससे चिल्लाकर पूछा, 'ले जाओ फौरन इस तकिये को यहाँ से—यह क्या कोई सराय या अस्पताल है?'

'ऐसी बातें मत करो, प्यारे। तुम्हें इन तमाम बातों से क्या मतलब?' जेनी ने तकिया उठाकर टमारा की पीठ के पीछे छिपाते हुए कहा, 'ठहरो प्यारे। मैं थोड़ी देर तुम्हारे पास बैठूँगी।'

जेनी मेज़ का चक्कर लगाती हुई बोरिस के पास पहुँची और उसे ज़बरदस्ती एक कुर्सी पर बिठाकर स्वयं उसकी गोद में बैठ गई। फिर उसकी गर्दन में अपनी बाहें डालकर और अपने होंठ उसके होंट से सटाकर उसने उसको दबाकर इतनी देर तक चूमा कि बेचारा बोरिस साँस लेने के लिए तड़फड़ा उठा। अपनी आँखों से सटी हुई औरत की बड़ी, काली, चमकीले, स्पष्ट और निश्चल आंखें उसने देखीं और उन्हें देखकर क्षण भर के लिए उसे ऐसा लगा कि वे निर्जीव हैं और उनमें एक पागलों का-सा क्रोध भर रहा है, जिसे देखकर भय की एक अचानक कँपकंपी—सङ्कट के प्रथम बोध की तरह—उसे हुई। बड़ी मुश्किल से जेनी की लचीली बाहों में से अपना सिर छुड़ाता हुआ, और ढकेलकर उसे अपने ऊपर से हटाता हुआ वह लज्जा से लाल, हांफता और हँसता हुआ बोला, 'बड़ी विचित्र हो तुम!' तुम्हारा क्या नाम है?···जेन्का? बड़ी सुन्दर हो तुम!'

इतने में प्लेटोनोव पाशा को लिये कमरे में दाखिल हुआ। पाशा की हालत इस समय बहुत बुरी हो रही थी। उसको देखकर बड़ी दया आती थी। उसका चेहरा बिल्कुल फीका पड़ गया था और उसमें कुछ-कुछ नीलापन भी आ गया था जैसे कि उसके शरीर का सारा खून ही निकल गया हो। उसकी आंखें आधी बन्द और आधी खुली हुई निर्जीव शीशों की तरह धुँधली, एक पागलों की-सी धीमी-धीमी मुस्कान मुस्करा रही थीं। उसके होंठ खुले हुए लाल-लाल दो भीगे चीथड़ों की तरह ऐसे लटक रहे थे, मानों उनकी खाल किसी ने खींच ली हो। धीमे-धीमे हिचकती वह इस प्रकार आ रही थी, मानो वह एक टाँग से लम्बा डग उठाती हो और दूसरी से छोटा। आकर चुपचाप वह दीवान पर लेट गई और तकिये पर सिर रखकर अपनी मन्द-मन्द पागलों की-सी मुस्कान मुस्कराती रही। उसका शरीर कुछ-कुछ काँप रहा था। ऐसा लगता था मानों उसे ठण्ठ लग रही है।

'माफ़ कीजिए जनाब, मैं अपना कोट उतारता हूँ।' प्लेटोनोव ने यह कहते हुए

अपना कोट उतारकर पाशा को उससे ढक दिया। फिर टमारा से उसने कहा, 'पाशा को थोड़ी चाकलेट और शराब पिलाओ।'

बोरिस फिर उठकर कमरे के एक कोने में जाकर, दीवार से पीठ टेककर, एक पैर दूसरे के आगे रखकर और सिर ऊँचा उठाकर खड़ा हो गया। फिर यकायक कमरे की शान्ति भङ्ग करता हुआ वह बड़ी गुस्ताखी से प्लेटोनोव से बोला :

'ए...सुनो जी...तुम्हारा क्या नाम है ?...यह तुम्हारी रखेली है ?' अपने पैर के जूते से पाशा की तरफ़ इशारा करते हुए उसने पूछा, 'क्यों ?'

'क्या कहा ?' प्लेटोनोव ने भौंहें चढ़ाते हुए गुर्राकर पूछा।

'या आप इसके रखेल हैं ?...दोनों एक ही बात है न ? क्या कहा जाता है ऐसे लोगों को यहाँ ?...मेरा मतलब उन लोगों से है जिनके लिए यहाँ की छोकरियाँ कमीज़ें इत्यादि अपने हाथों से सिया करती हैं, और जिन्हें वे अपनी कमाई भी ख़ुशी से खिलाती-पिलाती हैं...क्यों ?...'

प्लेटोनोव ने ग़ुस्से में भरकर उसकी तरफ़ घूरा। मगर फिर अपने क्रोध को सँभालता हुआ, माथा सिकोड़कर, भर्राई हुई आवाज़ में, शान्ति पूर्वक कुछ सोचता हुआ और अपने शब्दों को तोलता हुआ बोला, 'देखिए, आप कई बार मुझसे झगड़ा मोल लेने की कोशिश कर चुके हैं। एक तो मैं देख रहा हूँ कि आप ऊपर से ठीक लगने पर भी नशे के कारण आपे से बाहर हुए जा रहे हैं। दूसरे आपके साथियों की वजह से भी मैं आपसे कुछ कहना पसन्द नहीं करता। मगर आप इस तरह की बातें मुझसे करने पर ही तुले हुए हैं तो अबकी बार कृपया आप अपना चश्मा उतारकर मुझसे फिर ऐसे शब्द कहें।'

'क्या बकते हो ?' बोरिस ने अपने कन्धे हिलाकर, नाक से ज़ोर से साँस निकालते हुए कहा, 'कौन-सा चश्मा ! मैं चश्मा क्यों उतारूँ ?' मगर यह कहते हुए भी उसका हाथ आप से आप चश्मे पर जा लगा, जिसको पकड़कर उसने अपनी नाक पर मज़बूती से रख लिया।

'इसलिए कि फिर आपने मुझसे ऐसे शब्द कहे तो मैं आपकी नाक पर तानकर एक घूँसा जड़ दूँगा, जिससे डर है कि कहीं चश्मा टूटकर आपकी आँखों में न घुस जाये', प्लेटोनोव ने लापरवाही से कहा।

झगड़ा यहाँ तक पहुँच जायेगा इसकी किसी को आशा न थी। फिर भी सब

चुप रहे । केवल नन्हीं मनका आश्चर्य से 'ऊह, ऊह' करती हुई ताली बजाने लगी । जेनी उत्सुकता और आवेश से कभी बोरिस की तरफ़ और कभी प्लेटोनोव की तरफ़ देखने लगी ।

'और मेरा घूँसा तुम्हारे मुँह पर पड़ गया तो वह बिल्कुल चपटा ही हो जायेगा !' भोंड़े तौर पर छोकरों की तरह, बोरिस ने चिल्लाकर प्लेटोनोव से कहा, 'मुझे भी बड़ी देर से केवल यही ख़याल आ रहा है कि अपने हाथ तुम जैसों पर...'

उसका इरादा प्लेटोनोव के लिए कोई बहुत खराब विशेषण प्रयोग करने का था, मगर शायद कुछ सोचकर अथवा कोई उपयुक्त शब्द न मिलने से उसने अपना इरादा बदलकर इतना ही कहा, 'तुम जैसों पर डालकर गन्दा क्यों करूँ ? दोस्तो ! मैं इस जगह अब एक क्षण भी और ठहरने के लिए तैयार नहीं हूँ ! मैं किसी भी आवारागर्द के साथ मिलने और बैठने का आदी नहीं हूँ । मुझे बचपन से ऐसी शिक्षा नहीं मिली है ।'

यह कहता हुआ वह तैश में आकर कमरे के द्वार की तरफ़ चला ।

कमरे के द्वार पर पहुँचने के लिए बोरिस को प्लेटोनोव के बिलकुल पास से गुज़रना पड़ा । प्लेटोनोव एक जङ्गली और खूँख्वार जानवर की तरह तिरछी नज़रों से बोरिस को घूर रहा था । उसके पास से गुज़रते हुए बोरिस के मन में आया कि प्लेटोनोव की कोख में एक घूँसा जड़कर भागे ; क्योंकि उसने सोचा कि प्लेटोनोव ने उसे मारने को कोशिश की तो उसके साथी अवश्य उसे बचा लेंगे ; मगर फिर तुरन्त ही, प्लेटो-नोव को तरफ बिना देखे ही, उसको प्लेटोनोव के इन चौड़े-चौड़े हाथों का जो चुपचाप मेज़ पर रखे हुए थे, उसके आगे की तरफ़ झुके हुए हठीले सिर का जिसका माथा काफ़ी चौड़ा था और उसके विशाल, बलिष्ठ और चपल शरीर का जो लापरवाही से झुका हुआ कुर्सी से जा बैठा था, मगर ज़रूरत पड़ते ही उछलकर खूँख्वार हमला कर देने के लिए तैयार दीखता था, ध्यान आया । अस्तु, वह चुपचाप ज़ोर से दरवाज़े के किवाड़ बन्द करता हुआ बाहर निकल गया ।

'ख़स कम जहान पाक !' जेनी ने उसके चले जाने पर मज़ाक से मुँह बनाते हुए कहा, 'टमोरच्का, लाओ थोड़ी शराब और पियें !'

पतले शरीर के विद्यार्थी पेट्रोवस्की ने अपनी जगह पर खड़े होकर बोरिस का पक्ष लेते हुए कहा, 'दोस्तो, आपके मन में जैसा आये, करें ; मगर मैं तो यहाँ से बोरिस के

साथ चला जाना ही उचित समझता हूँ। वह चाहे ग़लती पर ही हो—उसके लिए हम लोग उसे आपस में डाँट-डपट सकते हैं—मगर जब कोई बाहरी आदमी उसकी बेइज़्ज़ती करे तब हमें उसका साथ देना ही आवश्यक है। अस्तु मैं अब यहाँ नहीं ठहर सकता। मैं भी जाता हूँ।'

'हे मेरे ईश्वर!' लिखोनिन ने परेशानी से अपनी कनपटियाँ खुजलाते हुए कहा, 'बोरिस का व्यवहार शुरू से ही इतना बेहूदा, गुस्ताख़ और मूर्खतापूर्ण था! फिर भी हमको उसका इसमें भी साथ देना ही चाहिए। क्या यहाँ कोई राजनैतिक सभा या सम्मेलन हो रहा है, जहाँ से हम अपना विरोध दिखाने के लिए उठकर चले जायें? अथवा यह कोई अखबार का दफ़्तर या कारखाना है जहाँ से हड़ताल करके हम चल दें? इस चकले से हड़ताल करके हम लोग चलें? अथवा हम लोग सरकारी नौकर हैं कि एक दूसरे के हरएक दोष को छिपाने का प्रयत्न करें?'

'कुछ भी कहें आप। मैं तो यहाँ से अब चला जाना ही ठीक समझता हूँ। बोरिस का ऐसी हालत में साथ देना हमारा फ़र्ज हो जाता है!' पेट्रोवस्की ने गम्भीरता से कहा और यह कहकर वह भी चल दिया।

'खुदा हाफिज़!' जेनी ने उससे जाते हुए कहा; परन्तु 'मनुष्य की आत्मा भी कैसे-कैसे अन्धकारपूर्ण और टेढ़े-मेढ़े रास्तों पर भटका करती है! बोरिस और पेट्रोवस्की, दोनों सचमुच ही, बिलकुल ईमानदारी से, अन्दर से ग़ुस्सा होकर निकले थे। मगर बोरिस वहाँ से आधे मन से उठकर चला था तो पेट्रोवस्की चौथाई मन से ही। बोरिस को नशा था और गुस्सा भी था, मगर साथ ही उसके मन में यह विचार भी आ रहा था कि अब चलो, अकेले रह जाने पर जेनी को अपने पास बुला लेना आसान होगा। पेट्रोवस्की ने भी बिल्कुल इसी इरादे से उससे आकर तीन रुपये उधार माँगे। बैठक में दोनों आपस में मिले; सब ठीक-ठाक हो गया। दस मिनट के बाद खालाजान, होशियारी से, दबे पाँवों चलती हुई उस कमरे तक गई जहाँ अभी तक सब नौजवान और छोकरियाँ बैठे थे और द्वार में से मुँह निकालकर जेनी को पुकारकर बोली, 'जेनी, धोबी तुम्हारे कपड़े लाया है। आकर गिन लो।' फिर नियूरा की तरफ़ देखकर बोली, 'नियूरा, तुम्हारा ऐक्टर एक मिनट के लिए तुम्हें बुलाता है। आकर उसके साथ भी थोड़ी शराब पी लो।'

प्लेटोनोव और बोरिस की आपस की व्यर्थ की तू-तू मैं-मैं पर बड़ी देर तक

नौजवानों में बातें होती रहीं। प्लेटोनोव से और किसी से जब कभी इस प्रकार का कोई झगड़ा हो जाता था तो प्लेटोनोव को उस पर बड़ी देर तक बेहद शर्म, परेशानी और तकलीफ़-सी हुआ करती थी। कमरे में जो लोग थे, सब प्लेटोनोव का पक्ष ले रहे थे। फिर भी प्लेटोनोव दुःख से उनसे कह रहा था, 'नहीं, नहीं भाई! मेरे लिए भी अब यहाँ से चल देना ही उचित है। व्यर्थ मैंने आप लोगों के मज़े में विघ्न खड़ा कर दिया। आप के दोस्तों को आपसे अलग कर दिया। दोष मेरा भी उतना ही है जितना उसका। अस्तु मेरे लिए भी अब यहाँ से चला जाना ही उचित है। शराब इत्यादि के बिल के दाम चुकाने की आप लोग चिन्ता न करें। मैं पाशा को लेने गया था उसी वक्त सिमियन को सारे दाम चुका आया था।'

लिखोनिन एकाएक अपने बाल सँभालता हुआ उठा और बोला :

'नहीं जी, आप ठहरिए! मैं उन दोनों को भी अभी खींचकर यहीं लाता हूँ। मैं सच कहता हूँ, वे दोनों ही बड़े अच्छे दिल के छोकरे हैं। अभी कम उम्र है, अस्तु छोटे-छोटे पिल्लों की तरह कभी-कभी अपनी छाया से ही लड़ने लगते हैं। मैं अभी उन्हें पकड़कर लाता हूँ और आपको विश्वास दिलाता हूँ कि बोरिस अपनी ग़लती मानकर आपसे ज़रूर माफ़ी माँगेगा।'

यह कहकर वह कमरे से चला गया। मगर पाँच मिनट में ही वह लौट आया। 'वे तो कमरों के अन्दर हैं' उसने लौटकर गम्भीरता-पूर्वक हाथ हिलाते हुए कहा, 'दोनों ही कमरे बन्द किये पड़े हैं।'

बारहवाँ अध्याय

इसी वक्त सिमियन हाथ में एक ट्रे लिये कमरे में दाख़िल हुआ जिस पर दो उफनते हुए झागों की शराब से भरे हुए गिलास थे और उनके पास एक बड़ा-सा विज़िटिङ्ग कार्ड रखा था।

'क्या मैं पूछ सकता हूँ कि आप साहबों में से कौन यारचेन्को साहब हैं?' उसने उसकी तरफ़ देखते हुए पूछा।

'मैं हूँ, क्यों?' यारचेन्को ने उत्तर दिया।

'यह शराब ऐक्टर साहब ने आपकी ख़िदमत में भेजी है।'

यारचेन्को ने विजिटिङ्ग कार्ड उठाकर ज़ोर से पढ़ा। उस पर लिखा था:—

एग्मौन्ट—लवरेज़तत्स्की

मेट्रोपोलिटन थियेटर्स का ड्रामेटिक आरटिस्ट

'बड़ा विचित्र नाम है!' पावलोव बोला, परन्तु इन लोगों के नाम शायद ऐसे ही होते हैं!'

'हाँ, और जो प्रख्यात हो जाते हैं वे या तो मोटे स्वर से बोलने लगते हैं या तुतलाकर अथवा हलकाकर बोलते हैं' प्लेटोनोव ने कहा।

'जी हाँ, और सबसे मज़े की बात यह है कि मेट्रोपोलिटन थिएटर के इस आर्टिस्ट से पहिले कभी परिचय का भी मुझे सौभाग्य नहीं मिला है। इस कार्ड की पीठ पर भी कुछ लिखा है। खत से लगता है कि किसी ऐसे आदमी ने लिखा है जो शराब के नशे में चूर हो और पढ़ा-लिखा भो वहुत थोड़ा ही है!' यारचेन्को ने कार्ड के पीछे लिखा हुआ मज़मून पढ़ना शुरू किया:

'रूसी ज्ञान के महापण्डित'—विज्ञान को विज्ञान नहीं वज्ञान लिखता है और महापण्डित के बजाय महापण्डत लिखता है—यारचेन्को ने समझाते हुए आगे पढ़ा 'को ख़िदमत में, जिनको इस मकान के रास्ते में से गुज़रते हुए देख लेने का मुझे सौभाग्य मिला था, ख़ादिम यह शराब पेश करता है और गिलास से अपना गिलास छुआकर शराब पीने को ख़्वाहिश ज़ाहिर करता है। अगर जनाब को मेरी याद नहीं आती तो जनाब नेशनल थिएटर और उसमें होनेवाले नाटक 'ग़रीबी शर्म की चीज़ नहीं है' की याद करें और उसमें भाग लेनेवाले उस नाचीज़ आर्टिस्ट की याद करें जो उसमें अफ्रीकन का पार्ट खेला है।'

'हाँ, हाँ, याद आ गया,' यारचेन्को कहने लगा, 'एक बार इस नाटक की आमदनी धर्मादे में जानेवाली थी और इसका सारा प्रबन्ध मेरे सिर डाला गया था। उस वक्त उसमें एक मग़रूर से दीखनेवाले मुछमुण्डे ऐक्टर से मेरी मुलाक़ात हुई थी... मगर उसको यहाँ बुलाकर क्या करेंगे? क्यों?'

लिखोनिन ने हँसते हुए कहा, 'बुला लो यार, उसको भी यहीं। मसख़रा होगा। कुछ नक़लें-वकलें करेगा। मज़ा रहेगा।'

'आपकी क्या राय है ?' यारचेन्को ने प्लेटोनोव की तरफ़ मुड़कर पूछा।

'मुझे तो कोई उज्र नहीं है। मैं उसे कुछ-कुछ जानता भी हूँ। घुसते ही वह चिल्लाकर कहेगा, 'बाय, शैम्पेन लाओ!' फिर आँखों में आँसू भरकर वह अपनी स्त्री का आपसे ज़िक्र करेगा और आपको बतायेगा कि वह कैसी देवी है। फिर देश-भक्ति पर एक व्याख्यान झाड़ेगा और अन्त में शराब के दाम चुकाते वक्त झगड़ा करेगा, गोकि अधिक देर तक नहीं। काफ़ी मज़ेदार आदमी है।'

'बुला लो यार उसे भी यहीं,' वोलोद्या ने केटी के, जो उसकी गोद में बैठी हुई अपनी टाँगें हिला रही थी, कन्धों के ऊपर से झाँककर कहा।

'तुम्हारी क्या राय है, वेल्टमैन ?'

'क्या कहा ?' वेल्टमैन ने चौंककर पूछा। वह अपने साथियों की तरफ़ पीठ मोड़े हुए पाशा के पास दीवान पर उसके शरीर पर झुका हुआ बैठा था। बड़ी देर से वह उसके प्रति सहानुभूति दिखाता हुआ, कभी उसके कन्धे और कभी बाल सहला रहा था। पाशा, उसकी तरफ़ देखती हुई सदा की भाँति निर्लज्जता-पूर्वक अपनी अर्थहीन और विषय-लिप्त मुस्कान अधखुली आँखों और काँपते हुए पलकों से मुसकरा रही थी। 'क्या कहा ? उस एक्टर को यहाँ बुलाने के बारे में पूछते हो ? हाँ हाँ, बुला लो, ठीक तो है। मुझे उसके आने में क्या उज्र हो सकता है ? ज़रूर बुलाओ...'

आख़िरकार यारचेन्को ने सिमियन के द्वारा ऐक्टर को बुला भेजा। ऐक्टर जैसे ही कमरे में घुसा वैसे ही उसने अपना नाटक शुरू कर दिया। वह एक लम्बा और भड़कीला रेशमी कोट पहिने हुए था। हाथ में उसके एक चमकीला हैट था। कमरे के द्वार पर रुककर उसने टोपवाले हाथ को सीने से लगाकर इस अदा से झुककर सलाम किया, मानो वह कोई बड़ा नवाब या किसी बैंक का डायरेक्टर हो। शायद वह इस समय ऐसे ही अमीर आदमियों के चित्र अपने मन में बना रहा था।

'क्या आप लोगों की सोहबत में शरीक होने की मैं बदतमोज़ी कर सकता हूँ ?' उसने बड़े ही विनम्र और कोमल स्वर में, एक तरफ़ को ज़रा-सा अपना शरीर झुकाते हुए पूछा।

कमरे में बैठे हुए लोगों ने उससे अन्दर आने की प्रार्थना की और वह अन्दर घुसकर उन्हें अपना परिचय देने लगा। ज़ोर-ज़ोर से हाथ हिलाते हुए, आगे की तरफ़ कुहनी निकालकर उसने सबसे हाथ मिलाया। अब उसका व्यवहार नवाबों और अमीरों

का-सा नहीं था ; बल्कि एक बड़े होशियार और अच्छे खिलाड़ी अथवा ऐयाश नौजवान का-सा था। मगर उसका चेहरा, जिसके भौंहों के बाल कढ़े हुए और पलक ग़ायब थे, बिलकुल एक नीच क़िस्म के साधारण शराबी, ऐयाश और जालिम आदमी के चेहरे की तरह भोंड़ा, कठोर और तुच्छ दीखता था और उसके साथ-साथ उसकी दो औरतें भी थीं। एक तो हेनरीटा, जो अन्ना की पेढ़ी की सबसे पुरानी और तजुर्बेकार छोकरी होने से बहुत कुछ देख चुकी थी और कोल्हू के बैल की तरह यहाँ की जिन्दगी की अच्छी तरह आदि हो चुकी थी, उसकी आवाज़ मोटी पड़ गई थी। मगर फिर भी वह अभी तक सुन्दर थी। दूसरी स्त्री उसके साथ बड़ी मनका थी, जिसको इस घर में लोग मगरमच्छ भी कहते थे। हेनरीटा पिछली रात से बराबर ऐक्टर के ही साथ थी। वह उसको इस घर से एक होटल में भी ले गया था।

ऐक्टर आकर यारचेन्को के पास बैठ गया और एक बूढ़े ज़मींदार की तरह बातचीत करने लगा जिसके दिल में किसी ज़माने में ख़ुद विश्वविद्यालय में रह चुकने के कारण विद्यार्थियों को देखते ही प्रेम का भाव उमड़ उठा हो।

'मैं आपसे सच कहता हूँ जनाब, दुनिया के तमाम झंझटों से दूर रहकर मेरी आत्मा सिर्फ़ जवानों के निकट रहना चाहती है,' वह अपने क्रूर और नीच चेहरे पर ऐक्टरों की तरह प्रयत्न करके बनावटी भाव लाकर कहने लगा, 'इससे अच्छा और ऊँचा दूसरा कौन-सा आदर्श हो सकता है!·· हमारे देश के विद्यार्थी-समुदाय से ऊँची और पवित्र वस्तु दूसरी कौन-सी हो सकती!...'यह कहकर यकायक वह बड़े ज़ोर से मेज़ पर एक घूँसा मारकर चिल्लाया...'बॉय! शैम्पेन लाओ!'

लिखोनिन और यारचेन्को उसका कोई अहसान अपने ऊपर नहीं लेना चाहते थे। अस्तु जैसे ही उसकी शराब खत्म हुई, वैसे ही उन्होंने भी शराब मँगाई और इस तरह शराब के दौर पर दौर चलने लगे। फिर न जाने कैसे गवैया मिशका और उसका साथी जिल्दसाज़ भी इन लोगों में आ मिले और आते ही उन्होंने अपने भोंडे राग अलापने शुरू कर दिये।

रोलीपोली भी जग गया था। वह भी कमरे के दरवाज़े पर आकर, सिर एक तरफ़ को ख़ुशामद से झुकाये अपनी छोटी-छोटी आँखें जिनमें आँसू भर आये थे, अपने झुर्रियोंदार चेहरे को सिकोड़ता हुआ गिड़गिड़ाकर कह रहा था, 'भले विद्यार्थियों ···आपको इस फटेहाल बूढ़े को भी थोड़ा-बहुत ज़रूर खिलाना-पिलाना चाहिए। ईश्वर

की क़सम खाता हूँ, मुझे भी शिक्षा से बड़ा प्रेम है।···मुझे भी अन्दर आने की इजाज़त दीजिए।'

लिखोनिन को किसी का अन्दर आना नापसन्द नहीं था, अस्तु वह सभी के आने पर ख़ुश होता था; मगर यारचेन्को के दिमाग़ पर जब तक शैम्पेन ने अच्छी तरह अपना असर नहीं कर लिया, तब तक वह आश्चर्यपूर्ण लज्जा और भोलेपन से नये लोगों के कमरे में आने पर बराबर अपनी छोटी-छोटी भौंहें ऊपर को चढ़ाकर उनकी तरफ़ देखता रहा। एकाएक कमरे में बड़ी भीड़ लगने लगी। कमरे में धुआँ और शोरोगुल इतना अधिक हो रहा था कि वह बहुत छोटा लगने लगा था। सिमियन ने खिड़कियों के परदे भी बाहर से चढ़ा दिये थे। स्त्रियाँ अपने प्रेमियों से या नाच से फ़ारिग़ होकर, बीच-बीच में, कमरे में आ जाती थीं और नौजवानों की गोदों में बैठकर सिगरेट पीती थीं, गाती थीं, शराब पीती थीं, बोसे लेती थीं और फिर नाचने या नये प्रेमियों की माँग पूरी करने चली जाती थीं। दफ़्तर के बाबुओं को यह सब बड़ा बुरा लग रहा था, क्योंकि स्त्रियों की ध्यान बैठकख़ाने से जहाँ वे लोग बैठे थे, हटकर उस कमरे की तरफ़ अधिक हो गया था। अस्तु वे बिगड़े और विद्यार्थियों से झगड़ा करने की तैयारी करने लगे। मगर सिमियन ने जैसे ही गम्भीर होकर दो शब्द उनसे कहे, वैसे ही वे सँभल गये और बिलकुल ख़ामोश हो गये।

नियूरा भी अब कमरे से वापिस आ गई थी। उसके पीछे कुछ देर में पेट्रोवस्की भी आ गया था। उसने लौटकर बड़ी गम्भीरता से कहा, 'मैं तब से बराबर सड़क पर टहलता हुआ आज की घटनाओं पर सोचता रहा। अन्त में मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि सचमुच बोरिस ही ग़लती पर था, मगर वह नशे में था; अस्तु उसकी ग़लती का हम लोगों को ख़्याल नहीं करना चाहिए।' जेनी भी कुछ देर बाद लौट आई। मगर वह अकेली ही लौटी; क्योंकि बोरिस उसके कमरे में पड़कर सो गया था।

ऐक्टर के हुनरों की तो कोई इन्तहा ही नहीं लगती थी। कभी वह एक मक्खी के भिनभिनाने की, जिसे कोई शराबी खिड़की के शीशे पर पकड़ने की कोशिश करता है और कभी लकड़ी पर आरा चलाने की मज़ेदार नक़लें कर रहा था। उसने कमरे के एक कोने में खड़े होकर, मुँह फेरकर टेलीफोन पर एक परेशान स्त्री की बातचीत और उसके बाद ग्रामोफ़ोन पर एक रिकार्ड बजाने की भी अच्छी नकलें कीं। अन्त में उसने एक फारसी छोकरे की और उसके बन्दर की नक़ल की। झूठमूठ को हवा में, हाथ

से किसी की छोटी-सी ठोड़ी पकड़कर उसने अपने दाँत हिलाते हुए बन्दर की तरह खीसें काढ़ीं और फिर ज़मीन पर बन्दर की तरह बैठकर, आँखें चिमका-चिमकाकर और अपना शरीर और सिर खुजला-खुजलाकर उसने नाक के स्वर से बन्दरवालों का एक गीत गाया।

अन्त में उसने नन्हीं मनका को अपने सीने चिपटाकर उसे अपने लम्बे कोट के पल्लों के अन्दर ढाँक और अपने हाथ आगे को फैलाकर और आँखों में आँसू भरकर अपना मुँह एक तरह इस प्रकार लटका लिया जैसे रूस में फिरनेवाले अच्छे डील-डौल के सैकड़ों गन्दे फारसी छोकरे सिपाहियों के पुराने ओवरकोट पहिने हुए, अपना गन्दुमी रङ्ग का सीना खोले हुए और अपनी गोद में एक खाँसता और खुजलाता हुआ बन्दर— जिसके बाल जुओं से भरे होते हैं— लटकाये हुए चारों तरफ घूमते दीखते हैं।

'तुम कौन हो?' मोटी किटी ने जिसको ऐक्टर की यह नकल ख़ास तौर पर पसन्द थी, बहुत गम्भीर बनकर ऐक्टर से पूछा।

'मैं···मैं···मैं फारस देश का एक ग़रीब बन्दरवाला हूँ, श्रीमतीजी,' गिड़-गिड़ाकर नाक के स्वर से ऐक्टर ने उत्तर में कहा, 'मेहरबानी करके मुझे कुछ दीजिए, श्रीमतीजी।'

'तुम्हारे इस बन्दर का क्या नाम है?'

'मट्रेस्क···बड़ा भूखा है, श्रीमती जी···कुछ खाना चाहता है···'

'तुम्हारे पास पासपोर्ट है?'

'मैं फारसी हूँ···फारसी...श्रीमतीजी, मुझे कुछ दीजिए...'

ऐक्टर के आने से सचमुच लुत्फ़ बढ़ गया था। उसने काफ़ी शोरगुल मचाकर तमाम साथियों का उत्साह, जो कि धीरे-धीरे कम हो चला था, फिर से बढ़ा दिया था। ज़रा-ज़रा देर के बाद वह नक़्क़ालों की तरह चिल्लाकर कहता था, 'बाय, शैम्पेन लाओ!' परन्तु सिमियन उसके तरीक़ों से अच्छी तरह परिचित था। अस्तु वह इस प्रकार चिल्लाने की कोई ख़ास परवाह नहीं करता था।

ऐक्टर की नकलों के ख़त्म होते ही रूसी हुड़दङ्ग प्रारम्भ हो गया, जिसमें उठककर शोरोगुल होने लगा। किसी ने उठकर पियानो बजाना शुरू कर दिया; रोलीपोली उसकी तानों पर थिरकने लगा, अपने पतले पतले कन्धे ऊपर को उचकाकर और एक तरफ़ को ऐंठकर वह अपने दोनों तरफ़ लटकते हुए हाथों की उङ्गलियाँ फैलाकर एक ही जगह पर, खड़ा-खड़ा कभी इस टाँग पर और कभी उस टाँग पर विचित्र ढङ्ग से कूद-

कूदकर नाचने लगा। बीच-बीच में वह यकायक चिल्लाकर ज़ोर से उछलता था और आगे की तरफ़ कूदकर, नाचता हुआ कुछ गाने लगता था और फिर अपने-आप ही अपना सिर हिलाता हुआ कहता था, 'वाह! वाह! वाह! ऐसे अच्छे नाच के लिए तो कम से कम एक अद्धा ब्राण्डी का इनाम ज़रूर मिलना चाहिए।'

मिशका और उसका साथी दोनों ही जिनकी आँखें इतनी भारी हो गई थीं कि उनके पलक भी अब बड़ी मुश्किल से खुलते थे, अभी तक अपने रागों की धुन में ही मस्त थे।

ऐक्टर महोदय ने गन्दे क़िस्से और चुटकुले सुनाना शुरू कर दिया था। जादूगर की तरह वह उन्हें निकाल-निकालकर अपने पिटारे में से फेंक रहा था। स्त्रियाँ उन्हें सुनकर हँसी से लोट पोट हुई जा रही थीं और हँसते-हँसते थककर कुर्सियों की पीठ पर सहारा लेकर सुसताने लगती थीं। वेल्टमैन, जो बड़ी देर से धीरे-धीरे पाशा से कुछ फुसफुस कर रहा था, इस शोरोगुल में चुपचाप उठा और कमरे से बाहर निकल गया, उसके कुछ मिनट बाद ही पाशा भी उठी और अपनी वही पागलों की-सी मुस्कान मुस्कराती हुई उसके पीछे पीछे चली गई।

दूसरे सब विद्यार्थी भी एक-एक करके, केवल एक बिलोचिस्तानी को छोड़कर, बाहर जाकर शान्ति से बैठने और कोई किसी दूसरे बहाने से उठकर, कमरे से चले गये और काफ़ी देर तक वापिस नहीं लौटे। वोलोद्या पावलोव ने बैठक में होनेवाला नाच कुछ देर तक देखने की इच्छा सप्रकट की। टोल्पीजिन के सिर में ऐसा दर्द उठा कि बेचारे ने टमारा से कहीं ऐसी जगह ले चलने को कहा, जहाँ वह अपना सिर धो सके। पेट्रोवस्को लिखोनिन से चुपचाप तीन रुपये उधार लेकर बाहर चला गया और मकान के रास्ते में खड़े होकर उसने खालाजान से नन्हीं मनका को अपने पास भेज देने की प्रार्थना की। रामसेस की तकल्लुफ़ी तबियत भी आज जेनी के विचित्र, स्पष्ट और उत्तेजक सौन्दर्य को देखकर पिघल उठी थी, अस्तु उसे याद आ गया कि दूसरे दिन सबेरे ही उसे एक बड़ा ज़रूरी काम करना है, जिसके लिए उसे घर जाकर जल्द सो जाना ज़रूरी है। मगर अपने तमाम साथियों को बन्दगी करके जब वह कमरे में जाने लगा तो उसने उनकी नज़रें बचाते हुए जल्दी से जेनी को द्वार के बाहर आने का आँख से इशारा किया! जेनी ने अपनी आँखें नीचे करते हुए उसका बुलावा स्वीकार कर लिया। मगर फिर जेनी ने जब अपनी आँखें ऊपर को उठाईं तो उनमें प्लेटोनोव

को जिसने वह मूक वार्तालाप चुपचाप देखा, जिससे उसका माथा ठनका, घृणा और प्रतिकार की एक झलक दिखाई पड़ी। पाँच मिनट के बाद जेनी उठती हुई बोली, 'कुछ देर के लिए मुझे माफ़ कीजिए। मैं अभी लौटकर आती हूँ।' यह कहकर वह अपनी नारङ्गी रङ्ग का लँहगा झुलाती हुई चली गई।

'अच्छा, तो बस आपकी बारी भी होगी ?' प्लेटोनोव ने लिखोनिन की तरफ़ देखते हुए पूछा।

'नहीं भाई, आपका ख़्याल ग़लत है!' लिखोनिन ने अपनी ज़बान चटखाते हुए कहा, 'मैं किसी उसूल की वजह से ऐसा करने से बाज़ नहीं आ रहा हूँ, नहीं, ऐसा बिल्कुल नहीं है! मैं अराजकतावादी हूँ और मानता हूँ कि ख़राब से ख़राब मानी जानेवाली चीज़ें भी अच्छी हो सकती हैं···मगर सौभाग्य से मैं जुआरी हूँ। अस्तु जुए में ही मेरा सारा मन लगा रहता है। विषय-भोग की तरफ़ मेरा मन नहीं जाता है। परन्तु कैसे आश्चर्य की बात है कि मेरे मन में भी अभी-अभी आपसे यही प्रश्न जो आपने पूछा, पूछने की इच्छा हो रही थी।'

'मुझे ? जी नहीं, मुझे यह शौक नहीं है। किसी रोज़ बहुत थक जाता हूँ तो मैं यहीं रात को सो जाता हूँ। इसाय से उसकी कोठरी की चाबी ले लेता हूँ और उसमें घुसकर उसकी खाट पर पड़कर सो जाता हूँ। यहाँ की सारी छोकरियाँ मुझे आदमी और औरतों के बीच की जात का जीव समझती हैं।'

'सच ? . आज तक कभी भी ···?'

'जी नहीं, आज तक कभी भी नहीं।'

'हाँ, हाँ, बिल्कुल सच कहते हैं यह।' नियूरा ने कहा, 'सरजी, इस मामले में बिल्कुल एक संन्यासी की तरह विरक्त रहते हैं।'

'पहिले, क़रीब पाँच-छः साल के पहिले, मैंने भी इसका थोड़ा-सा अनुभव किया था,' प्लेटोनोव कहता रहा, 'मगर मुझे यह काम बड़ा रसहीन और घृणित लगा। कुछ-कुछ उन मक्खियों का-सा काम जिनकी नकल अभी इस ऐक्टर ने की थी। जिस तरह मक्खियाँ खिड़की के शीशे पर एक दूसरे से चिपटती हैं और फिर अपनी पीठें पिछले पैरों से खुरेचती हुई अलग होकर उड़ जाती हैं, उसी तरह का मुझे यह नृत्य लगता है! यहाँ की प्रेम-क्रीड़ाओं में मैं अपने लिए स्थान नहीं पाता। मेरी शक्ल भी अच्छी नहीं है। स्त्रियों के पास जाते हुए मैं झिझकता और घबराता भी हूँ। उनसे नम्रता

का व्यवहार करने का मैं आदी हूँ। यहाँ ऐसे आदमियों की माँग होती है जो खुलकर प्यार करते हैं ; ईर्ष्या करते हैं, आँखों में आँसू भरकर ज़हर खाने की धमकियाँ देते हैं ; मारते हैं ; जानोमाल का कुर्बान करते हैं···यानी जो पूरी तरह पर लैला-मजनू का-सा नाटक कर सकते हैं। इसका कारण भी समझना मुश्किल नहीं है। स्त्रियों का हृदय प्रेम का भूखा होता है। उनसे रो़ज तरह-तरह के शब्दों में मनुष्य प्रेम की बातें करते हैं, परन्तु प्रेम में थोड़े बहुत नमक-मिर्च की भी जरूरत रहती ही है। केवल प्रम के शब्दों से ही काम नहीं चलता, ऐसे कामों की ज़रूरत होती है, जिनसे स्त्रियों का प्रेम उत्तेजित हो। अस्तु चोर, क़ातिल, डाकू और आवारों को स्त्रिजाँ अधिक पसन्द करती हैं और सबसे बड़ी बात यह भी है कि मैं भी इस काम में पड़ जाऊँ तो मैंने यहाँ सबसे जो एक अच्छा स्नेह का नाता जोड़ लिया है, वह ख़त्म हो जायगा।'

'बहुत मज़ाक हो चुका!' लिखोनिन ने अविश्वास से कहा, 'ऐसी ही बात है तो आप फिर यहाँ दिन-रात पड़े क्यों रहते हैं? अगर आप इस विषय पर कुछ लिख रहे होते तो भी मैं समझ सकता था कि आप लिखने के लिए यहाँ से मसाला ले रहे हैं, जैसे कि उस प्रोफेसर ने तीन बरस बन्दरों में रहकर उनकी ज़बान और··· मगर आप कहते हैं कि इन विषय पर आप कुछ लिख भी नहीं रहे हैं?'

'नहीं, यह बात नहीं है कि मैं इस विषय पर लिखना नही चाहता। मगर समझ में नहीं आता कि क्या लिखूँ और कैसे लिखूँ। मुझे तो इस विषय पर लिखना असम्भव-सा लगता है।'

'ऐसा नहीं है तो फिर दूसरी बात यह हो सकती है कि यहाँ पर आप इन गिरी हुई आत्माओं का उद्धार करने, उन्हें इस कुमार्ग से हटाकर अच्छे जीवन की तरफ़ ले जाने के लिए आते हैं जिस तरह कि पुराने ज़माने में कुछ पादरी तीस बरस तक खोहों में तपस्या करने के बजाय बाजारों और चकलों में पतित आत्माओं को बचाने के लिए घूमा करते थे। मगर ऐसा भी आपका रुझान मुझे नहीं दीखता!'

'जी नहीं।'

'तब फिर आप इस स्थान के इतने चक्कर क्यों लगाते हैं? स्पष्ट है कि आपको यहाँ की बहुत-सी बातें खटकती भी हैं ; मसलन आज की बोरिस से आपकी तू-तू मैं-मैं, और सिमियन का उस रोज़ एक स्त्री को पीटना, यहाँ की हर तरह की साधारण गन्दगी, पशुता, व्यभिचार, शराबख़ोरी इत्यादि सभी चीज़ें आपको बिलकुल नापसन्द

हैं'। ख़ैर आप कहते हैं तो मैं माने लेता हूँ कि आप यहाँ के विषय-भोग की गन्दगी में नहीं पड़ते हैं, परन्तु ऐसी हालत में आपका यहाँ आना-जाना मेरी समझ में बिलकुल नहीं आता।'

प्लेटोनोव कुछ देर चुप रहा।

'देखिए', फिर उसने धीरे-धीरे, झिझकते हुए, मानो वह अपने विचारों को स्वयं सुनने का प्रयत्न कर रहा हो, कहना शुरू किया, 'यहाँ का जीवन मुझे...कैसे समझाऊँ...उपयुक्त शब्द नहीं मिलता। मुझे एक तरह से आप कह सकते हैं, बड़ा आकर्षक लगता है...क्योंकि यहाँ जीवन के भयंकर और नग्न चित्र मुझे देखने को मिलते हैं। यहाँ जीवन पर किसी क़िस्म का परदा नहीं रहता। लोगों, मा-बाप, या अपनी आत्मा से डरने की यहाँ किसी को ज़रूरत नहीं रहती। न तो यहाँ कोई धोखा ही है और न कोई भय ही है। जो कुछ यहाँ है सब साफ़ है और ऊपर मौजूद है! यहाँ औरतें हैं जो सबके लिए एक-सी हाज़िर रहती हैं, जिस प्रकार कि शहर की गन्दगी बहा ले जाने के लिए गन्दी नालियाँ हाज़िर रहती हैं। अपनी अति विषय-वासना की तृप्ति के लिए, जो जब चाहे, उनका बिना किसी हीले या हुज्जत के इस्तेमाल कर सकता है। वे हैं ही इसी लिए। केवल एक शर्त रहती है कि क्षण भर के लिए भी जो यहाँ अपनी विषय-वासना तृप्ति करने आयगा उसे अपनी गाँठ का रुपया देना होगा और एवज़ में आत्मग्लानि, बीमारी और बेहयाई मोल लेनी होगी। बस, इस एक शर्त के सिवाय और यहाँ कोई शर्त नहीं रहती है। मनुष्य जीवन में, दुनिया में और कहीं भी सत्य का ऐसा नग्न और भयङ्कर चित्र जो किसी फरेब और झूठ से ढका न हो, देखने को नहीं मिलता।'

'ख़ैर, यह तो मैं नहीं जानता! यहाँ की स्त्रियाँ इतना झूठ बोलती हैं कि ईश्वर ही जानता है। उनमें से किसी से भी जाकर ज़रा पूछो कि उसने पहिले-पहिल यह कुकर्म कैसे शुरू किया था। फिर देखो, कैसी कहानी सुनाती हैं! कैसी हाँकती हैं!'

'ऐसा प्रश्न आपको उनसे पूछने की ज़रूरत ही क्या है? मत पूछिए। मगर वे आपसे झूठ भी बोलती हैं तो बच्चों की तरह। इनका झूठ बिल्कुल बच्चों का-सा होता है। आप जानते ही होंगे कि बच्चे भी बड़ी दून की हाँका करते हैं। मगर उनकी गप्पें बड़ी प्यारी होती हैं। बच्चों से अधिक सच्चा और ईमानदार इस दुनिया में दूसरा कोई नहीं होता, परन्तु कैसे आश्चर्य की बात है कि वेश्याएँ और बच्चे दोनों ही

हमसे हम काफ़ी उम्रवाले मर्दों से—झूठ बोला करते हैं। आपस में वे झूठ नहीं बोलते, किसी के कहने से भले ही कभी कुछ झूठ कह दें। मगर हमसे वे झूठ बोलते हैं। हम उन्हें झूठ बोलने के लिए मजबूर करते हैं। हम उनकी आत्मा को अच्छी तरह नहीं पहिचानते और उसमें अपने भोंडे तरीकों से घुसने का प्रयत्न करते हैं। उनसे हम तरह-तरह के बेवकूफ़ी के प्रश्न पूछते हैं। जिससे वे हमको अपने मन में मूर्ख और झूठा समझने लगते हैं। अगर आप चाहें तो मैं आपको अभी वह तमाम मौक़े अपनी उङ्गलियों पर गिनकर बता सकता हूँ जिन पर वेश्याएँ अवश्य झूठ बोलती हैं। उन्हें जानकर आप ख़ुद मान जायँगे कि मर्द ही उन्हें ऐसे मौक़े पर झूठ बोलने के लिए मज़बूर करते हैं।'

'अच्छा, अच्छा, बताइए।'

'देखिए, एक तो वेश्याएँ अपने चेहरे पर पाउडर इत्यादि पोतकर अपने चेहरे की सचाई को छिपाने का प्रयत्न करती हैं। वे ऐसा क्यों करती हैं? इसलिए कि हर फ़ौजी आदमी, जो अपना मुहासों से लदा चेहरा लिये बसन्त में अपनी विषयवासना से मुर्गे की तरह परेशान, अथवा इसी तरह का कोई और सरकारी नौकर या मठ का महन्त, अथवा कोई नौ बच्चों का बाप, या किसी ज़च्चा स्त्री का पति, जो भी यहाँ आता है, केवल अपनी विषय-वासना की तृप्ति के लिए ही तो आता है? यह निकम्मे लोग यहाँ मज़ा लूटने के इरादे से आते हैं। अस्तु; वे ख़ूबसूरती भी चाहते हैं और यहाँ की सभी छोकरियों को, हमारी महान् और सीधी-सादी रूसी जाति की इन बेचारी पुत्रियों को केवल इतना ही ज्ञान होता है कि, मीठा चखने में अच्छा होता है और लाल देखने में सुन्दर होता है। अस्तु वे पन्नी लगा-लगाकर और सफ़ेद और लाल रंग लगा-लगाकर अपने चेहरे सुन्दर बनाने का प्रयत्न करती हैं। क्यों है न ठीक?'

'दूसरे, सुन्दरता ही सिर्फ़ इन प्रेम के दीवानों के लिए काफ़ी नहीं होती। उनकी यह भी इच्छा रहती है कि उनके आलिङ्गन और प्रेम से यहाँ की स्त्रियाँ उसी प्रकार फड़क उठें जैसे कि प्रेम की कविताओं में उनके फड़कने के वर्णन होते हैं। यहाँ पर आनेवाले मर्दों की माँगें होती हैं। अस्तु; यहाँ पर स्त्रियाँ उनसे चिपट-चिपटकर आहें भरती हैं, और शरीर मरोड़कर कराहती और सी-सी सू-सू करती हैं। मर्द यह भी अच्छी तरह जानते हैं कि यह सारी आहें और कराहना दिखावटी और पेशे का सिर्फ़

एक हुनर होता है, परन्तु फिर भी वे अपने आपको धोका देना पसन्द करते हैं और समझते हैं, 'ओहो! हम कैसे ख़ूबसूरत हैं। हम कैसे जवान हैं! कैसी स्त्रियाँ हमसे ख़ुश होती हैं!' अक्सर ऐसा देखने में आता है कि ख़ुशामद बिल्कुल स्पष्ट होने पर भी लोग अपनी ख़ुशामद से बड़े खुश होते हैं। उनकी आत्मा की मशीन के पुर्ज़े मानों खुशामद का तेल पड़ते ही आसानी से चलने लगते हैं। ऐसी हालत में आप ही बताइए कौन इन स्त्रियों को झूठा, असत्य और कृत्रिम व्यवहार करने के लिए मज़बूर करता है?'

'तीसरे, जैसा आपने अभी बताया, जब कभी उनसे यह प्रश्न पूछा जाता है कि वे इस जीवन में कैसे आईं, तब वे अवश्य ही झूठ बोलती हैं। हमें उनसे ऐसे प्रश्न पूछने का अधिकार ही क्या है? वे तो हमारे निजी जीवन में कभी अपनी नाक घुसेड़ने का प्रयत्न नहीं करतीं! वे कभी हमसे हमारे प्रथम प्रेम अथवा हमारी पत्नी या बहिन के सतीत्व की कहानियाँ पूछने का प्रयत्न नहीं करतीं! आप कहेंगे कि आप उनके लिए रुपया खर्चते हैं! परन्तु रुपये के एवज़ में दलाल, पुलिस, दवा, डाक्टर और शहर की चुङ्गी आपके हितों की पूरी तौर पर रक्षा भी तो करते हैं। वेश्याओं को भी, जिन्हें आप किराये पर लेते हैं, आपके साथ नम्र और अच्छा व्यवहार करना होता है। वे आपके मुँह पर आपके अनुचित और भद्दे प्रश्नों के उत्तर में कोई भी थप्पड़ नहीं मार सकतीं, यद्यपि अधिकारी हो जाती हैं; फिर भी आप सन्तुष्ट नहीं होते। आप चाहते हैं आप जो रुपया ख़र्च करते हैं, उसके एवज़ में आपको सत्य भी मिले। अस्तु; आपको एक ऐसी बेहूदा कहानी सुना दी जाती है जिसके सुनने के आपके दकियानूसी कान आदी होते हैं। किसी फ़ौजी आदमी या सरकारी नौकर से फँसकर हमल रह जाने, और उसके कारण माता-पिता के घर से छोड़कर भाग जाने और घर पर बूढ़े मा-बाप के दुखी होने और बार-बार भटकी हुई पुत्री को फिर वापस आने के लिए आग्रह करने की कहानी आपको सुना दी जाती है। परन्तु जो कुछ भी मैं कह रहा हूँ वह लिखोनिन, आप पर बिलकुल लागू नहीं होता। मैं सच कहता हूँ आपकी आत्मा को मैं बड़ी ऊँची पा रहा हूँ, लीजिए थोड़ी शराब और पीजिए!'

दोनों ने और शराब पी।

'आप मेरी बातों से थक गये होंगे?' प्लेटोनोव ने अनिश्चित भाव से पूछा, 'क्यों?'

'जी नहीं, बिल्कुल नहीं। कृपया कहे जाइए। मुझे आपकी बातों में बड़ा मज़ा आ रहा है।'

'वेश्याएँ उन लोगों से भी ख़ूब झूठ बोला करती हैं जो उनसे आकर अपनी राजनीति की चर्चा किया करते हैं। वे उनकी हर बात में ख़ूब हाँ में हाँ मिलाती हैं। मैं किसी वेश्या से जाकर अभी कहूँ कि सरमायेदारों, ज़मींदारों और नौकरशाही को नष्ट कर डालना चाहिए, बम फेंककर उन्हें फ़ौरन उड़ा देना चाहिए, तो वह बड़े उत्साह से मेरा फ़ौरन समर्थन करेगी। मगर कल ही फिर जब सरकारी ख़ैरख़्वाह जाकर उससे कहेगा कि सारे समाजवादियों और विद्यार्थियों को मारकर भुरकुस कर डालना चाहिए, फाँसी पर चढ़ा देना चाहिए तो वह फिर उसकी भी उसी तरह फ़ौरन ही हाँ में हाँ मिलाने लगेगी। और अगर कहीं आप किसी वेश्या को अपने प्रेम में फँसा लें, किसी तरह आप उसके मन पर चढ़ जायँ तब तो फिर क्या कहने हैं! फिर तो वह आपके साथ कहीं भी जाने को तैयार हो जायगी। आपके साथ क़त्लेआम में भाग लेने के लिए, डकैती डालने के लिए अथवा किसी का ख़ून करने के लिए भी वह जाने को तैयार हो जायगी। बच्चे भी इसी तरह हमारी हर बात में हाँ में हाँ मिलाते और हमारे साथ हर जगह जाने के लिए तैयार हो जाते हैं। ईश्वर की क़सम लिखोनिन, इन वेश्याओं में बिल्कुल बच्चों की तरह बुद्धि होती है...'

'चौदह वर्ष की छोटी उम्र में जिन छोकरियों से वेश्यावृत्ति का कुकर्म शुरू कराया गया हो, जो सोलह वर्ष की उम्र में पूरी तरह वेश्या बनकर बुरी बीमारियों का शिकार भी हों, जो हमारी दुनिया से अलग एक विचित्र तङ्ग दुनिया में बन्द रखी जाती हों, उनकी देहों का विकास कैसे हो सकता है? उनकी रोज़मर्रह की बातें आप ध्यान से सुनें तो आपको पता लगेगा कि उनकी तमाम भाषा में सिर्फ़ तीस-चालीस शब्द ही होते हैं, जिस प्रकार कि बच्चों या हबशियों की भाषा में गिने-चुने शब्द होते हैं। खाना-पीना, सोना, आदमी, पलँग, श्रीमती, रुपया, प्यारे, डाक्टर, अस्पताल, कपड़े, पुलिस इत्यादि जैसे थोड़े से शब्द ही वे जानती हैं। अस्तु; उनका मानसिक विकास, उनका अनुभव और उनका शोक मरते दम तक बच्चों का-सा हो रहता है। यही हाल उन दूसरी स्त्रियों का भी होता है, जिनका अपने घर की ड्योढ़ी के बाहर की दुनिया से अधिक सम्बन्ध नहीं रहता। सूक्ष्म में यह वेश्याएँ उन पौदों की भाँति होती हैं, जिनको काफ़ी ऊँचे जाने की शक्ति होती है, परन्तु जिनकी बाढ़ शीशे और

गमलों में रखकर मार दी जाती है। वेश्याओं में उनके इस अविकसित बचपन के कारण ही इस क़दर झूठा व्यवहार करने और झूठ बोलने की आदत होती है। उनका झूठ बिल्कुल भोला, बेमतलब का और स्वाभाविक होता है। परन्तु एक शाम की क़ीमत तय करने में, एक-एक रात में दस-दस आदमियों के साथ हम-बिस्तर होने में, शहर की म्यूनिसिपेलिटी द्वारा वेश्याओं के लिए बनाये हुए क़ायदों में जिनके अनुसार उन्हें कुछ ख़ास दवाइयों का प्रयोग करके अपना शरीर स्वच्छ रखना चाहिए, साप्ताहिक डाक्टरी मुआयनों में उन तमाम भयङ्कर बीमारियों की जिनकी यहाँ सिर्फ उतनी ही फ़िक्र की जाती है जितनी कि हम लोग जुकाम की करते हैं और यहाँ की औरतों की मर्दों के लिए हार्दिक घृणा में, जिसको छिपाने का वे प्रयत्न तक नहीं करतीं, कितना भयङ्कर, नंगा और सीधा सत्य भरा है। यहाँ के बेढब जीवन के क्षुद्र अन्यायों और अविश्वासों को मैं अपनी आँखों से रोज़ देखता हूँ और समझता हूँ; फिर भी मैं यहाँ के जीवन में वह झूठ और फरेब दूसरों के प्रति फरेब और अपने प्रति फरेब—नहीं पाता जो दुनिया में मनुष्य-जीवन में ऊपर से नीचे तक हमें पग-पग पर मिलता है। क्यों लिखोनिन, क्या यह सच नहीं कि दुनिया के निन्यानबे फ़ीसदी दम्पतियों के विषय भोग में भी खींचातानी रहती है, धोखा रहता है और घृणा रहती है? कितनी अन्धी, और बेरहम पर समझी-बुझी और जोड़-तोड़ की क्रूरता उस पवित्र मातृ-स्नेह तक में भी मिली रहती है, जिसका हम लोग इतना गुण गाते हैं। फिर इन बेवक़ूफ़ों के व्यवसायों का तो कहना ही क्या है, जिन्हें शिष्ट आदमियों ने अपने घोंसलों, अपने मांस के टुकड़ों—अपनी पत्नियों, अपने बच्चों, अपने सरकारी नौकरों—इन्सपेक्टरों, जजों, सरकारी वकीलों, जेलरों, जनरलों, सिपाहियों और हज़ारों ऐसे दूसरों को सुरक्षित बनाये रखने के लिए रचा है। यह पेशे मनुष्य की लोलुपता, क़ायरता, नीचता, गुलामी, क़ानूनन जायज़ की हुई विषयवासना, आलस्य और कमीनेपन के द्योतक और पोषक हैं। कमीनापन नहीं तो और यह क्या है! मगर फिर भी हम इस पेशे को क़ायम रखने के लिए कैसे बड़े से बड़े शब्दों का प्रयोग करते हैं! देश की रक्षा के लिए! समाज को कायम रखने के लिए! धर्म को बचाने के लिए! बाप रे बाप! मुझे तो इन शब्दों को सुनकर अब डर लगता है। मेरा विश्वास ऐसे अच्छे-अच्छे पवित्र शब्दों पर अब नहीं रहा है। इन तुच्छ झूठ बोलनेवाली, कायर, खाऊ और अधम स्त्रियों से भी मेरा मन ऊब गया है। मनुष्य-जीवन

आनन्द-प्राप्ति के लिए होता है, अनन्त सृष्टि क्रिया के लिए, जिसको करता हुआ मनुष्य ईश्वर-पद तक प्राप्त हो जाता है। मनुष्य-जीवन प्रेम के लिए होता है···अनन्त प्रेम के लिए जिसमें पेड़, आकाश, मनुष्य, कुत्ता, हिरन इत्यादि सबको प्रेम कर सकते हैं। उस अन्नपूर्णा और सौन्दर्यमयी पृथ्वी का भी इस अनन्त प्रेम में समावेश होता है, जिस पर होनेवाले नित्यप्रति के कौतुक, जैसे उषा और रात्रि, हमें आश्चर्यचकित करते हैं। ऐसा जीवन पाकर भी मनुष्य झूठ और फ़रेब का जाल बनाकर उसमें स्वय बुरी तरह फँस गया है। अपने ही कर्मों से ऐसा नीच हो रहा है। लिखोनिन···मैं तो इस जीवन से सचमुच बिलकुल थक गया हूँ।'

'मैं भी अराजकता के सिद्धान्तों का पुजारी हूँ, जिससे कुछ-कुछ तुम्हारी बातें मेरी समझ में आती हैं।' लिखोनिन ने विचार-पूर्वक कहा। मगर वह इस तरह से बोला मानो उसने प्लेटोनोव की बातें सुनकर भी अच्छी तरह से नही सुनी थीं। उसके मन में कोई नवीन विचार उत्पन्न हो रहा था। 'लेकिन एक बात मेरी समझ में नहीं आती। अगर मनुष्य-जीवन सचमुच ही तुम्हें इतना गन्दा लगता है तो तुम इसको सहते कैसे हो···इतने दिनों तक इस सबको...' लिखोनिन ने मेज़ के चारों ओर अपना हाथ घुमाते हुए कहा, 'इस अधम से अधम और निकृष्ट मानव-रचना को तुम कैसे सहन करते रहे हो?'

'यह मैं स्वयम् नहीं जानता', प्लेटोनोव ने भोलेपन से कहा - 'देखिए, मैं एक बड़ा आवारागर्द आदमी हूँ। मुझे जीवन से बहुत प्रेम है। मैंने कारखानों में काम किया है, छापेखाने में कम्पोज़िटर का काम कर चुका हूँ, मैंने किसान बनकर तम्बाकू भी बोयी और बेची है, जहाजों पर कोयला झोंका है, मच्छी मारने का काम भी किया है, तरबूज़ और ईंटें ढोने का काम किया है, सरकसों और थिएटरों में ऐक्टर का काम भी किया है—इतने अधिक और तरह-तरह के काम मैंने किये हैं कि उन सबकी याद करना भी मेरे लिए अब मुश्किल है और यह तरह-तरह के काम मैंने इसलिए नहीं किये कि मुझे रुपयों की ज़रूरत थी या तङ्ग-दस्ती थी। नहीं, मुझे तरह-तरह का जीवन देखने की एक उमंग-सी रहती है। मैं आपसे सच कहता हूँ, मेरा मन कुछ दिन घोड़ा बनने को, कुछ दिन पेड़ बनने को, कुछ दिन मछली बनने को और कभी-कभी औरत बनकर ज़च्चा-जीवन का अनुभव लेने को भी चाहता है। आन्तरिक जीवन का भी मैं अनुभव लेना चाहता हूँ। दुनिया को हर मनुष्य की दृष्टि

से देखने की मेरी इच्छा है। अस्तु, मैं स्वतन्त्र होकर चारों ओर विचरता फिरता हूँ। जिस शहर या क़स्बे में जी चाहता है, चला जाता हूँ। तरह-तरह के काम करने लगता हूँ। जिधर मेरा भाग्य मुझे ले जाता है, उधर ही ख़ुशी से बहता हुआ चला जाता हूँ। ऐसी ही मटरगस्ती करते-करते मैं इस चकले में आ निकला था, परन्तु यहाँ का जीवन जब मैंने ध्यान से देखा तो मैं दग रह गया। उसके बाद जितना ही अधिक मैंने इस जीवन को देखा है, उतना ही अधिक मेरे मन में भय, चिन्ता और क्रोध बढ़ा है। परन्तु इस सबका भी अब शीघ्र ही अन्त होनेवाला है। पतझड़ आते ही मैं यहाँ से चला जाऊँगा और जाकर एक ढलाई के कारख़ाने में कुछ दिनों काम करूँगा। मेरे एक दोस्त ने उसका मेरे लिए इन्तज़ाम कर लिया है···देखो, देखो, लिखोनिन ऐक्टर क्या कह रहा है···तीसरे ऐक्ट का पार्ट खेल रहा है।'

ऐग्मोन्ट लवरेत्स्की, जो अभी तक बड़ी अच्छी तरह ठीक-ठीक नक़लें कर रहा था—कभी एक सूअर के बच्चे को बोरे में बन्द करने की और कभी कुत्ते और बिल्ली की लड़ाई की नक़ल—अब धीरे-धीरे मुझ पर झुकने लगा था। उसको 'आत्मप्रकटीकरण' का दौरा शुरू हो गया था, जिसके दर्द से परेशान होकर उसने कई बार यारचेन्को का हाथ पकड़कर चूमने का प्रयत्न भी किया था। उसके पलक लाल हो गये थे; उसके मुड़े हुए, खुरखुरे होंठों के आसपास गालों पर ऐसी झुर्रियाँ पड़ने लगीं जिससे ऐसा लगता था कि वह रो रहा हो और उसकी आवाज़ भी रुँध चली थी।

'हाय मैं नाटक में नाचता हूँ!' वह अपनी छाती दोनों हाथों से पीटता हुआ कह रहा था, 'लाल-पीले कपड़े पहिनकर रङ्गमच पर मुँह बनाकर, भीड़ को ख़ुश करने के लिए नाचता हूँ! अब इस तरह मेरी मिट्टी पलीत है! किसी·· समय···'उसने रुँआसा चेहरा बनाकर कहना शुरू किया '···मैं जिस थिएटर में शामिल हो जाता था उसका भाग्य उदय हो जाता था···लोग मेरे अभिनय को देखने के लिए उमड़-उमड़कर आते थे...जिस शहर में मैं पहुँच जाता था, शोर मच जाता था। जहाँ-जहाँ मैंने अभिनय किया वहाँ के लोग मुझे अभी तक याद करते हैं और कहते हैं, 'ओहो कैसा बहादुर का पार्ट खेला था!' परन्तु हाय, अब मेरी यह क़द्र रह गई है···'

यह कहकर वह फिर झुका और यारचेन्को का हाथ चूमने का प्रयत्न करता हुआ बोला, 'हाँ, अब मैं कुछ नहीं हूँ! मुझे हिकारत से देखिए, मुझे बुरा कहिए, श्रीमान, मैं निरा मूर्ख हूँ, विदूषक हूँ। मैं शराबी हूँ·· धर्म-कर्म से भ्रष्ट हो गया हूँ! अकर

चकले में बैठता हूँ! परन्तु मेरी स्त्री...मेरी सती और साध्वी स्त्री...वह सचमुच ही देवी है! हाय, कहीं उसको यह पता लग जाय कि मैं यहाँ आता हूँ तो उस बेचारी का क्या हाल होगा! वह बड़ी मेहनती है। एक छोटी-सी दरजिन की दूकान रखकर बैठी है...उसकी पतली-पतली उङ्गलियाँ सुई से छन गई हैं! कैसी साधु स्त्री है! और मैं महा नीच और बदमाश! मैं उसको छोड़कर इस कटरे में आता हूँ! हाय रे! मैं कैसा अधम हूँ!' इतना कहकर उसने अपने सिर के बाल पकड़कर ज़ोर से खींचे और फिर यारचेन्को का हाथ पकड़कर बोला, 'श्रीमान, इस नीच को अपने पवित्र हाथ चूमने दीजिए, क्योंकि आप ही मेरी दशा को समझते हैं। चलिए, मैं आपका भी आज अपनी साधु स्त्री से परिचय कराऊँगा! वह मेरा इन्तज़ार कर रही होगी ...वह बेचारी रोज़ मेरा इन्तज़ार करती है, रात-रात नहीं सोती। मेरे बच्चों के नन्हें-नन्हें हाथ जोड़कर वह उनके साथ मिलकर रोज़ भगवान से प्रार्थना करती है, 'हे भगवान्, हमारे पिता की रक्षा करना!'

'तुम झूठ बोलते हो!' शराब के नशे से झूलती हुई नन्हीं मनका ने यकायक उसकी तरफ़ घृणासे देखते हुए कहा, 'वह प्रार्थना-वार्थना कुछ नहीं कर रही होगी... मज़े से किसी आदमी को लिये पलंग पर पड़ी सो रही होगी।'

'चुप छिनाल!' ऐक्टर क्रोध से चिल्लाया और एक खाली बोतल अपने सिर के ऊपर उठाकर कहने लगा, 'कोई मुझे पकड़ लो नहीं तो इस कुतिया का सिर मैं अभी भुरकुस कर डालूँगा। अपनी गन्दी ज़बान से तू मेरी सती...'

'मेरी ज़बान गन्दी नहीं है। मैं रोज़ प्रार्थना करती हूँ,' स्त्री ने बड़ी गुस्ताखी से उत्तर दिया, 'मगर तुम निरे काठ के उल्लू हो...उल्लुओं के सिर में सींग थोड़े ही होते हैं! तुम तो रोज़ आकर वेश्याओं के साथ मज़ा करते हो और स्त्री से आशा रखते हो कि वह पतिव्रता और साध्वी रहे! कम्बख़्त कहीं का! और बच्चों को भी बीच में घुसेड़ता है! अभागा बाप! मुझ पर आँखें निकालकर यों दाँत मत पीस। मैं तुझसे डरनेवाली नहीं हूँ! जा अपनी छिनालों के पास।'

यारचेन्को ने बड़ी मुश्किल से, बहुत समझा-बुझाकर, ऐक्टर और नन्हीं मनका को शान्त किया। वे दोनों ही शराब का नशा हो जाने पर एक दूसरे से हमेशा झगड़ उठते थे। ऐक्टर आख़िर में बूढ़ों की तरह नाक साफ़ करता हुआ फूट-फूटकर रोने लगा। उसके शरीर से तमाम ताक़त निकल चुकी थी, अस्तु हेनरीटा उसको उठाकर अपने कमरे में ले गई।

सभी को थकान हो रही थी। विद्यार्थी एक-एक करके अपने कमरा से लौट आये थे ; और उनके पृथक्, लापरवाही से चलती हुई, उनकी क्षणिक प्रेमिकाएँ भी लौट आई थीं। सचमुच यह लोग उन मक्खे और मक्खियों की तरह दीख रहे थे जो खिड़कियों के शीशों पर मानो अभी एक दूसरे से अलग हो-होकर आये हों। सब-के-सब जँभाइयाँ लेते हुए अँगड़ा रहे थे। रात-भर जगने के कारण उनके पीले चेहरों से थकान और उदासी टपक रही थी। जब वे एक दूसरे को सलाम करके एक दूसरे से जुदा हो-होकर जाने लगे तो उन सबकी आँखों में एक दूसरे के प्रति ऐसी घृणा थी जैसी कि किसी गन्दे काम में एक साथ भाग लेनेवालों की आँखों में हुआ करती है।

'यहाँ से अब आप कहाँ जायेंगे ?' लिखोनिन ने प्लेटोनोव से धीरे से पूछा।

'मुझे खुद पता नहीं है। मैं जाकर इसाय की कोठरी में सोना चाहता था। मगर इतनी सुहावनी ऊषा को नींद में बिता देने को जी नहीं होता। मैं जाकर स्नान करूँगा और फिर जहाज पर चढ़कर नदी के उस पार चला जाऊँगा। वहाँ एक विहार में एक साधु से मुझे मिलना है। उससे मुझे कुछ बातें करनी हैं। मगर आपने यह प्रश्न मुझसे पूछा ? कृपया आप कुछ देर और यहीं ठहरिए। मुझे अभी आपसे एक बड़ी बात कहनी है।'

'अच्छा।'

आखीर में यारचेन्को गया। उसने कहा, 'मैं बहुत थक गया हूँ। मेरा सिर रहा है' मगर जैसे ही वह कमरे से निकलकर द्वार के बाहर हुआ वैसे ...व ने लिखोनिन का हाथ पकड़ा और उसे जल्दी-जल्दी घसीटता हुआ खिड़की ...े गया।

'...खो !' उसने गली की तरफ़ उङ्गली से इशारा करते हुए लिखोनिन से कहा।

लिखोनिन ने खिड़की के नारङ्गी रङ्ग के शीशे में से देखा। यारचेन्को ट्रैपेल की पेढ़ी का दरवाज़ा खटखटा रहा था। क्षण भर में द्वार खुला और यारचेन्को उसमें गायब हो गया। 'तुमने कैसे ताड़ लिया कि वह वहाँ जायेगा ?' लिखोनिन ने बड़े आश्चर्य से प्लेटोनोव से पूछा।

'बड़ी मामूली-सी बात है ! मैं उसका चेहरा देखते ही समझ गया था। अपने हाथों से वह वेरका की पोशाक भी सहला रहा था। दूसरे लोग आपे से बाहर हो गये थे। मगर वह ज़रा शर्मीला है।'

'अच्छा, अब हम लोग भी यहाँ से चलें,' लिखोनिन बोला, 'आपको भी बहुत देर हो रही है।'

तेरहवाँ अध्याय

छोकरियों में से सिर्फ़ दो ही कमरे में रह गई थीं ; एक तो जेनी जो अपनी सोने की पोशाक पहन आई थी और दूसरी लियूबा जो बातचीत की आड़ में गठरी बनकर सो गई थी। लियूबा का जवान व चितकबरा चेहरा बच्चों की तरह कोमल दीख रहा था। उसके पतले-पतले होंठ थोड़े खुले हुए थे और उसके चेहरे पर एक सुन्दर और शान्त मुसकान झलक रही थी। कमरा सिगरेटों के धुँए से घुट गया था—धुँए के काले काले छोटे-छोटे बादल कन्दील की बत्तियों को ढाँकते हुए उड़ रहे थे। मेज़ पर कहवा और शराब के प्याले और नारङ्गियों के छिलके बिखरे पड़े थे। दृश्य बुरा लग रहा था। जेनी अपने पाँव दीवान पर रखे हुए बैठी थी और अपने घुटने हाथों से पकड़े थी। प्लेटोनोव को उसकी आँखों में, जो क्रोध से नीचे को झुकी लगती थीं, फिर वही क्रोधाग्नि दिखाई दी जिसे देखकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ।

'मैं क़न्दील बुझा दूँ ?' लिखोनिन ने पूछा। ऊषा काल का अर्ध प्रकाश ठंडा और ऊँघता हुआ खिड़कियों और दर्वाजों के परदों में से धीरे-धीरे अन्दर आने लगा था। क़न्दील की बुझजानेवाली मोमबत्तियों में से धुँए के काले और नीले बादल कमरे में घूम रहे थे। मगर खिड़की में दिल की शक्ल के एक झरोखे में से सूर्य की एक किरण ने अपनी बाँकी, हँसती हुई, धूल के कणों की सुनहरी तलवार कमरे के अन्दर घुसेड़कर दीवार पर लगे हुए क़ागज़ों पर सोना बिखेर दिया था।

'अब ठीक है,' लिखोनिन ने क़न्दील बुझाकर बैठते हुए कहा, 'बात तो थोड़ी ही सी है, मगर···समझ में नहीं आता कि उसे शुरू कैसे करूँ।'

यह कहकर वह जेनी की तरफ़ चुपचाप देखने लगा।

'तो मैं जाऊँ ?' जेनी ने लापरवाही से उससे पूछा।

'नहीं, ज़रा बैठो,' प्लेटोनोव ने लिखोनिन की तरफ़ से उत्तर देते हुए कहा। 'इनके यहाँ रहने से कोई हर्ज नहीं है' फिर उसने लिखोनिन की तरफ़ घूमकर मुस्कराते हुए कहा, 'आप वेश्यावृत्ति के बारे में ही तो कुछ कहना चाहते हैं ? क्यों ?'

'हाँ, कुछ उसी के बारे में है...'

'अच्छा, तो कहिए। जेनी की बातें भी गौर से सुनिएगा। यह आम तौर पर बड़े अविश्वास की बातें करती हैं—मगर कभी-कभी बड़े मार्के की बातें कह जाती हैं।'

लिखोनिन ज़ोर से अपना चेहरा मलने और कनपटियाँ सहलाने लगा। फिर उसने अपनी उङ्गलियाँ टेढ़ी करके चटखाईं। स्पष्ट था कि जो कुछ वह कहना चाहता था उसे कहने में वह बड़ा हिचकता था।

'ख़ैर, कुछ हर्ज नहीं।' उसने यकायक क्रोध में भरते हुए ज़ोर से कहा, 'आपने आज इन स्त्रियों के बारे में जो कुछ भी कहा, मैंने सुना। सच तो यह है कि आपने मुझसे कोई नई या ऐसी बात नहीं की जो मैं नहीं जानता था। मगर फिर भी आश्चर्य की बात यह है कि मैंने अपने व्यभिचारी जीवन में इस समस्या को आज पहली ही बार आँखें खोलकर देखने की कोशिश की है...मैं तुमसे अब यह पूछना चाहता हूँ कि आखिर यह वेश्यावृत्ति होती क्यों है? यह बड़े-बड़े शहरों का असंयमित सन्निपात है अथवा यह एक पुरातन ऐतिहासिक संस्था है? क्या यह कभी बन्द होगी? अथवा इसका अन्त भी प्रलय के साथ ही होगा? मैं इस प्रश्न का किसी से उत्तर चाहता हूँ।'

प्लेटोनोव अपनी आदत के अनुसार भौंहें सिकोड़कर लिखोनिन के चेहरे को गौर से देखने लगा। वह यह जानने का प्रयत्न करने लगा कि लिखोनिन के मन में ऐसी सच्ची वेदना किस विचार से उठ रही थी।

'यह तो तुम्हें कोई न बता सकेगा कि वेश्यावृत्ति कब बन्द होगी। शायद जब समाजवादियों और अराजकतावादियों के सुन्दर स्वप्न पूरे हों, जब दुनिया सबकी हो और किसी एक की न हो, जब प्रेम सब प्रकार के बन्धनों से मुक्त होकर सिर्फ़ अपने ही बन्धनों में रहे, जब सारा संसार मिलकर एक कुटुम्ब की तरह हो जाये, जब मेरा और तेरा का भेदभाव नष्ट हो जाये, जब संसार स्वर्ग हो जाये, मानव फिर आदम और हव्वा की तरह नग्न, शानदार और बेगुनाह हो जाये, तब शायद वेश्यावृत्ति भी बन्द हो जाये...'

'मगर अब? इसय?' लिखोनिन ने और भी आवेश में भरते हुए पूछा, 'हम यों ही हाथ पर हाथ धरे इसे देखा करें? हम इसके लिए कुछ नहीं कर सकते? इसको एक अटल बीमारी समझकर यों ही छोड़ दें? इसको चुपचाप सहन करें, इसका अपराध माथे पर न लें और इसको अपना आशीर्वाद दें?'

'इस बीमारी से बचा तो जा सकता है, पर इसको बन्द कर देना असम्भव है।

मगर तुम्हारे लिए तो दोनों ही बातें एक-सी हैं ?' प्लेटोनोव ने शान्तिपूर्ण आश्चर्य से पूछा, 'क्योंकि तुम तो चार्वाकी और अराजकतावादी हो ! क्यों ?'

'खाक अराजकतावादी हूँ मैं ! हाँ, हूँ तो मैं अराजकतावादी अवश्य, क्योंकि जब बुद्धि से जीवन को समझने की कोशिश करता हूँ तब मैं इसी नतीजे पर पहुँचता हूँ कि संसार के आदि में अराजकता थी और मैं अपनी बुद्धि से सोचता हूँ, आदमी आदमी को मारते, सताते और लूटते हैं तो उन्हें मारने, सताने और लूटने का एक दिन बदला ज़रूर मिल जायेगा ! बच्चों को बर्बाद करते हैं तो होने दो, रचनात्मक विचारों को नष्ट करते हैं तो करने दो, गुलामी होती है होने दो, चोरी, डकैती और खूँरेजी होती है तो होने दो !···! जितना पापों का घड़ा भरता है भरने दो, क्योंकि उससे संसार का प्रलय निकट आता है । मैं मानता हूँ कि निर्जीव और जीवों के लिए प्रकृति में एक ही अमिट कानून है—प्रत्येक क्रिया की प्रतिक्रिया भी उतनी ही शक्तिशाली होती है । अस्तु संसार के पापों का घड़ा जितनी ही जल्द भर जाये, उतना ही अच्छा है। मनुष्य-जीवन में बुराई बढ़ती है तो उसे मवाद की तरह बढ़ने दो और उसको बढ़ते-बढ़ते दुनिया की बराबर का एक फोड़ा हो जाने दो । क्योंकि फिर वह एक दिन फूटेगा···और उसके मवाद में दुनिया बह उठेगी ! मनुष्य-समाज या तो उसमें डूबकर मर जायेगा या बीमारी से बचकर फिर नया और सुन्दर जीवन प्राप्त करेगा ।'

लिखोनिन ने जल्दी-जल्दी एक प्याला ठण्डी काली काफ़ी गट-गट हलक़ से उतारी और फिर आवेश से कहना शुरू किया ।

'हाँ, इस तरह मैं और बहुत से दूसरे मेरी तरह अपने कमरों में बैठे-बैठे, चाय पीते हुए और मिठाइयाँ खाते हुए सोचते हैं—व्यक्ति का मूल्य संसार की प्रगति में कुछ नहीं है ! मगर जब मेरे सामने कोई बच्चे को मारता है तो मेरे चेहरे पर फौरन ख़ून उतर आता है और जब मैं किसी किसान या मज़दूर को मेहनत करते देखता हूँ तो अपने हवाई कुलावों पर मुझे शर्म आने लगती है ! हमारे जीवन में भी कोई एक बड़ी विचित्र, बुद्धिहीन वस्तु रहती है जो बुद्धि से भी सौ गुनी शक्तिशाली होती है । आज ही देखो इस वक्त···मुझे ऐसा लग रहा है, मानो मैंने किसी सोये हुए आदमी की गाँठ कतर ली है अथवा किसी तीन बरस के बच्चे को ठग लिया है अथवा किसी ऐसे निस्सहाय को मारा है जिसके हाथ-पाँव बँधे थे.। न जाने क्यों मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं ही वेश्यावृत्ति के लिए दोषी हूँ—अपनी चुप्पी, अपनी लापरवाही और अपनी

एक तरह से रज़ामन्दी के कारण मैं ही उसके लिए दोषी हूँ! क्या करूँ मैं, प्लेटोनोव!' विद्यार्थी ने बड़े दुःख से कहा।

प्लेटोनोव चुपचाप उसकी तरफ़ अपनी आँखें मिचकता हुआ देखने लगा। मगर जेनी ने अचानक उससे तीक्ष्ण स्वर में कहा :

'तुम भी वही करो जो एक अंग्रेज़ औरत ने यहाँ आकर किया था···एक बार एक लाल-लाल बालों की अंग्रेज़ औरत यहाँ आई थी। वह ज़रूर कोई बड़ी औरत होगी, क्योंकि उसके साथ बहुत-से सरकारी अफ़सर और आदमी थे। उसके आने के पहले ही डिप्टो साहब के साथ-साथ थानेदार आकर हम लोगों को समझा गया था कि 'देखो किसी ने कोई बदतमीज़ी उस स्त्री से की या कोई बुरा शब्द मुँह से निकाला तो तुम्हारे घरों की मैं ईंट से ईंट बजवाकर छोड़ूँगा और इन छिनालों को थाने में बुलवा-बुलवाकर इतने को लगाऊँगा कि शरीर की खाल उतर जायेगी और जेल में डाल-डालकर सबको सड़ा डालूँगा। वह स्त्री आकर बड़ी देर तक विदेशी भाषा में, आकाश की तरफ़ उँगली उठाती हुई, हमसे कहती रही और अन्त में पाँच-पाँच आने-वाली एक बाईबिल हम सबको देकर चली गई। तुमको भी, मेरे प्यारे, ऐसा ही करना चाहिए।'

प्लेटोनोव उसकी इस बात पर खिल-खिलकर हँस पड़ा। मगर फिर जब उसने लिखोनिन के भोले और दुखी चेहरे को तरफ़ देखा जो कि इस मज़ाक को समझ भी नहीं था, तो उसने अपनी हँसी रोककर गम्भीरता से कहा :

'तुम क्या कर सकते हो, लिखोनिन? जब तक जायदाद क़ायम है, दुनिया में ग़रीबी रहेगी और जब तक विवाह की संस्था दुनिया में क़ायम है, तब तक वेश्यावृत्ति रहेगी। जानते हो कौन वेश्यावृत्ति के सबसे बड़े हामी हैं? भले मानस और शरीफ़ कहलानेवाले सद्गृहस्थ, पूज्य पिता, पति और भ्राता कहलानेवाले महाशय! वह कोई न कोई बहाना ढूँढ़कर इस व्यवसाय को क़ायम रखने का प्रयत्न करते हैं; क्योंकि उन्हें भय लगता है कि ऐसा न करेंगे तो यह बीमारी प्लेग की तरह उनके पवित्र घरों में, उनके सोने के कमरों में घुस आयेगी। वेश्यावृत्ति का व्यवसाय उनके पवित्र घरों की व समाज की व्यभिचार-वृत्ति से रक्षा करता है जिसको कि वे समाज का एक ज़रूरी अंग मानते हैं, क्योंकि स्वय पूज्य पिता जी, पतिदेव और भ्राताजी भी तो मौक़ा मिलने पर छिपे-चोरी प्रेम से नहीं चूकते हैं। सच तो यह है कि उसी स्त्री से बार-बार

विषय-भोग करना अच्छा नहीं लगता, चाहे वह अपनी पत्नी हो या नौकरानी या पड़ोसिन। वास्तव में मनुष्य बहु-स्त्री-गामी जीव है। अस्तु मुर्गों की तरह अन्ना, या ट्रेपेल के बगीचे अपनी प्रेमक्रीड़ा के लिए उसे हमेशा आकर्षक लगेंगे। हाँ, समझदार गृहस्थ जो आधी दर्जन बड़ी-बड़ी लड़कियों के भाग्यवान् पिता हैं, अवश्य वेश्यावृत्ति के विरुद्ध अपनी आवाज़ बुलन्द करेंगे। यहाँ तक कि वेश्याओं को इस कुकर्म से हटाने के लिए कोई आश्रम बनेगा तो उसके सहायकों में नाम लिखाकर उसको चंदा भी देंगे, मगर इस व्यवसाय को ही बन्द करने की बात उठेगी तो कन्नी काट जायेंगे।'

'वेश्याओं को सुधारने के लिए आश्रम!' जेनी ने घृणा की हँसी हँसते हुए मुँह चिढ़ाकर दुहराया।

'हाँ, मैं जानता हूँ, इन तरीकों से कुछ नहीं हो सकता', लिखोनिन ने बात काटते हुए कहा, 'मगर मुझ पर आप चाहे हँसें ही, फिर भी मैं आग लगने पर चुपचाप बैठा-बैठा उस आदमी की तरह यह नहीं करते रहना चाहता कि, 'अरे, आग लग रही···हाय, आग लग रही है, शायद उसमें आदमी भी जल रहे हैं···हे ईश्वर!' मगर ख़ुद उठता और आग बुझाने के लिए हाथ हिलाता नहीं।'

'अच्छा तो क्या आप कान की पिचकारी लेकर आग बुझाने दौड़ेंगे?'

'नहीं!' जोश से लिखोनिन ने कहा, '···क्यों नहीं, शायद मैं उसकी मदद से एक बच्चे को ही बचा लूँ? यही बात तो मैं तुमसे पूछना भी चाहता था, प्लेटोनोव, कृपया मेरी हँसी न उड़ाकर मुझे ठीक ठीक बताओ...'

तुम यहाँ से किसी एक छोकरी को ले जाकर उसे बचाना चाहते हो? क्यों?' प्लेटोनोव ने उसके चेहरे की तरफ़ ध्यान से घूरते हुए पूछा। उसकी समझ में लिखोनिन की सारी बातों का मतलब आ गया।

'हाँ,···शायद···मैं कोशिश करूँगा···' लिखोनिन ने अनिश्चित स्वर में कहा।

'वह फिर यहीं लौट आयेगी', प्लेटोनोव ने कहा।

'ज़रूर लौट आयेगी', जेनी ने दृढ़ विश्वास से कहा। लिखोनिन उठकर जेनी के पास गया और उसके दोनों हाथ पकड़कर काँपते हुए स्वर में धीमे से बोला, 'जेनेच्का ···शायद···तुम···मेरे साथ आ जाओ? मैं तुमसे अपनी स्त्री की तरह नहीं कहता, मित्र की तरह कहता हूँ। सहल-सी बात है···छः महीने आराम के बाद फिर हम लोग किसी अच्छे व्यवसाय में लग जायेंगे···हम दोनों पढ़ा करेंगे···'

जेनी ने नाराज़ी से उसके हाथों में से अपने हाथ खींच लिये।

'मैं तुम्हारी दलदल में फँसू ?' वह चिल्लाकर बोली, 'मैं तुम्हें अच्छी तरह पहचानती हूँ ! मैं तुम्हारे लिए मोजे बुनूंगी ? मैं तुम्हारे लिए चूल्हे पर बैठकर रसोई तैयार करूँगी ? मैं तुम्हारी रात भर बैठी बाट देखूंगी और तुम अपने दोस्तों के साथ बैठे-बैठे गप्प लड़ाओगे ? और जब तुम डाक्टर या वकील हो जाओगे, तब तो लात मारकर मुझे घर में से निकाल दोगे और कहोगे, 'जा' निकल छिनाल यहाँ से ! तूने मेरी जवानी गारत कर डाली ! मैं किसी भले घर की शरीफ़ लड़की से शादी करना चाहता हूँ !'

'मैं तुमसे भाई की तरह अपने साथ चलने को कहता हूँ···मेरा यह मतलब नहीं था कि···' लिखोनिन ने परेशानी से बड़बड़ाते हुए कहा।

'मैं ऐसे भाइयों को ख़ूब पहचानती हूँ। पहिली रात तक के ही भाई···छोड़ो, ऐसी मूर्खता की बातें मुझसे मत करो ! ऐसी बातें सुनते-सुनते मैं थक गई हूँ।'

'देखो, लिखोनिन !' प्लेटोनोव ने गम्भीरता से कहा, 'ऐसा करके तुम अपने सिर व्यर्थ का बोझ मोल लोगे। मैं ऐसे आदर्शवादी अच्छे घरों के नौजवानों को जानता हूँ, जिन्होंने जोश में आकर अपने सिद्धान्तों के कारण गाँव के किसान छोकरियों से विवाह किये, क्योंकि वे उनको काली मिट्टी की तरह प्राकृतिक शक्ति से भरपूर मानते थे। मगर यह प्राकृतिक शक्ति से भरपूर काली मिट्टियाँ बाद में ऐसी बेकार स्त्रियां निकलीं जो दिन भर पलँग पर पड़ी पड़ी बिस्कुट खाती थीं और उङ्गलियों में सस्ती अंगूठियां पहिन-पहिनकर दिन भर उङ्गलियाँ फैला-फैलाकर देखती थीं, अथवा रसोई में बैठकर नौकरों से गप्पें लड़ाती थीं, शराब पीती थीं और साईसों से प्रेम करती थीं !'

तीनों चुप हो गये। लिखोनिन रूमाल से अपने माथे का पसीना पोंछने लगा।

'नहीं, नहीं !' वह फिर यकायक ज़िद्द से चिल्लाकर बोला, मुझे तुम्हारी बातों पर विश्वास नहीं होता ! मैं तुम्हारी बातों पर विश्वास करने को तैयार नहीं हूँ ! लियूबा !' उसने सोती हुई छोकरी को बुलाया, लियूबोच्का !'

लड़की ने जगकर अपने होंठ हथेली से पोंछते हुए जँभाई ली और बच्चों की तरह मुस्कराती बोली, 'मैं सो नहीं रही थी। मैं सब सुन रही थी। ज़रा-सी अभी आंख लग गई थी।'

'लियूबा, तुम यहाँ से चलकर मेरे साथ रहोगी ?' लिखोनिन ने लियूबा के हाथ पकड़ते हुए पूछा, 'हमेशा के लिए यहाँ से निकल चलो और फिर मेरे पास से कभी लौटकर न आना !'

लियूबा ने परेशानी से जेनी की तरफ देखा, मानो वह उससे इस मजाक का मतलब पूछ रही हो।

'यह अच्छी रही', फिर उसने चालाकी मे कहा, 'आप ख़ुद तो अभी विद्यार्थी हैं...मुझे ले जाकर कहाँ बसायेंगे ?'

'मैं तुम्हारी मदद करना चाहता हूँ लियूबा ! यहाँ रहना तुम्हें अच्छा नही लगता होगा !'

'हाँ, यहाँ रहना तो मुझे अच्छा नहीं लगता क्योंकि न तो मैं जेनी की तरह आत्माभिमानी ही हूँ और न पाशा की तरह ख़ूबसूरत · और न मे कभी यहाँ की जिन्दगी की आदी हो हो पाऊँगी...'

'अच्छा तो फिर चलो यहाँ से चल दें... !' लिखोनिन ने उसमे प्रार्थना करते हुए कहा, 'तुम्हें कोई न कोई काम करना तो आता ही होगा...कुछ नहीं तो सिलाई और क़सीदा तो कर ही लोगी ?'

'मुझे कुछ नहीं आता !' लियूबा ने शर्माकर कहा और फिर हँसने लगी। फिर लज्जा से उसका मुँह लाल हो गया और वह अपने मुँह पर हाथ रखती हुई कहने लगी, 'गाँव में जो कुछ हमें सिखाया जाता है, उतना ही में जानती हूँ...उससे ज़्यादा कुछ नही आता। थोड़ा-बहुत पका सकती हूँ... मैं एक पादरी के यहाँ खाना पकाया करती थी।'

'ठीक है तब ! यह बड़ा अच्छा है !' लिखोनिन ने ख़ुश होते हुए कहा, 'मैं तुम्हारी मदद करूँगा। तुम एक ढाबा खोल लेना...समझी ? मैं बहुत से खानेवाले तुम्हारे यहाँ ले आया करूँगा। बहुत-से विद्यार्थी मेरे साथ वहाँ आ जाया करेंगे ! यह बड़ा अच्छा होगा !'

'ख़ैर, अब ज़्यादा आप मेरा मज़ाक न बनाइए !' लियूबा ने कुछ चिढ़कर कहा और फिर आश्चर्यपूर्वक प्रश्न-सूचक दृष्टि से जेनी की तरफ़ देखा।

'नहीं, वह तुम्हारी मज़ाक नहीं उड़ा रहे हैं', जेनी ने एक विचित्र प्रकार की काँपती हुई आवाज़ में कहा, 'वह सचमुच तुम्हें यहाँ से ले जाना चाहते हैं।'

'मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि मैं बिल्कुल गम्भीरता से कह रहा हूँ। ईश्वर की क़सम, सच कहता हूँ।' विद्यार्थी ने स्नेह से उसे पकड़कर कहा और न जाने क्यों फिर खाली कोने की तरफ़ हवा में क्रास का चिन्ह बनाया।

'सचमुच' जेनी बोली, 'तुम लियूबा को ले जाओ, क्योंकि वह ऐसी नहीं है जैसा मेरा ले जाना। मैं यहाँ रहती-रहती पुरानी होकर यहाँ की आदी हो गई हूँ। मुझे तुम अब नहीं बदल सकोगे। मगर लियूबा सीधी स्वभाव की छोकरी है। वह यहाँ के जीवन को अभी तक आदी भी नहीं हुई है। मेरी तरफ़ इस तरह आँखें निकाल-निकालकर क्यों देखती है? तुझसे जो पूछा जाता है, उसका उत्तर दे! जाना चाहती है? बोल?'

'क्यों नहीं, अगर यह मज़ाक नहीं करते हैं और मुझे सचमुच ले जाना चाहते हैं—क्यों सच कहते हो? और जेनेच्का तुम्हारी क्या राय है, मैं जाऊँ?...'

'कैसी मूर्ख है!' जेनी ने नाराज़ी दिखाते हुए कहा, क्या अच्छा है—यहाँ इस नरक में रहकर अपनी नाक सड़वाना और कुत्तों की मौत मरना? या ईमानदारी से घर-गृहस्थी का जीवन बिताना? मूर्ख कहीं की। इनके हाथ चूम और जा...'

भोली लियूबा ने सचमुच लिखोनिन के हाथ चूमने को अपने होंठ बढ़ाये जिस पर सब हँसने लगे। मगर साथ ही सबके हृदय पर चोट भी लगी।

'बड़ा अच्छा है! यह तो जादू-सा हो गया', ख़ुशी से लिखोनिन ने कहा, 'जाओ, अभी मालकिन से कहो कि तुम चकला छोड़कर मेरे साथ जा रही हो। जो चीज़ें बहुत ही ज़रूरी हों, सिर्फ़ वही अपने साथ ले चलना। अब वह पुरानी बात नहीं रही है और जब कोई छोकरी चाहे फौरन चकला छोड़कर जा सकती है। उसे कोई रोक नहीं सकता!'

'नहीं, ऐसे ठीक न होगा,' जेनी ने उसे रोककर कहा, 'वह इस तरह जा सकती है, मगर इस तरह बड़ा शोर और बखेड़ा होगा। जैसा मैं कहतीं हूँ, वैसा तुम करो। दस रुपया खर्च करना तुम्हें बुरा तो न लगेगा?'

'नहीं, नहीं, बोलो क्या करना है?'

'लियूबा को मालकिन के पास जाकर कहना चाहिए कि तुम उसे रात भर के लिए अपने यहाँ ले जाना चाहते हो। उसके लिए तुम्हें मालकिन को दस रुपए देने होंगे, वह तुम भेज दो। उसके बाद कल आकर फिर अपना टिकट और चीज़ें भी ले

जाना। तब तक हम सब मामला ठीक कर रखेंगे और किसी शोरो-गुल की नौबत न आयेगी। कल यहाँ से लियूबा को लेकर तुम सीधे थाने में जाना और वहाँ जाकर इससे यह ऐलान करा देना कि इसने यह पेशा छोड़कर तुम्हारे यहाँ खिदमतगारी कर ली है। और इसका वेश्यावृत्ति का टिकट पुलिस को लौटाकर इसका पासपोर्ट वापिस ले लेना। लियूबा, लो फ़ौरन दस रुपए इनसे और दौड़ो मालकिन के पास और जितनी जल्दी हो, खालाजान के पास से भाग आना, वरना वह कुतिया तुम्हारे चेहरे से सब समझ जायेगी। और देखो, अपने मुँह से रँग भी छुड़ाती आना, वरना रास्ते भर गाड़ीवान तुम दोनों की तरफ़ उङ्गलियाँ उठायेंगे।'

आध घण्टे के बाद लिखोनिन और लियूबा अन्ना के द्वार पर एक गाड़ी में बैठ रहे थे और प्लेटोनोव और जेनी गाड़ी के पास खड़े उन्हें बिदा कर रहे थे।

'बड़ी भारी मूर्खता कर रहे हो, लिखोनिन,' प्लेटोनोव ने उदासीनता से कहा, 'लेकिन तुम्हारे हृदय के अच्छे भावों के लिए मैं तुम्हारी इज्ज़त करता हूँ। तुम्हारे मन में अच्छा भाव आया और तुमने उस पर फ़ौरन ही अमल भी शुरू कर दिया! तुम बड़े बहादुर और अच्छे आदमी हो!'

'बधाई है आपकी शुरुआत पर!' जेनी ने हँसते हुए कहा, 'देखो, मुझे भूल न जाना! दशठौन पर मिठाई मुझे ज़रूर भेजना।'

'उसके लिए तुम्हें सदा इन्तज़ार ही करते रहना होगा!' लिखोनिन हँसकर अपनी टोपी उसकी तरफ़ हिलाते हुए बोला।

दोनों गाड़ी में बैठकर चले गये। प्लेटोनोव ने जेनी की तरफ़ देखा तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। जेनी की आँखों में आँसू भर रहे थे।

'ईश्वर करे सुखी हो!' वह धीरे-धीरे बड़बड़ा रही थी।

'आज तुमको हुआ क्या है जेनी?' उसने कोमल स्वर में पूछा, 'क्या बात है? क्यों इतनी दुखी हो? क्या मैं कुछ तुम्हारे लिए कर सकता हूँ?'

जेनी ने उसकी तरफ़ से पीठ मोड़ ली और दीवार पर झुककर रुँधी हुई आवाज़ में पूछा, 'ज़रूरत हो तो मैं तुम्हें किस पते पर लिख सकती हूँ?'

'अखबार के पते पर! मेरा नाम और मेरे अखबार का पता! बस यह काफ़ी होगा। जहाँ भी मैं हूँगा, तुम्हारा ख़त फौरन मेरे पास भेज दिया जायेगा।'

'मैं···मैं···मैं...' जेनी कुछ कहना चाहती थी, मगर वह सिसकियों में फूट

पड़ी और उसने अपना चेहरा दोनों हाथों से ढंक लिया। 'मैं···तुम्हें लिखूँगी...।'

यह कहकर वह उसी तरह मुँह ढांके हुए जीने पर चढ़कर अपने कमरे में घुस गई।

चौदहवाँ अध्याय

आज दस बरस बीत जाने के बाद भी, कटरे के पुराने निवासी उस साल को याद करते हैं जिसमें वे बहुत-सी सुखदायक, गन्दी तथा खूँख्वार घटनाएँ हुई थीं जो छोटे-मोटे मामूली टण्टों से बढ़ते-बढ़ते यहाँ तक पहुँची थीं कि सरकार को मजबूर होकर वेश्याओं का यह घोंसला ही नष्ट कर देना पड़ा था, जिसको क़ानूनी रूप देकर सरकार ने ही कभी बनाया था। कटरे से चकले के हटा देने के बाद यहाँ की बचत-खुचत अस्पतालों, जेलों और शहरों के विभिन्न मुहल्लों में बिखर गई। आज तक बची-खुची चकलों के मालिक ने, जो अपाहिज और ज़िन्दा हैं, पुरानी ख़ालाएँ शरीर और कण्ठ की मोटी, बूढ़े बुलडाग की तरह दीखनेवाली, चकलों के इस अचानक विनाश को दुःख, कम्पन और कठिन परेशानी से याद करती हैं।

बोरा उलटने पर उसमें से जैसे आलू निकलते हैं, उसी तरह चकलों के कारण कटरे में झगड़े, उत्पात, डकैतियाँ, बीमारियाँ और क़त्ल होने लगे। ऐसा लगता था कि दोष उनमें किसी का भी नहीं है। यह घटनाएँ आपसे आप अक्सर होने लगीं और दिन पर दिन अधिक बढ़ने और फैलने लगीं, जैसे बर्फ़ का एक छोटा-सा टुकड़ा किसी शैतान लड़के की लात खाकर लुढ़कना शुरू करता है और लुढ़कते-लुढ़कते अपने साथ और बर्फ को लपेटता हुआ बढ़ता जाता है और बढ़ते-बढ़ते आदमी की क़द से भी बड़ा हो जाता है और फिर अन्त में ज़रा सा धक्का खाकर पहाड़ की तरह खाई में लुढ़कता हुआ जा गिरता है। चकलों की मालकिनें और खालाएँ भाग्य क्या होता है, नहीं जानती थीं। मगर अन्दर ही अन्दर अपनी आत्माओं में उन्हें इस भयङ्कर वर्ष की घटनाओं से, भाग्य भी क्या बुरी बला है, इसका आभास होने लगा था। सच तो यह है कि जीवन में हर जगह, जहाँ भी लोग एक हित, ख़ून और नाते रिश्ते के अथवा एक व्यवसाय के लाभ के बन्धनों से एक छोटा गिरोह बनाकर रहते हैं, वहाँ देखने में आता है, ऐसी घटाटोप घटनाएँ एक दिन अवश्य होती हैं। भाग्यचक्र

अपना पहिया वहाँ अवश्य घुमाता है ; अलग रहनेवाले कुटुम्बों पर भी भाग्य का प्रभाव होता है—यकायक घर का कोई आदमी और स्नेही रोग अथवा मृत्यु का ग्रास हो जाता है और फिर एक के बाद दूसरे घर के स्नेही मरने लगते हैं और सारा कुटुम्ब चौपट हो जाता है, जैसी कि पुरानी कहावत है कि मुसीबत आती है तो अकेली नहीं आती। भाग्यचक्र का यह पहिया धार्मिक विहारों, बैंकों, सरकारी विभागों, फ़ौजी दस्तों, शिक्षालयों और उन सभी संस्थाओं पर भी घूमता है जहाँ वर्षों तक, पीढ़ियों दर पीढ़ियों तक, एक सा निर्विघ्न जीवन एक उथली नदी के प्रवाह की तरह बहता है और फिर यकायक किसी एक साधारण-सी घटना के बाद, तबादले, तरक्कियाँ, तनज्जुलियाँ, बरख़ास्तगी, घाटे, बीमारियाँ आदि शुरू हो जाती हैं। समाज के सदस्य, मानो एक दूसरे से षडयन्त्र करके मरने, पागल होने, चोरी करने, क़त्ल करने और फाँसियों पर चढ़ने लगते हैं। जगहों पर जगहें ख़ाली होने लगती हैं ; तरक्कियों पर तरक्कियाँ होती हैं, नये-नये आदमी भरने लगते हैं, और साल दो साल बाद पुराने आदमियों में से अपनी जगह पर कोई नहीं दीखता, जिससे संस्थाएँ यदि बिल्कुल मिट ही नहीं जातीं तो सर्वथा नवीन तो हो ही जाती हैं। यही भाग्यचक्र बड़ी-बड़ी सामाजिक और सार्वभौमिक संस्थाओं—शहरों, साम्राज्यों, जातियों, देशों और शायद दूसरी दुनियाओं पर भी घूमता रहता है।

इस भाग्यचक्र ने अचानक कटरे के तमाम चकलों को यकायक नष्ट कर डाला। शोरगुल से पूर्ण चकलों के स्थान में कटरे में अब छोटे किसानों, कसाइयों, तारतारों और सूअर पालनेवाले भङ्गियों की एक शान्तिपूर्ण छोटी बस्ती दीखती है। यहाँ के रहनेवालों की अर्जी पर, पुरानी ख़राब याद को भुला देने के ख़्याल से कटरे का नाम तक बदलकर यहाँ के एक बड़े परचूनिया दूकानदार के नाम पर, गोलूबोव्का रख दिया गया है।

कटरे की तबाही गर्मियों के उस मेले से शुरू हुई थी जो इस साल और सालों से कहीं अधिक बड़ा और धूमधाम से हुआ था। मेले में इस साल बेहद भीड़ और बहुत बिक्री हुई थी। उसके कई कारण थे। एक तो पास में शक्कर के तीन कारख़ाने खुल गये थे ; दूसरे इस साल गेहूँ और चुकन्दर की फ़सलें बहुत अच्छी हुई थीं, तीसरे बिजली की रेल और नहर भी इधर से निकल गई थी ; चौथे सात सौ पचास फर्लाङ्ग लम्बी सड़कें इस इलाके में बन रही थीं, जिन पर हज़ारों मजदूर लग रहे थे

और पाँचवाँ सबसे मुख्य कारण यह था कि इस शहर के सभी व्यापारियों और नागरिकों को अपनी-अपनी इमारतें बनाने का बुखार-सा चढ़ आया था। शहर के बाहर चारों तरफ़ ईंट और चूने के भट्ठे ही भट्ठे दीखते थे। सरकार की तरफ़ से एक दिखावटी बड़ी-सी खेतीबाड़ी का फ़ार्म भी खुल गया था। स्टीमर चलानेवाली दो नई कम्पनियाँ और खुल गई थीं और उन दोनों में आपस में और पुरानी तमाम कम्पनियों में माल और यात्री ले जाने में जोरों की होड़ लग गई थी। होड़ में यहाँ तक नौबत पहुँची कि तीसरे दर्जे का पचहत्तर रुपये का फ़ी आदमी का किराया पाँच रुपये, तीन रुपये और आख़िर में एक रुपया तक आ गया। एक कम्पनी ने थककर यह समझते हुए कि दिवाला तो निकलेगा ही, मुसाफ़िरों को मुफ़्त ले जाना शुरू कर दिया। इसके जवाब में एक दूसरी कम्पनी ने मुफ़्त मुसाफ़िरी के साथ-साथ हर आदमी को एक डबल रोटी भी मुफ़्त कर दी, मगर इस शहर का सबसे भारी काम यहाँ के नये बन्दरगाह का बनना था, जिस पर असंख्य आदमी काम कर रहे थे और ख़र्च ईश्वर ही जाने कितना हो रहा था।

इन सबके साथ ही, इस साल इस शहर के नज़दीद के रूस के सबसे मशहूर और सम्पन्न धार्मिक बिहार की हज़ारवीं वर्षगाँठ भी मनाई गई थी। रूस देश सभी कोनों से, साइबेरिया से, वर्फ़ से जमे हुए उत्तरी समुद्र के किनारों से और दक्षिण के आख़िरी छोर में काले सागर और कौस्पियन सागर के किनारों से लाखों से लाखों यात्रियों की भीड़ बिहार में बनी हुई साधु-सन्तों की क़बरों से और सामाधियों के लिए उमड़ आई थी। बिहार में चालीस हज़ार आदमियों को टिकाने और थोड़ा-सा रोज खिलाने का प्रबन्ध किया गया था, मगर लाखों आदमी बिहार के वृहत् आँगनों और बरामदों में लड़की के लट्ठों को तरह एक दूसरे से सट-सटकर पड़ रहे थे।

यह ग्रीष्म ऋतु इन शहरवालों के लिए अलिफ़लैला की कहानी बन गई। शहर में जितनी आबादी थी, उसके चौगुने बाहर से दर्शक आये थे। मैमार, बढ़ई, रंगसाज़, इन्जीनियर, कारीगर, विदेशी, किसान, दलाल, विचित्र और ख़तरनाक व्यापारी, मल्लाह और मछवाहे, बेकार, बदमाश, तमाशबीन, चोर और गिरहकट—सभी इसी तरह के आदमियों की भीड़ थी। शहर के किसी होटल या सराय का कोई गन्दा से गन्दा कमरा भी खाली नहीं बचा था। रहने के मकानों के इतने भाड़े चढ़ गये थे कि उनको सुनकर सिर चकराता था। हज़ारों के वारे-न्यारे हो गये और लाखों रुपया

हाथों-हाथ बहता हुआ एक के पास से दूसरे के, दूसरे से तीसरे के पास निकल गया। घंटे भर में असंख्य धन किसी के हाथ आ गया और बहुत-सी पुरानी पेढ़ियों का देखते देखते दिवाला पिट गया। कल जो लखपती थे, आज वे भिखारी हो गये। मामूली से मामूली मज़दूर तक ने इस बहती हुई सोने की गगा से स्नान किया। खिदमतगार, ठेलेवाले, पल्लेदार, कुली और बेलदार आज तक इस ग्रीष्म की रोज़ाना कमाई को याद करते हैं। बन्दरगाह पर नावों से आनेवाले बाबुओं को ढोनेवालों ने चार-पाँच रुपये रोज़ाना कमाये और यह सारी की सारी बाहर आनेवाली आदमियों की भीड़, आसानी से कमाया रुपया पाकर और इस पुराने शहर के सौन्दर्य को देखकर, जो ग्रीष्म ऋतु के खिले हुए फूलों से सुगन्धित वायु में और भी बढ़ गया था, यह हज़ारों और लाखों मनुष्य-शरीरधारी कामी पशुओं की असन्तुष्ट भीड़ हजारों और लाखों बुद्धियों और मतों को एक करके 'स्त्रियाँ' माँगती थीं। अस्तु !

एक महीने में तरह-तरह के तमाशे शहर में खड़े हो गये। नाटक, रास, नौटंकी, शराबघर और होटल शहर के कोने-कोने में और शहर के बाहर दूर तक दिखाई देने लगे। हर सड़क के कोने पर ऐसे शराबघर और दूकानें खुल गईं, जिनमें बाहर तो सौदा बिकता था और परदे के पीछे भीतर औरतें मिलती थीं। बहुत सी माताओं और पिताओं को अपने पुत्रों के इस अभागी ग्रीष्म ऋतु से भयंकर और शर्मनाक बीमारियाँ लेकर घर लौटने पर आज तक खेद है। हज़ारों गृहस्थों को जो इस मेले में आये थे, हज़ारों नौकरानियों की ज़रूरत थी, जिसमें अड़ोस-पड़ोस के सैकड़ों गाँवों से हज़ारों छोकरियाँ मेले में आई थीं। वेश्याओं को माँग भी बेहद बढ़ गई थी, अतएव वारसा, लोड्ज, ओडेसा, मास्को और सेण्टपीटर्सबर्ग, यहाँ तक कि अड़ोस पड़ोस के देशों तक से वेश्याएँ इस शहर में आ गई थीं। मामूली रूसी वेश्याएँ ही नहीं, बल्कि फ्रान्स, वियाना, जरमनी और हंगरी की छटी हुई वेश्याएँ भी आई थीं। मुफ़्त की कमाई का खुलकर फाग हो रहा था। ऐसा लगता था, मानों भगवान् कुबेर ने एक सोने का दरिया बहा दिया था जिसके भँवर में पड़कर यह शहर नाच उठा है। चोरियाँ और क़त्ल भी बहुत से हुए। बहुत सी पुलिस इकट्ठी हुई थी, मगर वह परेशान होकर बुद्धिहीन हो गई थी। अथवा यह भी कहा जा सकता है कि काफ़ी रिश्वतों से अपना अजगर का-सा पेट भरकर वह उसी जन्तु की तरह सन्तुष्ट होकर ऊँघने लगी थी ; क़त्ल साधारण बात हो गई थी। दिन-दहाडे क़त्ल होते थे। कोई गुण्डा

अचानक आकर सड़क पर पूछता था, 'तुम्हारा क्या नाम है !' 'फेडरोव ।' 'ओहो, फेडरोव ? अच्छा फेडरोव, यह लो !' और यह कहकर वह चाकू उसके पेट में भोंक देता । इन लोगों का शहर में 'पेटकट' नाम पड़ गया था और इन लोगों के बड़े-बड़े मशहूर आदमी इस मेले में आये हुए थे जिनका नाम शहर के अख़बार बड़े अभिमान से छापते थे ।

रात-दिन इस उन्मत्त शहर की सड़कों पर भीड़ खड़ी हुई, चलती हुई और चिल्लाती हुई दीखती थी, मानों कहीं आग लग गई हो । कटरे के चकलों में इन दिनों जो हाल था, उसका वर्णन करना असम्भव है । बावजूद इसके कि चकलों की मालकिन ने बहुत-सी नई छोकरियाँ रख ली थीं और दाम भी तिगुने कर दिये थे, मगर फिर भी बेचारी इन टूटी छोकरियों को उन्मत्त और शराबख़ोर जनता की, जो ठिकरियों की तरह रुपया फेंक रही थी, माँगें पूरी करना असम्भव हो गया था । चकलों के भरे हुए बैठकख़ानों में सात, आठ और कभी-कभी तो दस-दस आदमी तक एक-एक छोकरी के इन्तज़ार में बैठे रहते थे । सचमुच यह मेले का ज़माना बड़ा पागलपन का और प्रलयंकारी ज़माना इस शहर के लिए हो गया !

मगर इसी समय से इस शहर के चकलों की अधोगति भी शुरू हुई जिसका परिणाम यह हुआ कि वे अन्त में नष्ट हो हो गये । कटरे के चकलों के नष्ट हो जाने पर हमारी परिचित मोटी और तगड़ी, पीले आँखोंवाली अन्ना मारकोवना का चकला भी नष्ट हो गया ।

पन्द्रहवाँ अध्याय

सवारी गाड़ी मज़े से दक्षिण से उत्तर की तरफ़, गेहूँ के सुनहले खेतों और बाँझ के सुन्दर बग़ीचों को पार करती हुई और चमकती हुई नदियों के लोहे के पुलों के ऊपर से खड़खड़ करके जाती हुई और अपने पीछे धुँए के मँडराते हुए बादल छोड़ती हुई, चली जा रही थी ।

दूसरे दरजे के डिब्बे में खिड़कियाँ खुली होने पर भी बड़ी गरमी मालूम होती थी । गन्धक की महँकवाले धुएँ की गन्ध से गले में खाँसी उठती थी । गाड़ी के हिलने-डुलने और गरमी से सभी मुसाफ़िर बिल्कुल थक रहे थे ; केवल एक हँसोड़े,

फुर्तीले, चपल यहूदी पर जो बड़ी अच्छी पोशाक में था और बड़ा मिलनसार, बातूनी और सबको सहायता देने के लिए उत्सुक था, सफ़र का कोई असर नहीं दीखता था। उसके साथ एक जवान स्त्री भी सफ़र कर रही थी, जिसको देखकर यह स्पष्ट होता था कि वे दोनों नव विवाहित थे। ज़रा-ज़रा-सी पति की स्नेहपूर्ण बातों पर उसका चेहरा फूल की तरह खिल उठता था। जब-जब वह अपनी आँखें उठाकर अपने पति की तरफ़ देखती थी तब-तब उसकी आँखें तारों की तरह चमक उठती थीं और उनमें जल छलक आता था। उसका चेहरा ऐसा सुन्दर दीखता था जैसा कि प्रेम में डूबी हुई यहूदी लड़कियों ही का होता है— गुलाबी होंठ भोलेपन से गोल-गोल और आँखें इतनी काली कि उनमें पुतलियों का ढूँढ़ना भी मुश्किल।

डिब्बे के दूसरे तीन मुसाफ़िरों की ज़रा भी चिन्ता न करते हुए वह बार-बार अपनी प्रेमिका को चूमता था — गोकि बड़े भोंड़े ढङ्ग से। उस मालिक की लापरवाही से जो अपनी चीज़ पर अपना पूरा अधिकार समझता है, उस प्रेमी के विशेष अहंकार से जो मानो दुनिया से कहता है, 'देखो, मैं कैसा ख़ुश हूँ। तुम भी इससे ख़ुश हो न?' वह कभी अपनी नव-वधू की टाँगें सहलाता था, कभी उसके गालों की चुटकियाँ लेता था, कभी अपनी कड़ी मूछों से उसकी गर्दन गुदगुदाता था, मगर इस सब ख़ुशी की चमक-दमक के साथ-साथ ही कोई फ़िक्र भी उसे सता रही थी जो उसके बार-बार आखें मींचने, उसके होठों के मुड़ने, उसकी मुड़ी हुई चौखुटी ठुड्डी की कठिन रेखाओं से जो बाहर की तरफ़ निकली हुई थीं और जिनमें एक छोटा-सा बहुत मुश्किल से दीखनेवाला गड्ढा था, साफ़ जाहिर होती थी।

इस प्रेमी जोड़े के सामने की सीट में तीन दूसरे मुसाफ़िर बैठे थे। एक तो कोई पतला, स्वच्छ, बूढ़ा पेन्शनयाफ़्ता जनरल था जिसके बालों में पोमेड लगी थी और अलकें बाहर की तरफ़ कढ़ी हुई कनपटियों पर लटक रही थीं। दूसरा एक कोई मोटा तगड़ा ज़मींदार था, जिसने अपना कड़ा कालर गर्दन में से निकालकर अपने पास रख लिया, मगर फिर भी गरमी से हाँफ रहा था और बार-बार एक भींगे रूमाल से मुँह पर पंखा झलता था। तीसरा एक जवान फ़ौजी अफ़सर था। साइमन याकोब्लेविश नामक नौजवान अपना नाम दूसरे मुसाफ़िरों को बता चुका था—लगातार बातों से यह मुसाफ़िर थककर चिढ़ उठे थे, जैसे कि गरमी में बन्द कमरे की खिड़कियों के शीशों पर लगातार भिनभिन करनेवाली मक्खियों से चिढ़ होने लगती है। मगर वह

उन्हें .खुश करना जानता था। वह उन्हें जादू के चमत्कार दिखाने लगा और यहूदी चुटकुलें सुनाने लगा जिनका अपना मज़ाक ही अलग होता है। जब उसकी स्त्री बाहर प्लेटफार्म पर हवा खाने चली जाती थी, तब वह ऐसे-ऐसे चुटकुले सुनाने लगता था कि जनरल के हँसी से दाँत बाहर निकल आते थे, ज़मींदार अपनी तोंद हिलाता हुआ हिनहिना उठता था और जवान फ़ौजी अफ़सर जिसको अपनी पढ़ाई ख़त्म किये एक साल ही हुआ था और जिसका चेहरा छोकरों की तरह चिकना था, अपनी हँसी न रोक सकने के कारण एक तरफ़ को मुँह फेर लेता था, जिससे उसका शर्म से लाल चेहरा कहीं उसके पड़ोसी न देख लें।

साइमन की पत्नी अपने पति से बड़ा भोला और स्नेह-पूर्ण बर्ताव कर रही थी। अपने रूमाल से वह साइमन के मुँह का पसीना पोंछती और हवा झलती थी और उसकी गर्दन में बँधे रूमाल को बारबार ठीक करती थी। उसके ऐसा करने पर साइमन का चेहरा एक बड़प्पन और मूर्खतापूर्ण आत्माभिमान के भाव से ऐसा बन जाता था कि उसको देखकर हँसी आती थी।

'क्या मैं आपसे पूछ सकता हूँ' छोटे बदन के जनरल ने नम्रता ते खखारते हुए साइमन से पूछा, 'कि जनाब क्या काम करते हैं?'

'हे भगवान्!' साइमन ने प्रसन्नता से बड़ी बेतकल्लुफी से कहना शुरू किया, 'ग़रीब यहूदियों के लिए आजकल काम ही क्या रह गया है? घूम-फिरकर थोड़ा-बहुत बेच-बाच लेता हूँ और कुछ दलाली भी करता हूँ। इस वक्त मैं किसी धन्धे की चिन्ता नहीं कर रहा हूँ, क्योंकि मैं अपनी सुहागरात तो सरोच्का— शर्म से लाल मत हुई जाओ, सुहागरात साल में तीन दफ़ा नहीं आती है—मनाने जा रहा हूँ। मगर लौट-कर मुझे बहुत-सी सफ़र करनी पड़ेगी और माल बेचना होगा। इस वक्त् तो मैं सरो-च्का को लेकर अगले शहर जा रहा हूँ। वहाँ इनके नाते-रिश्तेदारों से मिलना-जुलना है और उसके बाद फिर हम लोग सफ़र शुरू कर देंगे। पहली सफ़र पर मैं अपनी स्त्री को लेकर जा रहा हूँ···एक प्रकार की सुहाग-यात्रा है। मैं सिदरिस और दूसरी दो अँग्रेज़ी पेढ़ियों का माल बेचता हूँ। आपको नमूने दिखाऊँ? देखिए, मेरे पास ये नमूने···हैं' कहते हुए उसने जल्दी से कपडे. के नमूनों की किताबें अपने बेग में से निकालकर बड़ी होशियारी से जनरल को दिखाना शुरू कर दीं, 'देखिए, कैसे सुन्दर कपड़े हैं! किसी भी विदेशी माल से यह किसी तरह कम नहीं हैं। देखिए, यह रूसी

कपड़ा है और यह अँग्रेज़ी । देखिए, हाथ में लेकर देखिए ! दोनों में कोई फ़र्क़ नहीं है । रूसी कपड़ा किसी तरह अँग्रेज़ी कपडे से कम नही है । देखिए, इससे हमारे देश की उन्नति का पता भी चलता है । रूस को यूरोपवाले व्यर्थ में असभ्य देश समझते हैं ।

'अपने नाते-रिश्तेदारों से मिल-मिलाकर हम लोग मेला देखने जायेंगे, इधर-उधर फिरेंगे, ज़रा मज़ा देखेंगे और जहाज़ में बैठकर वोल्गा पर यात्रा करते हुए ज़ारेज़ीन जायेंगे और वहाँ से काले-सागर में होते हुए अपने वतन ओडेसा पहुँच जायेंगे ।'

'बड़ी अच्छी सफ़र है,' जवान फ़ौजी अफ़सर ने शर्माते हुए कहा ।

'जी हाँ, अच्छी सफ़र है,' साइमन ने उसका समर्थन करते हुए कहा, 'मगर जहाँ गुलाब का फूल होता है, वहीँ काँटे भी होते हैं । सौदा बेचने का काम बड़ा कठिन है । बहुत जानकारी की ज़रूरत होती है—अपने माल की ही जानकारी नहीं, बल्कि इसकी जानकारी की भी ज़रूरत होती है कि उसको बेचने के लिए क्या और कैसे कहना चाहिए । अर्थात् आदमी की पहिचान की भी ज़रूरत होती है । ग्राहक को ख़रीदने की ज़रा भी इच्छा न होने पर भी बेचनेवाले को हाथी की तरह अपने काम पर लगा ही रहना चाहिए और ग्राहक को हर तरह से अपने माल की विशेषताएँ समझानी चाहिए, जब तक कि वह भी उन्हें मान न ले । मैं सिर्फ ऐसा ही माल बेचता हूँ, जिसके बारे में किसी क़िस्म का शक नहीं होता है । ख़राब माल के लिए मुझे कोई लाखों रुपया क्यों न दे, तो भी नहीं छुऊँगा । जहाँ-जहाँ जिस-जिस व्यापारी के यहाँ मेरा माल बिकता है, वहाँ उससे मेरा नाम लेकर पूछिए तो वह फ़ौरन आपसे कहेगा, 'साइमन याकोब्लेविश का माल बिल्कुल टकसाली सोना होता है । साइमन याकोब्लेविश हीरा आदमी है । यह कहते हुए साइमन ने कई और बक्स खोलकर पतलून लटकाने के फ़ीते और बटन दिखाते हुए कहा, देखिए, यह माल भी मैं बेचता हूँ । हर दूकान पर इस माल की आपको तारीफ़ ही सुनने को मिलेगी ।

'जब किसी शहर में बहुत से माल बेचनेवाले आ चुकते हैं तो ख़रीदार बड़ी परेशानी में पड़ जाता है । वे बेचारे ग्राहकों की जान ले लेते हैं । उनके पीछे पड़ जाते हैं । ग्राहक हाथ हिला-हिलाकर उन्हें अपने पास से भगाते हैं, मगर वे उनकी एक नहीं सुनते । मैं इसको तुच्छता समझता हूँ । मैं ऐसा कभी नहीं करता । मेरा नाम साइमन है ! मैं अपने ग्राहक को अपने माल की विशेषताएँ समझा सकता हूँ ।

हाँ, ऐसी हालत में कठिनाई ज़रूर होती है जब कि एक ही साथ दो आदमी उसी क़िस्म का माल बेचने एक ही शहर में आ जाते हैं। ख़ासकर ऐसी दशा में जब कि दूसरा माल बेचनेवाला लुच्चा हो और अपना माल भी न बेच सके और दूसरे का काम भी बिगाडे.। वे हर क़िस्म के तरीक़ों को इस्तेमाल करते हैं···शराब पिलाते हैं···धोखे में डालकर माल बेच देते हैं। मगर यह उनका लुच्चापन है···कमीनापन है! सच्चा व्यापार करना बड़ा मुश्किल काम है। देखिए, मैं एक और माल भी बेचता हूँ—यह देखिए, मसनूई दाँत और आँखें। मगर इसमें कुछ मिलता नहीं है। मैं इसे छोड़ दूँगा। मैं यह सारा धन्धा ही छोड़ देने का विचार कर रहा हूँ, क्योंकि जब तक आदमी जवान और अकेला होता है, तभी तक ऐसे धन्धे ठीक होते हैं, जिनमें तितली की तरह मारा-मारा फिरना होता है। विवाह हो जाने के बाद—घर-गृहस्थी और शायद कई बाल-बच्चे हो जाने के बाद', यह कहते हुए उसने अपनी स्त्री के घुटने थपथपाये जिससे उसका मुँह शर्म से लाल होकर खास तौर पर सुन्दर दीखने लगा—'ऐसे धन्धे ठीक नहीं होते। भगवान ने हम यहूदियों को दुर्भाग्य से खासकर बहुत से बच्चे पैदा करने की शक्ति दी है। ऐसी हालत में अपना कोई निजी धन्धा करके एक स्थान पर ही रहना ठीक है—जहाँ अपना एक झोंपड़ा हो, अपना सोने का कमरा हो, अपना फर्नीचर हो, अपना रसोईघर हो···क्यों श्रीमान्, ठीक है न?'

'हाँ···हाँ···ठीक कहते हैं आप! ज़रूर, ज़रूर!' जनरल ने हाँ में हाँ मिलाते हुए सिर हिलाया।

'और सरोच्का के साथ-साथ मुझे थोड़ा-सा धन भी दहेज में मिल गया है। थोड़े-से मेरा मतलब है, इतना धन जिसकी तरफ़ कोई करोड़पति निगाह उठाकर भी देखना पसन्द नहीं करेगा, पर मेरे हाथ में वह थोड़ा-सा धन तो एक बड़ी पूँजी का काम दे रहा है। मेरे पास अपनी कमाई का बचाया हुआ रुपया भी है और जिन पेढ़ियों से मेरा परिचय है, वे भी मुझे उधार दे देंगी। ईश्वर की कृपा से हमें इससे अपनी साधारण दाल-रोटी मिलती रहेगी और पवित्र इतवार को थोड़ा बहुत हलुआ-पूरी भी।'

'हाँ, हाँ, यह बड़ा अच्छा रहेगा!' ज़मींदार ने हाँफते हुए कहा।

'हम लोग 'साइमन एण्ड सन्स' के नाम से अपनी एक निजी पेढ़ी खोल लेंगे। या 'सिरोच्का एण्ड सन्स' और मुझे आशा है, श्रीमान् हमारे यहाँ से ज़रूर माल

ख़रीदा करेंगे। जब आप साइमान एण्ड सन्स की मेरी दुकान पर तख़्ती लगी देखेंगे, तब आपको फ़ौरन याद हो आयेगी कि आप एक नौजवान से रेल में मिले थे जो प्रेम और खुशी से पागल हो रहा था।'

'ज़रूर ! ज़रूर !' ज़मींदार बोला।

साइमन फ़ौरन उसकी तरफ़ मुड़कर कहने लगा, 'मैं जायदाद की दलाली भी करता हूँ— जायदाद खरीदने-बेचने और गिरवी रखने में काफ़ी होशियार हूँ। शायद मैं आपकी कुछ सेवा कर सकूँ। इस धन्धे में मुझसे अधिक होशियार आदमी आपको दूसरा नहीं मिलेगा। कभी ज़रूरत हो तो इस खादिम को याद कीजिएगा।' कहते हुए उसने अपना कार्ड ज़मींदार को दिया और फिर एक-एक कार्ड अपने दूसरे पड़ोसियों को भी दिया।

ज़मींदार ने अपनी जेब से निकालकर अपना कार्ड भी उसे दिया।

'जोज़ेफ आईवानोविश वेन्जोनोब्स्की' साइमन ने कार्ड लेकर ज़ोर से पढ़ते हुए कहा, 'आपसे मिलकर बड़ी खुशी मुझे हुई है। ज़रूरत पड़ने पर याद रखिएगा...'

'ज़रूर। शायद जल्द ही ज़रूरत पड़े...' ज़मींदार ने सोचते हुए कहा, 'भाग्य से ही शायद हम दोनों यहाँ मिल गये हैं! मैं अपना एक मकान बेचने के लिए ही इस वक्त जा रहा हूँ। अगर आप उसे बेच सकते हों तो आप मुझसे शहर में मिलें। मैं हमेशा ग्राण्ड होटल में ठहरता हूँ। शायद मेरा आपका सौदा पट जाये।'

'ज़रूर पट जायेगा, मेरा आपका सौदा ज़रूर पट जायेगा, मेरे प्यारे दोस्त! मुझे पूरा विश्वास है।' कहते हुए खुशी से साइमन ने ज़मींदार का घुटना अपनी उँगलियों से थपथपाया और बोला, 'याद रखिए, साइमन ने आपका काम हाथ में ले लिया तो आप ज़िन्दगी भर उसे याद करेंगे, उसी तरह जिस तरह आप अपने बाप को याद करते हैं, समझे!'

आध घण्टे के बाद साइमन और नौजवान फ़ौजी अफ़सर प्लेटफार्म पर गाड़ी के डिब्बे के पास खड़े सिगरेट पी रहे थे।

'क्या आप अक्सर इस शहर में आया करते हैं, श्रीमान्?' साइमन ने उससे पूछा।

'नहीं, पहली बार ही जा रहा हूँ—देखिए तो! हमारी फ़ौज का पड़ाव चेर-नोबोव में है। मैं मास्को में पैदा हुआ था।'

'अरे! आप इतनी दूर कैसे आ गये?'

'दाना-पानी ले आया! मैं जब फ़ौज में दाख़िल हुआ तो और कहीं जगह ख़ाली नहीं थी।'

'मगर चेरनोबॉब तो बड़ी रूखी जगह है—इस प्रान्त की सबसे ख़राब जगह वही है।'

'हाँ, दाना-पानी है! क्या किया जाये!'

'तो आप शायद शहर महज़ तफ़रीह के लिए ही जा रहे हैं?'

'जी हाँ! मैं दो-तीन दिन शहर में ठहरूँगा। असल में मैं मास्को जा रहा हूँ। मैंने दो महीने की छुट्टी ली है। सोचा, रास्ते में यह शहर देखता चलूँ। सुनते हैं, बड़ा सुन्दर शहर है!'

'ओह, क्या कहने हैं! ग़ज़ब का शहर है! बिल्कुल यूरोप के शहरों की तरह है। बिजली, ट्राम, थियेटर सब कुछ हैं! मगर शहर जाननेवाला होना चाहिए। कैसे-कैसे नाच-घर हैं! देखकर तबीयत फड़क उठती है। दो-चार नाच-घरों का मैं आपको नाम दूँगा, आप वहाँ ज़रूर जाइएगा और द्वीप पर भी जाइएगा। वह देखने की ख़ास चीज़ है। कैसी-कैसी औरतें वहाँ हैं!'

फ़ौजी अफ़सर का चेहरा लज्जा से लाल हो गया! आँखें फिराकर कम्पित स्वर में उसने कहा, 'जी हाँ, मैंने सुना है। क्या सचमुच वहाँ बड़ी सुन्दर स्त्रियाँ हैं?'

'बाप रे बाप! कौन कहता है वहाँ सुन्दर स्त्रियाँ हैं?'

'नहीं तो और क्या...?'

'वहाँ पागल कर देनेवाली स्त्रियाँ हैं...आदमी को पागल बना देनेवाली स्त्रियाँ! पोलिश, रूसी और यहूदी जातियों का मिश्रित रक्त उन स्त्रियों में है, जिससे वे बड़ी नमकीन और ज़िन्दगी से भरी हुई हैं। मुझे तुम पर बड़ी ईर्ष्या हो रही है। तुम आज़ाद और अकेले वहाँ जा रहे हो। अपने ज़माने में मैं तो कभी ऐसी हालत में अपने ऊपर क़ाबू न रख सकता। ख़ास बात यह है कि वहाँ की स्त्रियाँ प्रेम करना ख़ूब जानती हैं! आदमी के दिल में आग लगा देती हैं! और भी आ...प...को... कुछ पता है?' उसने अपनी आवाज़ को यकायक बिल्कुल धीमा करके पूछा।

'क्या?' फ़ौजी अफ़सर ने घबराकर पूछा।

'पेरिस और लन्दन तक में ऐसा प्रेम नसीब नहीं होता, बल्कि दुनिया भर में कहीं नहीं। मुझसे यह उन लोगों ने स्वयं कहा है जो दुनिया भर फिरे हैं और

जिन्होंने घूमकर अच्छी तरह दुनिया देखी है। यही शहर की ख़ास बात है। ऐसे अजीब और नये नये ढङ्गों से इस शहर में प्रेम किया जाता है, जैसा दुनिया के पर्दे पर कहीं नहीं होता—आप तो उन तरीक़ों को कभी सोच भी नहीं सकते! सचमुच वहाँ ऐसा प्रेम होता है जो आदमी को बिल्कुल पागल बना देता है!'

'क्या ऐसा भी मुमकिन है?' फ़ौजी जवान ने जो इसकी बातें सुनकर दङ्ग रह गया था, धीमे से पूछा।

'ईश्वर मुझसे झूठ न कहलाये! क्षमा कीजिएगा। आप खुद समझते हैं। मेरा उस वक्त विवाह नहीं हुआ था। अकेला ही था। ऐसी हालत में सभी आदमियों से थोड़ा-बहुत पाप होता ही है। अब मैं उस दशा में नहीं हूँ, अतएव बदल गया हूँ। मगर उस वक्त का अभी तक मेरे पास एक बड़ा ख़ास तस्वीरों का संग्रह बाक़ी है। ठहरिए, मैं आपको अभी दिखाता हूँ। मगर उसे बड़ी होशियारी से देखिएगा।'

साइमन ने डरते हुए अपने दायें-बायें देखा और फिर अपनी जेब में से मोरोक्को लैदर की एक ताशों की-सी डिबिया निकाली और फ़ौजी जवान के हाथ में देते हुए बोला, 'यह लीजिए, देखिए! मगर कृपया बड़ी सावधानी से देखिएगा।'

जवान फ़ौजी अफसर ने डिबिया में से कार्ड निकाल-निकालकर देखने शुरू किये। इन कार्डों में सादा और रङ्गीन तरह-तहर के विषय-भोग की दशाओं के वीभत्स कोकशास्त्री चित्र थे, जिनका अनुकरण करके कभी कभी मनुष्य बन्दर और बनमानुस की तरह नीच होने का प्रयत्न करते हैं। साइमन भी उनके कन्धे के ऊपर से चित्रों को देख रहा था और बीच-बीच में कुहनियों से उसे कुरेदकर पूछता था 'कहिए, हैं न यह गजब के तरीके? बिल्कुल पेरिस और वियाना के तरीके हैं!' फ़ौजी जवानने शुरू से आख़ीर तक सारी तस्वीरें देख डालीं। फिर जब वह चित्रों की डिबिया साइमन को वापस करने लगा तो उसका हाथ काँप रहा था, कनपटियों और माथे पर पसीना आ गया था, आँखों के आगे धुँधलापन छा गया था और गालों पर लज्जा की लाली चमक आई थी।

'मगर आप जानते हैं?' साइमन ने यकायक, बड़ी खुशी से कहा, 'अब मेरे लिए सभी एक-सा है। मेरा वक्त गुज़र गया...अब मैं इन चीज़ों से दूर हो गया हूँ। बहुत दिनों से मैं सोचता हूँ कि यह चित्र किसी को दे डालूँ। मुझे इनका कोई खास दाम नियत करने की इच्छा नहीं है। आप चाहें तो ले सकते हैं।'

'मैं···इन्हें···यानी मैं इन्हें खरीद लूँ ? अच्छा...अच्छा···क्या दाम···?'

'अच्छी बात है ! मेरी आपकी अब इतनी जान-पहिचान हो गई है, अतएव मैं आपसे पचास रुपये ले लूँगा। क्या कहा आपने ? बहुत दाम हैं ? अच्छा, अच्छा, कोई हर्ज की बात नहीं है ! आप मुसाफ़िरी में हैं, मैं आपकी जेब कतरना नहीं चाहता हूँ। अच्छा आप तीस रुपये ही दे दीजिए। क्या ? यह भी बहुत है ? अच्छा आइए ···हाथ मिलाइए ! आप पच्चीस रुपये ही दीजिए। अरे बाप रे ! आप तो बड़े ज़बरदस्त आदमी हैं ! चलिए, बीस ही सही ! आप भी क्या याद करेंगे कि कोई मिला था ! और देखिए एक बात आपको और बता दूँ। जब-जब मैं इस शहर में जाता हूं तो हमेशा होटल हरमिटेज में ठहरता हूँ। वहाँ आप मुझे बड़ी आसानी से या तो तड़के या शाम को आठ बजे के बाद जब चाहें मिल सकते हैं। मैं बहुत-सी अच्छी-अच्छी स्त्रियों को जानता हूँ। उन सबसे मैं आपका परिचय करा दूँगा। यह न सोचिएगा कि उन स्त्रियों को रुपये की ज़रूरत रहती है। जी नहीं। वे सिर्फ़ आप जैसे जवान, तन्दुरुस्त, सुन्दर, अच्छे और ख़ुशमिज़ाज आदमियों को पसन्द करती हैं। रुपये की वहाँ ज़रूरत नहीं होतीं ; बल्कि वह अपने खर्च पर बड़े शौक़ से आपको शेम्पेन पिलायेंगी ! देखिए, याद रखिएगा—होटल हरमिटेज ! और यदि आप उन स्त्रियों से न मिलना चाहें तो भी मेरा नाम, इस होटल का पता तो याद ही रखिएगा। शायद, आपको मेरी किसी वक्त ज़रूरत पड़ जाये ! जहाँ तक इन चित्रों की बात है, ये तो ऐसी नायाब चीज़ें हैं कि कभी आपके पास आलमारी में नहीं रखे रह सकते। जो लोग इस प्रकार का आनन्द चाहते हैं, वे ऐसे एक चित्र के लिए एक मुहर देते हैं। मगर हाँ, यह अमीरों का काम है। शायद आपको यह पता नहीं,' साइमन ने बिल्कुल उसके कान में झुककर कहा, 'कि बहुत-सी स्त्रियाँ इन चित्रों को देखकर मोहित हो जाती हैं। आप अभी नौजवान हैं और बड़े सुन्दर भी हैं। न जाने कैसी-कैसी स्त्रियों से अभी आपकी मुलाक़ात होगी !'

रुपया पाकर साइमन ने अच्छी तरह सँभालकर गिना और फिर निर्लज्जता से हाथ बढ़ाकर फ़ौजी अफ़सर से हाथ भी मिलाया जो बेचारा शर्म से आँखें नीची किये ज़मीन में गड़ा जा रहा था। इसके बाद साइमन फ़ौजी जवान को छोड़कर अपने डिब्बे में इस तरह चला गया मानो कुछ हुआ ही न हो।

साइमन बड़ा बातूनी आदमी था। डिब्बे में जाते हुए रास्ते में उसे तीन वर्ष की

एक छोटी सी सुन्दर लड़की मिली, जिसको दूर से ही देखकर वह मुँह बनाने लगा। लड़की के पास आकर वह अपनी एड़ियों पर बैठ गया और बकरी की बोली बोलता हुआ लड़की से पूछने लगा :

'कहाँ जा रही हो श्रीमतीजी? बाप रे बाप! इतनी बड़ी लड़की! अकेली ही सफ़र कर रही हो? अम्मा को छोड़कर आई हो? अपने आप ही टिकट खरीदकर सफ़र पर चल पड़ी हो। बाप रे बाप! कैसी बहादुर लड़की हो! तुम्हारी अम्मा कहाँ हैं?'

इसपर एक लम्बी, सुन्दर और आत्माभिमानी स्त्री ने आगे बढ़कर साइमन से शान्तिपूर्वक कहा 'बच्चे के सामने से हट जाओ। अनजान बच्चों को इस तरह नहीं छेड़ा जाता।' साइमन उछलकर अपने पैरों पर खड़ा हो गया और सिटपिटाता हुआ कहने लगा 'माफ़ कीजिए श्रीमतीजी! मेरा दिल नहीं माना···आपकी लड़की इतनी सुन्दर···इतनी अच्छी है···कि मैं अपनी ख़ुशी नहीं रोक सका··!'

मगर वह स्त्री उससे कुछ न बोलकर अपनी बच्ची का हाथ पकड़कर साइमन की तरफ़ से मुँह फेरकर चल दी। साइमन सिटपिटाया हुआ प्लेटफ़ार्म पर माफ़ी माँगता ही खड़ा रह गया।

चौबीस घण्टे में साइमन कई बार तीसरे दर्जे के उन दोनों डिब्बों में गया जिनमें से एक गाड़ी के इस छोर पर और दूसरा उस छोर पर लगा था। एक डिब्बे में तीन सुन्दर स्त्रियाँ एक काली दाढ़ीवाले गम्भीर सूरत आदमी के साथ बैठी थीं। साइमन इस आदमी से जाकर ऐसी बोली में बातें करता था जो समझ में नहीं आती थी। स्त्रियाँ परेशानी से उसकी तरफ़ मुँह उठा-उठाकर देखती थीं, मानो वह उससे कुछ पूछना चाहती थीं, मगर हिम्मत नहीं होती थी। एक बार सिर्फ़ दोपहर के वक्त उनमें से एक ने इतना कहने की हिम्मत की : 'तो वह सब सच है? जो कुछ तुमने उस जगह के बारे में कहा है?···देखो जी, मेरा जी बहुत घबराता है!'

'क्या कहती हो मारगेरीटा! जो कुछ मैंने कहा वह बिल्कुल पक्का है। ऐसा पक्का जैसा सरकारी बैंक! देखो लेजर', फिर उसने काली दाढ़ी के आदमी की तरफ़ मुड़कर कहा, 'अगले स्टेशन पर इन लोगों के लिए अच्छा-अच्छा खाना देखकर ले लेना। गाड़ी पच्चीस मिनट तक ठहरेगी।'

'मुझे मिठाई चाहिए' हिचकिचाते हुए एक सुनहरी बालों की छोकरी ने कहा, जिसकी आँखें भूरी थीं।

'प्यारी बेला, जो तुम्हें चाहिए ख़ुशी से लो! अगले स्टेशन पर ख़ुद तुम्हारे लिए मिठाई ख़रीदकर भिजवा दूँगा। अच्छा लेजर, तुम तकलीफ़ मत करना। मैं ख़ुद ही सारा खाना लेकर इन लोगों के लिए भिजवा दूँगा।'

तीसरे दर्जे के दूसरे डिब्बे में तो स्त्रियों की पूरी फुलवारी ही साइमन की थी। दस-पन्द्रह स्त्रियाँ एक तगड़ी, ज़बरदस्त, भयङ्कर भृकुटियों की स्त्री के साथ उस डिब्बे में भी बैठी थीं। वह स्त्री बड़ी मोटी आवाज़ से बोलती थी और उसकी मोटी ठुड्डियाँ, छाती और तोंद उसके कपड़ों में रेल के डिब्बे के साथ-साथ हिलती थीं। उस मोटी स्त्री और उसके साथ की छोकरियों को देखते ही उनके व्यवसाय का पता फ़ौरन चल जाता था।

स्त्रियाँ डिब्बे की तिपाइयों पर बैठी, सिगरेट और शराब पीती और ताश खेलती हुई हिल रही थी। बीच-बीच में डिब्बे के मर्द मुसाफ़िर उन्हें छेड़ देते थे और वे जवाब में उन्हें भर्राई आवाज़ों से खरी-खोटी सुनाती थीं। जवान मुसाफ़िर सिगरेट और शराब उन्हें पिला रहे थे।

यहाँ साइमन का ढंग बिल्कुल ही दूसरा था—वह शानदार लापरवाही और बड़े बड़प्पन के साथ उनसे मज़ाक और बातें करता था। और वे स्त्रियाँ उससे बड़ी ख़ुशामद से बातचीत करती थीं। इन तमाम स्त्रियों को, जिनमें रूमानियन, यहूदी, पोल और रूसी सभी थीं, अच्छी तरह देख-भाल करके कि सब ठीक है, साइमन ने उनके लिए खाना मँगाने का हुक्म दिया और बड़ी शान से लौटकर चला गया। वह इस समय उस बंजारे की तरह लग रहा था, जो रेल में भरकर जानवरों को कसाईखाने में बेचने के लिए जाता है और बीच में स्टेशनों पर उतर-उतरकर अपने जानवरों को देखता और चारा इत्यादि डालता है। स्त्रियों को देख-दाखकर वह फिर अपने डिब्बे में जा बैठता और अपनी स्त्री से खेलने लगता और अपने यहूदी चुटकुले कहने लगता।

जहाँ-जहाँ गाड़ी देर तक रुकती, वहाँ-वहाँ वह रिफ्रेशमेन्ट रूम में जाने का बहाना करके, मगर वास्तव में अपने साथ की स्त्रियों को देखने के लिए, उतरता था। पड़ोसियों से अपने आप ही कहने लगता था;

'मुझे खाने की तो इतनी चिन्ता नहीं कि क्या मिलता है, क्या नहीं मिलता, मगर मेरा पेट बड़ा ख़राब है और कभी-कभी इन स्टेशनों पर ऐसा खाना मिलता है कि खाने पर तो दो-चार रुपया ही ख़र्च होता है, मगर डाक्टरों पर दो-चार सौ रुपय

बाद में खर्च करना पड़ता है ! हाँ, तुम सरोच्का, तुम शायद रिफ्रेशमेन्ट रूम में चलकर खाना पसन्द करो। या मैं तुम्हारे लिए यहीं भेज दूँ ?'

सरोच्का उसकी खातिरदारी और इतनी ज़्यादह तवज्जह से शर्माकर लाल होती हुई कहती, 'नहीं सेनया, मेरी फ़िक्र तुम मत करो। मुझे बिल्कुल भूख नहीं है। मगर साइमन खाने के कटोरदान में से थोड़ा-सा खाना निकालकर अपनी स्त्री के सामने रख ही देता और ख़ुद भी उसमें से थोड़ा-सा चखता। स्त्री नज़ाकत से उसमे से थोड़ा-सा खाना खाती और फिर बचा-खुचा कटोरदान में बन्द करके रख देती।

इञ्जन से आगे, बहुत दूर, शहर के चमकते हुए मकान और गुम्बद दीखने लगे थे। टिकिट चेकर ने पास आकर साइमन को इशारे से बुलाया और वह फ़ौरन उठकर उसके साथ दूसरे डिब्बे में चला गया।

'हमारा अफ़सर टिकट देखता हुआ आ रहा है। मिहरबानी करके आप अपनी पत्नी को लेकर ज़रा देर के लिए तीसरे दर्जे के पास आकर खड़े हो जायँ।' टिकट-चेकर ने साइमन से धीरे से कहा।

'बहुत अच्छा ! बहुत अच्छा !' साइमन ने उसकी बात मानते हुए कहा।

'और जो रुपया आपसे तय हुआ है वह भी मिहरबानी करके अब मुझे दे दीजिए।'

'कितना तुम्हें देना है ?'

'जैसा आपसे तय हुआ था, किराये का आधा—पौने तीन रुपया।'

'क्या ?' साइमन ने गुस्से मे कहा। 'पौने तीन रुपया।'

आपने मुझे क्या निरा पागल ही समझ लिया है ? यह लो एक रुपया, यह बहुत है !'

'माफ़ कीजिए जनाब !···यह आप क्या मज़ाक कर रहे हैं . आपसे तय हो चुका है···'

'तय हो चुका है !···क्या तय हो चुका है ?···यह लो आठ आना और, बस, ज़्यादा चीं-चपड़ करोगे तो मैं ही ख़ुद तुम्हारे अफ़सर से कह दूँगा कि तुम बिना टिकट लोगों को गाड़ी में ले जाते हो। समझे, मुझे बिल्कुल दुधारू गाय ही तुमने समझ लिया है !'

टिकट-चेकर की आँखें फैल गईं और उनमें ख़ून उतर आया।

'धूर्त ! बदमाश कहीं का !' उसने कहा, 'तेरे जैसे धूर्त को तो गाड़ी के नीचे ढकेल देना चाहिए !'

लेकिन साइमन ने फ़ौरन ही उसको डाटकर कहा, 'क्या कहा? गाड़ी के नीचे मुझे ढकेल दोगे? मालूम है ऐसी धमकी के लिए तुम्हें क्या सज़ा मिल सकती है? अभी मैं पुलिस को पुकारता हूँ और गाड़ी की जञ्जीर खींचकर उसे खड़ी किये देता हूँ।' यह कहकर उसने ऐसे दृढ़ भाव से जंजीर की तरफ़ हाथ बढ़ाया कि टिकट-चेकर के होश फाख़्ता हो गये। टिकट-चेकर ने घृणा और नाउम्मेदी से हाथ हिलाकर ज़मीन पर थूककर कहा :

'जा तू ही मेरा रुपया रखकर राजा होगा! मगर तुझे यह मेरा रुपया फलेगा नहीं!'

साइमन ने अपनी स्त्री को दूसरे डिब्बे में से यह कहते हुए बुला लिया, 'आओ सरोच्का, थोड़ी देर यहाँ बाहर खड़े होकर हवा खायें। यहाँ से दृश्य भी अच्छा दीखता है।' *

सरोच्का फौरन उठकर, अपनी पोशाक होशियारी से सँभालती हुई—जो ऐसा लगता था उसने ज़िन्दगी में शायद पहली ही बार पहनी थी—साइमन के पास चली गई।

शहर के मकानों और गुम्बदों पर सूर्यास्त की सुनहरी किरणें पड़ती हुई बड़ी सुन्दर लग रही थीं। सामने की पहाड़ियों पर सफ़ेद-सफ़ेद गिरजे जादू के महलों की तरह हवा में बहते हुए लग रहे थे। ऊपर से नीचे तक जंगल फैले हुए थे और नदी के किनारे को सफ़ेद सपाट चट्टानों में जहाँ-तहाँ पेड़ों की कतारें शरीर की रगों और नसों की तरह दीख रही थीं। पाकिस्तान की तरह सुन्दर नगर दौड़ता हुआ स्वयं गाड़ी से मिलने के लिए आता लग रहा था!

गाड़ी रुकने पर उसने तीन कुलियों को बुलाकर अपना असबाब पहले दर्जे की तरफ़ से ले चलने को कहा और अपनी पत्नी को उनके साथ चलने को कहा। मगर स्वयं वह द्वार के पास ठिठककर अपनी स्त्रियों के दलों को ख़ैरियत से गुज़रते हुए देखने के लिए खड़ा हो गया। जब वह मोटी औरत अपने साथ की स्त्रियों को लेकर उसके पास से गुज़रने लगी तो साइमन ने उससे जल्दी से कहा :

'देखो, याद रखना! होटल अमेरिका नाम आइवानूकोवस्काया, कमरा नम्बर बाईस!'

* यूरोप में रेल के सब डिब्बे आम तौर पर एक दूसरे से मिले होते हैं जैसे कि बम्बई से पूना जानेवाली गाड़ियों में होते है।

फिर काली दाढ़ीवाले आदमी से उसने उसी तरह कहा :

'देखो लेज़र, भूलना मत ! इन छोकरियों को अच्छी तरह खिला-पिलाकर सिनेमा में ले जाना और रात के ग्यारह बजे मेरा इन्तज़ाम करना। मैं बातचीत करने आऊँगा। मगर कोई और मुझसे मिलना चाहे तो मेरा पता तुम्हें मालूम ही है—होटल हरमिटेज़ मुझे टेलीफोन कर देना। अगर इत्तफ़ाक से मैं वहाँ न होऊँ तो रीमांन काफे में या वहाँ भी न मिलूँ तो सामने के यहूदी भोजनालय में मुझसे आकर मिलना। मैं यहाँ खाना खाता मिल जाऊँगा। अच्छा, बन्दगी ! ख़ुदा हाफ़िज़ !'

सोलहवाँ अध्याय

साइमन की अपने व्यापार के सम्बन्ध की सारी कहानियाँ झूठी थीं। कपड़ों, फीतों, बटन, मसनूई दाँतों और आँखों के नमूने वह केवल लोगों की आँखों में धूल झोंकने और अपने असली व्यवसाय को छिपाने के लिए अपने साथ रखता था। असल में वह स्त्रियाँ बेचने का काम करता था। यह ज़रूर सच है कि क़रीब दस वर्ष पहिले उसने सारे रूस में घूम-फिरकर किसी एक बिल्कुल ना मालूम कारखाने की ख़राब शराबें बेची थीं, जिससे उसकी ज़बान लच्छेदार बातें करने में बड़ी तेज़ हो गई थी जो कि आम तौर पर माल बेचनेवाले सौदागरों की हो जाती है। इसी काम के सिलसिले में उसे अपना असली व्यवसाय, जो वह अब करता था, हाथ आ गया था। एक बार एक शहर को जाते हुए उसने एक नौजवान दरजिन को किसी तरह अपने प्रेम में फँसा लिया था। इस जवान छोकरी का नाम अभी तक पुलिस की लिस्ट में तो नहीं आया था, मगर प्रेम और अपने शरीर को देने में उसे अधिक झिझक नहीं थी। साइमन भी उस समय जवान था और अपनी जवानी के जोश में वह उसे लिये-लिये घूमा और उस सफ़र में उसने वे मज़े किये जो उसने अपनी ज़िन्दगी में पहले कभी सोचे तक भी नहीं थे। मगर छः महीने के बाद साइमन उससे ऊब उठा—वह उसके लिए एक बड़ा भारी बोझ हो गई। रोज़ दोनों में जलन और अविश्वास के झगड़े और रोना-पीटना होने लगा जो कि बहुत दिनों तक साथ रहने का आम तौर पर नतीजा हुआ करता है।...धीरे धीरे वह उसे मारने पीटने भी लगा। पहले दिन साइमन ने जब उसे पीटा तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ, मगर

फिर वह उसको आदी हो गई और कुछ न कहती थी। यह मानी हुई बात है कि वे स्त्रियाँ जो प्रेम का व्यापार करती हैं, या तो स्वभाव से झूठी, धोखेबाज़ और गप्प हाँकनेवाली होती हैं या बड़ी निस्स्वार्थ, अन्ध-प्रेमी, मूर्ख और भेड़ों की तरह भोली होती हैं जो कि कुछ भी देने से, यहाँ तक कि अपना आत्माभिमान त्याग देने में भी नहीं झिझकतीं। यह दरजिन दूसरे किस्म की स्त्री थी। अतएव साइमन को उसे इस बात पर शीघ्र ही राज़ी कर लेने में अधिक कठिनाई नहीं हुई कि वह बाज़ार में अपने आपको बेचने लग जाय और जिस दिन शाम को उसने बाज़ार में अपने आपको बेचकर पाँच रुपये अपनी कमाई के लाकर साइमन को दिये, उसी दिन शाम से साइमन के मन में उसके प्रति अथाह घृणा पैदा हो गई। यह ध्यान में रखने की बात है कि इसके बाद साइमन को जितनी भी स्त्रियाँ मिलीं और कई सौ स्त्रियाँ उसके हाथों में होकर गुजरी होंगी—उन सभी के प्रति उसके मन में वैसी ही घृणा का भाव क़ायम रहा। साइमन उसको तरह-तरह से चिढ़ाता, पीटता और देख-देखकर ऐसे स्थानों पर मारता, जहाँ उसको बड़ी सख़्त चोट पहुँचती। मगर वह चुपचाप सिसकियाँ भरती हुई कराहती और उसके आगे घुटनों पर गिरकर उसके हाथ चूमने का प्रयत्न करती। उसके इस प्रकार सब कुछ सहन कर लेने से साइमन को और भी चिढ़ होती। वह उसको अपने पास से धकेलकर हटा देता, मगर वह फिर उसी के पास आ जाती। वह उसको घर में से धकेलकर गली में निकाल देता, किन्तु घण्टे दो घण्टे में वह ठण्ड से काँपती हुई फिर उसी के पास लौट आती। अन्त में उसके कुछ बदजात दोस्तों ने उसे बड़ी होशियारी की वह सलाह दी कि वह उसे किसी चकले में बेच दे और इस सलाह पर अमल करने के बाद साइमन का जीवन ही बदल गया।

सच तो यह है कि वह व्यवसाय शुरू करने पर साइमन को बिल्कुल भी विश्वास नहीं था कि वह उसमें सफल हो जायगा, परन्तु सौदा बड़ा अच्छा हो गया। खारकोव के एक चकले की मालकिन से उसका सौदा पट गया। यह मालकिन साइमन को बहुत दिनों से अच्छी तरह जानती थी, क्योंकि साइमन उसके यहाँ अक्सर जाकर मज़ेदार ढङ्ग से पियानो बजाया करता था और ऐसा नाचता था कि बैठक में बैठनेवाले लोटपोट हो जाते थे। सबसे ख़ास बात साइमन में यह थी कि पीनेवालों की वह बिल्कुल ही जेबें ख़ाली कर लेता था। सौदा पट जाने के बाद उसको अपनी स्त्री को समझाना भी बाक़ी था जो कि बड़ा मुश्किल काम साबित हुआ। वह किसी हालत में

उसे छोड़कर जाने को तैयार न हुई ; ख़ुदकुशी कर लेने, अपनी आँखें गन्धक के तेजाब से जला डालने और पुलिस-कप्तान से जाकर उसकी शिकायत करने की वह साइमन को धमकियाँ देने लगी । उसे सचमुच साइमन की कई ऐसी करतूतें मालूम थीं, जिससे साइमन फाँसी पर लटक सकता था । अतएव साइमन ने अपना तरीक़ा बदल दिया । वह एकाएक कोमल बनकर उसको बहुत प्यार करने लगा, फिर एकाएक वह बड़ा दुःखी रहने लगा । जब-जब वह परेशानी से उसके दुःख का कारण पूछती तो वह चुप रहता और कोई जबाब न देता ; फिर कभी-कभी एक दो शब्द मानो ग़लती से कहने लगा ; धीरे-धीरे अपनी ज़िन्दगी के किसी गुनाह की तरफ़ इशारा करने लगा और अन्त में खुलकर गढ़-गढ़कर झूठ बोलने लगा । उसने उससे कहा कि पुलीस मेरी निगरानी कर रही है । जेल से मेरा बचना अब कठिन दीखता है — शायद फाँसी हो जाये ! अतएव कुछ महीने के लिए विदेश चला जाना ही ठीक होगा । साथ ही वह इस बात पर भी ज़ोर देने लगा कि विदेश में एक ऐसा व्यापार भी वह करना चाहता है, जिसमें हज़ारों रुपये उसे मिल सकते हैं । दरज़िन ने उसकी बातों पर विश्वास कर लिया और वह बड़ी डरी—स्त्रियों का वह स्वाभाविक, पवित्र भय बेचारी के हृदय में होने लगा जो कि उसके मातृत्व का अंश होता है । अतएव अब साइमन को उसे यह मनाना कठिन नहीं रहा कि उसको साथ-साथ लिये फिरना साइमन के लिए बड़ा खतरनाक होगा और सबसे ठीक यही है कि वह यहीं बनी रहे और उसका इन्तज़ार करे जब तक कि साइमन का सारा मामला ठीक न हो जाये । इसके बाद उसे यह समझाना बिल्कुल ही आसान था कि सबसे अच्छी छिपकर रहने के लिए सुरक्षित जगह चकले से अच्छी नहीं हो सकती, क्योंकि वहाँ पुलिस की नज़रों से बिल्कुल बची रहेगी । एक दिन साइमन ने उसे अच्छे-अच्छे कपड़े पहिनाकर, बाल की घूँघरें ठीक करके, पाउडर और रूज* लगाकर अपने साथ जहाँ से सौदा ठीक कर आया था, ले गया । फ़ौरन पसन्द कर ली गई और उसी दिन शाम तक थाने से उसका पीला टिकट भी बनकर आ गया । उसे सीने से देर तक लगाकर और आँखों में आँसू भरकर साइमन ने उससे बिदा ली और मालकिन के कमरे में जाकर पचास रुपये जेब में रखे—गोकि उसने माँगे दो सौ रुपये थे । मगर इतने कम दाम मिलने पर भी उसे कोई अफ़सोस नहीं हुआ ; क्योंकि

* गाल गुलाबी करने के लिए लगाने का ढंग ।

मुख्य बात यह थी कि उसे आखिरकार अपना धन्धा मिल गया था, जो कि उसने अपने आप ही ढूँढ़ निकाला था और जिससे उसका भविष्य ही बिल्कुल बदल जाने की सम्भावना थी ।

यह स्त्री बाद में चकले में हो रही । साइमन उसको ऐसा भूल गया कि सालभर के बाद याद करने पर भी उसकी शक्ल याद आना उसको कठिन हो गया । कौन जाने·· शायद वह जान बूझकर बनता हो ?

धीरे-धीरे साइमन दक्षिण रूस में इस व्यवसाय का सबसे बड़ा व्यापारी बन गया । वह कुस्तुनतुनियाँ और अरजेनटाइन तक से व्यापार करने लगा ; छोकरियों के दल के दल वह ओडेसा के चकलों से कीव में, कीव से खारकोव में, और खारकोव से ओडेसा में पहुँचाने लगा । बड़े-बड़े शहरों में जो माल पुराने हो जाते थे या जिनको लोग अधिक जान जाते थे उनको दूसरे जिलों और छोटे शहरों में, जहाँ उनके काफ़ी दाम मिल सकते थे, वह पहुँचाने लगा । धीरे-धीरे साइमन के ग्राहकों की तायदात बढ़ गई, जिनमें काफी सम्मानित और प्रख्यात पुरुष भी शामिल थे जैसे कि लेफ्टीनेन्ट गवर्नर फ़ौजी कर्नल, मशहूर वकील, प्रख्यात डाक्टर, अमीर ज़मीदार और व्यापारी इत्यादि । छिपी दुनिया के सभी चकले की मालकिनों, अकेले पेशा करनेवाली वेश्याओं की कमाई खानेवाली, नाचनेवाली छोकरियों—से वह इसी प्रकार परिचित था जैसे कि आकाश की दुनिया से ज्योतिष-शास्त्र का जाननेवाला परिचित होता है । उसकी ज़बरदस्त याददास्त में, जिसके कारण वह कोई नोटबुक इत्यादि नही रखता था, हजारों नाम और पते थे । अपने सारे अमीर ग्राहकों के स्वभाव और प्रकृति की सभी बातों से वह भली भाँति परिचित रहता था, जिनमें से कोई विकृत और अस्वाभाविक प्रेम के ग्राहक थे, कोई भोली-भाली छोकरियों के लिए बेशुमार रुपया लुटाने को तैयार रहते थे और कोई बिल्कुल कम उम्र की छोकरियाँ चाहते थे । कम उम्र की छोकरियाँ लाना सबसे खतरनाक काम था; मगर मुनाफा भी इस काम में हज़ारों का होता था । अपने अमीर ग्राहकों की अस्वाभाविक विषय-लिप्साएँ पूरी करने के लिए माल पहुँचाने में भी उसे बहुत-सा रुपया मिलता था । मगर ऐसा वह बहुत कम, जब कि खासकर अच्छी धन की गठरी मिलती थी, तभी करता था । दो-चार बार उसे जेल की हवा भी खानी पड़ी थी, मगर इससे उसे कोई हानि नहीं थी । जेल के अनुभव के बाद उल्टा उसका उत्साह और उसकी हिम्मत अपने काम में दुगुनी हो गई थी और वह उसको बड़ी

होशियारी से चलाने लगा था। उत्साह और अनुभव के साथ साथ उसे दुनियादारी और उसके दाँव पेंच भी ख़ूब आ गये थे।

अब तक पन्द्रह बार उसने अपना विवाह किया था और हर बार काफ़ी रुपया दहेज में पाया था। अपनी पत्नी का रुपया गाँठ में बाँधकर एक दिन एकाएक वह ग़ायब हो जाता था और सम्भव होता था तो अपनी पत्नी को भी किसी गुप्त या अच्छे खुले चकले में काफ़ी दाम लेकर बेच देता था। धोखे में पड़ जानेवाली अभागी छोकरी के माँ-बाप पुलिस के द्वारा साइमन की शेरलिग के नाम से उसकी खोज करते थे और वह रोज़ेस्टीन के नाम से एक शहर से दूसरे शहर का सफर करता फिरता था। इस काम में उसे इतनी बार अपने नाम बदलने पड़े थे कि उसकी इतनी अच्छी याददाश्त होने पर भी उसे यह याद रखना मुश्किल हो गया था कि कब या किस साल उसका नाम नेथेनीलसन था और किस साल वक्लयार। यहाँ तक कि उसे अपना असली नाम भी इन्हीं नकली नामों में से एक लगता था। सबसे बड़ी बात यह थी कि उसको अपने व्यवसाय में कोई बुरी या जरायमपेशा चीज़ नहीं लगती थी। उसे यह धन्धा भी बिल्कुल मछली, आटा, माँस या लकड़ी बेचनेवाले दूसरे धन्धों की तरह लगता था। एक तरह से वह धार्मिक आदमी भी था, क्योंकि चाहे वह कहीं भी हो, मुख्य त्योहारों पर वह बाकायदा पूजा-पाठ और व्रत ज़रूर करता था। ओडेसा में उसकी एक बूढ़ी मा और कुबड़ी बहिन ही उसके खानदान के लोगों में रह गये थे जिनके पास वह बराबर, कभी अधिक तो कभी कम रुपया रूस के तमाम शहरों से, जहाँ-जहाँ वह जाता था, भेजता रहता था। बैंक में भी उसके नाम पर काफ़ी रुपया जमा हो गया था और उसको धीरे धीरे वह बढ़ाता ही जाता था – सूद तक उसका बैंक से नहीं निकालता था। मगर वह लोभी या लालची बिल्कुल नहीं था। इस धन्धे का मज़ा, ख़तरा और होशियारी उसे अपनी ओर खींचती थी। स्त्रियों की भी उसे फ़िक्र नहीं थी— यद्यपि वह उनको परखना ख़ूब जानता था। इस सम्बन्ध में वह बिल्कुल उस चतुर रसोइये की तरह था जो अच्छे खाने बनाता है, मगर उसके मुँह में उन खानों को देखकर पानी नहीं आता, क्योंकि वह उनको बनाते-बनाते ही अघा जाता है। किसी औरत को फँसाने, फुसलाने और अपनी मर्ज़ी के अनुसार चलाने के लिए उसे कोई ख़ास प्रयत्न नहीं करने होते थे। वे आप से आप उसके पास आ जाती थीं और उसके हाथ में बिल्कुल मिट्टी की पुलती बन जाती थीं। वह उनसे व्यवहार करने

में एक प्रकार के दृढ़ निश्चल आत्मविश्वास से काम लेता था जिसके सामने वे इसी तरह झुक जाती थीं जैसे कि शैतान घोड़े भी घोड़ों को सिखलानेवाले अनुभवी उस्ताद की आवाज़ सुनकर या नज़र देखकर या थपथपी लगाने पर फौरन ठीक होकर चलने लगते हैं।

वह शराब भी बहुत कम पीता था, हाँ दूसरों के साथ में थोड़ा पी लेता था—अकेला कभी नहीं। खाने की भी उसे अधिक चिन्ता नहीं रहती थी। हाँ, कपड़ों का उसे शौक था—जैसा कि सभी आदमियों को होना है। अच्छे-अच्छे कपड़ों पर और अपनी शक्ल सूरत ठीक रखने पर वह काफ़ी रुपया और वक्त ख़र्च किया करता था। तरह-तरह के कालर, मफलर, कफों, घड़ी की चेनों, कमीजों और जूतों को वह बहुत खरीदता था।

स्टेशन से वह सीधा होटल हरमिटेज गया। होटल के नौकरों ने जो नीली वर्दियों में थे, दौड़कर उसका अस्बाव उठाया और उसे होटल की ड्योढ़ी में ले गये। उनके पीछे-पीछे अपनी स्त्री का हाथ पकड़े हुए, दोनों के दोनों बड़ी अच्छी और शानदार पोशाकों में—मगर उसकी पोशाक बहुत ही शान की थी—और एक हाथ में चौड़ी मूठ की एक ख़ूबसूरत छड़ी थामे हुए जिसकी मूठ पर एक नंगी स्त्री की मूर्ति थी, वह भी होटल में घुसा।

'यहाँ बिना इजाज़त के आप नहीं ठहर सकते,' एक लम्बे-चौड़े और तगड़े द्वार-पाल ने उसकी तरफ़ कठिन और सोते हुए चेहरे से देखते हुए कहा।

'अरे ज़चार! फिर तुमने अपनी पुरानी बात मुझ पर झाड़ी, 'यहाँ बिना इजाज़त नहीं ठहर सकते!' साइमन ने मुस्कराते हुए कहा और उस भीमकाय द्वारपाल की पीठ थपथपाई। 'बिना इजाज़त यहाँ न ठहर सकने के क्या मानी हैं? हमेशा तुम यही कहते हो! मुझे यहाँ सिर्फ़ तीन दिन ठहरना है। काउन्ट इपाटोव से जैसे ही मेरा किराया तय हो गया, मैं चला जाऊँगा। ख़ुदा हाफ़िज! तुम अकेले ही इन तमाम कमरों को घेरे पड़े हो! देखो तो ज़ाचर, तुम्हारे लिए ओडेसा से मैं अबकी बार कैसा अच्छा खिलौना लाया हूँ। देखते ही तुम्हारी तबीयत फड़क उठेगी!'

यह कहते हुए उसने बड़ी होशियारी से द्वारपाल के हाथ में एक गिन्नी घुसेड़ दी जिसको उसने अपनी मुट्ठी में ज़ोर से दाबकर हाथ पीठ के पीछे कर लिया।

सबसे बड़े गोल कमरे में अपना असबाब ठीक से रख लेने के बाद सबसे पहिला

काम उसने जो किया वह यह था कि छः जोड़े बहुत बढ़िया जूते निकालकर कमरे के दरवाज़े के बाहर रख दिये, घण्टी बजाकर नौकर को बुलाया और उससे बोला :

'देखो, फौरन इन सबको अच्छी तरह साफ़ कर दो ! ऐसी अच्छी तरह साफ़ करो कि शीशे की तरह चमक उठें ! तुम्हारा नाम शायद टिमोथी है, क्यों ? अच्छा टिमोथी, देखो, मेरा काम अच्छी तरह करोगे तो मैं तुम्हें ख़ुश कर दूँगा। इनको शीशे की तरह चमका दो !'

सत्रहवाँ अध्याय

साइमन होटल हरमिटेज में तीन दिन और तीन रात से अधिक नहीं रहा, मगर इसी समय में वह लगभग तीन सौ आदमियों से मिल लिया। उसके आने से इस बड़े और चमकीले बन्दरगाह में जान आ गई। साइमन के पास नौकरों को खोल में दफ़्तरों के मालिकों, सस्ते होटलों की मालकिनों और अनुभवी दलालों का जो स्त्रियों के व्यापार में बूढ़े हो गये थे, दिन-रात ताँता लगा रहता था। लालच के कारण नहीं, बल्कि व्यापार में अपने आपको चतुर साबित करने के अभिमान के कारण वह सबसे ख़ूब सौदा करता था जिससे स्त्रियों को वह सस्ता से सस्ता ख़रीद सके। दस-पाँच रुपये अधिक मुनाफ़े के मिल जायें इसकी उसे इतनी चिन्ता नहीं रहती थी जितनी इस बात की कि कहीं यामपोल्स्की को, जिससे उसकी इस व्यापार में सख़्त होड़ रहती थी, उससे अधिक किसी सौदे में मुनाफ़ा न मिल जाये।

इस शहर में पहुँचने के दूसरे रोज़ ही वह अपने साथ बेला नाम की छोकरी को लेकर मेज़ेर नाम के फोटोग्राफ़र के यहाँ पहुँचा और उसके साथ तरह-तरह की हालतों में बहुत से फ़ोटो खिंचवाये। फोटोग्राफर को हर निगेटिव के लिए उसने तीन रुपया और बेला को एक रुपया दिया। इसके बाद गाड़ी में बैठकर वह बारसूकोवा के यहाँ गया।

बारसूकोवा एक ऐसी पुरानी तजुरबेकार छिनाल थी जैसी कि ख़ास तौर पर दक्षिणी रूस में ही पाई जाती हैं। वह न तो पोलिश जाति की थी और न रूसी ही थी। काफ़ी उम्र की और धनवान् हो चुकी थी जिससे कि वह एक आदमी को अपना पति बनाकर और उसके साथ ही एक नाचघर बनाकर बैठ गई थी। उसका पति नम्र स्वभाव का

एक छोटा-सा पोलिश जाति का आदमी था। साइमन और बारसूकोवा दोनों एक दूसरे से बड़े पुराने दोस्तों की भाँति मिले। जब वे एक दूसरे से बातें करने लगे तो उन्हें न तो किसी से किसी क़िस्म का डर लगा, न उसमें शर्म या हया दिखाई दी और न उनमें आत्मा ही लगती थी।

'मैं आपके लिए खास तौर पर तीन औरतें लाया हूँ। एक तो सुनहरे बालोंवाली बड़ी शर्मीली है; दूसरी बड़ी जवान काले बालोंवाली है और तुम्हें हर तरह से .खुश करने के लिए तैयार हो जायेगी; तीसरी एक रहस्यपूर्ण स्त्री है जो केवल मुस्कराती है और बोलती-चालती कुछ नहीं, मगर वह बड़ी सुन्दर है और बड़े ही काम की तुम्हें साबित होगी।'

श्रीमती बारसूकोवा ने उसकी तरफ़ अविश्वास से घूरते हुए सिर हिलाकर कहा, 'मिस्टर साइमन! आप मुझे पट्टी मत पढ़ाइए! क्या आप मेरे साथ फिर वैसा ही सलूक करना चाहते हैं, 'जैसा पिछली बार किया था?'

'ईश्वर की कसम खाकर कहता हूँ। मैं तुमसे बिल्कुल झूठ नहीं कह रहा हूँ! इतना ही नहीं, मैं तुम्हारे लिए एक पढ़ी स्त्री भी लाया हूँ। जो चाहो तुम उससे काम ले सकती हो। मैं समझता हूँ, उसका पारखी भी तुम्हारे पास ज़रूर होगा।'

बारसूकोवा ने रहस्यपूर्ण मुस्कान से पूछा—'तुम्हारी नई पत्नी है?'

'नहीं; मगर अच्छे घर की है।'

'इसका मतलब है कि पुलिस से फिर झकझक होगी?'

'अरे बारसूकोवा! मगर मैं रुपये भी तो सिर्फ़ एक हज़ार ही माँगता हूँ।'

'देखो, ठीक-ठीक बातचीत करो—पाँच सौ लो। मैं बोरे की बिल्ली नहीं ख़रीदना चाहती।'

'देखो बारसूकोवा, हमारा तुम्हारा पहिली ही बार सौदा तो हो नहीं रहा है, न आख़िरी बार है। मैं तुम्हें धोखा देने की कोशिश नहीं कर रहा हूँ। मैं अभी उसे यहीं लिये आता हूँ, मगर एक बात सिर्फ़ ध्यान में रखना कि तुम मेरी ताई हो और तुम्हें उसी ढङ्ग पर उससे बातचीत करना है। मुझे इस शहर में तीन दिन से अधिक नहीं ठहरना है।'

श्रीमती बारसूकोवा की छाती, तोंद और ठुड्डियाँ .खुशी से फूल उठीं।

'ख़ैर, छोटी बातों पर वक्त. बर्बाद करने से कोई लाभ नहीं। न तो मैं ही तुम्हें

देख रही थी। बड़े मित्रभाव से वह उससे फिर बोली, यही मैं आपसे कहना चाहती थी...मिस्टर ..क्या नाम है आपका...'

...'साइमन.. हारीजन...कुछ भी कहिए...'

'अच्छा मिस्टर हारीजन, समझे ! मैं आपसे यह कहना चाहती थी कि आप कुछ भोली लड़कियाँ मुझे दे सकेंगे ? भोली और मासूम लड़कियों की आजकल बड़ी माँग है। क़ीमत आप जो कहेंगे मिल जायेगी। फ़िक्र मत कीजिएगा। मगर आजकल भोली छोकरियाँ माँगने का फ़ैशन चल पड़ा है। जिस हालत में तुम छोकरियों को मुझे दोगे उसी हालत में मैं उन्हें तुमको फिर लौटा दूँगी। यह ज़रा बात तो भद्दी है मगर क्या करूँ...'

साइमन आँखें नीची करके सिर खुजलाता हुआ बोला :

'आपने किसी तरह जान लिया है...मेरी एक पत्नी है...'

'अच्छा...अच्छा...'

मुझे इक़रार करते हुए शर्म आती है कि अभी तक...उसे कैसे समझाऊँ.. मेरी वधू ही है...'

बारसूकोवा खिलखिलाकर हँस पड़ी।

'मैं नहीं जानती थी कि तुम इतने शरीर हो ! अच्छा अपनी पत्नी ही दे दो... वह भी ठीक रहेगी। मगर क्या सचमुच तुमने उससे अभी तब कुछ भी नहीं किया है ?'

'कुछ भी नहीं, मगर उसके लिए मैं पूरे एक हज़ार लूँगा।' साइमन ने गम्भीर चेहरा बनाकर कहा।

'ख़ैर, यह छोटी बात है। एक हज़ार ही सही, मगर यह तो कहो कि वह ठीक तरह से यहाँ व्यवहार करेगी ?'

'क्या कहती हो ?' साइमन ने आत्मविश्वास से कहा।

'मैं तुमसे कह चुका हूँ कि तुम मेरी ताई हो। बस, मैं अपनी पत्नी को अपनी ताई के पास छोड़ जाता हूँ। वह मुझ पर इतनी लट्टू है कि मेरे पीछे उससे तुम मेरे हित में जो भी करने को कहोगी, वह बड़ी ख़ुशी से करने को तैयार हो जायेगी। कोई चीं-चपड़ न करेगी !'

अब इस सम्बन्ध में उन दोनों को कोई बातें करनी नहीं रह गई थीं, अतएव

श्रीमती बारसूकोवा अन्दर जाकर एक हज़ार की हुण्डी का कागज़ ले आई और उस पर अपने बाप का नाम लिखकर अपने हस्ताक्षर कर दिये। हुण्डी काफ़ी बड़ी थी। मगर व्यापारियों की तरह चोरों में भी आपस में बात का ख्याल रखा जाता है। ऐसे धन्धों में लोग एक दूसरे को धोका नहीं देते ; वरना मौत का उनसे सामना होता है। जेलों, गली-कूचों और चकलों में सभी जगह एक सा क़ायदा है।

इसके बाद फौरन ही पिछले द्वार से भूत की तरह बारसूकोवा का प्यारा पति, नाचघर का मालिक, एक छोटे क़द का पोल ऊपर को मूछें मरोड़े हुए, अन्दर घुसा। सबने मिलकर कुछ देर तक शराबख़ोरी की, मेले का ज़िक्र छिड़ा और पकड़-धकड़ और व्यापार की दिक्कतों की बातें हुईं। फिर साइमन ने अपने होटल को टेलीफोन करके अपनी पत्नी को बुलवा लिया और उसका ताईजी और उनके चचेरे भाई से परिचय करा दिया। ख़ुद, एकाएक ज़रूरी काम आ जाने से फ़ौरन शहर के बाहर जाने का बहाना करके, सारा से बड़े प्रेम से लिपटकर मिला और आँखों में आँसू भरकर और उसको चूमकर, उससे बिदा लेकर उसे वहीं छोड़कर चला गया।

अठारहवाँ अध्याय

ईश्वर जाने साइमन के कितने नाम थे—हारीज़न, गोगलोविश, गिडलेविश, औकूनोव, रोजमिटलस्की इत्यादि। उसके कटरे में आते ही कटरे के चकलों में भी बड़े परिवर्तन हो जाते थे। दुनिया इधर से उधर होने लगती थी। ट्रेपेल के यहाँ की छोकरियाँ अन्ना के चकले में, अन्ना के चकले की रुपयेवाली पेढ़ियों में और रुपये-वाली पेढ़ियों की छोकरियाँ अठन्नीवाली पेढ़ियों में दीखने लगती थीं। किसी की तरक़्क़ी नहीं होती थी—हर एक की तनज्जुली ही होती थी। इस किस्म की प्रत्येक तबदीली और उलट-फेर से साइमन को पाँच से लेकर सौ रुपये तक मिल जाते थे। सचमुच इस आदमी में इमात्रा के प्रपात की तरह शक्ति थी। दिन में अन्ना के पास बैठा, सिगरेट के धुएँ से आँखें मींचता हुआ और एक टाँग पर दूसरी रखकर हिलाता हुआ, वह इस प्रकार बातचीत करता दिखाई देता था :

'सवाल यह है...कि अब इस सोनका को तुम्हें क्या ज़रूरत है ? किसी अच्छे चकले के लायक़ तो अब वह रही नहीं है। उसे यहाँ से घटिया चकले में भेज दिया

जाये तो तुम्हें सौ रुपये मिल सकते हैं और मुझे भी पच्चीस रुपए का फ़ायदा हो सकता है। सच बताओ, क्या अब तक उसकी माँग यहाँ है?'

'अरे मिस्टर शैटत्स्की! आपसे बातचीत में जीतना तो किसी को भी सम्भव नहीं है। मगर ज़रा सोचो तो मुझे कितना दुःख उसके लिए होगा! बेचारी कैसी अच्छी छोकरी है!'

साइमन क्षण-भर सोचने लगा। फिर उपयुक्त कहावत सोचकर कहा—'गिरे पर दुनिया में सभी लात मारते हैं! क्या किया जाये! मुझे पूरा यक़ीन है कि अब इस चकले में उसे कोई नहीं चाहता होगा।'

इसाय जो नाटा, बीमार और बूढ़ा होते हुए भी ऐसे मौक़ों पर बड़ी दृढ़ता से बातें करता था, साइमन का समर्थन करता हुआ कहता, 'बड़ी सादी बात तो है। सचमुच उसको इस चकले में अब कोई नहीं बुलाता। ज़रा सोचो तो, अन्ना! पचास रुपये की उसकी चीज़े हैं, पच्चीस रुपये मिस्टर शैटत्स्की को मिल जायेंगे, पचास हम लोगों को बच जायेंगे। मगर यहाँ से उसके चले जाने पर, ईश्वर की कृपा से, हमारा चकला बदनाम होने से तो बचेगा।'

इस प्रकार सोनका रुपयेवाले चकले से निकालकर अठन्नीवाले चकले में भेज दी गई, जहाँ तमाम क़िस्म के लुच्चे-लुँगाड़े और अवारे छोकरियों से जो चाहें सो रात भर करते थे। वहाँ काम सँभालने के लिए बड़ी शारीरिक शक्ति और स्नायुबल की आवश्यकता पड़ती थी। एक बार सोनका ने वहाँ की थेलका नाम की ढाई मन की मालकिन को, जल्दी से आँगन में पेशाब करने के लिए बैठते हुए, दर्बान से कहते सुना—'देखो, आज छत्तीस मेहमान एक साथ आनेवाले हैं, उनको मत भूल जाना' तो उसका दम खुश्क हो गया।

ख़ुशकिस्मती से सोनका को यहाँ भी कोई अधिक परेशान नहीं करता था। इस चकले में भी उसकी अधिक माँग नहीं होती थी। जब कोई दूसरी छोकरी ख़ाली नहीं होती थी, तभी लोगों का ध्यान उसकी तरफ़ होता था। सोनका का यहूदी प्रेमी उसको ढूँढ़ता हुआ यहाँ भी आ पहुँचा। वह रोज़ शाम को उसके पास आया करता था। मगर अपनी बुज़दिली अथवा यहूदी परहेज़ अथवा शायद उसके प्रति शारीरिक घृणा के कारण चकले से निकालकर अपने घर सोनका को बैठा लेने की उसे कभी हिम्मत नहीं हुई रात-रात भर वह आकर उसके पास बैठता था और वह अन्दर

चली जाती थी तो बड़े सब्र से उसके लौटने का इन्तज़ार करता था और उसके लौटने पर ईर्ष्या का इज़हार करता और ख़ुद कुढ़ता और उसे कुढ़ाता था, मगर फिर भी वह सोनका को हृदय से चाहता था। दिन भर बेचारा दूकान पर दवाएँ बनाता हुआ बराबर सोनका की याद किया करता था।

उन्नीसवाँ अध्याय

शहर के छोर के एक कैबैरट[1] के द्वार पर घुसते ही एक मसनूई फूलों की क्यारी थी जिसमें फूलों की स्थान पर बिजली के रङ्ग-बिरंगे बल्व चमकते थे और इसी प्रकार चमकती हुई मेहराबों के नीचे घूमता हुआ एक रास्ता बग़ीचे के भीतर चला जाता था। आगे चलकर एक चौड़ी, छोटी, चौकोर जगह थी, जिस पर पीली रेत बिछी हुई थी। उसकी बाईं तरफ़ एक खुला स्टेज नाटक खेलने के लिए बना था, सामने एक सीप की शक्ल की जगह बैण्डवालों के लिए बनी थी और मेज़ें थीं, जिन पर शराब की बोतलें और फूलों के गुलदस्ते रखे थे; दाँई तरफ़ रेस्टोरॉं की लम्बी जगह थी। ऊँचे-ऊँचे खम्भों पर लगे हुए बिजली के गोल-गोल कन्दीलों का मन्द, दूध का-सा धुला सफ़ेद प्रकाश चौकोर जगह में फैल रहा था। कन्दीलों के फ्रास्टेड[2] शीशों पर, जिन पर तार की जालियाँ लगी थीं; पतगों के झुण्ड के झुण्ड आ-आकर अपना सिर पटकते थे और उनकी काँपती हुई परेशान छायाएँ नीचे ज़मीन पर लोटती थीं। भूखी स्त्रियाँ हल्की, दिखावटी, रङ्ग-बिरंगी, पोशाकें पहिने हुए जिनके चेहरों पर बेफ़िक्री की मौज अथवा ऐसा बड़प्पन और अभिमान का भाव दीखता था कि जिससे उनके पास फटकने की हिम्मत न हो, जोड़ों के मर्दों के साथ थकी हुई चाल से इधर से उधर और उधर से इधर थिरक रही थीं। रेस्टोरॉं की सारी मेज़ें घिर चुकी थीं—और उन पर से छुरी, काँटों और तश्तरियों की आवाज़ और लगातार गपशप की बहती हुई लहरें उठ रही थीं। खाने की चटपटी सुगन्ध हवा में मँहक

१—कैबैरट उस जगह को कहते हैं जहाँ विश्राम-गृह अर्थात् खाने-पीने के स्थान के साथ-साथ नाचने इत्यादि का स्थान और प्रबन्ध भी होता है।

२—शीशे जिनको रगड़कर धुँधला कर दिया जाता है, जिससे रोशनी सीधी आँखों में न पड़े।

रही थी। रेस्टोरां के बीचोबीच बाजे बजने की जगह पर, लाल कपड़ों में, हट्टे-कट्टे, सफ़ेद दांतों के, चिकने व गलमुच्छेवाले रूमानिया के निवासी, मूछें नीची किये हुए, बन्दरों की तरह बाजे बजा रहे थे और रेस्टोरां का नेता, आगे की तरफ़ झुक-झुककर, बनावटी अदा से झूमता हुआ, बेला बजा रहा था और लोगों की तरफ़ ऐसी भोंडी तरह पर कटाक्ष करता था जैसा कि मर्द-वेश्याएँ[1] करते हैं। बिजली की बत्तियों का थका प्रकाश, स्त्रियों के भड़कीले शृङ्गारों की चमक-दमक, चटपटे खानों की महँक और बाजों के संगीत का उतार-चढ़ाव और लचक, सब मिलकर एक पगली, उकतानेवाली, मूर्खतापूर्ण, ऐय्याशी और हँस-खुशी की उन्मत्त शराबखोरी का समा बना रहे थे।

रेस्टोरां के हाल में, ऊपर चारों तरफ़, खुली हुई गैलरियाँ थीं, जिनमें बहुत से निजी कमरों के द्वार खुलते थे। इन निजी कमरों में से एक में दो स्त्रियाँ और दो मर्द बैठे हुए थे। इनमें से एक तो रूस की प्रख्यात गानेवाली, रोविन्सकाया नाम की ऐक्ट्रेस थी, लम्बी और हरी-हरी मिस्र देश की स्त्रियों की-सी आँखोंवाली थी जिसका शरीर भरा हुआ और सुन्दर, मुँह लाल और लम्बा तथा उत्तेजक और लोभी होंठ कोनों पर झुके हुए थे; दूसरी एक अमीर स्त्री वैरोनेस टेफटिङ्ग नाम की थी जो छोटी, सुन्दर और पीली-पीली थी और हमेशा वह रोविन्सकाया के साथ-साथ घूमा करती थी; तीसरा आदमी प्रख्यात वकील रायज़ेनाव था; और चौथा बोलोद्या चैपलिन्स्की नाम का एक अमीर दुनियादार नौजवान था जो कवि भी था और जिसकी रोजमर्रा की बातों पर बनाई हुई कविताएँ शहर में काफ़ी प्रचलित थीं।

कमरे की दीवालें लाल थीं और उन पर सुनहरा काम किया हुआ था। मेज़ पर बिजली की बत्तियों के प्रकाश में रखे हुए चाँदी की कलई के एक बर्तन से, जिसके ऊपर ठण्ड से पानी की बूँदें आ गई थीं, दो शराब की बोतलों की काली-काली गर्दनें निकल रही थीं और शराब के गिलासों में बारीक सुनहरी रोशनी भर रही थीं। कमरे से बाहर, द्वार के पास, दीवार के सहारे एक वेटर इन लोगों का हुक्म बजा लाने के लिए तैनात खड़ा था। होटल की तगड़ी व लम्बी मालकिन जिसके दाहिने हाथ की छिगुनी एक बड़े हीरे की अँगूठी पहने हमेशा बाहर को निकली रहती थी, टहलती हुई बार-बार इन कमरों के द्वारों के पास आती थी और ठिठक-ठिठककर अन्दर की बातें अपना एक कान लगाकर सुनने का प्रयत्न करती थी।

१— यूरोप मे मर्द वेश्याएँ भी होते हैं।

बैरोनेस थके व पीले चेहरे से, अपना चश्मा उठा-उठाकर नीचे की भीड़ को बार-बार देखती थी जो मुँह चलाती और गुनगुनाती हुई अपना वक्त काट रही थी। स्त्रियों की लाल, सफ़ेद, नीली और ज़र्द पोशाकों में मर्दों की एक-सी शक्लें लम्बे चौड़े व काले पतङ्गों की तरह लग रही थीं। रोविन्सकाया लापरवाही से, मगर ग़ौर से, बाजे बजानेवालों और तमाशबीनों की तरफ़ देख रही थी और उसके चेहरे पर भी थकान और शायद उस सन्तोष की बदहजमी के चिह्न दीख रहे थे जो कि मशहूर शख़्सों को ऐसे आम दृश्य देखते-देखते होने लगती है। उसके बायें हाथ की सुन्दर, लम्बी व पतली-पतली उङ्गलियाँ उसकी कुर्सी की लाल मखमल पर रखी हुई थीं। अँगुलियों पर हीरों और लालों की बेशक़ीमती अँगूठियाँ इस लापरवाही से लटक रही थीं, मानों वह किसी भी क्षण अँगुलियों में से निकलकर नीचे गिर पड़ेंगी। एकाएक वह हँसने लगी।

'देखो' वह बोली, 'वह आदमी कैसा हास्यास्पद दीखता है . सच तो यह है कि यह पेशा ही हास्यास्पद है ! देखो वहाँ वह बाजावाला जो सप्तसुरी बजा रहा है !'

सबके सब बाजेवाले की तरफ़ देखने लगे। सचमुच उस दृश्य को देखकर हँसी रोकना मुश्किल था। रूमामियन आदमियों के आरचेस्ट्रा में एक मोटा, गलमुच्छेदार आदमी बैठा हुआ, जो कि एक बड़े खानदान का ही नहीं बल्कि शायद पिता का पितामह भी होगा, सप्तसुरी की सातों बाँसुरियों को फूँक-फूँककर बजा रहा था। बाजे को अपने मुँह पर इधर-उधर ले जाना उसके लिए कठिन था, अतएव वह जल्दी जल्दी अपना मुँह दायें बायें करता हुआ बाँसुरियाँ फूँक रहा था।

'विचित्र धन्धा है यह भी' रोविन्सकाया बोली, 'चैपलिन्स्की, तुम तो ज़रा अपना मुँह इस तरह चलाने की कोशिश करो।'

बोलोद्या चैपलिन्स्की उस पर मन ही मन बेतरह से फ़िदा था, अतएव उसका हुक्म होते ही वह उत्साह से बाजेवाले की तरह इधर-उधर अपना मुँह करने का प्रयत्न करने लगा, मगर क्षणभर ही में बन्द करके वह कहने लगा :

'असम्भव है। इसके लिए बड़ा अभ्यास अथवा खानदानी लियाक़त की ज़रूरत है।'

बैरोनेस एक गुलाब के फूल की पँखुड़ियाँ तोड़-तोड़कर चुपचाप एक प्याले में डाल रही थी। वह बड़ी मुश्किल से अपनी जँभाई को रोकती हुई रूखा मुख बनाकर कहने लगी :

'हे ईश्वर, किस बुरी तरह से यहाँ लोग वक्त काटते हैं। देखो न तो हँसी ही है, न गाना और न नाचना। ऐसा लगता है, मानों भेड़ों की तरह लोग यहाँ बाड़े में जबरदस्ती वक्त काटने के लिए भर दिये गये हों।'

रायजेनाव ने सुस्ती से अपना जाम उठाया और उसमें से थोड़ी शराब पीकर लापरवाही से अपनी सुन्दर आवाज़ में बोला, 'अच्छा, क्या आपके पैरिस या नाइस के लोग यहाँ से अधिक आनन्द उठाते हैं? मेरा तो ख्याल है कि आनन्द उठानेवाले लोग ही अब दुनिया से उठ चुके हैं और फिर उनके दुनिया में आने की भी सम्भावना अब नहीं लगती। मैं समझता हूँ लोगों को समझने के लिए काफ़ी सब्र की ज़रूरत है। क्या पता नीचे हाल में भरे हुए इन तमाम आदमियों के लिए आज की शाम भी काफ़ी छुट्टी की और आराम देनेवाली हो?'

'मुलज़िमों की तरफ़ से आपका सफ़ाई का व्याख्यान' चैपलिन्स्की ने अपने शान्त ढङ्ग से कहा।

मगर रोविन्सकाया ने एकाएक इन लोगों की तरफ़ घूमकर देखा और उसकी नीलम की तरह आँखें छोटी हो गईं। यह उसके क्रोध का चिह्न था, जिसको देखकर शाही खानदानों के शाहज़ादे भी कभी कभी सिटपिटा जाते थे, मगर उसने तुरन्त ही अपने आपको सँभालकर सुस्ती से कहा :

'मेरी समझ में नहीं आता कि आप लोग किस बात के लिए इतनी बहस कर रहे हैं, मैं यह नहीं समझती कि यहाँ पर हम लोगों के आने का मतलब क्या था, क्योंकि अब देखने के लिए दुनिया में क्या रह गया है? मैंने स्पेन में बैलों की लड़ाइयाँ देखी हैं, जिन्हें देखकर हृदय में बड़ी घृणा उत्पन्न होती है। मैंने आदमियों की कुश्तियाँ और घूसेबाज़ी भी देखी जो कि बिलकुल बेहूदा चीज़ें हैं। मैंने चीतों के शिकार में भी हिस्सा लिया है, जिसमें मैं एक बड़े बुद्धिमान, सफ़ेद हाथी की पीठ पर हौदे में एक छत्र की छाया में बैठी थी।...सूक्ष्म में आप सब लोग यह सब अच्छी तरह जानते ही हैं और मेरे इन सारे महान् रङ्गीन, गुलाबी जीवन में जिसमें मैं बूढ़ी हो गई हूँ...'

'बूढ़ी हो गई हूँ? क्या कहती हो ऐलेना विक्टोरोव्ना!' चैपलिन्स्की ने स्नेह से उसे झिड़का।

'चापलूसी की बातें जाने दो, बोलोद्या! मैं अच्छी तरह जानती हूँ, मेरा शरीर, अभी

तक सुन्दर और जवान है, मगर सचमुच मुझे कभी कभी लगता है कि मैं निन्यानबे वर्ष की हूँ। मेरी आत्मा ऐसी थक गई है। किसी तरह मैं चलाये जाती हूँ। अपने सारे जीवन में सिर्फ तीन घटनाओं ने मेरी आत्मा पर असर किया जो मुझे अच्छी तरह याद हैं। पहिली तो जब मैं बिल्कुल छोकरी ही थी, तब हुई थी। एक दिन मैंने एक बिल्ली को धीरे-धीरे दबककर एक गौरैया पर हमला करने के लिए जाते देखा। मैं घबराई हुई उस बिल्ली की होशियारी की चाल और गौरैया की सजग निगाह की तरफ चुपचाप देखने लगी। मुझे आज तक पता नहीं है कि मुझे उस बिल्ली की चतुराई से अधिक सहानुभूति थी अथवा उस गौरैया का फुर्ती से। गौरैया बिल्ली से अधिक फुर्तीली निकली। क्षण भर में फुदककर वह पेड़ की शाख पर जा बैठी और वहाँ से चहक-चहककर उसने बिल्ली को अपनी भाषा में ऐसी-ऐसी सुनानी शुरू की कि मैं उसकी भषा जानती होती तो उसकी गालियाँ सुनकर मेरा चेहरा लाल हो जाता। बिल्ली ने इस प्रकार अपनी दुम सीधी करके ऊपर को उठाई मानों उसके साथ बड़ा अन्याय हुआ हो और वह ऐसा बहाना-सा करने लगी जैसे कि कुछ हुआ ही नहीं। दूसरी घटना एक मशहूर गायक के साथ मैं गाने के लिये जब स्टेज पर गई तब हुई।...'

'किस गायक के साथ?' बैरोनेस ने जल्दी से पूछा।

'कोई सही! नाम से क्या मतलब है? जब मैं उसके साथ गाने लगी तो मुझे ऐसा लगा कि मेरी आत्मा संगीत से भरी जा रही है और उसकी आवाज़ से अपनी आवाज़ मिलाकर मैंने कैसा सुन्दर सङ्गीत का आलाप किया! आह, उसका वर्णन करना असम्भव है! आज भी याद से रोमाञ्च हो उठता है! शायद ऐसा जीवन में एक ही बार होता है! मुझे अपने पार्ट के अनुसार उसके साथ गाते-गाते रोना भी था! मैं दिल से, आँखों में सच्चे आँसू भरकर रोई और बाद में पर्दा गिर जाने पर जब उस महान् गायक ने आकर अपने विशाल और गरम हाथों से मेरे बाल थपथपाकर अपनी जादू भरी मुस्कान से मुझसे कहा, 'बहुत सुन्दर गाया! अपने जीवन में आज पहली ही बार मैंने ऐसा सुन्दर गाया है'.. तब मैंने...मुझे आज तक अभिमान है...उसके हाथ पकड़कर चूम लिये। उस वक्त भी मेरी आँखों में आँसू भर रहे थे...'

'और तीसरी घटना?' बैरोनेस ने पूछा। उसकी आँखें ईर्ष्या से जल उठी थीं।

'तीसरी घटना,' ऐक्ट्रेस ने अफ़सोस से कहा, तीसरी घटना बड़ी साधारण-सी

है। पिछले वर्ष जब मैं नाइस में थी तो मैंने एक नाटक देखा जिसमें सीसेल केटन पार्ट ले रही थी जो बेचारी—अब भगवान् जाने उसके लिए यह अच्छा हुआ या बुरा—इस संसार में नहीं है।'

यह कहते हुए एकाएक उसकी सुन्दर आँखें भर आईं और इस प्रकार की एक जादू की सी हरी-हरी रोशनी से चमक उठीं जैसी कि ग्रीष्म ऋतु की सन्ध्या में सितारों से निकलती है। उसने अपना मुँह फेर लिया और उसकी लम्बी-लम्बी उँगलियाँ परेशानी से कुर्सी की मखमल को पकड़-पकड़कर मसलती रहीं, मगर फिर जब उसने अपना मुँह अपने मित्रों की तरफ़ मोड़ा तो उसकी आँखें सूखी थीं और उसके रहस्यमय और हठीले होठों पर मुस्कान नाच रही थी।

रायज़ानोव ने उससे एक बड़ी विनम्र और निश्चयपूर्वक शान्त आवाज़ में पूछा।

'लेकिन ऐलेना विक्टोरोब्ना, अपनी इतनी शोहरत, अपने भक्तों और लोगों की तालियों और आनन्द से भी तुम्हारी आत्मा में प्रसन्नता नहीं आती?'

'नहीं, रायज़ानोव,' उसने थकी हुई आवाज़ में उत्तर दिया, 'तुम भी अच्छी तरह जानते हो कि उस सारे नाम और शोहरत का मूल्य क्या है—एक अखबार का सम्वाददाता जो अपने दोस्तों के लिए मुफ्त के टिकट और एक बन्द लिफ़ाफे में पच्चीस रुपये चाहता है, स्कूलों और कालिजों के छोकरे और छोकरियाँ जो अपनी किताबों पर मुझसे कुछ लिखकर दूसरों को दिखाना चाहती हैं; कुछ बूढ़े मूर्ख, पेन्शनयाफ़्ता जनरल या कर्नल जो मेरे गाने को सुनकर गुनगुनाने लगते हैं; जिधर जाओ उधर ही लोगों का उँगलियाँ उठाकर कहना, 'वह जा रही है - वह प्रख्यात गानेवाली!' गुमनाम तारीफ़ के खत और गा चुकने के बाद लोगों का, जिनकी ऐसी आदत पड़ी होती है, स्टेज के पीछे आकर फूल भेंट करना। यही तो शोहरत का नतीजा होता है या और भी कुछ? तुम्हें भी तो ऐसी काफ़ी स्त्रियों से अवसर पड़ता होगा?'

'हाँ, हाँ,' रायज़ानोव ने निश्चय से कहा।

'बस, इसी को शोहरत कहते हैं! मगर सबसे ख़राब बात तो यह है कि जब मैं अपनी अन्तरात्मा में संगीत भरकर गाना चाहती हूँ, तब मैं अनुभव करती हूँ कि मैं लोगों की तरफ़ झूठे हावभाव कर रही हूँ...और मेरे हृदय में इस बात का डर भरा हुआ है कि कहीं लोग मुझसे अधिक किसी दूसरी गानेवाली को पसन्द न करने

लगें···और मुझे हमेशा यह डर लगता रहता है कि कहीं ज़रा से अधिक गाने से गला ख़राब न हो जाये···हमेशा गला ठीक बनाये रखने की फ़िक्र लगी रहती है। शोहरत भी सचमुच एक बड़ा बोझ है !'

'मगर हुनर की शोहरत ?' वकील ने कहा, 'कलाविद् की शक्ति राजाओं और महाराजाओं की शक्ति से भी कहीं बढ़कर होती है !'

'हाँ, हाँ, ठीक कहते हो मित्र। मगर शोहरत और शोहरतमन्द दूर से ही अच्छे होते हैं···उनका स्वप्न ही प्रिय होता है। जब शोहरत पास आ जाती है तो वह छेदने लगती है और जब वह फिर घटने लगती है तो उसका ज़रा-ज़रा-सा घटना बड़ा बुरा लगता है। एक बात कहना तो मैं भूल ही गई। हम ऐक्टरों को बिल्कुल सख़्त मशक्कत की सज़ा रहती है। सुबह की वरजिश[1], दिन में रिहर्सलें, फिर खाना इत्यादि खाकर जैसे ही तैयार हुए तमाशे का वक्त आ जाता है और उसमें लग जाना होता है। एक दो घण्टे कभी पढ़ने लिखने को या आनन्द करने को, जैसा इस वक्त हम लोग कर रहे हैं, मिल जाते हैं तो हम लोग उसे अपना बड़ा भाग्य समझते हैं और फिर आनन्द भी ऐसा लचर···'

उसने यह कहकर अपना हाथ उठाकर उँगलियों से लापरवाही दिखाते हुए, थकान का इशारा किया।

बोलोद्या चैपलिन्स्की ने इस बातचीत से घबराकर एकाएक पूछा, 'अच्छा ऐलेना विक्टोरोव्ना, यह बताओ कि अपनी थकान और ऊब दूर करने के लिए तुम्हें किस किस्म के आनन्द की ज़रूरत लगती है ?'

उसने चैपलिन्स्की की तरफ गूढ़ दृष्टि से देखा और फिर, ऐसा लगा कुछ शर्माकर शान्त भाव से बोली।

'पूर्वकाल के लोग आनन्द करते थे, क्योंकि वे बड़े आज़ाद तबीयत के होते थे। मुझे लगता है कि मैं उसी काल में जन्मी होती तो बड़ी सुखी रहती। आह, कहाँ है वह पुराना रोम का ज़माना !'

रायज़ानोव ने जिसके सिवा किसी की समझ में उसकी बात न आई, उसकी

---

१ व्यायाम, हिन्दुस्तान के अभिनेता और अभिनेत्रियाँ ऐसा नियमित जीवन नहीं रखते, इस लिए शीघ्र ही ख्याति के साथ-साथ चर्बी भी उन पर चढ़ने लगती है।

तरफ न देखते हुए, अपनी कोमल आवाज़ में धीमे से, ऐक्टर की भाँति, एक पुरानी लैटिन की कहावत कही।

बिल्कुल ठीक! रायज़ानोब मुझे तुम बहुत ही भाते हो; क्योंकि तुम बड़े चतुर हो। तुम उड़ते हुए विचारों को भी फ़ौरन पकड़ लेते हो, गोकि मैं साथ में यह भी कहूँगी कि यह कोई बड़ी बुद्धिमानी की बात नहीं है। सचमुच दो प्राणी एक दूसरे से मिलते हैं, हिल-मिलकर साथ-साथ बैठते हैं, खाते-पीते हैं, और फिर उनमें से एक चल देता है, समझे—हमेशा के लिए इस ज़िन्दगी को छोड़कर चल देता है, न किसी से गिला या शिकवा उसे होता है और न किसी से भय। कैसा महान् दृश्य है—मेरे मन को यह दृश्य कैसा लुभाता है!'

'कितनी क्रूरता तुममें भरी हुई है' बैरोनेस ने विचारते हुए कहा।

'हाँ, मगर उसका अब क्या उपाय हो सकता है! मेरे पूर्वज बड़े लड़ाकू और लुटेरे थे। ख़ैर, अब यहाँ से हम लोग चलेंगे नहीं?'

सब लोग उठकर बाग़ के बाहर गये। चैपलिन्स्की ने अपनी मोटर-गाड़ी बुलवाई। ऐलेना विक्टोरोब्ना उसकी बाँह पर झुक रही थी। एका-एक उसने पूछा।

'सच कहना, बोलोद्या, जब तुम भली कहलानेवाली स्त्रियों का साथ छोड़ देते हो तो फिर कहाँ जाते हो?'

चैपलिन्स्की इस एकाएक पूछे गये प्रश्न से चक्कर में पड़ गया, मगर वह अच्छी तरह जानता था कि रोबिन्सकाया से झूठ बोलना सम्भव नहीं है।

'श्रीमती···आपसे कहना उचित नहीं है। ज़िगानी जैसे होटल और नाचघरों में······'

'और भी कहीं? इससे भी बुरी जगह?'

'आप मुझे बड़ी मुश्किल में डाल रही हैं। जब से मैं तुम्हें प्यार करता हूँ तब से...'

'छोड़ो, छोड़ो, यह अपने प्रेम की बातें छोड़ो!'

'अच्छा, मगर कैसे कहूँ?' बोलोद्या बड़बड़ाने लगा और उसका मुँह ही नहीं बल्कि सारा शरीर लाल हो गया, 'और हाँ, औरतों के पास। मगर यह मैं नहीं करता···'

रोबिन्सकाया ने ईर्ष्या से उसकी बाँह ज़ोर से अपने शरीर से चिपटाकर पूछा 'चकले में?'

बोलोद्या ने कुछ उत्तर नहीं दिया। फिर वह बोली, 'चलो हम लोगों को भी अभो फौरन तुम अपनी मोटर-गाड़ी से चकले में ले चलो। मगर देखो, वहाँ मेरी रक्षा का सारा भार तुम पर रहेगा।'

दूसरे दिनों मित्रों ने भी इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया, क्योंकि ऐलेना विक्टोरोब्ना का विरोध करना असम्भव था। वह हमेशा जो चाहती थी, सो करती थी और उन लोगों को यह भी मालूम था कि पीटर्सबर्ग में शराबख़ोर स्त्रियाँ और छोकरियाँ भी, अपनी मौज और अपने अहंकार में इससे भी विचित्र-विचित्र बातें करती हैं जो रोबिन्सकाया ने इस समय करने का प्रस्ताव किया था।

बीसवाँ अध्याय

कटरे की तरफ़ जाते हुए रोबिन्सकाया रास्ते में बोलाद्या से बोली—'पहले सबसे बढ़िया चकले में, फिर मध्यम श्रेणी के चकले में और बाद में सबसे खराब चकले में ले चलना!'

'मेरी प्यारी ऐलेना विक्टोरोब्ना,' चैपलिन्स्की ने स्नेह से कहा, 'मैं तुम्हारे लिए सभी कुछ करने को तैयार हूँ। मैं डींग नहीं मारता। सचमुच अपनी जान और सब कुछ तुम्हारे इशारे पर दे देने को तैयार हूँ...मगर इन चकलों में तुम्हें ले जाने की मेरी हिम्मत नहीं होती। रूसी लोगों का बर्ताव बड़ा भोंडा होता है...अक्सर जानवरों का-सा होता है। मैं डरता हूँ कहीं तुमसे वहाँ कोई बुरी बात न कह बैठे या कोई वहाँ का मेहमान तुम्हारे साथ कोई बुरा बर्ताव न कर बैठे...'

'हे भगवान्' रोबिन्सकाया ने बेसब्री से उसकी बात काटते हुए कहा, 'जब मैं लन्दन में गाया करती थी, तब बहुत से लोग मुझसे प्रेम करना चाहते थे। मगर उस समय भी मैं अपने मित्रों के साथ गन्दे से-गन्दे स्थानों में जाने से नहीं हिचकती थी। किसी ने कभी मुझसे कोई बुरी बात नहीं की और न बुरा व्यवहार ही किया। हाँ, उस समय हमेशा मेरे साथ दो अमीर अँग्रेज़ रहते थे, जो दोनो लार्ड थे, खेल-कूद में भाग लेनेवाले अच्छे खिलाड़ी थे और शारीरिक और नैतिक दृष्टि से बलवान् भी थे। वे कभी किसी औरत का अपने सामने अपमान होता नहीं देख सकते थे। मगर बोलोद्या तुम शायद कायर जाति के हो?'

चैपलिन्स्की क्रोध से लाल होकर बोला :

'क्या कहती हो, ऐलेना विक्टोरोव्ना ! मैं तो अपने स्नेह के कारण तुम्हें पहले से आगाह कर रहा था। जहाँ तुम्हारा हुक्म होगा, मैं तुम्हें ले चलने को तैयार हूँ। इन खराब स्थानों में नहीं बल्कि मौत का मुक़ाबला करने को चलना हो तो वहाँ भी तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ।'

इस वक्त उनकी गाड़ी कटरे के सबसे शानदार और अमीर चकले ट्रेपेल के द्वार पर पहुँच चुकी थी। रायज़ानोव ने अपनी तीक्ष्ण मुसकान मुसकराते हुए कहा—'अच्छा तो अब हम लोग चिड़ियों की नुमाइश देखना शुरू करते हैं।'

वे लोग कमरे में ले जाकर बैठा दिये गये जिसकी दीवारों पर लाल रङ्ग का क़ागज लगा था और जिस पर शाही ढंग पर मालाओं के सुनहले चित्र बने हुए थे। रोबिन्स-काया का ध्यान फ़ौरन इस बात पर गया कि जिस कमरे से वे लोग अभी उठकर आ रहे थे, वहाँ भी ऐसा ही क़ागज़ दीवारों पर लगा था।

बाल्टिक प्रान्तों की चार जर्मन स्त्रियाँ कमरे में आईं। चारों की चारों तगड़ी, भरी छातियों की और सुनहरे बालों की थीं। वे चेहरों पर पाउडर लगाये हुए थीं और भली और बाइज्ज़त दीखती थीं। शुरू में कोई बातचीत नहीं हुई। छोकरियाँ आकर चुपचाप मूर्तियों की तरह बैठ गईं और भले घरों की स्त्रियों का सा व्यवहार करने का बहाना करने लगीं। रायज़ानोव ने शैम्पेन मँगवाई मगर उससे भी उनके व्यवहार में कोई फ़र्क़ नहीं पड़ा। अतएव रोबिन्सकाया ने ही बातचीत शुरू की। सबसे तगड़ी और सुन्दर छोकरी से जो जो डबल रोटी की तरह दीखती थी, उसने नम्रता से जर्मन भाषा में पूछा—'कहिए, आपका जन्म कहाँ हुआ था? जर्मनी में शायद ?'

'जी नहीं, श्रीमतीजी। बात यह है कि मेरा आदमी होन्स जिससे मेरी शादी होनेवाली है, एक होटल में नौकर है जहाँ उसको इतना वेतन नहीं मिलता, जिसमें हम दोनों की, यदि हम शादी कर लें तो, गृहस्थी चल सके। अतएव मैं और वह दोनों रुपया कमाकर, बचा-बचाकर बैङ्क में रख रहे हैं। जैसे ही हम लोग दस हज़ार रुपये जमा कर लेंगे, वैसे ही हम दोनों मिलकर अपनी शराब की दूकान खोल लेंगे और तब ईश्वर की इच्छा हुई तो हमारी गृहस्थी होगी और बाल-बच्चे होंगे। कम से कम दो बच्चे—एक लड़का और एक लड़की।

'लेकिन सुनिए तो श्रीमती' रोबिन्सकाया को बड़ा ही आश्चर्य हुआ, 'तुम जवान हो, सुन्दर हो और दो भाषाएँ जानती हो…'

'तीन भाषाएँ श्रीमतीजी' जर्मन छोकरी ने अभिमान से कहा।

'मुझे लैटिन भी आती है! मैं प्राईमरी स्कूल के बाद हाईस्कूल के पाँचवें दर्जे तक पढ़ी थी।'

'अच्छा, अच्छा तो इतनी पढ़ी-लिखी होने पर…' रोबिन्सकाया ने ज़ोश में भरते हुए कहा, 'तुम कहीं भी खाने और रहने के साथ-साथ लगभग तीस रुपये की नौकरी तो आसानी से पा सकती हो। कहीं भी घर का प्रबन्ध करने के लिए, अथवा बच्चों को देखने के लिए, अथवा दूकान में क्लार्क या मुनीम का काम तो तुम मज़े में कर सकती हो…और तुम्हारा आदमी जिससे तुम्हारा विवाह होनेवाला है…फ्रिज़ भी…'

'उसका नाम हान्स है, श्रीमती…'

'हाँ, हाँ हान्स भी यदि मेहनती और मितव्ययी हो तो तुम और वह दोनों मिल-कर तीन-चार वर्ष में अपनी गृहस्थी अच्छे ढंग पर बसा सकते हो। क्या राय है तुम्हारी?'

'आप श्रीमती, आप थोड़ी ग़लती करती हैं। अच्छी से अच्छी नौकरी में भी मैं पन्द्रह या बीस रुपये महीने से अधिक नहीं बचा पाऊँगी। यहाँ मैं महीने में सौ रुपये तक बचा लेती हूँ और उन्हें ले जाकर फ़ौरन बैंक में रख देती हूँ। उसके सिवा ज़रा यह भी तो सोचिये श्रीमतीजी कि किसी घर में नौकरी करना कितना हेय काम है! हमेशा मालिकों की उङ्गलियों पर नाचते रहना होता है! और मालिक अपनी बेवक़ूफी दिखाता है। छी…छी!…और मालकिन का जलन के मारे दिल बैठता है…जिससे वह रोज डाँटती और फटकारती है…ओह राम रे!'

'मेरी समझ में तुम्हारी बात नहीं आती…' रोबिन्सकाया ने सोचते हुए कहा और उसकी तरफ़ न देखकर आँखें नीची करके ज़मीन की तरफ़ देखने लगी। फिर वह बोली—'मैंने यहाँ की तुम्हारी ज़िन्दगी के बारे में बहुत कुछ सुना है…चकलों की ज़िन्दगी के बारे में सुना है यहाँ का जीवन बड़ा भयंकर है। गन्दे से गन्दे बूढ़ों से प्रेम करना होता है और बुरी तरह से पीटा भी जाता है…'

'जी नहीं, जी नहीं श्रीमतीजी…। हमारी हर एक की यहाँ अलग-अलग हिसाब की किताबें रहती हैं, जिनमें महीने भर की सारी आमदनी और खर्च दर्ज कर दिया

जाता है। पिछले महीने में मैंने पाँच सौ रुपये से कुछ ज़्यादा कमाये थे। दो तिहाई कमाई मालकिन खाने-पीने, रहने और दूसरे खर्च के लिए ले लेती है; इसलिए डेढ़ सौ से कुछ अधिक मुझे बच रहे। पचास रुपये कपड़ों और जेब-खर्चपर मेरे खर्च हो जाते हैं। सौ रुपये मुझे बच रहते हैं। बताइए, इसमें मेरे साथ कौन-सा अन्याय होता है! यह सच है, कभी-कभी बड़े गन्दे आदमी भी यहाँ आते हैं — मगर यह ज़रूरी नहीं है कि मैं उनके पास जाऊँ ही, यदि कोई आदमी पसन्द न हो तो मैं बीमारी का बहाना कर सकती हूँ और मेरी बजाय उसके पास किसी नई आनेवाली छोकरी को भेज दिया जायगा।...'

'माफ़ कीजिए, मुझे आपका नाम तो अभी तक मालूम ही नहीं हुआ...'

'एल्सा।'

'मैंने सुना है यहाँ आप लोगों के साथ बड़ा खराब व्यवहार किया जाता है...। कभी-कभी पीटा भी जाता है...और ऐसे-ऐसे काम करने के लिए मजबूर किया जाता है जो तुम्हें बिल्कुल पसन्द नहीं होते

'जी नहीं, श्रीमतीजी, कभी नहीं! एल्सा ने क्रोध दिखाते हुए कहा — 'हम लोग यहाँ एक अच्छे कुटुम्ब की तरह स्नेह-पूर्वक रहते हैं। हम लोग सब एक ही जगह के रहनेवाले अथवा रिश्तेदार हैं और आपस में ऐसे मिल-जुलकर स्नेह से रहते हैं जैसे कि ईश्वर करे सभी कुटुम्ब रह सकें। यह ज़रूर है कि इस मुहल्ले में वारदातें और झगड़े होते रहते हैं। मगर वे अक्सर रुपयेवाले चकलों में होते हैं। रूसी छोकरियाँ आम तौर पर बड़ी शराबी होती हैं और अपना एक प्रेमी भी रखती हैं। उन्हें अपने भविष्य का कुछ ख़याल नहीं होता।'

'तुम होशियार हो एल्सा' रोबिन्सकाया ने दुःख से कहा, यह सब तो ठीक है। मगर यहाँ जो भयङ्कर बीमारियाँ हो जाती हैं, उनसे तो मौत ही भली होती है! यह तो तुम जानती हो कि वह कैसे होती हैं?'

'जी नहीं; श्रीमतीजी। मैं किसी आदमी को अपने बिस्तर में तब तक नहीं आने देती, जब तक कि उसका डाक्टरी मुआइना नहीं करा लेती...कम से कम पचहत्तर फ़ीसदी आदमियों से मुझे बिल्कुल भय नहीं होता।'

'हे भगवान!' एकाएक रोबिन्सकाया ने गर्म होकर मेज़ पर अपने हाथ पटकते हुए कहा, मगर वह तुम्हारा ऐल्बर्ट...'

'होन्स, श्रीमतीजी।' स्त्री ने फिर उसको याद दिलाते हुए कहा।

'हाँ, हाँ, माफ़ कीजिए···वह आपका होन्स आपसे कुछ नहीं कहता? उसे यह बात तो हरगिज़ भी पसन्द न होगी कि तुम यहाँ रहो और रोज़ उसके प्रति विश्वास-घात करो?' एल्सा उसकी तरफ़ बड़े आश्चर्य से देखने लगी। फिर बोली, 'मगर श्रीमतीजी···मैंने कभी उसके साथ आज तक विश्वासघात नहीं किया है! यह तो दूसरी छिनालें ही, खासकर रूसी छोकरियाँ करती हैं जो अपने यार रखती हैं और जिन पर वे अपनी गाढ़ी कमाई का रुपया भी खर्च करती हैं। मैं कभी इस हद तक नहीं जाती···धिक्कार है ऐसा करनेवालों को!'

'इससे अधिक अधम जीवन और क्या हो सकता है!' रोबिन्सकाया ने उठते हुए घृणापूर्वक ज़ोर से कहा, 'इन लोगों को रुपया दे दीजिए और चलिए यहाँ से।'

गली में निकल आने पर बोलोद्या ने रोबिन्सकाया की बाँह पकड़कर प्रार्थना करते हुए कहा, 'ईश्वर के लिए अब और कहीं न चलिए। एक ही अनुभव काफ़ी है।'

'कैसा खराब जीवन है! कैसा भौंड़ा!'

'इसी लिए मैं कहता हूँ कि अब और अनुभव की ज़रूरत नहीं है!'

'नहीं, मैं पूरी तरह देखूँगी। किसी दूसरी जगह चलो जो इतनी ठाटबाट की न हो।'

बोलोद्या जो ऐलेना की हरकतों से बड़ा परेशान और दुखी हो रहा था, पास की अन्ना की पेढ़ी में उसे ले चला जो वहाँ से सिर्फ़ दस कदम पर ही थी।

मगर यहाँ असली दृश्य देखने को मिला। सिमियन उन्हें अन्दर घुसाने पर बड़ी आनाकानी करने लगा और जब रायज़ानोव ने उसकी मुट्ठी अच्छी तरह गरम कर दी, तब पिघला। अन्दर घुसकर ये लोग ट्रेपेल की तरह एक कमरा लेकर जो बिल्कुल उसी ढङ्ग का मगर उससे घटिया था, बैठ गये और अन्ना के हुक्म से सारी छोकरियाँ उनके कमरे में भेड़ों की तरह ठेल दी गईं, गलती इतनी ही की गई कि जेनी को भी उनके साथ ही अन्दर ठेल दिया गया, जिसकी आँखें क्रोध और चिढ़ से तमतमा रही थीं। शर्मीली टमारा अपनी अधम मुसकान मुसकराती हुई सबसे आखीर में आई। धीरे-धीरे इस पेढ़ी की सारी छोकरियाँ कमरे में भर गईं। रोबिन्सकाया ने

छने की हिम्मत न की कि तुम लोग यहाँ कैसे आईं? मगर फिर भी

यहाँ की निवासिनियों की आँखों में उसके प्रति स्पष्ट वैर-भाव था। एलेना ने उनसे अपने आप गाने को कहा और उन्होंने बड़ी ख़ुशी से गाना शुरू कर दिया :

'हाय आ गया फिर सोमवार,
प्रीतम कहे चलो उस पार;
इधर डाक्टर बिगड़े मुझ पर,
कहो सखी जाऊँ मैं क्योंकर?'

फ़िर उन्होंने गाया :

'हाय सखी मेरा सिर दुक्खे,
प्रीतम नहीं आया कौन पिलावे;
कौन खिलावे, कौन पिलावे,
हाय सखी मेरा सिर दुक्खे...!'

और उन्होंने गाया :

'आवारे का प्रेम नियारा,
बड़ा मसालेदार सखी;
मैंने दिल तो अपना वारा,
पर दिल ठण्डा हाथ सखी से;
कैसे रहूँ मैं; कैसे रहूँ मैं!'
'साथ सभी मुस्टण्डे आये,
मूँछ चढ़ाये, बाँह चढ़ाये;
सखि मैं वेश्या, प्रीतम चोर,
कैसे पाऊँ भव का छोर?
हाय क्या करूँ मैं, हाय क्या करूँ मैं?
आधी रात मोहिं छोड़ अकेली,
प्रीतम चोरी करें हवेली;
जीवन की यह रीति नवेली,
मेरी प्रिय जोड़ी अलबेली;
कैसे रहूँ मैं, कैसे रहूँ मैं?'

फ़िर उन्होंने गाया :

'मोरा बलमा बारा रे,
पल में हुआ है हाय सवेरवा ;
जाहिं बलम मोहिं छोड़ मदरसा ,
मोरा बलमा बारा रे, मोरा बलमा न्यारा रे ।

इसके बाद उन्होंने एक क़ैदी की याद का गीत गाया :

'अब दिन बीतत नाहिं सँवरिया ! अब दिन० !
तुम बिन ले मोरि कौन ख़बरिया !
रहे ज़िन्दगी के दिन थोरे ,
आवो आवो प्रीतम मोरे ;
हाय ! मोरी बीती जात उमरिया' ; अब दिन० !

फिर उन्होंने पल्टन को जाते हुए एक सिपाही का गीत गाया :

'मत मुर्झाओ प्यारी !
है प्रेम की रीति नियारी !
लौटूँ जल्दी पल्टन से,
फिर बाँह गले में तेरी ; मत मुर्झाओ प्यारी !

मगर यह गाना हो ही रहा था कि मोटी किटी जो आम तौर पर गम्भीर रहती थी, एकाएक ज़ोर से हँसने लगी । सबको बड़ा आश्चर्य हुआ । वह बोली—'मैं भी एक गीत गाना चाहती हूँ । मेरे ओडेसा में अक्सर वह गीत चोर और भालू का नाच करने वाले शराब की दूकानों में गाया करते हैं ।'

यह कहकर उसने अपनी भर्राई हुई और मोटी आवाज़ से बड़े विचित्र हाव-भाव कर, जो ऐसा लगता था, उसने किसी लचर कैबैरेट में किसी नाचनेवाली को करते हुए देखा होगा, गाना शुरू कर दिया :

'मैं जाऊँ प्यारी के पास ,
नित रहती ये ही आस ;
कुर्सी पर बैठूँ डटकर ,
मूछों पर ताव लगाकर ;
पूछूँ 'क्या लोगी प्यारी ?'

ब्राण्डी या बोतल न्यारी ?'
वह सिर नीचा करे लजाकर,
हो जाऊँ मैं न्योछावर ;
'क्या 'लोगी, बोलो प्यारी ?
ब्राण्डी या बोतल न्यारी ?
कुछ जल्दी मुख से बोलो,
दिल मेरा यों मत तोड़ो ;
क्या लोगी , बोलो प्यारी ?
ब्राण्डी या बोतल न्यारी ?
या यों ही मौन रहोगी ?
मन मेरा तुम मसलोगी ?'

किटी का यह विचित्र गाना लोग सुन रहे थे, मगर मनका ने एकाएक आकर रङ्ग में भङ्ग कर दिया। वह सिर्फ़ एक चोली और जाँघिया ही पहिने हुए एकाएक कमरे में घुस आई। कोई सौदागर जिसने पिछली रात 'परिस्तानी रात' मनाई थी, उसके साथ शराबखोरी कर रहा था और जैसा कि शराब का मनका पर हमेशा डायनामाइट की तरह असर होता था, आज भी वह शराब पीकर, हर एक से लड़ने के लिए उतारू होकर एकाएक इस कमरे में फट पड़ी थी। इस समय वह 'नन्हीं मनका' नहीं रही थी, 'लड़ाकू मनका' का स्वरूप धारण कर चुकी थी। इस कमरे में एकाएक घुस आने पर उसे स्वयं शायद बड़ा आश्चर्य हुआ, जिससे वह फ़र्श पर लेटकर हँसी से ऐसी लोटपोट हुई कि सब देखनेवाले भी हँसी न रोक सके और उसके साथ हँसने लगे। मगर यह हँसी देर तक न चली, क्योंकि मनका एकाएक उठकर बैठ गई और चिल्लाकर कहने लगी, 'ओ हो हो हो ! और नई छिनालें भी हमारे यहाँ आई हैं !'

इसकी किसी को आशा न थी, मगर बेरोनेस ने और भी एक सख्त ग़लती कर दी। वह बोली :

' मैं पतित छोकरियों की रक्षा करनेवाले एक आश्रम* की स्थापिका हूँ, अतएव मैं तुम लोगों का हाल जानने आई हूँ।'

---

* कुछ दिन हुए अखबारों में लखनऊ के आश्रम के बारे में खबर थी कि वहाँ की 'रुयाँ' नक़ाब लगाकर भाग गईं और उन्होंने बयान दिया कि...

इस पर जेनेका तिलमिलाकर बोली :

'भाग जा यहाँ से फ़ौरन, मूर्खा कहीं की ! गन्दी ! कूड़ा-कर्कट !···पतित छोक-रियों के रक्षण करनेवाले आश्रम की स्थापिका है ! जेलख़ाने की मालिक हैं ! पता है इन आश्रमों के मंत्री हम लोगों को कुतियों की तरह कैसा इस्तेमाल करते है । तुम्हारे बाप, तुम्हारे पति और तुम्हारे भाई रोज़ हम लोगों के पास आते हैं, और हम उन्हें तरह-तरह की बीमारियों का इनाम देती हैं... अच्छी तरह जान-बूझकर इनाम देती हैं ।···और वे उन बीमारियों को तुम्हें देते हैं । तुम्हारे आश्रमों की संरक्षिकाएँ साईसों, दरबानों और पुलिसवालों से नाजायज़ ताल्लुक रखती हैं और हम लोग आपस में भी ज़रा एक दूसरे से हँसी-मज़ाक करें तो फ़ौरन कालकोठरी दे दी जाती है और तुम यहाँ हमें देखने आई हो मानो यह भी एक थियेटर है ! लो सुनो, मन भरकर खरी-खरी बातें सुनो···'

मगर टमारा ने शान्तिपूर्वक उसे रोका, 'ठहरो, जेनी मुझे कहने दो...। कहिए श्रीमतीजी, क्या आप सचमुच यह समझती हैं कि हम घर-गृहस्थी में रहनेवाली और बाइज़्ज़त कहलानेवाली स्त्रियों से बुरी हैं ? हमारे पास खुल्लमखुल्ला आदमी आते हैं और हमारे यहाँ आने या रात भर रहने के लिए हमें दाम देते हैं । यह बात हम किसी से दुनिया में छिपाती नहीं जो कुछ हम कहती हैं, खुल्लमखुल्ला करती हैं...। मगर सच कहो क्या घर-गृहस्थीवाली स्त्रियों में से एक भी कोई ऐसी है जिसने छिपे-चोरी से किसी से प्रेम नहीं किया है ? मुझे अच्छी तरह मालूम है कि पचास फ़ीसदी घर-गृहस्थीवाली स्त्रियाँ किसी न किसी से छिपी-छिपी प्रेम करती हैं और शेष पचास फ़ीसदी जो ज़्यादा उम्र की हो जाती हैं, जवान लड़के रखती हैं* और मुझे यह भी पता है कि तुममें से कितनी अपने बापों, भाइयों और अपने बेटों तक से व्यभिचार कराती हैं† मगर अपनी इन करतूतों को तुम इज़्ज़त के पर्दे के पीछे छिपा

---

* यह यूरोप में सच हो, मगर भारत में ऐसा है यह कहना कठिन है, गोकि कुछ लोगों की राय है कि भारत में भी यही हाल है ।

† यह अविश्वसनीय-सी बात पढ़कर पाठक वैसे ही दङ्ग रह जायँगे जैसा कि मैं पहिले-पहल रह गया था । मगर फिर मैंने एक काशी के आश्रम में आनेवाली स्त्रियों की जो कहानियाँ सुनीं वह परिशिष्ट में पढ़िए और सोचिए कि भारत और यूरोप में इस सम्बन्ध में कितना फ़र्क़ रह गया है ।

लेती हो। बस इतना ही हममें और तुममें फ़र्क़ है। हम पतित हैं यह हम जानती हैं और हम अपना पाप पर्दे में छिपाकर अच्छे या सदाचारी होने का बहाना नहीं करतीं। मगर तुम इज्ज़त के पर्दे में निरा असत्य का जीवन बिताती हो! धिक्कार है तुम पर! हमको पतित समझने का तुमको क्या अधिकार है?'

'शाबास मनोच्का, खूब खरी-खरी कह रही हो!' मनका ने फ़र्श पर बैठे बैठे ही चिल्लाकर कहा। अपने घूँघरवाले बाल बिखेरे हुए वह इस समय तेरह वर्ष की छोकरी-सी लग रही थी।

'बोलो! बोलो!' जेनी ने जलती हुई आँखों से पूछा।

'इतना ही नहीं, जेनेका, अभी और भी मुझे कहना है। हममें से शायद हज़ार में से एक मुश्किल से ऐसी होगी, जिसने अपना हमल गिरवाया होगा,* मगर तुममें से हरएक तो अपने जीवन में कई बार यह कुकर्म करती हो? कहो? क्या यह सच नहीं है? और तुम लोग हमल इसलिए गिरवाती हो कि ऐसा न करने से मुसीबत आ जायगी या गरीबी के कारण बच्चों का पालन-पोषण असम्भव होगा, बल्कि इसलिए कि बच्चा पैदा हो जाने से तुम्हारा शरीर खराब हो जायगा और तुम्हारा सौन्दर्य बिगड़ जायगा जिसको तुम अपनी सारी पूँजी मानती हो! अथवा तुम्हें केवल अपनी इन्द्रियों के सुख की ही अधिक चिन्ता लगी रहती है, जिसमें हमल और बच्चे को दूध पिलाने से विघ्न होने का तुम्हें खतरा रहता है!'

रोबिन्सकाया ने घबराकर जल्दी से फ्रेंच भाषा में वेरोनेस से कहा, 'वैरोनेस देखो तो, छोकरी पढ़ी-लिखी और समझदार लगती है।' वेरोनेस ने फ्रेञ्च में उत्तर दिया, 'मैं भी यही सोच रही थी···मुझे इसका चेहरा परिचित-सा लगता है···मगर ख़्याल नहीं आता कि कहाँ देखा था···शायद स्वप्न में···या शायद कभी बचपन में?···

'अपनी याददाश्त को बहुत तकलीफ़ न दीजिये वेरोनेस' टमारा यकायक फ्रेञ्च भाषा में बोली : मैं आपको अभी याद दिलाये देती हूँ। ज़रा ख़ारखोव शहर की याद कीजिये और वहाँ कोनियाकिन होटल के एक कमरे में सोलोविशचिक नाम के

* भारत में भी हमल तो जरूर गिराये जाते हैं, मगर इस औसत में अवश्य नहीं जैसा कि ऊपर कहा गया है वरना भारत की जन-संख्या इतनी न बढ़ गई होती। यूरोप के सम्बन्ध में मुमकिन है यह सच हो।

एक थियेटर के मैनेजर की याद कीजिए···उस समय आप वैरोनेस नहीं थीं . । आप एक साधारण गानेवाली छोकरी थीं और मेरे साथ थियेटर में गाया करती थीं ।'

वैरोनेस ने घबराकर फ्रेञ्च भाषा में पूछा, 'मगर तुम यहाँ कैसे आ गईं मारग्रेट ?'

'जो आता है सो रोज़ यही पूछता है । आ गई… किसी तरह यहाँ आ गई…'

यह कहकर उसने तीखे स्वर से व्यंग्य में पूछा ।

'आप लोगों ने जो हमारा वक्त लिया है, उसकी कीमत तो आप देंगी ही, क्यों ?'

'नहीं, नहीं, फटकार तुम पर !' नन्ही मनका एकाएक चिल्लाकर फ़र्श पर से उठी और अपने मोजे में से दो रुपये जल्दो ने निकालकर उन लोगों के सामने फेंकती हुई बोली : 'यह लो गाड़ी का किराया और फ़ौरन यहाँ से अपना मुँह काला करो, वरना मैं तमाम खिड़कियों के शीशे और शराब की बोतलें चूर-चूर कर डालूँगी '

रोबिन्सकाया उठकर खड़ी हो गई और अपनी आँखों में सच्चे स्नेह के आँसू भरकर कहने लगी ।

'हाँ, हम लोग यहाँ से जाते हैं और श्रीमती मारग्रेट ने जो सबक हमको सिखाया है, वह बड़ा लाभकारी साबित होगा । आपका वक्त जो हम लोगों ने खराब य , उसकी कीमत आपको ज़रूर दी जायेगी—बोलोद्या, देखो इसका खयाल रखना। मगर तुमने इतने गाने हमें सुनाये हैं, एक गाना मुझे भी तुम्हें सुना लेने दो।'

यह कहकर रोबिन्सकाया पियानो पर जा बैठी और दो-चार स्वर पियानो के बजाकर उसने एक सुन्दर राग गाना शुरू कर दिया । राग ऐसा सुन्दर था और उसको एक प्रख्यात कलाविद् ऐसी कला से गा रही थी और उसका अर्थ ऐसा मौक़े के अनुसार था कि हर एक छोकरी को राग सुनते-सुनते अपने प्रथम प्रेम, अपनी ग़लती और उसके फलस्वरूप वसन्त ऋतु की शीत उषा में जब कि सूर्य के किरणों को गुलाबी लाली पेड़ों पर धीरे-धीरे बिखर रही थी—अपने स्वजनों से बिदाई की याद हो आई । उन अन्तिम चुम्बनों की याद जो धड़कते हुए दुःखी हृदय से कहते थे, 'हाय ऐसा फिर कभी न होगा ! ऐसा फिर कभी न होगा !' इसके बाद होठ सूखकर ठण्डे और बाल पसीने से भींगकर गीले हो गये थे ।

टमारा यह राग सुनकर बिल्कुल चुप हो गई ; मनका भींगी बिल्ली बन गई और जैनेका जो सबसे उग्र और उद्दण्ड थी, एकाएक दौड़कर रोबिन्सकाया के पैरों के पास गिरकर रोने लगी ।

रोबिन्सकाया ने, जिसका हृदय स्वयं पिघल रहा था, जैनेका के गले में बाहें डाल-कर कहा : 'बहिन मैं तुम्हें प्यार करना चाहती हूँ ।'

जैनेका ने उसके कान में कुछ कहा ।

'ओह उसका कोई हर्ज नहीं' रोबिन्सकाया ने कहा ।

'कुछ महीने तक इलाज होने से ठीक हो जायेगी ।'

'नहीं, नहीं, नहीं...मैं ठीक होना नहीं चाहती ।—मैं यह बीमारी सबको देना चाहती हूँ । सबको इसका मज़ा चखकर इसी से मरना चाहिए ।'

'आह, प्यारी बहिन ! मैं तुम्हारी जगह पर ऐसा कभी न करूँगी ।' अभिमानी जैनेका कलाविद् रोबिन्सकाया के हाथ और पैर चूम-चूमकर कह रही थी ।

'मेरे साथ लोगों ने ऐसा बर्ताव क्यों किया ? मैंने उनका क्या बिगाड़ा था ? मुझे यह सज़ा उन्होंने क्यों दी...बताओ...मैंने उनका क्या बिगाड़ा था ?'

कला की शक्ति ऐसी होती है !

कला की शक्ति ही वह शक्ति है जो अपने हाथों में केवल बुद्धि को पकड़ने का प्रयत्न नहीं करती, बल्कि मनुष्य की आत्मा को अपना लेती है । अभिमानी जैनेका रोबिन्सकाया के कपड़ों में अपना मुँह छिपाये बैठी थी ; नन्ही मनका भीगी बिल्ली की तरह एक कुर्सी पर रूमाल से अपना मुँह ढाके बैठी थी ; टमारा एक कुहनी अपने घुटनों पर खड़ी किये और उस पर सिर झुकाये नीचे को देख रही थी और सिमियन, जो हर क़िस्म की ज़रूरत के लिए पास ही में मौजूद था, आश्चर्य से आँखें फाड़ रहा था ।

रोबिन्सकाया जेनेका के कान में धीरे-धीरे कह रही थी :

'कभी निराश मत हो, कभी-कभी जीवन में ऐसे संकट आ पड़ते हैं कि कोई रास्ता नज़र नहीं पड़ता और दिल बैठने लगता है, मगर दूसरे ही दिन एकाएक जीवन में परिवर्तन हो जाता है । मेरी प्यारी बहिन, आज मैं दुनिया की प्रख्यात गायिका हूँ, मगर तुम्हें क्या पता कि मुझको कितनी मुसीबतें तथा कितनी बेइज़्ज़ती का सामना करके यह ख्याति प्राप्त हुई है ! अतएव बहिन दुःखी और निराश मत हो और अपने भाग्य में विश्वास रखो ।'

यह कहकर उसने जेनेका के माथे को झुककर चूम लिया और बाद में फिर चैपलिन्स्की जो दुःखी आत्मा से यह सारा दृश्य देख रहा था, कभी भी रोबिन्सकाया

की हरी, लम्बी मिश्रानी आँखों से जैसी प्रेमपूर्ण और सुन्दर किरणें इस समय निकल रही थीं, उन्हें न भूल सका।

सब लोग दुःखित हृदय से यहाँ से विदा हुए, मगर रायज़ानोव क्षण भर के लिए पीछे रह गया। वह सम्मान-पूर्वक जैनेका के पास गया और धीरे से उसके हाथ चूमकर बोला :

'अगर हो सके तो हमारी आज की गुस्ताखी को माफ़ कीजिएगा···अब ऐसी ग़लती फिर हम लोग कभी न करेंगे। अगर आपको कभी मेरी किसी सेवा की ज़रूरत हो तो मैं हमेशा हाज़िर हूँ। यह मेरे नाम और पते का कार्ड लीजिए। आज से आप मुझे एक सच्चा मित्र समझिए।'

और फिर एक बार जैनेका के हाथ चूमकर सबसे आखिर में वह सीढ़ियों से उतरा।

इक्कीसवाँ अध्याय

बृहस्पतिवार को सबेरे से ही माहट हो रही थी, जिससे सभी पेड़ों की पत्तियाँ एकदम हरी हो गई थीं। मगर साथ ही दिन भी एकाएक धुँधला, सुस्त और जी उकता देनेवाला हो गया था।

अतएव सब छोकरियाँ रोज की तरह जेनेका के कमरे में इकट्ठी हो गई थीं। मगर न जाने आज जेनेका के मन में क्या गुज़र रही थी! न तो वह हँसती और मज़ाक करती थी और न पढ़ती थी। हमेशा का उसका साथी पीली जिल्दवाला उपन्यास आज उसके पेट या छाती पर उद्देश्यहीन-सा पड़ा था। न जाने क्यों उसके चेहरे पर दुःख की झलक थी और आँखों से घृणा की ज्वालाएँ निकल रही थीं। नन्ही मनका ने जो जेनी पर मुग्ध थी, कई बार उसका ध्यान अपनी ओर खींचने का प्रयत्न किया, मगर जेनी ने उसका कोई ख्याल नहीं किया और न उससे कोई बात ही की। अस्तु बड़ी उदासी छा रही थी। शायद अगस्त महीने की कई सप्ताह की लगातार माहट ने सबको इतना सुस्त कर दिया था। टमारा आकर जेनी के पलँग पर उससे सटकर बैठ गई और जेनी को छाती से लगाकर उसके कान से मुँह लगाकर बोली :

'क्या हुआ है तुम्हें, जेनेका ? मैं बहुत देर से देख रही हूँ कि तुम्हारे मन पर कुछ बीत रही है ; मनका को भी ऐसा ही लगता है। देखो बेचारी मनका तुम्हारे उसकी तरफ़ ध्यान न देने से कैसी दुःखी है। मुझे बताओ क्या बात है ? शायद मैं तुम्हारी कुछ मदद कर सकूँ।'

जेनेका ने आँखें बन्द कर लीं और इनकार करते हुए सिर हिलाया ! टमारा उससे ज़रा अलग होकर बैठ गई। मगर प्यार से उसके कन्धे थपथपाती हुई कहने लगी :

'तुम्हारी मर्जी, जेनेका न करो। मैं तुम्हारे अन्दर घुसने की कोशिश नहीं करूँगी। मैंने तो सिर्फ़ इसलिए पूछा था कि तुम्हीं एक ऐसी हो जो...'

जेनका एकाएक कुछ निश्चय करके पलँग पर से उछलकर खड़ी हो गई और टमारा का हाथ पकड़कर उसे हुक्म देती हुई-सी बोली :

'अच्छा, आओ, चलो एक मिनट के लिए कमरे से बाहर चलो। मैं तुम्हें सब बताये देती हूँ। छोकरियो, तुम सब यहीं रहना। हम दोनों अभी आती हैं।'

कमरे के बाहर मकान के रास्ते में ले जाकर टमारा के दोनों कन्धों पर जेनेका हाथ रखकर खड़ी हो गई और दुःख भरे, उदास चेहरे से एकाएक बोली :

'सुनो, मुझे किसी ने गर्मी की बीमारी दे दी है।'

'हाय मेरी प्यारी ! कितने दिन से है ?'

'बहुत दिनों से। तुम्हें याद है एक बार कुछ विद्यार्थी आये थे, जिन्होंने प्लेटोनोव से झगड़ा किया था ? उसी दिन सबेरे मुझे इसका पहले-पहल पता लगा।'

'मैं समझ गई थी—जब तुम उस कलाविद् के पैरों के पास झुककर उसके कान में कुछ कह रही थीं। उसी वक्त मैं समझ गई थी, मगर प्यारी जेनेका तुम्हें इसकी फ़िक्र करनी चाहिए और अच्छी तरह इलाज़ कराना चाहिए।'

जेनेका ने ग़ुस्से से पैर पटकते हुए अपने हाथ का रूमाल जो अभी तक वह मुट्ठी में कुचल रही थी, फाड़ डाला और बोली :

'नहीं ! कभी नहीं ! मैं इलाज कभी नहीं कराऊँगी ! मैं तुम लोगों को यह बीमारी नहीं होने दूँगी। तुमने देखा होगा कि कई हफ़्ते से मैं तुम लोगों के साथ मेज़ पर बैठकर खाना नहीं खाती हूँ और अपनी तश्तरियाँ भी अलग ले जाकर अपने हाथ से ही धोती हूँ। इसी कारण से मैं मनका को भी अपने पास नहीं आने देती जिसे तुम जानती हो। मैं दिल से सचमुच चाहती हूँ, मगर इन दो पैरों के

बदमाशों को मैं जान-बूझकर यह बीमारी देती हूँ। हर रात दस-पन्द्रह को यह प्रसाद देकर इस घर से भेजती हूँ। सड़ने दो उन कम्बख़्तों को इस अधम रोग से और अपनी पत्नियों, अपनी स्त्रियों और माताओं—हाँ, हाँ माताओं को भी और अपने पिताओं और अपनी नौकरानियों और अपनी दादियों सभी को उन्हें इस रोग से सड़ाने दो ! सबको इस रोग से सड़-सड़कर बर्बाद होने दो !'

टमारा ने स्नेहपूर्वक जेनेका का सिर सहलाते हुए कहा 'इतनी हद तक जाओगी जेनेका ?'

'हाँ, किसी पर रहम नहीं करूँगी, मगर तुममें से किसी को मुझसे डरने की ज़रूरत नहीं है। मैं अपने आदमी को ख़ुद ही चुन लूँगी। सबसे बुद्धू, सबसे सुन्दर, सबसे अमीर और सबसे बड़े आदमी जो यहाँ आते हैं, उनको मैं चुनूँगी। मगर फिर मैं उन्हें कभी तुम्हारे पास नहीं जाने दूँगी। मैं ऐसा जबरदस्त प्रेम दिखाऊँगी, उनको ऐसा नोचूँगी और खसोटूँगी, ऐसी पागल बनकर सी-सी, सू-सू करूँगी और चिल्लाऊँगी कि तुम लोग देख-देखकर हैरान हो जाओगी और वे मूर्ख मानेंगे कि मैं सचमुच उन्हें बहुत चाहती हूँ, जिससे वे मुझे छोड़कर फिर कभी तुम लोगों के पास नहीं जायँगे !'

'जैसी तुम्हारी मर्जी, जैसी तुम्हारी मर्जी, जेनेच्का !' विचारपूर्वक ज़मीन की तरफ़ देखते हुए टमारा बोली, 'शायद तुम ऐसा करने में ठीक हो, कौन जाने ? मगर यह तो बताओ कि सरकारी डाक्टर जो मुआयना करने आता है, उसको तुमने कैसे धोखा दिया ?'

जेनेच्का एकाएक अपना मुँह फेरकर, खिड़की के शीशे से अपना मुँह भिड़ाकर खड़ी हो गई और क्रोध और घृणा की सिसकियों में सिसक सिसककर रोने लगी। फिर हाँफती हुई वह काँपती आवाज़ से कहने लगी :

'क्योंकि···क्योंकि···क्योंकि ईश्वर ने मुझ पर ख़ास मिहरबानी की है...ऐसी जगह मुझे यह बीमारी दी है, जहाँ पर कोई डाक्टर शायद उसे न देख सकेगा और हमारा डाक्टर तो बूढ़ा और मूर्ख है ही···'

और फिर एकाएक जेनेच्का ने अपने मन को कड़ा करके अपने आँसू अचानक उसी तरह रोक लिये जैसे कि उसने अचानक रोना शुरू कर दिया था।

'मेरे पास आओ टमोरच्का' वह बोली—'देखो यह बात किसी से कभी कहना मत।'

'नहीं हरगिज़, नहीं।'

दोनों शान्त मुख से जेनेच्का के कमरे में लौट आईं। सिमियन कमरे में दाखिल हुआ। वह औरों के लिए गुस्ताख़ होता हुआ भी जेनेच्का से हमेशा इज्ज़त से और सँभलकर बोलता था। सिमियन बोला : 'जेनेच्का, जेनरल साहब आये हैं, वैण्डा को बुलाते हैं। दस मिनट के लिए वैण्डा को उनके पास हो आने दो।'

वैण्डा नाम की नीली आँखों की, सुनहरे बालों की, बड़े और लाल मुँह की छोकरी देखने से ही लिथुआनिया देश की साफ़ लगती थी। उसने ख़ुशामद की दृष्टि से जेनेच्का की तरफ़ देखा। अगर सिमियन ने जेनेच्का से न कह दिया होता तो वह हरगिज़ वहाँ से न जाती, मगर जेनेच्का कुछ न बोली—बल्कि उसने जान-बूझकर अपनी आँखें मींच लीं। वैण्डा फर्माबर्दारी के साथ उठकर कमरे से चली गई।

यह जनरल महीने में दो बार हर दूसरे हफ़्ते नियम-पूर्वक वैण्डा के पास आता था जिस तरह कि ज़ो के पास एक दूसरा बड़ा आदमी, जिसको इस घर में सब लोग डायरेक्टर के नाम से पुकारते थे, रोज़ाना आया करता था।

जेनेका ने एकाएक अपनी पुरानी फटी हुई किताब उसके पीछे फेंकी और उसकी आँखों से गुस्से की आग की चिनगारियाँ निकलने लगीं।

'तू इस जनरल से व्यर्थ ही घृणा करती है' वह बोली, मेरा साबिका इससे भी ख़राब हबशियों से पड़ा है। एक बार मेरे पास एक निरा काठ का उल्लू आता था। वह मुझसे और किसी तरह प्रेम नहीं कर सकता था...बस...साफ़ ही कहूँ...मेरी छातियों पर बैठा-बैठा सुई चुभोया करता था।...'

'और विलनो में मेरे पास एक पादरी आता था जो मुझे सफ़ेद कपड़े पहिनाकर और मेरे शरीर पर पाउडर पोतकर पलँग पर लिटा देता था। फिर वह मेरे पास तीन मोमबत्तियाँ जलाकर रखता था, मानो मैं मुर्दा हूँ और इस तरह जब वह मुझे मुर्दा समझने लगता था, तब कूदकर मेरे ऊपर चढ़ बैठता था।

नन्हीं मनका ने एकाएक चिल्लाकर कहा :

'सच कहती हो जेनेका! मेरे पास भी एक बूढ़ा जानवर आता था। वहशी हमे

मुझसे ऐसा व्यवहार करता था, मानो मैं बिल्कुल निर्दोष छोकरी हूँ। अतएव मैं चीखती और चिल्लाती और सी-सी करती थी। मगर जेनेका यद्यपि तुम हम सबमें होशियार हो, मगर तुम भी नहीं बता सकोगी कि वह क्या काम करता होगा...'

'जेल का दारोगा!'

'नहीं आग बुझानेवाले दल का सर्दार था।'

एकाएक केटी अपनी भर्राई आवाज़ में खिलखिला उठी :

'मेरे पास एक शिक्षक आता था। वह कहीं गणित पढ़ाता था। वह हमेशा यह मानना चाहता था कि वह तो स्त्री है और मैं आदमी हूँ.. और मुझे उसके साथ ज़बरदस्ती करना चाहिए.. कैसा मूर्ख था! ज़रा सोचो तो, छोकरियो; वह कैसा चीखता और चिल्लाता था, 'मैं तुम्हारी औरत हूँ! बिल्कुल तुम्हारी हूँ! जो चाहो सो करो! जो चाहो सो करो!'

'पागल होगा!' नीली आँखोंवाली चंचल वेरका ने निश्चय-पूर्वक अपनी मीठी आवाज़ में कहा, 'ज़रूर पागल, कोई पागल होगा।'

'नहीं नहीं, पागल क्यों!' नम्र और शर्मीली टमारा ने कहा, 'पागल बिल्कुल नहीं, मर्दों की तरह केवल व्यभिचारी! घर के विषय-भोग से थका हुआ यहाँ पैसा देकर जैसा मज़ा चाहता है, करता है। साफ़ है, पागलपन की क्या बात है?'

जेनेका जो अभी तक चुपचाप सुन रही थी, एकाएक उछलकर अपने पलँग पर बैठ गई और कहने लगी :

'तुम सब मूर्ख हो! क्यों तुम इन लोगों को बिना सज़ा दिये यों ही छोड़ देती हो? पहिले मैं भी तुम्हारी तरह मूर्ख थी। मगर अब मैं इन बदमाशों को चारों पाँवों पर चलाती हूँ और उनसे अपने पाँवों के तलवे चटवाती हूँ...और वे यह सब बड़ी खुशी से करते हैं...तुम सब अच्छी तरह जानती ही हो कि मैं रुपये की परवाह नहीं करती...मगर मैं इन आदमियों को हर तरह की मार मारती हूँ। यह गन्दे जानवर आ-आकर मुझे अपनी पत्नियों, बन्धुओं, माताओं व बेटियों की तस्वीरें भेंट करते हैं···देखी होंगी तुमने वे सब टट्टी में पड़ी हुई! सोचो तो बहिन, स्त्री ज़िन्दगी में सिर्फ एक बार प्रेम करती है···मगर जिसे वह एक बार प्रेम करती है, उसे हमेशा प्रेम करती है। मगर आदमी का प्रेम कुत्तों का-सा होता है। वह अपनी प्रेमिका को धोखा देता है; इतना ही नहीं···बल्कि उसके मन में अपनी पुरानी अथवा नई

प्रेमिका किसी के लिए भी कोई कृतज्ञता का भाव नहीं रहता। मैं सुनती हूँ कि अब नौजवानों में बहुत से छोकरे अच्छे होने लगे हैं। मगर आज तक मैंने इन्हें कभी अपनी आँखों से देखा नहीं है। मैंने तो जिनको देखा वे सब आवारा, जानवर और लुँगाड़े ही थे। कुछ दिन हुए मैंने हम लोगों के अभागे जीवन के सम्बन्ध में एक उपन्यास पढ़ा था, वैसी ही बात मैं तुम्हें अब सुनाती हूँ।'

इतने में वैण्डा लौटकर आ गई। आकर वह चुपचाप सँभलकर जेनेका के पलँग पर उस तरफ़ बैठ गई, जहाँ लैम्प की छाया पड़ रही थी। जिस प्रकार किसी को मौत की सज़ा का हुक्म सुन लेनेवाले से, अथवा सख़्त मशक़त के क़ैदी से, अथवा वेश्या से उसका हाल पूछने की हिम्मत नहीं पड़ती. उसी तरह किसी को वैण्डा से यह पूछने की हिम्मत नहीं हुई कि, 'कहो तुमने यह डेढ़ घण्टा जनरल के साथ कैसे बिताया।' एकाएक उसने पचीस रुपये मेज़ पर पटककर कहा :

'मेरे लिए शराब और तरबूज मँगा दो।'

और यह कहकर वह अपना चेहरा दोनों हाथों से ढककर चुपचाप सिसकियाँ भरने लगी। फिर भी किसी को उससे कुछ पूछने की हिम्मत न हुई। केवल जेनेका गुस्से में भरकर अपना निचला होंठ चबाने लगी, जिससे उस पर दाँतों की एक सफ़ेद लकीर बन गई।

'हाँ, देखो टमारा' वह बोली, 'अब मैं तुम्हें समझती हूँ। मैं तुमसे इन सबके सामने माफ़ी मागती हूँ। मैं तुम्हारे उस चोर सेनका से प्रेम करने पर तुम्हारी हँसी उड़ाती थी। मगर अब मैं समझती हूँ कि सब मर्दों से अच्छा चोर या क़ातिल का प्रेम होता है। यह किसी छोकरी से प्रेम करता है तो कभी उसे छिपाने का प्रयत्न नहीं करता और उसके लिए चोरी और क़त्ल करने को तैयार रहता है। मगर यह दूसरे सब मर्द! यह सब झूठे, चालाक, दग़ाबाज़ और गिरे हुए लोग हैं। देखो इस बूढ़े जनरल के तीन ख़ानदान हैं—एक स्त्री और पांच बच्चे यहाँ हैं; एक नौकरानी और दो बच्चे परदेश में रहते हैं; और एक बड़ी लड़की पहली स्त्री से है, जिसके एक बच्चा है। उसके भोले बच्चों के सिवा सभी को इस शहर में इसकी यह कहानी मालूम है। और शायद बच्चे भी जानते हों। और यह एक बड़ा बाइज़्ज़त और प्रख्यात आदमी इस शहर का है, जिसकी सारी दुनिया इज़्ज़त करती है...बहिन, आज तक हम लोगों ने आपस में दूसरे से कभी दिल खोलकर अपना-अपना हाल नहीं कहा

है, फिर भी मैं आज तुम्हें बताती हूँ कि मैं जब सिर्फ़ साढ़े दस वर्ष की थी तभी मेरी मा ने अपने हाथों से मुझे जिटोमीर शहर के एक डाक्टर के हाथों बेच दिया था। मैंने उसके हाथ चूमे, उससे गिड़गिड़ाई कि मुझे न छुए। मैं रोई कि, 'मैं अभी बड़ी छोटी हूँ! मगर उस कम्बख़्त ने मेरी एक न सुनी। कहता था कुछ हर्ज नहीं, इस तरह जल्द बड़ी हो जाओगी! दर्द, जलन और घृणा मुझे हुई . मगर मैं क्या करती, निस्सहाय थी . । बाद में वह बदमाश मेरी आत्मा की इस चीत्कार का मज़ाक अपने यार-दोस्तों और पड़ोसियों को हँस-हँसकर सुनाया करता था।'

'ख़ैर, जब तक हमारे ज़बान है तब तक तो हम बोलेंगी ही', एकाएक ज़ो ने लापरवाही और उदासी से मुस्कराते हुए शान्त स्वर में कहा, 'मुझे एक स्कूल के शिक्षक ने बिगाड़ा। उसने बड़े दिन के त्यौहार पर मुझे अपने घर बुलाया। उसकी स्त्री बाज़ार चीज़ें खरीदने गई थी। उसने पहले तो मुझे मिठाई खिलाई, फिर कहने लगा, 'देखो, या तो तुम मेरी बात मान लो, वरना स्कूल से तुम्हें ख़राब चाल-चलन के लिए बदनाम करके निकाल दूँगा।' उस ज़माने में विद्यार्थी शिक्षकों से कैसा डरते थे। अब शायद उतना नहीं डरते। मगर हम लोग तो शिक्षक को शाहंशाह ज़ार और ईश्वर से भी बड़ा समझा करते थे।'

'और मैं एक विद्यार्थिनी थी। वह आदमी मेरे मालिक के, जिसके यहाँ मैं नौकरानी थी, लड़के पढ़ाने आया करता था...'

'नहीं, लेकिन...'नियूरा ज़ोर से बोली, मगर ज्यों ही पीछे की तरफ़ उसने घूमकर देखा उसका मुँह खुला रह गया और वह आगे कुछ न कह सकी। जिधर वह घूर रही थी उधर जेनेका ने देखा तो वह हाथ मलने लगी। द्वार में लियूब्का खड़ी थी...काँटे की तरह सूखी, आँखें गड्ढों में और मानो नींद में खड़ी-खड़ी द्वार की साँकल सहारे के लिए ढूँढ़ रही थी।

'लियूब्का, अरी मूर्ख, क्या हुआ है तुझे?' जेनेका ने चिल्लाकर पूछा, 'यह क्या है?'

'है क्या! यहाँ से ले गया और फिर मारकर घर से निकाल दिया!'

सब दङ्ग होकर चुप थीं। जेनेका ने अपने हाथों से अपनी आँखें ढक लीं और दाँत पीसने लगी।

'जेनेच्का, मेरी आस तुम्हीं पर है' लियूब्का ने थकी हुई आवाज़ में निस्सहायता

से कहा, 'तुम्हारी बात यहाँ सब मानते हैं। मेरी प्यारी अन्ना मारकोव्ना या सिमियन से ठीक कर लो कि मुझे यहाँ फिर रख लें।'

जेनेका सीधी होकर पलँग पर बैठ गई और लियुब्का की तरफ़ जलती हुई, मगर रोनी आँखों से घूरते हुए उसने टूटी आवाज़ में पूछा :

'आज कुछ अभी तक खाया है कि नहीं?'

'नहीं, कल से मैंने कुछ नहीं खाया है।'

'सुनो, जेनेच्का' वेण्डा ने धीरे से पूछा, 'मैं थोड़ी-सी शराब इसे पिलाऊँ? तब वेरका रसोई से दौड़कर कुछ खाने को ले आयेगी? क्यों?'

'हाँ, जो कर सकती हो करो। ठीक है, थोड़ी शराब पिलाओ। देखो, इसके कपड़े भी भीगे हुए हैं। उतारो इन सब कपड़ों को जल्दी से। मनका, टमारा, दौड़ो। जल्दी से इसके लिए कपड़े, जूते और मोजे पहिनने के लिए लाओ।' और फिर वह लियूब्का की तरफ़ मुड़कर बोली, 'मूर्ख कहीं की! बता तो सारा हाल क्या हुआ!'

बाईसवाँ अध्याय

उस दिन सुबह को जब लिखोनिन अचानक—उसके लिए स्वय भी यह अचानक ही था लियूब्का को अन्ना के चकले से निकालकर ले चला तो ग्रीष्म ऋतु जोर पर थी। पेड़ अभी तक हरे-भरे थे मगर हवा, पत्तियाँ और घास से कोमल उदास परन्तु जादूभरी महक इस प्रकार आ रही थी मानो वह कहीं बड़ी दूर से आ रही हो। लिखोनिन चकित होकर पेड़ों को देख रहा था। जो ऐसे स्वच्छ, भोले और शान्त-से लग रहे थे, मानो ईश्वर ने उन्हें रातोंरात वहाँ उगाकर खड़ा कर दिया हो और पेड़ भी स्वयं चकित-से अपने चारों तरफ़ के तालाबों, नालियों और लकड़ी के पुल के नीचे बहनेवाली उथली नदी के पानी को, जो बिल्कुल नीरव था और ऊँचे धुले हुए आकाश को, जो जगकर ऊषा की लालिमा में, अभी तक थोड़ा-थोड़ा ऊँघता हुआ अपनी गुलाबी, सुस्त और सूखी मुस्कान से कृपालु सूर्य भगवान का स्वागत कर रहा था, देख रहे थे।

प्रातःकाल इस सुन्दर दृश्य को देखकर अपनी आनन्दपूर्ण हस्ती के ज्ञान से और रात भर बन्द धुएँ से भरे हुए कमरों में बिना सोये बिताने के बाद फेफड़ों में

स्फूर्ति भर देनेवाली ताज़ी हवा से विद्यार्थी का हृदय धड़क रहा था, मगर अपने सुन्दर और उच्च क़दम-से जो आज उसने लिया था, उसे सबसे अधिक आनन्द हो रहा था।

उसने मर्दों की तरह काम किया था। हाँ, सचमुच मर्दों की तहर—वीरों की तरह! इस समय भी उसके मन में अपने क़दम के लिए कोई पछतावा नहीं था। वह अपने मन ही मन में सोचता था, 'अपने कमरों में, कुर्सियों पर बैठकर भली छोकरियों के साथ चाय पीते हुए, वेश्यावृत्ति की भयंकरता पर व्याख्यान झाड़ना आसान है, मगर किसी स्त्री को उस नरक से निकाल लेना बड़ी वीरता का काम है! बहुत-से लोग वेश्याओं से आकर उनके दुःखी जीवन की चर्चा करते हैं। यहाँ तक कि वे बेचारी रोने लगती हैं। तब वे उनको दिलासा देने लगते हैं—उनको छाती से लगाते हैं, प्यार से सिर सहलाते हैं, गालों पर चूमते हैं, फिर होठों पर चूमते हैं, और फिर जो होता है सो तो सभी जानते हैं! धिक्कार है, ऐसे लोगों पर! मैं उन लोगों की तरह नहीं हूँ! मैं जो कहता हूँ सो करता हूँ!'

उसने लियूब्का की कमर में हाथ डाला और उसकी तरफ़ स्नेह से देखा - मगर फौरन ही फिर उसको ऐसा लगा कि वह लियूब्का को पिता या भाई की दृष्टि से देख रहा था।

लियूब्का को बड़ी नींद आ रही थी। उसकी आँखें मिची जाती थीं और वह उन्हें बारबार खोलने का प्रयत्न करती थी जिससे कि वह सो न जाय। मगर उसके होठों पर वही भोले बच्चों की-सी, थकी हुई मुसकान अभी तक थी, जिसको लिखोनिन ने अन्ना के यहाँ देखा था और उसके मुँह के एक कोने से लार का एक मोटा तार निकल रहा था।

'लियूब्का, मेरी प्यारी लियूब्का! मुसीबतज़दा स्त्री! देखो, देखो, चारों तरफ़ कैसा सुन्दर दृश्य है! हे ईश्वर! पाँच साल से मुझे कभी सूर्योदय देखने का मौक़ा नहीं मिला। कभी ताश खेलता रहता था, कभी शराब पीता रहता था, कभी यूनीवर्सिटी को जाने की जल्दी होती थी। देखो, देखो प्रिये, कैसा सुन्दर उषाकाल है! सूर्योदय हो रहा है! तुम्हारा भी इसी तरह सूर्योदय हो रहा है, लियोबोच्का! तुम्हारे नये जीवन का यह प्रारम्भ है! देखो! तुम निर्भय होकर मेरे आश्रय में रहोगी! मैं तुम्हें ईमानदार मेहनत की ज़िन्दगी और जीवन-संग्राम में विजय करना सिखाऊँगा!'

लियूब्का ने आश्चर्य से उसकी ओर देखते हुए सद्भाव से सोचा, 'अभी तक नशे

के असर में है। मगर कुछ हर्ज नहीं, बड़े अच्छे हृदय का है।' और यह सोककर वह ऊँघती हुई मुस्कराकर मोहक झिड़की देती हुई उससे कहने लगी :

'हाँ···हाँ! तुम मुझे बेवकूफ़ बना रहे हो। तुम सब मर्द एक-से होते हो। तुम अपना मज़ा पूरा कर लेते हो—फिर हमारी तरफ़ ध्यान भी नहीं देते!'

'मैं? हे भगवान! मैं ऐसा करूँगा?' लिखोनिन ने उत्साह और स्नेह से अपनी छाती ठोंकते हुए कहा, 'हाय! तब तुम मुझे अभी तक पहचानती ही नहीं! मैं इतना बेईमान आदमी नहीं हूँ कि तुम जैसी निस्सहाय छोकरी को धोखा दूँ। नहीं! मैं तुम्हारे दिमाग़ को शिक्षित करने, तुम्हारी दृष्टि को विस्तृत करने, तुम्हारे दुःखी हृदय की उन सारी क्रूर चोटों को, जो इस जीवन में तुम पर हुई हैं, भुला देने के लिए अपनी पूरी शक्ति से कोशिश करूँगा। मैं पिता और भाई की तरह तुम्हारी देख-भाल करूँगा! पग-पग पर मैं तुम्हारी सँभाल करूँगा! और जिस दिन तुम किसी आदमी को सच्चे हृदय से पवित्र प्रेम करने लगोगी, उस दिन मैं अपने आपको और इस दिन को जब मैं तुम्हें इस रौरव नरक से निकालकर ले जा रहा हूँ, धन्य समझूँगा!'

उसके इस व्याख्यान को सुनकर बूढ़ा गाड़ीवान धीरे-धीरे हँसने लगा। उसकी हँसी सुनाई तो नहीं पड़ी, मगर उसकी पीठ के हिलने के ढंग से उसका हँसना साफ़ जाहिर था। बूढ़े गाड़ीवान बहुत-सी बातें सुना करते हैं, क्योंकि पास ही बैठने से उन्हें अन्दर होनेवाली सारी बातें सुनाई देती हैं। अतएव वे बहुत-सी ऐसी बातें जानते हैं, जिनकी गाड़ी के भीतर बैठनेवालों को खबर नहीं होती। कौन जाने इस बूढ़े गाड़ी-वान ने कितने ऐसे व्याख्यान अपनी ज़िन्दगी में सुने थे?

लियूब्का को लगा कि लिखोनिन उससे किसी प्रकार नाराज़ हो गया था अथवा वह किसी हवाई रकीब से ईर्ष्या कर रहा था। लिखोनिन बड़े जोश से उच्च स्वर में बोल रहा था। उसकी ऊँघ भाग गई और अच्छी तरह जगकर उसने लिखोनिन की तरफ़ आँखें फाड़कर देखा और उसकी बातें बिल्कुल न समझते हुए भी उसके हाथ में अपने आपको अर्पण करते हुए उसके दाहिने हाथ को, जो उसकी कमर पर रखा हुआ था, स्नेह से पकड़कर कहा :

'मेरे प्यारे, नाराज़ मत हो। मैं कभी तुम्हें नहीं छोड़ूँगी। ईश्वर की सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि मैं तुम्हें छोड़कर कभी दूसरे के पास जाने की सोचूँगी भी नहीं।

मैं क्या जानती नहीं हूँ कि तुम मेरी रक्षा करना चाहते हो ? क्या तुम समझते हो कि मेरे पास इतनी भी समझ नहीं है, तुम कितने सुन्दर, नौजवान और अच्छे हो ! अगर तुम नौजवान न होकर बूढ़े भी होते...'

'ओह ! तुम मेरा मतलब बिल्कुल नहीं समझीं !' लिखोनिन ने चिल्लाकर कहा और फिर वह वैसी ही ऊँची-ऊँची बातें उससे करने लगा—स्त्रियों के मर्दों से बराबरी के अधिकार, शारीरिक परिचय की पवित्रता, मानवी न्याय और स्वतंत्रता और प्रचलित बुराइयों के विरुद्ध संग्राम—उसे समझाने लगा।

मगर लियूब्का की समझ में उसकी एक बात भी न आई। वह अभी तक यही समझती रही कि उससे कोई ग़लती हो गई है, जिससे वह सिकुड़कर, उदास होकर, सिर झुकाकर और चुप होकर बैठ गई। थोड़ी देर और लिखोनिन उससे इसी प्रकार बातें करता रहता तो अवश्य वह रोने लगती, मगर सौभाग्य से गाड़ी उस मकान तक पहुँच चुकी थी, जिसमें लिखोनिन रहता था।

'अच्छा, लो आ गया अपना घर' विद्यार्थी ने कहा। 'गाड़ीवान रोको।'

और गाड़ीवान को दाम दे चुकने के बाद वह अपने आपको ऐक्टर की तरह जोश में भरकर, हाथ फैलाकर यह पद कहने से न रोक सका—

'आओ आओ आओ ;
इस घर की रानी आओ !
निर्भय होकर आओ ! निःशंक आओ ;
इस घर को लो अपनाओ !'

और फिर गूढ़ मुसकान से बूढ़े गाड़ीवान के चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गईं।

तेईसवाँ अध्याय

लिखोनिन जिस कमरे में रहता था वह साढ़े पाँचवी मंज़िल पर था ! साढ़े पाँचवीं मंज़िल पर इस तरह कि छः-छः सात-सात मंज़िलवाले मकानों की आखिरी छतों पर जो सस्ते किरायेदारों से भर जाते हैं, टीन के कुछ झोपड़े बना दिये जाते हैं, जिनमें रहनेवालों को जाड़ों में सख्त जाड़े से ठिठुरना और गर्मियों में कड़ी गर्मी से तपना होता है। यही टीन के झोंपड़े मकान की आधी मंज़िल गिने जाते हैं। ऐसा ही एक

झोपड़ा लिखोनिन ने अपने रहने के लिए किराये पर ले रखा था। लियूब्का ऊपर चढ़ते-चढ़ते थक गई। उसे ऐसा लगने लगा कि दो क़दम और आगे चली तो वह सीढ़ियों पर गिरकर हमेशा के लिए सो जायगी, मगर लिखोनिन बराबर यह कहकर उसका उत्साह बढ़ा रहा था, 'मेरी प्यारी ! मैं देखता हूँ कि तुम बहुत थक गई हो, लेकिन घबराने की बात नहीं है। मेरा सहारा ले लो। देखती नहीं हो, हम लोग ऊपर चढ़ रहे हैं ! ऊपर और ऊपर— मनुष्य के सभी महान् प्रयत्नों का लक्ष्य ऊपर की तरफ़ चढ़ना होता है ! मेरी मित्र, मेरी बहिन, मुझे पकड़ लो, मेरा सहारा लेकर चढ़ी चलो !'

यह बेचारी लियूब्का के लिए और भी कठिन हो गया। उसे अकेला अपना शरीर ही ऊपर को लेकर चढ़ना मुश्किल था। लिखोनिन को पकड़कर साथ-साथ उसका बोझ भी घसीटना उसके लिए और भी कठिन हो गया। और उसका बोझ भी शायद इतना असह्य उसको नहीं लग रहा था, जितनी असह्य धीरे-धीरे अब उसकी बातें हो चली थीं ! गोद के बालक का लगातार रोना और चीख़ना, दाँत का दर्द और मसूड़ों की टीस, कौवे का खिड़की पर काँव-काँव अथवा पास के दूसरे कमरे में किसी का लगातार बेसुरी बाँसुरी बजाना जिस तरह अखरने लगता है, उसी तरह लिखोनिन की बातें उसे अखर उठीं

आखिरकार वे पाँचों मंजिल चढ़कर लिखोनिन के कमरे पर जा पहुँचे। कमरे के द्वार में कोई ताला नहीं लगा था। लिखोनिन कभी अपने कमरे में ताला लगाकर नहीं जाता था, अतएव लिखोनिन ने जैसे ही एक धक्का लगाया, वैसे ही कमरे का द्वार तुरन्त खुल गया। कमरे में अँधेरा हो रहा था, क्योंकि तमाम खिड़कियों के पर्दे नीचे गिरे हुए थे। चूहों, मिट्टी के तेल, बासी तरकारी, पुराने कपड़ों और तम्बाकू की बू कमरे में भर रही थी। कोई शख़्स जिसकी शक्ल अँधेरे में दिखाई नहीं देती थी, एक तरफ़ कमरे में लेटा हुआ ज़ोर-ज़ोर से खुर्राटे ले रहा था।

लिखोनिन ने खिड़कियों के पर्दे उठाकर लपेट दिये। कमरे का ठाटबाट बिल्कुल एक ग़रीब विद्यार्थी के कमरे का-सा था—एक तरफ़ एक ढीली खाटपर उल्टा-पलटा बिस्तर और उस पर एक सिमटा हुआ कम्बल पड़ा था। दूसरी तरफ़ एक लँगड़ी मेज़ रखी थी, जिस पर बिना मोमबत्ती का शमादान रखा हुआ था, चन्द किताबें मेज़ पर और ज़मीन पर बिखरी हुई पड़ी थीं; पिये हुए सिगरेटों के टुकड़े हर तरफ पड़े थे और मेज़

के सामने दीवार से लगा हुआ एक पुराना दीवान था, जिस पर इस समय काले बालों और काली मूछों का नौजवान मुँह फाड़े लेटा ज़ोर-ज़ोर से खुर्राटे ले रहा था। उसकी कमीज़ के बटन खुले हुए थे जिससे उसकी छाती के घने और घुँघराले काले बाल भी, जैसे कि फ़ारसी मेमनों की पीठ पर होते हैं, दीख रहे थे।

'निजारजे! ओ निजारजे, उठ!' लिखोनिन ने उसकी पसलियों में उङ्गली गड़ाते हुए कहा, 'उठो शाहज़ादे! 'हूँ···ऊँ···ऊँ···!'

'तेरे बाप-दादा की ऐसी-तैसी! तेरे ख़ानदान को कोहकाफ़ से देश-निकाला हो! वे फिर कभी जार्जिया लौटकर न पहुँचें! उठ बदमाश! अरे आवारे! गुण्डे··!'

मगर एकाएक लियूब्का ने लिखोनिन को रोका, जिससे लिखोनिन को आश्चर्य हुआ। उसका हाथ पकड़कर वह झिझकती हुई बोली :

'प्यारे, क्यों बेचारेको सताते हो? मुमकिन है बेचारा बड़ा थका हुआ है, इसलिए और सोना चाहता है। थोड़ा और सो लेने दो। मैं घर चली जाऊँगी। मुझे सिर्फ़ गाड़ी के किराये के लिए आठ आना दे दो। कल आकर फिर मिलना। क्यों प्यारे ठीक है न?'

लिखोनिन का मुँह शर्म से लाल हो गया। उसे इस मौन और ऊँघती हुई छोकरी के हस्तक्षेप पर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसकी समझ में यह नहीं आ सका कि लियूब्का के हृदय में पूरी तरह न सो सकनेवाले मनुष्य के लिए स्वाभाविक दया-भाव आ सकता था अथवा दूसरे की नींद न तोड़ने की उसको अपने पेशे की वजह से आदत हो गई थी। मगर उसका आश्चर्य क्षण भर ही रहा। न जाने क्यों वह चिढ़-सा गया, उसने सोनेवाले आदमी का हाथ पकड़कर जो फ़र्श पर पड़ा था और जिसकी अंगुलियों में बुझी हुई सिगरेट लटक रही थी; उठाया और उसे ज़ोर से झकझोरता हुआ गम्भीर और कड़ी आवाज से चिल्लाया :

'ऐ निजारजे, सुनो! मैं तुमसे सचमुच कहता हूँ! सुन कम्बख़्त, सुन। मैं अकेला नहीं हूँ···मेरे साथ एक स्त्री है...ओ सूअर!'

उसके यह कहते ही मानो करिश्मा-सा हो गया। सोनेवाला एकदम ऐसे उछलकर बैठ गया जैसे नीचे से किसी स्प्रिङ्ग ने एकाएक उसे ऊपर को उछाल दिया हो। वह दीवान पर बैठकर जल्दी-जल्दी हथेलियों से अपनी आँखें, कनपटियाँ और माथा मलने लगा। एक स्त्री को सामने देखकर वह सिटपिटाकर जल्दी-जल्दी कमीज़ के बटन लगाता हुआ बड़बड़ाया :

'और तुम आ गये लिखोनिन ? मैं तो तुम्हारा यहाँ इन्तज़ार करता-करता सो भी गया। जरा अपरिचित कामरेड स्त्री से एक मिनट उधर मुँह कर लेने को कहो।'

यह कहते हुए उसने जल्दी से अपना रोज़ाना का विद्यार्थियों का खाकी कोट पहिन लिया और दोनों हाथों से अपने सिर के बिखरे हुए घुँघराले बाल सँभालने लगा। लियूब्का स्त्रियों की उस स्वाभाविक नज़ाकत से जिसका वह हर हालत और हर उम्र में प्रदर्शन करने का प्रयत्न किया करती हैं, घूमकर दीवाल पर लटकते हुए एक आईने में अपने सिर के बाल ठीक करने लगी। निजारजे ने लियूब्का की तरफ़ आँखों से इशारा करते हुए लिखोनिन से इशारे में ही पूछा कि यह कौन है ?

'इसकी अभी फ़िक्र मत करो। अभी उधर ध्यान मत दो' लिखोनिन ने ज़ोर से उत्तर में कहा। 'यहाँ से निकलकर फ़ौरन बाहर चलो। अभी सब बता दूँगा। लियूबोच्का क्षणभर के लिए मुझे क्षमा करना। अभी आता हूँ। मैं तुम्हारा सब प्रबन्ध ठीक-ठाक करके तब यहाँ से हवा की तरह ओझल हो जाऊँगा।'

'नहीं, इतना कष्ट करने की क्या ज़रूरत है ?' लियूब्का ने कहा 'ठीक तो है। मैं इस दीवान पर सो जाऊँगी। आप उस पलँग पर सो सकते हैं।'

'नहीं प्रिये, यह अच्छा नहीं लगेगा ! पास ही में मेरा एक दोस्त रहता है। मैं उसके यहाँ जाकर सो जाऊँगा। अभी क्षणभर में लौटकर आता हूँ।'

दोनों विद्यार्थी कमरे के बाहर के बरामदे में चले गये।

'अरे भाई, यह मैं क्या स्वप्न देख रहा हूँ ?' निजारजे ने अपनी रूसी,, कुछ-कुछ भेड़ों की-सी, आँखें फाड़ते हुए कहा :

'यह परी कहाँ से ले आये हो—यह श्रीमती कामरेड कौन हैं ?'

लिखोनिन ने उसको गूढ़ दृष्टि से देखते हुए अपना सिर हिलाया और चेहरा रूखा कर लिया। अब प्रातःकाल की ठण्डी और खुली हवा में घूमकर आने के बाद, दिन निकल आने पर तथा अपनी स्थिति का अच्छी तरह ज्ञान होने पर उसके मन में एक तरह की परेशानी और अपने इस अचानक कदम की ग़ैरज़रूरत का ख्याल आने लगा था, जिससे वह मन ही मन अपने ऊपर और उस स्त्री पर भी जिसे वह ले आया था, कुछ-कुछ कुढ़-सा रहा था। उसे इस स्त्री के साथ रहने की दिक्कतों, तरह-तरह की फ़िक्रों, लड़ाई-झगड़ा, घर-गृहस्थी के खर्चों, मित्रों की मज़ाकों और पूछताछ और सरकारी परीक्षाओं में रुकावटों का खयाल होने लगा था ! मगर निजारजे

सकता है। और कोई कुछ नहीं कहता! न तो उसे ही कोई ख़याल आता है और न उस स्त्री को जिसका सर्वस्व हरण करके वह जाता है। हम लोग यह सब देखने के आदी हो गये हैं। जिससे इस दृश्य से हमारी आत्मा पर कोई असर नहीं होता। क्यों, ऐसा है कि नहीं? हमारी आँखों के सामने उन देवियों को नष्ट किया जाता है जो किसी की पवित्र बहिन और मा बनने के लिए ईश्वर ने बनाई थी! क्यों, मैं ठीक कहता हूँ न?'

'हाँ.. आँ?' निजारजे बड़बड़ाया और वह फिर लिखोनिन की आँखों में न देखकर एक तरफ़ को देखने लगा।

'अतएव मैंने सोचा.. इतना समझाने की क्या ज़रूरत है। व्यर्थ के व्याख्यानों से कोई लाभ नहीं! वेश्यावृत्ति एकदम बन्द कर देने या उसको कम करने के लिए कानून बनाने या अबला-आश्रमों में जाकर बाइबिल की किताबें बाँटने से तो यही कहीं अच्छा है कि मैं इस नरक से एक छोकरी को निकाल ले चलूँ और उसे एक घर के सुन्दर और स्नेह-पूर्ण वातावरण में रखकर और उसके साथ दया का बर्ताव करके उसकी आत्मा को शान्ति पहुँचाऊँ और उसके जीवन में उत्साह बढ़ाऊँ।'

'हूँ...ऊँ!' निजारजे दाँत निकालकर गुनगुनाया।

'अरे शाहजादे! तुम्हारे दिमाग़ में हमेशा गन्दे विचार ही मँडराते रहते हैं। तुम्हें इस बात का ख्याल रखना चाहिए कि मैं एक स्त्री के बारे में तुमसे बातें नहीं कर रहा हूँ, बल्कि एक मानवी जीवन के बारे में—हाड़-माँस की तरफ़ मेरा ध्यान नहीं है, आत्मा की तरफ़ है!

'अच्छा, अच्छा, आत्मा की तरफ़ तुम्हारा ध्यान है! कहे जाओ!'

'अतएव जैसे ही मेरे मन में यह विचार आया, मैंने तुरन्त उस पर अमल किया। मैं इस स्त्री को अन्ना के चकले से फिलहाल अपने यहाँ ले आया हूँ। आगे भगवान की जैसी मर्ज़ी। मैं पहले इसको पढ़ना-लिखना सिखाऊँगा। बाद में मैं एक खाने की दूकान अथवा परचून की दूकान खुलवा दूँगा। मेरा ख़्याल है कि मेरे दूसरे बन्धु भी इस काम में अवश्य सहायता करेंगे। मनुष्य के हृदय को—हर मनुष्य के हृदय को स्नेह की आवश्यकता होती है, शाहज़ादे! एक-दो साल में मैं समाज को एक अच्छा मेहनती और योग्य सदस्य लौटा दूँगा, जिसकी आत्मा बड़ा से-बड़ा काम कर सकने के योग्य होगी···क्योंकि इसने अभी तक अपना शरीर ही बेचा है और इसकी आत्मा अभी तक बिल्कुल स्वच्छ और निर्दोष है।'

'शी···शी···शी' शाहज़ादे ने अपनी ज़बान चाटते हुए कहा।

'इस शी···शी...का क्या मतलब है ? गधा कहीं का !'

'और तुम उसे एक सीने की मशीन भी ख़रीदकर दोगे न, क्यों ?'

'सीने की मशीन में क्या खास बात है ? मेरी समझ में नहीं आया !'

'क्योंकि मैंने उपन्यासों में ऐसी हालतों में सीने की मशीन दिये जाने का ही जिक्र पढ़ा है। उपन्यास का मुख्यपात्र जैसे ही पतित आत्मा को नरक से छुड़ाकर लाता है, वैसे ही वह उसे एक सीने की मशीन खरीद कर देता है।'

'बेवकूफ़ी की बातें बन्द करो, लिखोनिन ने ग़ुस्से से हाथ हिलाते हुए कहा, 'विदूषक !'

लिखोनिन का मित्र एकाएक लाल हो गया और उसकी काली-काली आँखों से चिनगारियाँ निकलने लगीं। वह बोला :

'बेवकूफी की बातें नही हैं ! सच कहता हूँ। ऐसी हालत में दो में से एक ही बात होती है— और वही यहां भी होगी। या तो तुम चार-पाँच महीने उसे अपने पास रखकर फिर सड़क पर निकाल दोगे और वह फिर लौटकर चकले में जा बैठेगी अथवा सड़कों पर मारी-मारी फिरेगी, या तुम उसका उद्धार करने के लिए सीखने-सिखाने का इतना बोझ उसके सिर पर एकदम लादने लगोगे कि वह उससे घबराकर तुम्हारे पास से भाग जायगी और फिर चकले में जा बैठेगी अथवा गलियों में मारी-मारी फिरेगी। मैं सच कहता हूँ ! इन्हीं दो बातों में से कोई एक बात होगी। हाँ, एक तीसरी बात भी हो सकती है। तुम उसकी भाई की तरह फिक्र करोगे और वह चुपके-चुपके किसी और से प्रेम कर लेगी। मैं सच कहता हूँ, मेरी बात मानो, औरत औरत ही होती है और जिस आदमी से वह प्रेम करेगी, वह भी उसके शरीर से सिर्फ़ दो-चार महीने खेलेगा, बाद उसको फिर गली में धकेल देगा अथवा किसी चकले में भेज देगा।'

लिखोनिन ने एक बड़ी गहरी साँस ली। उसके अन्तर में कहीं — उसके दिमाग़ में नहीं— निज़ारजे का कहना सत्य-सा लगा, मगर उसने शीघ्र ही अपने ऊपर क़ाबू करके अपना सर हिलाते हुए शाहज़ादे की तरफ़ अपना हाथ बढ़ाकर अभिमान से कहा :

,मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि छः महीने बाद तुम्हें अपने शब्द वापस ले लेने

होंगे और मुझसे माफ़ी माँगोगे और जुर्माने में मुझे आधी दर्जन बोतलें शराब पिलाओगे।'

'अच्छा यही रही!' शाहज़ादे ने उसके हाथ पर ज़ोर से हाथ मारते हुए कहा, 'बड़ी ख़ुशी से! और जो मैं कहता हूँ वह सच हुआ तो तुम मुझे आधी दर्जन शराब की बोतलें पिलाना।'

'हाँ, तब मैं तुम्हें पिलाऊँगा। अच्छा, फ़िलहाल बन्दगी। तुम कहाँ सोओगे?'

'यहीं, इस बरामदे में सोलीवीव के कमरे में सो जाऊँगा। और तुम तो पुराने वीरों की तरह शायद अपने और उसके बीच में एक दुधारी तलवार रखकर सोओगे? क्यों?'

'क्या बकते हो! मैं ख़ुद सोलीवीव के यहाँ जाकर सोने का विचार कर रहा था, मगर अब मैं जाकर ज़रा इधर फिरूँगा और फिर किसी दोस्त के यहाँ जाकर सो जाऊँगा। बन्दगी!'

'ठहरो, ठहरो!' निज़ारजे ने उसके थोड़ी दूर चले जाने पर चिल्लाकर कहा, 'मैं तुमसे ख़ास बात कहना तो भूल ही गया। पर्टज़ान पकड़ लिया गया!'

'अच्छा, अच्छा तो...' लिखोनिन ने एक लम्बी जँभाई आनन्द से लेते हुए कहा।

'हाँ, मगर किसी बड़ी भयंकर बात के लिए वह पकड़ा नहीं गया है। उसके पास केवल कुछ ज़ब्तशुदा किताबें और पर्चे निकले थे। एक साल से अधिक सज़ा नहीं होगी।'

'एक साल तो मज़े से काट लेगा—काफ़ी तगड़ा है।'

'हाँ...आँ' शाहज़ादे ने कहा, 'अच्छा, बन्दगी!'

चौबीसवाँ अध्याय

लिखोनिन अकेला रह गया। अन्धकार-पूर्ण मार्ग में बुझते हुए मिट्टी के लैम्प और सड़ी तमाखू की बू आ रही थी। रास्ते के दोनों छोरों पर छत में बने हुए शीशे के दो रोशनदानों में से मन्द-मन्द सूर्य की रोशनी भी अन्दर घुसने का प्रयत्न कर रही थी।

लिखोनिन के मन में कमज़ोरी और उड़ान दोनों ही आ रही थीं। उस आदमी

को इसका पर्याप्त अनुभव होता है, जिसे काफ़ी वक्त. तक सोने को बिल्कुल भी न मिला हो। उसे ऐसा लग रहा था कि रोज़मर्रा की साधारण ज़िन्दगी से वह कहीं ऊँचा उठ गया था और वह ज़िन्दगी अब उससे इतनी दूर हो गई थी कि उसकी अब चिन्ता करने की आवश्यकता नही थी, मगर साथ ही उसके विचारों और भावों में एक शान्तिपूर्ण स्पष्टता और लापरवाही का व्यक्तित्व आ गया था, जिससे उसको आनन्द भी हो रहा था।

वह अपने कमरे के पास दीवाल पर झुका खड़ा था और उसके निकट और नीचे बोसियों लोग पड़े सो रहे थे, जिन्हें वह मन ही मन देख-छू और सुन-सा रहा था। यह लोग ऊषाकाल की गहरी नींद, मुँह बाये, खुर्राटे भरते हुए, मुड़े हुए चेहरे रखे, ले रहे थे। लिखोनिन के मन में विचार आया, जो बचपन से ही अक्सर उसे आया करता था कि सोते हुए लोग कैसे भयकर, मुर्दों से भी भयकर लगते हैं। इतने में उसे लियूब्का की याद आई। उसके भीतरी, दबे हुए, रहस्यपूर्ण ममत्व ने उसके कान में धीरे से कहा, 'चलो इस बहाने से चलकर छोकरी को देखो कि वह आराम में है या नही और सुबह की चाय का भी प्रबन्ध करना है, मगर उसने अपना मन फेरने के लिए सोचा कि ऐसा बिचार भी उसे नहीं आया और वह यह सोचकर बाहर सड़क पर निकल आया।

वह हर एक चीज़ को बड़े ध्यान से देखता हुआ सड़क पर चलने लगा। उसके मन में इस समय एक विचित्र और नया कौतूहल हो रहा था। चलते हुए हर एक चीज़ें उसे ऐसी स्पष्ट दीखती थी, मानो वह उसे अपनी उङ्गलियों से छू रहा हो। एक किसान औरत उसके पास से निकली। उसके कन्धे पर हल रखा था जिसके दोनों सिरों से दूध के दो मटके लटक रहे थे। उसका चेहरा जवान नहीं था। उसकी कन-पटियों पर और नथुनों से लेकर मुँह तक लम्बी-लम्बी झुर्रियाँ थीं। मगर उसके गाल गुलाबी और शायद छूने पर कड़े थे और उसकी कञ्जी आँखों में किसानों की नम-कीन मुसकान थी। कन्धे पर रखे हुए भारी हल के हिलने से और उसके धीरे धीरे चलने से उसके दोनों कूल्हे दायें-बायें ताल से मटकते थे, जिनके लहरों की तरह हिलने-डुलने में एक भोंड़ा परन्तु इन्द्रिय प्रिय सौन्दर्य था।

'इस नटखट किसान औरत ने ज़िन्दगी अच्छी तरह देखी है,' लिखोनिन ने अपने मन में सोचा। और एकाएक उसके मन में विचार आया, जिसकी उसको भी कोई आशा न थी कि यह सादी औरत, जिसको न तो वह जानता ही था और न जो

जवान ही थी, उसकी हो जाती। शायद वह स्त्री गन्दी और भोंड़ी भी थी, मगर लिखोनिन को वह उस बड़े सेब की तरह लगी जिसे चिड़ियों ने थोड़ा-सा कुतरकर पेड़ से ज़मीन पर गिरा दिया था और जो ज़मीन पर काफ़ी देर तक पड़ा रहने पर भी अभी तक चमकीला और ख़ुशबूदार था।

इतने में जनाज़ा ले जानेवाली एक गाड़ी दौड़ती हुई उससे आगे निकल गई। इस गाड़ी में दो घोड़े आगे और दो पीछे जुड़े हुए थे और मशालची और क़ब्र खोदनेवाले, सुबह ही से शराब पीकर अपने पाशविक चेहरे लाल किये हुए, पुराने टोप सिरों पर लगाये, एक कम्बल पर अपनी वर्दियों के ढेर पर लालटेनें लिये बैठे थे और भर्राये हुए कण्ठों से एक बेतुका राग अलाप रहे थे। 'शायद यह लोग कोई जनाज़ा ले जाने की जल्दी में हैं या कोई जनाज़ा दफ़नाकर आ रहे हैं,' लिखोनिन ने सोचा, 'कैसे आनन्दी जीव हैं!' आगे चलकर सायेदार चौड़ी सड़क के किनारे पड़ी हुई एक हरे रङ्ग की बेञ्च पर वह बैठ गया। सैकड़ों वर्ष पुराने शाहबलूत के बड़े-बड़े दरख़्तों की दो क़तारें दूर तक सामने जाकर, बहुत दूर पर मिलकर एक हरे तीर की तरह हो गई थीं। उन पर नुकीले हरे-हरे फल लटक रहे थे। लिखोनिन को एकाएक याद आई कि वसन्त के बिल्कुल आरम्भ में भी वह इसी सड़क पर और इसी स्थान पर एक दिन बैठा था, परन्तु उस समय शान्तिपूर्ण, नम्र सन्ध्या, थकी हुई कामिनी की भाँति, मुस्कराती हुई, सोने जा रही थी। उस समय शाहबतूल के इन बड़े-बड़े दरख़्तों की पत्तियों से भरी हुई टहनियाँ जो नीचे चौड़ी और ऊपर सिर पर पतली थीं, फूलों के गुच्छे से लदी हुई थीं जो चमकीले, गुलाबी और नुकीले आकाश की तरफ़ उठे हुए थे। ऐसा लगता था, मानो किसी ने उन पेड़ों पर बहुत से लाल-लाल दीपक जलाकर रख दिये हों और यह सोचते हुए लिखोनिन को यह देखकर वेदना हुई जैसी कि सभी को कभी न कभी होती है—कि शाहबतूल के पेड़ों पर फल पकने लगे थे, क्योंकि उस समय जिस समय की वह इस समय याद कर रहा था। इन वृक्षों पर छोटे-छोटे फूलते हुए फूल दीपकों की तरह चमक रहे थे। उसने सोचा कि इसी तरह और भी वसन्त आवेंगे और चले जायँगे, मगर जो वसन्त एक बार बीत जावेगा, उसे फिर कोई लौटाकर न ला सकेगा। यह सोचकर वह दुःख से अपने आगे फैली हुई घनी सड़क की तरफ़ घूरने लगा, परन्तु फिर एकाएक उसने देखा कि प्रेमाश्रु से उसकी आँखें भर आई हैं।

वह फ़ौरन उठकर खड़ा हो गया और आगे की तरफ़ हर एक चीज़ को ऐसे ध्यान-पूर्वक देखता हुआ चला जैसे कि ईश्वर की सृष्टि को आज पहिली बार ही वह देख रहा हो। मैमारों का एक झुण्ड उसके पास से होकर गुजरा जिनका अक्स उसके दिमाग़ पर उसी तरह पड़ा जैसा कि कैमेरा के शीशे पर पड़ता है। इस झुण्ड के मिस्त्री की दाढ़ी लाल थी जो एक तरफ़ को उलझी हुई थी और उसकी आँखें नीली और चमकीली थीं। दूसरा इस झुण्ड में एक लम्बा-चौड़ा जवान मैमार था जिसकी बाईं आँख चोट से सूजी हुई थीं और जिसके माथे से गालों तक और नाक से कन-पटी तक नीले रङ्ग का बड़ा धब्बा-सा बन रहा था ; तीसरा एक छोटा-सा भोला-भाला गाँव का कमज़ोर छोकरा था जो एक चिड़िया के बच्चे की तरह मुँह बाये लार गिरा रहा था ; चौथा एक बूढ़ा मैमार था जो देर से आने के कारण बकरे की तरह कूदता हुआ सबके पीछे दौड़ता हुआ आ रहा था। ये आदमी और उनके चूने से सने कपड़े, कन्नी, बसूला और अन्य औजार उसकी आँखों के आगे एक निर्जीव सिनेमाचित्र की तरह निकल गये।

लिखोनिन नये किशेनवेस्की नाम के बाज़ार में होकर गुज़रने लगा तो किसी चीज़ के भुनने की सुगन्ध से उसके नथने फूल गये। तब उसे याद आया कि कल दोपहर से उसने कुछ खाया नहीं था और उसे एकाएक भूख लग उठी। दाहिनी तरफ़ मुड़कर यह बाज़ार के बीचोबीच में घुसा। अपने फ़ाकेमस्ती के दिनों में—ऐसे दिन इसने काफ़ी थे—इस बाज़ार में आकर जो कुछ थोड़े-बहुत पैसे वह मुश्किल से कमा पाता था, उनसे वह अपने लिए खाने को रोटी और भुना हुआ गोश्त ख़रीदा करता था। ऐसा वह अक्सर जाड़ों में करता था। रोटी बेचनेवाली नानबाइन बहुत से कपड़े अपने शरीर पर लपेटे गर्मी के लिए आग से भरे एक बर्तन पर बैठा करती थी। उसके लोहे के तवे में सलाख पर चढ़ा हुआ फुट भर लम्बा गोश्त का टुकड़ा जिसमें प्याज़ और लहसुन ख़ूब मिला होता था, आग पर चटखता और फुसकारता था। गोश्त के एक ऐसे टुकड़े का दाम दस आना और रोटी का दाम दो आना होता था।

आज बाज़ार में काफ़ी भीड़ थी। कुहनियों से भीड़ में से अपनी परिचित दूकान की तरफ़ रास्ता बनाकर बढ़ते हुए लिखोनिन ने दूर से ही संगीत की आवाज़ सुनी। भीड़ को चीरकर, जो एक दूकान के सामने घिरी खड़ी थी, लिखोनिन ने निकलकर एक ऐसा सादा और प्यारा दृश्य देखा जैसा कि दक्षिणी रूस में ही देखने को मिल

सकता है। दस-पन्द्रह नानबाइनें, जो आम तौर पर बड़ी गपोड़ और बुरी से बुरी गालियाँ बकनेवाली होती हैं, इस वक्त एक दूसरे को सराहती हुई, पिछली शाम से नाच-गाने में मशगूल थीं। रातभर शराब पी-पीकर वे अब अपना नाच-गाना करती हुई सड़क पर आ डटी थीं। साथ में किराये के साज़िन्दे नफ़ीरी, सारङ्गी और तबले पर मज़ेदार ज़ोर-ज़ोर की तानें उड़ा रहे थे। कुछ नानबाइनें शराब के गिलास एक दूसरे से टकरा-टकराकर एक दूसरे का मुँह चूम रही थीं और एक दूसरे पर शराब उडेल रही थीं। कुछ मेज़ पर गिलास रखकर उनमें बोतलों में से शराब उडेल रही थीं। बाक़ी एक स्थान पर बैठी हुई तालियाँ बजा-बजाकर गाने पर तालें देकर चीख, चिल्ला और थिरक रही थीं। बीच में, पगडण्डी के पत्थरों पर, करीब पैंतालीस वर्ष की एक तगड़ी स्त्री जो अभी तक काफ़ी सुन्दर थी और जिसके कूल्हे भारी और लाल-लाल आँखें नशीली थीं, जो उसकी काली और ऊँची भौंहों के नीचे से चमक रही थी, चक्कर लगा-लगाकर एक स्थान पर खड़ी होकर पैर पटककर, सिर झुका-झुकाकर वह लोगों पर नयन-बाण चलाती थीं और फिर सिर पीछे को फेंककर और आँखें मूँदकर वह अपने हाथ दोनों तरफ़ फैला देती थीं और उसके थिरकने के साथ-साथ उसकी बड़ी बड़ी छातियाँ भी उसकी लाल कुरती के अन्दर थिरकती थीं। इस प्रकार नाचती और थिरकती हुई वह अपनी एड़ियों और अँगूठों से अपने पैरों में पहिने हुए बकरी की खाल के जूते चरमरा रही थी।

लिखोनिन इस नानाबाइन को अच्छी तरह जानता था; क्योंकि बुरे समय में यह स्त्री लगातार लिखोनिन को न सिर्फ खाने-पीने का सामान ही देती रही थी; बल्कि उसको उधार भी देती रही थी। उसने लिखोनिन को देखते ही पहिचान लिया और तुरन्त दौड़कर वह उससे चिपट गई और उसको अपनी छाती से दबाकर उसके होंठ अपने तर और गरम होठों से चूमने लगी। फिर उसने अपने दोनों हाथ फैलाकर एक हाथ दूसरे पर मारा और एक हाथ की उङ्गलियाँ दूसरे में उलझाकर मीठे स्वर में बोली :

'मेरे मालिक! मेरे सोने के गहने! मेरे प्यारे! मुझ शराबी औरत को माफ़ करो। आज मैं खोरिया कर रही हूँ!' यह कहकर वह उसको चूमने के लिए यह कहती हुई झपटी, 'मगर मैं जानती हूँ तुम दूसरों की तरह घमण्डी नहीं हो। लाओ प्यारे, अपना हाथ मुझे दो! मैं तुम्हारा हाथ चूमूँगी! नहीं, नहीं, नहीं! मैं चाहती हूँ कि तुम...'

'अरे चाची ग्लेसेरिया, यह तुम क्या कह रही हो!'

लिखोनिन ने उत्साह से उसकी बात काटते हुए कहा, 'जैसे तुमने अभी चूमा वैसे ही फिर चूमो! तुम्हारे होंठ बड़े मीठे हैं!'

'आह मेरे प्यारे!' ग्लेसेरिया ने पिघलकर कहा, 'अच्छा तो अपने होंठ दो! मेरे प्यारे मुझे अपने होंठ चूमने दो!'...

यह कहकर उसने लिखोनिन को स्नेह से अपनी बड़ी-बड़ी छातियों से चिपटा लिया और अपने मोटे, गीले और गरम होंठो से उसके होठों को तर कर दिया। फिर उसकी बाँह पकड़कर उसको खींचकर वह बीच में ले आई और मटक-मटक कर उसके चारों ओर एक अश्लील गीत गाती हुई नाचने लगी।

लिखोनिन पर अब भी रङ्ग चढ़ चुका था। अस्तु वह भी ग्लेसेरिया के साथ-साथ बकरे की भाँति उसके चारों तरफ इस प्रकार थिरकने लगा जैसे कि किसी घूमते हुए बड़े नक्षत्र के साथ-साथ एक छोटा तारा चिपटा हो। लिखोनिन के नाच में शरीक होने पर भीड़ ने मित्रभाव से हर्षध्वनि की। नानबाइन ने उसे मेज़ पर बैठाकर ताड़ी पिलाई और गोश्त खिलाया। लिखोनिन ने एक आदमी से, जिसे वह पहिचानता था, बीयर शराब मँगाकर, शराब का गिलास हाथ में लेकर तीन बेहूदा व्याख्यान झाड़ डाले। एक व्याख्यान तो उसने यूक्रेन प्रांत के लिए स्वराज्य की जरूरत पर दिया; दूसरा लिटल रूस की स्त्रियों के सौन्दर्य और गृहस्थी का ज़िक्र करते हुए लिटल रूस के गोश्त को तारीफ में था और तीसरा न जाने क्यों दक्षिण रूस के उद्योग और व्यापार के सबन्ध में था। लुकेरिया के पास बैठा-बैठा वह बार-बार उसकी कमर में हाथ डालकर उसे चिपटाने की कोशिश करता था और वह भी इसका कोई विरोध नहीं करती, मगर वह अपने लम्बे-लम्बे हाथों से भी उसकी विशाल कमर को अपने हाथों में न पकड़ सका। हाँ, लुकेरिया ने अपने विशाल, अग्नि की तरह गरम और नरम हाथ में उसका हाथ इतनी जोर से मेज़ के नीचे दबाकर पकड़ लिया कि वह दुख उठा।

इतने में नानाबाइनों में जो अभी तक एक दूसरे को बड़े स्नेह से चूम रही थीं, कोई पुराना झगड़ा और गिला शुरू हो गया। दो नानबाइनें, एक दूसरे के सामने कुहनियाँ कमर पर रखकर इस प्रकार खड़ी हो गईं जैसे कि मुर्गे लड़ने के लिये तैयार होकर खड़े हो जाते हैं और चुनीदा चुनीदा गालियों की एक दूसरे पर वर्षा करने लगीं।

'बेवकूफ़ ! काठ की उल्लू ! कुतिया की बच्ची !' एक ने चिल्लाकर कहा, तू मुझे यहाँ चूमने के लायक नहीं है।' अपनी दुश्मन की तरफ़ अपनी पीठ घुमाकर और अपनी रीढ़ के नीचे माथा मारकर बोली, 'यहाँ ! बिलकुल यहाँ !'

दूसरी ने गुस्से से चिल्लाकर जवाब दिया, 'झूठी ! छिनाल कहीं की !'

लिखोनिन ने इस मौके का फ़ायदा उठाया। वह मेज़ पर से इस प्रकार कूदकर उठा, मानो उसे कोई काम एकाएक याद हो आया हो और यह कहता हुआ लपका :

'लुकेरिया चाची, मेरी बाट देखना ! मैं अभी तीन-चार मिनट में लौटकर आता हूँ !' यह कहकर वह भीड़ चीरता हुआ चला।

'मालिक ! मेरे मालिक !' लुकेरिया ने चिल्लाकर कहा, 'जल्दी लौटकर आना। जितनी जल्दी हो सके लौट आना ! मुझे तुमसे कुछ बात करनी है।

सड़क के मोड़ पर घूमकर लिखोनिन यह याद करने की कोशिश करने लगा कि उसे फ़ौरन ही कौन-सा काम करने के लिये था, वह अपनी अन्तरात्मा में अच्छी तरह जानता था कि वह क्या करना चाहता था, परन्तु वह अपने आपको धोखा देने, अपने मन से टाल-मटोल करने का प्रयत्न करने लगा। दिल खूब खिल रहा था। करीब नौ-दस बज चुके थे। सड़कों पर छिड़काव हो रहा था। मालिन छोकरियाँ फूल बेचती फिर रही थीं। दक्षिण रूस का आनन्दपूर्ण, रङ्गीन और अमीर नगर जाग उठा था। सड़क पर चुङ्गी की एक गाड़ी तरह-तरह के कुत्तों से भरी खड़खड़ाती हुई चली जा रही थी और उस पर दो लावारिस कुत्ते पकड़नेवाले जो अपने आपको 'शाही कुत्ते पकड़नेवाले' के बड़े नाम से भी पुकारते हैं, आज सुबह का शिकार पकड़े लिये जा रहे थे।

'वह अब तो उठ बैठी होगी,' लिखोनिन के दबे हुए विचार ने शरीर धारण किया, 'और अगर अभी तक वह सोती होगी तो मैं भी दीवान पर लेटकर कुछ देर सो लूँगा।'

मकान के रास्ते में अभी तक मिट्टी के लैम्प की धीमी रोशनी और बदबू वैसी ही फैल रही थी। ऊपर के रोशनदानों से आनेवाला सूर्य का प्रकाश बड़ी मुश्किल से कुछ अन्दर आ रहा था। कमरे का द्वार खुला ही पड़ा था। लिखोनिन आहिस्ता से द्वार खोलकर अन्दर घुसा।

खिड़कियों पर पड़े परदों में से कुछ-कुछ रोशनी छनकर कमरे में आ रही थी।

लिखोनिन ने कमरे के बीच में ठहरकर सोती हुई लियूब्का की साँसें सुनीं। उसके होंठ इतने गरम होकर सूखने लगे कि वह उन्हें बार-बार चाटने लगा। उसके घुटने काँपने लगे।

'पूछूँ कि किसी चीज़ की ज़रूरत तो नहीं है,' उसके मन में एकाएक विचार आया।

शराबी की तरह हाँफता हुआ, मुँह बाये, काँपते हुए पैरों से वह पलङ्ग तक गया।

लियूब्का चित्त लेटी पलंग पर सो रही थी। एक नङ्गा हाथ उसका शरीर से सटा हुआ सीधा रखा था और दूसरा उसके सीने पर था। लिखोनिन उसकी तरफ़ झुका। उसका मुँह बिल्कुल लियूब्का के मुँह के पास आ गया। वह एक-सी गहरी साँसें ले रही थी। उसके जवान स्वस्थ शरीर में से निकलनेवाली यह साँसें स्वच्छ और लगभग सुगन्धित थीं। लिखोनिन ने उसके नंगे हाथ को अपने हाथ से सहलाया और उसकी छाती को छुआ। 'क्या कर रहे हो?' उसकी बुद्धि ने घबराकर उससे एकाएक पूछा। मगर उसकी बजाय किसी और ने ही उत्तर दे दिया, 'कुछ भी नहीं! मैं सिर्फ़ देखता हूँ कि वह अच्छी तरह सो रही है या नहीं और उसे चाय तो नहीं चाहिए।'

मगर लियूब्का एकाएक जग गई। उसने अपनी आँखें खोलीं और फिर उन्हें बन्द किया और खोला। उसने अपने दोनों हाथ फैलाकर लम्बी अँगड़ाई ली और स्नेह से मुसकराते हुए अपनी दोनों गरम-गरम और मज़बूत बाहें लिखोनिन के गले में डाल दीं।

'प्यारे! मेरे प्यारे!' बड़े प्रेम से नींद से भर्राई हुई आवाज़ में उसने कहा, 'मैं तुम्हारा इन्तज़ार करते-करते थक गई। यहाँ तक कि मुझे तुम पर क्रोध आने लगा। फिर मैं थककर सो गई और रातभर तुम्हें स्वप्न में देखती रही। आओ, मेरे प्यारे! मेरे निकट आओ!' यह कहते हुए उसने लिखोनिन को अपनी छाती से चिपटा लिया।

लिखोनिन ने कोई विरोध नहीं किया। मगर वह काँप रही थी—मानो उसको ठण्ड लग रही हो—और बार-बार धीमी फुसकार में कटकटाते हुए दाँतों से व्यर्थ में कह रहा था, 'नहीं लियूब्का नहीं...ऐसा न करो...नहीं रहने दो...लियूब्का मुझे न सताओ.. मैं अपने आपे में नहीं हूँ···मुझे रहने दो...ईश्वर के लिए लियूब्का...'

'मेरे प्यारे पागल!' लियूब्का ने हँसते हुए खुशी से कहा, मेरे सर्वस्व! मेरे निकट आओ—'

यह कहते हुए उसने लिखोनिन का मुँह अपने मुँह से लगाकर उसको सच्चे स्नेह से—शायद अपने जीवन में पहली और आखिरी बार—दिल भरकर चूमा।

'अरे बदमाश! तू क्या कर रहा है?' किसी ने लिखोनिन के अन्तर में कहा।

'क्यों? अब तो तुम्हें झिझक नहीं रही?' लियूब्का ने लिखोनिन के होंठ आखिरी बार चूमते हुए पूछा, 'मेरे प्यारे! मेरे सर्वस्व!'

पच्चीसवाँ अध्याय

आत्मा में ग्लानि और मन में अपने और लियूब्का दोनों के प्रति, बल्कि सारी दुनिया के ही प्रति, घृणा और द्वेष लिये लिखोनिन बिना कपड़े उतारे ही टेढ़े और ढीले दीवान पर पड़ गया और शर्म से दाँत पीसने लगा। उसको नींद न आई और उसके विचार लियूब्का को चकले से ले आने की मूर्खतापूर्ण हरकत के इर्द-गिर्द चक्कर लगाने लगे। भोंडी रासलीला का एक महान् नाटक बन गया था। 'खैर, जो कुछ भी हो,' उसने अपने मन में ज़िद से दुहराया, 'एक बार जो वायदा मैंने किया है, उसे आखीर तक पूरा ज़रूर करूँगा। और अभी जो कुछ भी हो गया वह फिर कभी न होगा। हे ईश्वर, दुनिया में कौन ऐसा है जो कभी न गिरा हो? किसी दार्शनिक ने ठीक ही कहा है कि किसी मनुष्य की आत्मा का मूल्य उसकी उड़ान की ऊँचाई और उसकी गिरान की गहराई से मालूम होता है। फिर भी कल का सारा दिन बड़ी बेवकूफी का हो रहा। भाड़ में जाय वह बातूनी अखबारनवीस प्लेटोनाव और उसकी व्यर्थ की दार्शनिक बहसें और मेरा नाम जिसमें भरकर मैं इस औरत को चकले से निकाल लाया। ऐसा लगता है कि जो कुछ हुआ है, वह वास्तविक जीवन की घटना नहीं है, बल्कि किसी उपन्यास की घटना है। आज की घटना के बाद कल मैं किस मुँह से इस औरत से आँखें मिलाऊँगा?'

उसका सिर जल रहा था और पलक और होंठ सूखकर चटक रहे थे। जल्दी-जल्दी वह सिगरेट पी रहा था और बार-बार दीवान से उठकर, मेज़पर से सुराही उठाकर उसी से मुँह लगाकर पानी ढकोस लेता था। किसी तरह बड़ी मुश्किल से आखिरकार उसने अपने विचार पिछली रात की घटनाओं से हटाये और उन विचारों

के हटते ही उसे गहरी नींद ने आ दबोचा। वह निर्विघ्न नींद में डूबकर ऐसा पड़ गया, मानो काली रूई में दब गया हो और ज़ोर-ज़ोर से खुर्राटे भरने लगा।

फिर जब उसकी आँख खुली तो तीसरे प्रहर के दो या तीन बजे थे। जग जाने के बाद भी काफ़ी देर तक उसके होश-हवास ठीक नहीं हुए। वह होंठ चाटता हुआ भारी आँखों से कमरे में चारों तरफ़ घूरता रहा। कल रात को जो कुछ भी हुआ था, उसके दिमाग़ से निकल चुका था। मगर फिर जब उसने लियूब्का को सामने पलँग पर, चुपचाप और स्थिर, सिर झुकाये, घुटनों पर हाथ रखे बैठे देखा तो वह घबराहट और परेशानी से भिनभिनाने और कराहने लगा। उसे फिर सारी बातें याद हो आईं और उसे इस बात का स्वयं अनुभव हुआ कि रात की मूर्खता सुबह होने पर कैसी भयकर दीखा करती है।

'जग गये मेरे प्यारे?' लियूब्का ने स्नेह से पूछा। वह उठी और दीवान के पास आकर लिखोनिन के पैरों के पास बैठ गई और एहतियात से कम्बल से ढके हुए उसके पैरों को थपथपाने लगी।

'मैं बहुत देर से जगी बैठी हूँ। तुम्हें जगाने की मेरी हिम्मत नहीं हुई; क्योंकि तुम गहरी नींद में सो रहे थे।'

यह कहकर वह उसकी तरफ़ झुकी और उसका गाल चूम लिया। लिखोनिन ने चेहरा रूखा कर लिया और धीरे से उसे अपने शरीर से अलग कर दिया।

'ठहरो, लियूबोच्का! ठहरो! इसकी ज़रूरत नहीं है! समझीं? इसकी बिल्कुल ज़रूरत नहीं है। जो कुछ कल हुआ, फिर कभी न होना चाहिए। जो हुआ सो हुआ, मगर अब आगे फिर कभी नहीं! समझीं? मेरी कमज़ोरी थी या यह भी कह सकते हैं कि मेरा कमीनापन था, जो मैंने ऐसा किया। मगर अब आगे फिर कभी ऐसा न होगा। मैं ईश्वर की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि मैं तुम्हें अपनी स्त्री बनाकर रखने के लिए नहीं लाया हूँ। मैं तुम्हें अपने मित्र, अपनी बहिन, अपने बन्धु की तरह देखना चाहता हूँ...ख़ैर, जो हुआ सो हुआ। धीरे-धीरे अब सब ठीक हो जायगा। मनुष्य की आत्मा का पतन नहीं होना चाहिए। अच्छा प्रिये, आओ ज़रा देर खिड़की के पास खड़ी होकर बाहर देखो, मैं अपने कपड़े ठीक कर लूँ।'

लियूब्का अपना होंठ थोड़ा-सा लटकाकर खिड़की पास गई और लिखोनिन की तरफ़ पीठ फेरकर खड़ी हो गई। उस बेचारी मुर्गी के बराबर बुद्धिवाली सीधी-सादी

किसान स्त्री को समझ में लिखोनिन की उसे मित्र, बन्धु या बहिन की तरह देखने की बात न आ सकी। उसे तो इस बात से ख़ुशी हुई थी कि एक विद्यार्थी ने जो पढ़ लिखकर डाक्टर, वकील या जज बन सकता था, किसी ऐरे-गैरे ने नहीं, अपना बनाकर रखने का निश्चय किया था।...मगर अब उसे ऐसा लगा कि लिखोनिन भी जो कुछ उससे चाहता था, लेकर दूसरे मर्दों की तरह अब उससे पीछा छुड़ाने की सोच रहा था। सभी मर्द एक-से होते हैं।

लिखोनिन जल्दी से उठा और दो-चार चुल्लू पानी अपने मुँह पर मारकर उसने एक पुराने अँगोछे से अपना मुँह सुखाया। फिर उसने खिड़कियों के पर्दे हटाकर दर्वाजे खोल दिये। सुनहरी धूप, नीला आकाश, शहर की चहल-पहल का शोर, नीबू और शाहबलूत के वृक्षों की घनी छाया, घोड़ों की व ट्रामों की घण्टियाँ और सड़क की गर्मी और गर्द सब एक साथ इस छोटी-सी छत के कमरे में घुस पड़ीं। लिखोनिन चलकर लियूब्का के पास गया और मित्र-भाव से उसका कन्धा थपथपाने लगा।

'मेरी प्यारी, कुछ परवाह न करो! जो हुआ सो हुआ, आगे के लिए सबक लो। तुमने अभी तक चाय भी नहीं पी है लियूबोच्का?'

'नहीं, मैं तुम्हारे उठने की बाट देख रही थी और चाय पीना भी चाहती तो माँगती मैं किससे, यह भी मुझे नहीं मालूम था। और एक बात और भी है। तुम यहाँ से अपने दोस्त के साथ चले जाने के बाद फिर लौटकर आये और कुछ देर तक दरवाज़े के पास खड़े रहे। मैंने तुम्हारी आहट सुनी थी। मगर तुमने सोने के लिए जाने से पहिले मुझसे आख़िरी सलाम भी नहीं किया। क्या यह अच्छी बात है?'

'गृहस्थी का पहिला झमेला,' लिखोनिन ने सोचा, मगर इससे उसके मन में कोई कुढ़न नहीं हुई।

हाथ-मुँह धोकर ताज़ा हो जाने से और सुनहरी धूप और नीले आकाश के संसर्ग से और अपने सामने भोली-भाली, आज्ञाकारी और प्रसन्नमुख लियूब्का को देखकर और यह सोचकर कि आख़िर मैं मर्द हूँ और वह औरत इसलिए जो कुछ हुआ है, उसकी ज़िम्मेदारी मुझपर ही है, उसको हिम्मत आई और उसने अपने आपको सँभाला। कमरे का द्वार खोलकर वह घर के अन्धकार में चिल्लाया :

'एलेक्जेन्ड्रा! एक सेमोवार चाय का! दो रोटियाँ, मक्खन, गोश्त और एक

बोतल शराब लाओ !' स्लीपरों की पटपट रास्ते के अन्धकार में से सुनाई दी और एक बूढ़ी आवाज़ उस छोर से भारी स्वर में बोली ;

'इतनी ज़ोर से क्यों चिल्लाते हो ? इतना क्यों चीख़ते हो ? हो, हो, हो ! घोड़े की तरह क्यों इतनी ज़ोर से हिनहिनाते हो ? तुम अब बालक नहीं हो, बड़े हो गये हो ! मगर फिर भी तुम आवारा बालकों की तरह मारे-मारे फिरा करते हो ! कहो क्या चाहिए ?'

कमरे में एक छोटी बूढ़ी औरत घुसी जिसके पलक लाल-लाल नन्हीं दराज़ों की तरह थे और चेहरा भोजपत्र की तरह जिसपर एक लम्बी और तेज़ नाक नीचे की तरफ़ चिपकी हुई थी जो उदास और मनहूस लगती थी। यही ऐलेक्जेन्ड्रा थी— विद्यार्थी-गृहों की पुरानी नौकरानी, सारे विद्यार्थियों की मित्र और उन्हें रुपया उधार देनेवाली, पैंसठ बरस की बूढ़ी खूसट, बड़ी बक्की और झक्की।

लिखोनिन ने फिर उससे चाय और दूसरा सामान लाने को कहा और उसके हाथ में एक रुपया पकड़ा दिया; मगर बूढ़ी वहाँ से न हिली। एक कोने में गड़कर वह खड़ी हो गई और अपना शरीर हिलाकर, खखारती और होंठ चबाती हुई वह लियूब्का की तरफ़ शत्रु भाव से घूरने लगी।

'क्यों ? क्या हुआ, एलेक्जेण्ड्रा ? पत्थर की तरह क्यों खड़ी हो ?' लिखोनिन ने हँसकर पूछा, क्या इनपर मुग्ध हो गई हो ? यह मेरी चचेरी बहिन हैं। इनका नाम लियूबोव...'वह क्षणभर सिटपिटाकर फिर जल्दी से बोला, इनका नाम लियूबोव वेसोलीब्ना है। मगर मैं इन्हें सिर्फ़ लियूबोच्का ही कहकर पुकारता हूँ। मैं इन्हें उस समय से जानता हूँ, जब यह इतनी बड़ी थीं,' उसने ज़मीन से एक चौथाई गज़ अपना हाथ ऊँचा उठाकर कहा, और मैं इनके कान खींचा करता था और इनके स्थान पर तमाचे लगाया करता था जहाँ से टाँगें निकलती हैं और मैं इनके लिए तितलियाँ और तरह-तरह के कीड़े पकड़ा करता था···मगर; खैर, तुम जाओ जल्दी यहाँ से, मुर्दा कहीं की, और चाय फौरन ले आओ ! देखो एक पाँव यहाँ रखो और एक उस छोर पर, दौड़ो।'

मगर बूढ़ी ठिठकती ही रही। जहाँ खड़ी थी वहीं पैर पटककर लियूब्का को ईर्ष्यापूर्वक कनखियों से देखती हुई, द्वार की तरफ़ मुड़ी और मुंह लटकाती हुई बड़बड़ाई :

'चचेरी बहिन है ! ऐसी चचेरी बहिनों को मैं खूब जानती हूँ ! ऐसी बहुत-सी चचेरी बहिनें सड़कों पर घूमती फिरती हैं ! वहाँ इन कुत्तों का उनसे जी नहीं भरता !'

'ओ खूसट ! ठीक तरह से बोल, गुर्रा मत !' लिखोनिन उस पर चिल्लाया, 'वरना मैं भी तुझे उस तेरे विद्यार्थी दोस्त की तरह गुसलखाने में चौबीस घण्टे के लिए अभी ताले में बन्द कर दूँगा !'

एलेक्जेन्ड्रा चली गई और बड़ी देर तक उसके स्लीपरों की पट-पट और अस्पष्ट बड़बड़ाहट रास्ते में से आती रही। वह अपने गम्भीर स्नेह में, विद्यार्थियों को जिनकी सेवा लगभग चालीस वर्ष से करती आई थी बहुत कुछ माफ़ कर देने के लिए तैयार रहती थी। नशेबाज़ी, ताशबाजी, झगड़े-बखेड़े, जोर-जोर से गाना, कर्जे इत्यादि वह उन्हें माफ़ कर सकती थी, मगर उसने स्वय विवाह नहीं किया था ; अस्तु एक चीज़ माफ कर देना उसके लिए असम्भव था अर्थात् व्यभिचार !

छब्बीसवाँ अध्याय

'यह सब बड़ा अच्छा...बड़ा सुन्दर लगता है,' लिखोनिन लँगड़ी मेज़ पर चाय की चीज़े यों ही इधर-उधर करता हुआ उत्साह से कह रहा था, 'बहुत दिनों से मुझे इस तरह बैठकर घर-गृहस्थी के वातावरण में चाय पीने का मौक़ा नहीं मिला है। आओ लियूब्का, बैठो इस दीवान पर मेरी प्यारी और घर-गृहस्थी का काम सँभालो। शायद सुबह को शराब पीना तुम पसन्द न करोगी·· मगर तुम्हारी इज़ाजत से मैं थोड़ी पिऊँगा ; क्योंकि सुबह थोड़ी-सी पी लेने से मेरी तबियत ठीक रहती है। मेरी चाय जरा तेज़ बनाना और उसमें थोटा नीबू का रस भी डाल देना। आह, किसी सुन्दरी के हाथों से बनी चाय से अधिक स्वादिष्ट चीज दुनिया में और क्या हो सकती है ?'

लियूब्का को उसकी बातें बकवास की तरह और कुछ अस्वाभाविक भी लगीं। शुरू में वह अविश्वास से झिझकती हुई मुसकराती रहीं, मगर फिर धीरे-धीरे वह पिघली और खुलकर हँसने लगी। फिर भी चाय वह ठीक तरह नहीं बना सकी। उसके गाँव में जहाँ की वह रहनेवाली थी, चाय अच्छे घरों में ही तोहफा की तरह इस्तेमाल होती थी और मेहमानों के लिए अथवा किसी बड़े त्यौहार पर ही तैयार की जाती थी। वहाँ चाय प्याली में डालकर पिलाने का काम घर के सबसे बड़े-बूढ़े को

सुपुर्द होता था। बाद में जब लियूब्का पहिले-पहल शहर में पहिले एक पुजारी और बाद में एक बीमा-कम्पनी के एजेन्ट के यहाँ काम करती थी—जिसने उसे पहिले-पहल वेश्यावृत्ति का मार्ग दिखाया था—तब उसकी मालकिन-पहिले तो पतली पीली-पीली घृणापूर्ण आँखोंवाली, पुजारी की पत्नी और बाद में बीमा एजेन्ट की मोटी, बूढ़ी, झुर्रीदार और प्रतिकारपूर्ण चेहरेवाली, मैली और ईर्ष्यापूर्ण, कंजूस स्त्री; उसको थोड़ी-सी बची खुची गुनगुनी चाय और जूठी की हुई शकर देती थी। अस्तु चाय बनाने की साधारण क्रिया उसके लिए ऐसी ही कठिन थी, जैसा कि बचपन में हम सबको दाहिना और बायाँ हाथ पहिचानना या रस्सी का एक छोटा-सा फ़न्दा बनाना कठिन होता है। लिखोनिन के चाय की चीज़ें उठा उठाकर इधर-उधर करने से वह और घबराकर अपने औसान खो बैठी।

'प्रिये, चाय बनाना भी एक बड़ा हुनर है। मास्को के लोग उसे खूब जानते हैं। पहिले तो वे एक खाली चाय के बर्तन को आग पर थोड़ा-सा गरम करके सुखाते हैं। फिर उसमें चाय डालकर उस पर वे खौलता हुआ पानी भर देते हैं। फिर वे उस पानी को फ़ौरन चाय में से निकालकर बाहर उडेल देते हैं, जिससे चाय साफ़ हो जाती है और उससे अच्छी खुशबू निकलने लगती है। वहाँवालों का कहना है कि चीन के लोग जाहिल होते हैं और चाय बड़ी गन्दी तरह पर बनाते हैं।* ख़ैर, पहिला चाय का पानी फेंक देने के बाद चाय के बर्तन में तिहाई हिस्से तक, फिर खौलता हुआ पानी भर दिया जाता है और बर्तन को एक तौलिया से ढककर तीन-चार मिनट तक रख दिया जाता है। उसके बाद बर्तन को मुँह तक फिर खौलते हुए पानी से भर-कर फिर थोड़ी देर कपड़े से ढककर रख दिया जाता है। इस प्रकार बड़ी जायकेदार चाय मास्को में तैयार की जाती है, मेरी प्यारी, जो बड़ी खुशबूदार, ताज़गी और ताकत देनेवाली होती है।'

लियूब्का का सादा, अच्छा देखनेवाली चेहरा, जिस पर कोयल के अण्डे की तरह दाग थे, लम्बा होकर कुछ पीला पड़ गया।

---

* यह बात बिल्कुल ग़लत है, क्योंकि चीनियों की भाँति सुन्दर चाय संसार में बहुत कम लोग बनाते हैं। परन्तु यह लखनऊ और दिल्लीवालों की-सी बहस है, क्योंकि रूसी भी चाय बनाने में बड़े होशियार होते हैं जिसमें वे चीनियों को अपने मुकाबले में हेय समझते हैं।

'अच्छा, ईश्वर के लिए, मुझसे ख़फा न होना...तुमको वसीलवसीलिश ही कहते हैं न ? अच्छा, मेरे प्यारे वसीलवसीलिश, देखो मुझसे नाराज़ मत हो जाना। मैं सच कहती हूँ, बहुत जल्द मैं चाय बनाना सीख लूँगी और तुम मुझसे हमेशा इतने अदब से 'आप' कहकर क्यों बोलते हो ? हम लोग अब तो एक दूसरे के लिए नये नहीं रहे हैं ?'

यह कहकर उसने लिखोनिन को स्नेहपूर्ण दृष्टि से देखा और सच तो यह है कि आज सुबह ही उसने अपनी टूटी-फूटी छोटी-सी ज़िन्दगी में पहिली बार एक आदमी को अपना शरीर खुशी से—रुपये के लालच से, मजबूर होकर अथवा नौकरी छूट जाने या बदनामी के डर से नहीं, दिया था, उसको उससे कोई ख़ास आनन्द तो नहीं मिला था ; मगर फिर भी अपनी खुशी से कृतज्ञता और रहम से वह एक आदमी के साथ हमबिस्तर हुई थी और उसका स्त्री-हृदय जो कभी नहीं मुर्झाता और सूर्यमुखी का फूल जिस तरह सूर्य का प्यासा रहता है, उस तरह सदा प्रेम का प्यासा रहता है, इस समय स्वच्छ और स्नेहार्द्र हो रहा था !

मगर लिखोनिन को इस स्त्री के सामने जिसको कल तक वह बिल्कुल नहीं जानता था और जो आज उसकी यकायक रखेली हो गई थी, दिल को चुभनेवाली एक शर्म-सी हो रही थी। 'गृहस्थी का आनन्द शुरू हो गया,' उसने मन ही मन सोचा। वह कुर्सी से उठकर खड़ा हो गया और लियूब्का के पास जाकर, उसको हाथ से पकड़कर अपनी तरफ़ खींचकर उसका सिर थपथपाने लगा।

'मेरी प्यारी, मेरी प्यारी बहिन,' उसने स्नेहपूर्वक झूठा भ्रातृ-भाव दिखाते हुए कहा, 'जो आज हुआ वह कभी न होना चाहिए। मैं मानता हूँ कि जो कुछ भी हुआ उसमें सारी ग़लती मेरी ही थी और इसलिए तुम चाहो तो मैं तुमसे घुटने टेककर माफ़ी माँगने को तैयार हूँ। एकाएक, मेरी इच्छा के विरुद्ध, स्वाभाविक तौर पर किसी तरह आप से आप बिना मेरी आशा के, ऐसा हो गया। समझीं ? मुझे ज़रा भी आशा न थी कि ऐसा हो जायेगा। मगर बात यह है कि बहुत दिनों से मैं किसी स्त्री के पास नहीं गया था। अतएव मेरे अन्दर एक घृणित, बेलगाम का पशु एकाएक जाग उठा...और हे ईश्वर... क्या सचमुच मेरा गुनाह उतना बड़ा है ? पवित्र कहलानेवाले मनुष्य, साधु, सन्यासी और यती भी मुझसे अधिक संयम नहीं कर सकते; क्योंकि वे भी अक्सर ऐसी कमज़ोरी का शिकार हो जाते हैं। मगर जो कुछ हुआ

सो हुआ...आगे के लिए जिसकी तुम चाहो, क़सम खाकर मैं कह सकता हूँ कि ऐसा फिर कभी न होगा...समझती हो ?'

लियूब्का उसके हाथों से अपना हाथ छुड़ा लेने के लिए हठ कर रही थी। उसके होठ कुछ कुछ लटक आये थे और उसके निचले पलक बार-बार फड़कते थे।

'हाँ...हाँ' उसने रहँकाकर कहा, जैसे कि नाराज़ हो जाने पर बच्चे रूठकर कहते हैं, 'हाँ, मैं देखती हूँ कि तुम मुझसे खुश नहीं हो। ऐसा है तो तुम मुझसे साफ़-साफ़ क्यों नहीं कह देते। मुझे वापस जाने के लिए गाड़ी का भाड़ा, थोड़े कुछ और दाम, जितने तुम चाहो, दे दो। रात भर का दाम तुम वहाँ दे ही आये हो। मुझे सिर्फ़ वहाँ वापिस पहुँचने तक का भाड़ा दे दो...'

लिखोनिन ने अपने सिर के बाल पकड़कर खींच लिये और कमरे में इधर-उधर दौड़ता हुआ चिल्लाया :

'अरे, मेरा मतलब यह नहीं था! मेरा मतलब यह हरगिज़ नहीं था! ज़रा मुझे समझने की कोशिश करो, लियूबा! आज सुबह से जो कुछ हुआ, उसको जारी रखना सूअरपन है, पशुता है, भले आदमियों के स्वाभिमान के विरुद्ध है! प्रेम! प्रेम दिमागों, विचारों, आत्मा, और रुझानों के सम्मिलन का नाम है, न कि सिर्फ़ दो शरीरों के सम्मिलन का। प्रेम एक बड़ी ज़बरदस्त शक्ति, एक महान भाव, संसार की तरह शक्तिशाली वस्तु है। बिस्तर में एक साथ लेट रहना ही प्रेम नहीं है। अभी तक हम दोनों के बीच में वैसा प्रेम पैदा नहीं हुआ है, लियूबोच्का। जब ऐसा प्रेम हम दोनों में हो जायगा, तब हम दोनों अधिक सुखी होंगे, परन्तु जब तक ऐसा प्रेम हम दोनों में एक दूसरे के लिए नहीं है, तब तक मैं तुम्हारे जीवन में एक सच्चा सखा ही हूँ और तब तक के लिए यही काफ़ी है...मैं अपनी कमजोरियों को भी अच्छी तरह जानता हूँ। मगर साथ ही मैं यह भी जानता हूँ कि मेरा दिल साफ़ है और मैं कमीना या बेईमान नहीं हूँ।'

लियूब्का उसकी बातें सुनकर मुर्झा सी गई। 'यह शायद समझता है कि मैं उससे विवाह करना चाहती हूँ। मगर मुझे तो उसकी फिक्र नहीं है।' उसने उदास मन से सोचा, 'यों भी तो रह सकते हैं। दूसरी बहुत-सी भी तो महज़ गुज़ारे पर रहती हैं और सुनते हैं कि वे उस हालत से अच्छी हैं जो उनका विवाह हो जाने पर होती है। इसमें बुरी ही क्या है ? शान्तिपूर्वक, घर-गृहस्थी का जीवन बिताऊँगी...

इसके लिए मोजे बुना करूँगी...घर झाड़ूँगी और धोऊँगी, खाना पकाऊँगी...जो कुछ थोड़ा-बहुत खाना मुझे पकाना आता है, वही पकाया करूँगी। इसके लिए किसी अच्छे घर की लड़की से एक दिन शादी कर लेना ही ठीक होगा। मगर यह मेरा ख्याल भी जरूर रखेगा ही और मुझे गली-कूचों की ख़ाक फिर न छानने देगा। है तो यह निरा भोला ही और बक-झक भी व्यर्थ ही बहुत करता है, मगर भला आदमी है। मेरा कोई-न-कोई इन्तज़ाम जरूर कर देगा और शायद यह मुझे ही पसन्द करने लगे। मैं ही शायद इसके मन चढ़ जाऊँ ? मैं सीधी-सादी छोकरी हूँ और कोई बड़ी इच्छाएँ भी मेरी नहीं हैं। मैं कभी इसे धोखा नहीं दूँगी। लोग कहते हैं कि कभी-कभी वैसा भी हो जाता है...मगर इसको उसकी खबर नहीं लगनी चाहिए। इसका तो मुझे पूरा विश्वास है कि इस वक्त यह चाहे जो कहे, रात को फिर यह मेरे साथ आकर जरूर लेटेगा।'

लिखोनिन भी उदास मुख से कुछ सोच रहा था। इसको जो भारी काम उसने अपने कन्धों पर उठा लिया था, उसका बोझ सँभालना अभी उसे कठिन दीखने लगा था। अतएव किसी के इस समय आकर द्वार खटखटाने पर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई और उसके 'आइए, अन्दर आइए' कहने पर दो विद्यार्थी अन्दर घुस आये। एक तो सोलोवीव था और दूसरा निजारजे जो रात को इसके यहाँ सोया था।

सोलोवीव लम्बा, चौड़ा और तगड़ा था। वह कुछ मोटा भी हो चला था उसका चेहरा चौड़ा और लाल लाल बात्गा नदी के किनारे रहनेवाल लोगों का-सा था जिस पर एक छोटी-सी तुक्कल दाढ़ी थी। वह उन मेहरबान, खुशमिजाज और सादे शख़्सों में से था जो हर यूनिवर्सिटी में काफ़ी तायदाद में मिला करते हैं। वह अपनी फुरसत का वक्त—और चौबीसों घंटे उसे फुरसत ही रहती थी—शराब की दूकानों व सड़कों पर घूमने, ताश व बिलियर्ड खेलने, थियेटर देखने, अखबार और उपन्यास पढ़ने, तथा सरकस और दंगल देखमे में बिताया करता था। इन कामों के बीच में जो थोड़ा-सा समय बचता था, उसे वह खाने, सोने अपनी आलमारी को डोरे, पट्टे, पिन और सिहाई से अपने हाथों मरम्मत करने में बिताता था और मित्रों को ज़रूरत पड़ने पर पासपोर्ट और रुपया भेजता था। उसके शरीर में बड़ी शक्ति और स्वभाव में काली मिट्टी की-सी नर्मी और हृदय में सादगी थी। प्रायः उसके पास घर से काफ़ी रुपया खर्च के लिए आता था; मगर वह उसको दो-चार दिन में ही अपने मित्रों पर

बिखेर डालता था और स्वयं जाड़े में भी अपना एक ही कोट और ख़ुद अपने हाथ से मरम्मत किया हुआ जूता पहिने फिरा करता था।

इन तमाम भोले-भाले, स्नेहमय, उपन्यास-योग्य, ऊँचे और बेकार गुणों के साथ ही जो पुराने ज़माने के रूसी विद्यार्थियों में हुआ करते और भले के लिए ही लुप्त होते जा रहे थे, उसमें ज़रूरत के वक्त कहीं न कहीं से रुपया ले आने और खाने की दूकानों में उधार का प्रबन्ध कर लेने का भी बड़ा भारी गुण था। तमाम बौहरों की दूकानों और पेढ़ियों के नौकर, छिपे और खुले सूदख़ोर, पुराने कपड़े बेचनेवाले उसके बड़े यार-दोस्त थे।

मगर उनसे भी काम न बनने पर सोलोवीव किसी दूकान या बाज़ार में मिल जानेवाली स्त्रियों से क्षणिक और सच्चा प्रेम करने में बिताया करता था। अपने दूसरे तमाम विद्यार्थी साथियों की तरह वह भी अपने आपको क्रान्तिकारी मानता था। मगर उसको आपस के राजनैतिक झगड़े-बखेड़े और दलबन्दी पसन्द नहीं थी। क्रान्तिकारी पर्चे और किताबें भी उससे बैठकर पढ़े नहीं जाते थे, जिससे वह क्रान्तिकारी कार्य में बिल्कुल अज्ञानी था। अतएव उसको दल में सम्मिलित करने की दीक्षा तक नहीं दी गई थी; गो कि कभी-कभी उसको ऐसे ख़तरनाक काम सौंपे जाते थे, जिनका मतलब उसको नहीं बताया जाता था और उस पर विश्वास व्यर्थ नहीं होता था; क्योंकि वह हर-एक ऐसे काम को बड़ी फुर्ती, सच्चाई और श्रद्धा से, खतरों की कोई चिन्ता न करते हुए, हँसते-हँसते कर डालता था। वह फरार बन्धुओं, जब्त किताबों और छापेखानों को छिपाकर बड़ी होशियारी से किसी तरह ज़रूरत पड़ने पर कहीं न कहीं से रुपया ले ही आता था। ज़रूरतमन्द ग़रीब दोस्तों की टुकड़ी का सरदार होकर, अपने काम की ज़िम्मेदारी को अच्छी तरह समझता हुआ, एकाएक उसके मन में एक विचार आता था और वह दूर से ही सड़क पर, अपनी पीठ पर गठरी लादे हुए जानेवाले तातार को एक रहस्यपूर्ण इशारा करता था और झपटकर उसके साथ पास के द्वार में घुस जाता था। शीघ्र ही फिर लौटने पर उसके शरीर पर उसका रोजाना का कोट नहीं होता था और वह सिर्फ अपना कुर्ता जिसकी कमर पर एक डोरी बँधी होती थी, पहिने होता था अथवा जाड़ों में अपना ओवरकोट उतारकर पतले कपड़ों में निकलता था; अथवा हाल ही में ख़रीदी हुई नई वर्दी की टोपी देकर सिर पर एक छोटी-सी घोड़े दौड़ानेवालों की-सी टोपी रखे, जो मुश्किल से उसके सिर के बीच के हिस्से को ढकती थी, निकलता था।

मित्र, नौकर, स्त्रियाँ और बच्चे सभी उसे प्यार करते थे। सभी से उसकी जान-पहचान थी। उसके दिली दोस्त तातार की उसपर ख़ास कृपादृष्टि रहती थी; गोकि वह उसको एक भोला आदमी समझते थे। वे कभी-कभी बोतलों में भरकर उसके लिए अपने देश से तेज़ शराब लाया करते थे और बैराम शहर में वे उसको दुम्बे का गोश्त अपने साथ खाने के लिए दावतें दिया करते थे। कितनी ही असम्भव बात क्यों न लगे मगर सोलोवीव ख़तरनाक मौकों पर उन्हें क्रान्तिकारी पर्चे और किताबें भी हिफ़ाज़त रखने के लिए दे देता था। मौकों पर वह अपने चेहरे को ख़ास तौर पर भोला और गम्भीर बनाकर उनसे कहता, देखो यह किताब जो मैं तुम्हे दे रहा हूँ, बड़ी पाक किताब है। इसमें अल्लाहो-अकबर और उसके नबी हज़रत मुहम्मद को माना गया है। यह किताब कहती है कि दुनिया में बुराई और ग़रीबी बहुत है और हर आदमी को एक दूसरे के साथ रहम और इन्साफ का बर्ताव करना चाहिए।

इस सबके अलावा उसमें दो गुण और थे। एक तो ज़ोर से वह पढ़ता बहुत अच्छी तरह था। दूसरे शतरंज खेलने में वह ऐसा माहिर था कि बड़े-बड़े उस्तादों को हँसी-हँसी में मात देता था। उसका हमला बहुत ज़ोर का और सख़्त होता था और बचाव बहुत समझ का और होशियारी का—खासकर तिरछी चाल का; अपने मोहरे वह दुश्मन से इस होशियारी से पिटवाता था कि उससे उस बेचारे पर एकाएक आफ़त का पहाड़ ही टूट पड़ता था। चालें चलने में वह कभी न तो दो-चार सेकण्ड से अधिक विचार ही करता था और न पुराने ढङ्ग और तरीक़ों के अनुसार चलने की फ़िक्र करता था। स्वभाव से ही वह शतरंज का एक सिद्धहस्त खिलाड़ी था।

लोग उसके साथ शतरंज खेलते डरते थे। वे उसके खेल के तरीक़ों को उजड्ड समझते थे। फिर भी उसके साथ खेलते थे और अकसर भारी-भारी दाँव लगाये जाते थे जो आम तौर पर सोलोवीव जीत लेता था और जीत का सारा माल वह फ़ौरन दोस्तों की ज़रूरतों पर ख़र्च कर डालता था। मगर वह शतरंज के टूर्नामेण्टों में भाग लेने से हमेशा अलग रहता था; गोकि उनमें वह भाग लेता तो शतरंज की दुनिया में उसका नाम हो सकता था। मगर उसका कहना था कि, 'इस शतरंज की बेवकूफ़ी को न तो मैं पसन्द ही करता हूँ और न इसके लिए दिल में कोई इज्ज़त ही है। मेरे दिमाग़ में कोई ऐसी बात है, कोई एक दोष या बीमारी-सी, जिससे मैं आसानी से

बाज़ी जीत लेता हूँ। अतएव मुझे न तो इस बात पर किसी किस्म का अभिमान ही होता है कि मैं शतरंज का एक अच्छा खिलाड़ी हूँ और न मुझे जीत की .खुशी या हार का रंज ही होता है।'

लम्बा-चौड़ा सोलोवीव नाम का विद्यार्थी ऐसा था। उसका सबसे बड़ा दोस्त निजारज़े था, परन्तु एक दूसरे के बड़े दोस्त होते हुए भी यह दोनों दिन-रात एक दूसरे को चिढ़ाते, गालियाँ देते और आपस में लड़ते-झगड़ते रहते थे। ईश्वर ही जाने जार्जियन शाहज़ादा निजारज़े किस तरह अपना ख़र्च चलाता था। उसका अपने बारे में कहना था कि वह ऊँट की तरह कई हफ़्तों के लिए एक बार में ही खा सकता था, जिससे फिर एक महीने तक खाने की उसे ज़रूरत नहीं रहती थी। उसके घर जार्जिया से उसके पास बहुत कम खर्च आया करता था—जो कुछ आता था, वह खाने-पीने का सामान होता था। बड़े दिन पर, ईस्टर में और अगस्त के महीने में उसके जन्म-दिवस पर, आम तौर पर उसके प्रान्त से आनेवाले परिचित लोगों के साथ, उसके लिए बहुत-सा गोश्त, अंगूर, सूखे बेर और छुहारे, रोग़नी मीठी रोटियाँ और घर की बनी तेज़ और .खुशबूदार शराब, जिसमें से थोड़ी भेंड़ की खाल की भी महक निकलती थी, आया करते थे। यह सामान आने पर शाहज़ादा, अपने किसी दोस्त के कमरे पर—क्योंकि वह कभी अपने लिए कोई कमरा नहीं रखता था—अपने तमाम दोस्तों और हमवतनों की दावत करता था। खाने-पीने के साथ-साथ जार्जियन नाच-गाना भी .खूब होता था जिसमें खाना खाने के छुरी काटें हिला-हिलाकर लोग .खूब नाचते थे और निजारज़े नये-नये गीत बना बनाकर गाता था और .खूब बकता था।

बकवाद में निजारज़े का मुक़ाबला करना किसी को भी मुश्किल था, क्योंकि जोश में भर जाने पर वह तीन सौ शब्द फ़ी मिनट बोलता था। उसका बोलने का तरीका शानदार, जोशीला और बड़ा रंगीन था। उसका जार्जिया प्रदेश का उच्चारण, जिसमें हलक़ का ज़्यादा इस्तेमाल होने से वह फ़ाख़्ता की हू-हू और गिद्ध की आवाज़ की तरह लगता था, उसकी बातचीत में कोई अड़चन नहीं डालता था ; बल्कि उसे और मज़ेदार बना देता था और चाहे वह किसी विषय पर भी बोलता, अन्त में वह सबसे सुन्दर, सबसे ज़रखेज़, सबसे आगे, सबसे वीर और सबसे दुःखी जार्जिया प्रदेश का ज़िक्र ज़रूर करता। वह जार्जिया प्रान्त के सबसे मशहूर कवि रूस्तावेली की एक कविता

पढ़ता और अपने सुननेवालों को विश्वास दिलाता कि वह शेक्सपीयर और होमर से हज़ार दर्जे अच्छी है।

वह तेज़ मिज़ाज का तो ज़रूर था, मगर दिल का बड़ा अच्छा था। वह स्त्रियों की तरह कोमल हृदय का, नम्र, अपनी बातचीत से सबको ख़ुश करनेवाला और अपना प्रादेशिक अभिमान कभी न छोड़नेवाला था। सिर्फ़ उसकी एक बात उसके मित्रों को नहीं पसन्द थी:—सिर्फ़ उसकी स्त्रियों के लिए उसका दिखावटी अति प्रेम और लिप्सा। उसे इस बात का अटल विश्वास था कि वह बहुत ख़ूबसूरत है; सारे आदमी उससे जलते और सारी स्त्रियाँ उस पर मरती है, और पतियों को उससे ईर्ष्या होती है। इस विश्वास के कारण वह स्त्रियों के पीछे लगा फिरता था—यहाँ तक कि सोते हुए भी उन्हीं का ख़्याल रखता था। सड़क पर लिखोनिन या सोलोवीव के साथ जाते हुए वह बार-बार किसी औरत के पास से निकलने पर अपने साथियों को कुहनियाँ मारकर कहता, 'सी···सी···देखो कैसी सुन्दर औरत जा रही है। कैसी नज़र उसने मुझ पर अभी डाली! मैं चाहूँ तो आसानी से वह मेरी हो सकती है!···'

उसकी इस हास्यास्पद कमजोरी को सभी जानते थे। मगर वे उसके इस दोष को हँसी उड़ाकर टाल देते थे; क्योंकि वह अपने मित्रों के प्रति बड़ा सच्छा और हमेशा अपने वायदों का—स्त्रियों के वायदों के अतिरिक्त—बड़ा पक्का था। मगर साथ ही यह भी जरूर सच है कि स्त्रियों में उससे बहुत सफलता मिली थी। सिलाई का काम करनेवाली स्त्रियाँ, गाने और नाचनेवाली छोकरियाँ, मिठाई की दूकानों पर सामान बेचनेवाली छोकरियाँ और टेलीफ़ोन कम्पनी में काम करनेवाली लड़कियाँ उसको भारी, कोमल, नशीली, नीली आँखों की एक गहरी दृष्टि पड़ते ही पिघल जाती थीं।

'इस घर को और इस घर में आराम से रहनेवाले पवित्र और बेगुनाह लोगों को,' सोलोवीव ने घुसते ही एक बड़े पादरी की तरह कहना शुरू किया और फिर एकाएक सिटपिटाकर बोला, 'पवित्र पादरियों और आश्चर्य से चकित होकर बड़बड़ाते हुए उसने अपना मज़ाक पूरा करने का प्रयत्न करते हुए कहा, 'मगर यार यह तो सोनया...नहीं, मेरी गलती हुई, नादया...नहीं, अन्ना के चकले की लियूब्का है...'

लियूब्का लज्जा से लाल हो गई, उसकी आँखों में आँसू आ गये और उसने दोनों हाथों से अपना मुँह ढाँक लिया। लिखोनिन ने यह देखा और फ़ौरन उसकी आत्मग्लानि और दुख को समझकर उसकी मदद में सोलोवीव को फटकारकर चुप करता हुआ बोला:

'ठीक है सोलोवीव। यह चकले में रहनेवाली लियूब्का है। पहले यह वेश्या थी—बल्कि कल रात तक भी यह वेश्या थी, मगर आज से यह मेरी दोस्त और मेरी बहिन है। अतएव जिसके दिल में मेरे लिए इज्ज़त है उसको इसकी मेरी बहिन की तरह इज्जत करनी चाहिए वरना...'

विशालकाय सोलोवीव ने झपटकर, सच्चे हृदय से लिखोनिन को पकड़कर ज़ोर से अपने सीने से चिपटा लिया।

'बस बस, मेरे प्यारे दोस्त काफी है। मुझसे बड़ी बेवकूफ़ी हुई। अब ऐसी बेवकूफ़ी फिर मुझसे न होगी। स्वागत है, प्यारी बहिन।' यह कहकर उसने अपना चौड़ा हाथ मेज़ के ऊपर से फैलाकर लियूब्का की छोटी-छोटी उङ्गलियाँ उसमें दबा लीं। 'आपका हमारे डेरे में आ जाना बड़ा अच्छा हुआ! आपके यहाँ आ जाने से हम लोगों में कुछ शान्ति और शिष्टता आ जायगी। ऐलेकजेन्ड्रा, शराब लाओ!' उसने ज़ोर से चिल्लाकर कहा हम लोग जङ्गली और भोंड़े बन गये हैं और गालियों, शराबख़ोरी, आलस और दूसरी बहुत सी बीमारियों का शिकार हो रहे हैं और यह सब इसलिए है कि हम लोग स्त्रियों के अच्छे, शान्तिपूर्ण प्रभाव से दूर रहते हैं। मैं आपका फिर एक बार यहाँ आने पर स्वागत करता हूँ। शराब लाओ!'

'लाती हूँ', ऐलेकजेंड्रा की नाराज़ आवाज़ रास्ते के उस छोर से आई, 'अभी लाती हूँ। चीखते क्यों हो? कितनी शराब चाहिए?'

सोलोवीव उसे बाहर समझाने चला गया। लिखोनिन उसकी पीठ की तरफ देखता हुआ कृतज्ञता से मुस्कराया और शाहज़ादे ने उसके साथ जाते हुए उसकी पीठ ठोंकी। दोनों की समझ में सोलोवीव का सिटपिटाना आ गया था।

'अच्छा, अब,' सोलोवीव ने कमरे में लौटकर एक पुरानी कुर्सी पर बैठते हुए कहा, 'अब मतलब की बातें होने दो। क्या मैं तुम्हारी किसी प्रकार सेवा कर सकता हूँ? आधे घण्टे का वक्त मुझे दो तो मैं अभी काफ़ी की दूकान में जाकर किसी न किसी से अभी बाज़ी जीतकर रुपया झटके लाता हूँ। गरज़ यह कि मैं हर तरह से तुम्हारी सेवा करने के लिए हाज़िर हूँ!'

'बड़े अजीब आदमी हो!' लियूब्का ने हँसते हुए सिटपिटाकर कहा। उसकी समझ में इस विद्यार्थी की बातें तो न आईं, मगर उसकी सादगी से उसकी तरफ़ उसका दिल खिंचा।

'ख़ैर उसकी कोई ज़रूरत नहीं है,' लिखोनिन बोला, 'इस वक्त तो मैं काफ़ी अमीर हो रहा हूँ। चलो, हम सब लोग किसी होटल में चलें। मुझे कई बातों में तुम्हारी सलाह भी लेनी है। आख़िर तुम्हीं लोग मेरे निकट हो और तुम ऐसे बेवकूफ या नातजुरबेकार नहीं हो, जैसे व्यवहार से दीखते हो। उसके बाद जाकर मुझे इनका प्रबन्ध करना है···इनका पासपोर्ट वापिस लेना है। तुम लोग मेरा इन्तजार करना। ज़्यादा देर नहीं लगेगी·· इस सारे झंझट को तुम अच्छी तरह समझते ही हो···मेरी अधिक मज़ाक उड़ामे की ज़रूरत नहीं है। मैं...' यह कहते हुए उसकी ज़बान स्नेह और दिखाव से काँपी,···'मैं चाहता हूँ कि मेरी इस बड़ी ज़िम्मेदारी में तुम भी मेरा कुछ हाथ बटाओ। क्यों, हो इसके लिए तैयार ?'

'क्यों नहीं ? ज़रूर !' शाहज़ादे ने लियूब्का की तरफ़ एक विचित्र दृष्टि से देखते हुए अपनी मूँछें मरोड़ते हुए कहा। लिखोनिन ने उसको कनखियों से देखा। मगर सोलोवीव ने सादे स्वभाव से कहा :

'यही तरीक़ा है। तुमने एक और बड़ा अच्छा काम शुरू किया है, लिखोनिन। रात को शाहज़ादे ने मुझे सब बताया। क्या हुआ ? जवानी इसी के लिए होती है—पवित्र मूर्खताए करने के लिए। मुझे दो बोतल, ऐलेक्जेन्ड्रा। मैं अपने आप बोतल खोल लूँगा—वरना इतना ज़ोर करने से तुम्हारी कोई रग ही न फट जाय। आपको अब नई ज़िन्दगी शुरू होती है, लियूबोच्का, अरे माफ़ कीजिए···लियूबोब···'

'निकोनीवना ! मगर आपको जैसा पसन्द हो कहो.. लियूबा ही कहो।'

'अच्छा, हाँ, लियूबा। शाहज़ादा अल्लाहवर्दी !'

'याक्शी—ओल' निज़ारज़े ने उत्तर दिया और अपना शराब का गिलास उसके शराब के गिलास से टकराकर बजाया।

'मुझे तुम पर भी, लिखोनिन, सचमुच अभिमान है' सोलोवीव ने अपना शराब का गिलास नीचे रखते हुए और अपनी मूछें चाटते हुए कहा, 'मैं तुम्हारे आगे सिर नवाता हूँ। तुम्हीं इस प्रकार की सच्ची वीरता चुपचाप, सादा ढंग पर, बिना कुछ शोरो-गुल और बकवाद के कर सकते थे।'

'छोड़ो इन बातों को...इसमें कौन-सी बड़ी वीरता मैंने की है ?' लिखोनिन ने रूखा चेहरा बनाकर कहा।

'यह भी ठीक ही है' निजारज़े ने उसका समर्थन किया। 'तुम मुझे सदा झिड़-

कते रहते हो कि मैं बड़ी बकवाद करता हूँ, मगर तुम ख़ुद कितनी व्यर्थ की बकवाद करते हो।'

'मैं बकवाद नहीं कर रहा हूँ!' सोलोवीव ने उत्तर में कहा, 'मुमकिन है मैं कुछ अतिशयोक्ति कर गया हूँ, मगर मैंने जो कुछ कहा है सच है। ख़ैर, अपनी इस पंचायत का सबसे बड़े सदस्य की हैसियत से, मैं लियूबा को अपनी पंचायत का पूरा सदस्य ऐलान करता हूँ।' यह कहकर वह ज़ोर से हाथ हिलाता हुआ उठा और जोश में भरकर बोला :

'आओ, आओ, आओ,
इस घर की रानी आओ,
निर्भय आओ, निशंक आओ,
इस घर को लो अपनाओ!'

लिखोनिन को याद आया कि आज ऊषाकाल में उसने भी वही कविता ऐक्टर की तरह दुहराई थी, जिससे उसकी आँखें शर्म से झुक गईं।

'चलो काफ़ी व्यर्थ की बातें हो चुकीं। उठो अब चलें। लियूबा, तुम भी अपने कपड़े पहिन लो।'

सत्ताईसवाँ अध्याय

स्पैरोज़ नाम का रेस्टोरां पास ही में दो सौ क़दम पर था। रास्ते में चलते हुए लियूबा ने आँख बचाकर लिखोनिन की बाँह पकड़कर उसको अपने पास घसीट लिया। इस प्रकार वह दोनों सोलोवीव और निजारज़े से, जो आगे चल रहे थे, कुछ पीछे पड़ गये।

'तो तुम सचमुच ही मुझे अपना रहे हो, मेरे प्यारे वसील-वसीलिश?' लियूबा ने अपनी स्नेहपूर्ण काली-काली आँखों से उसकी तरफ़ देखते हुए पूछा, 'तुम मुझसे मज़ाक नहीं कर रहे हो?'

'इसमें मज़ाक क्या हो सकता है, लियूबोच्का! ऐसा मज़ाक मैं करूँ तो मुझसे नीच दूसरा कौन हो सकता है। मैं तुमसे फिर कहता हूँ कि मैं तुम्हारे लिए एक मित्र, भाई और बन्धु से भी अधिक हूँ। अब इस बात का अधिक ज़िक्र करना भी

ठीक नहीं है और आज सुबह जो कुछ हुआ वह, तुम विश्वास रखो, फिर कभी न होगा। आज ही मैं तुम्हारे लिए एक दूसरा कमरा किराये पर ले लूँगा।'

लियूबा ने एक गहरी साँस ली। यह बात नहीं कि उसे लिखोनिन के पवित्र निश्चय से बुरा लगा हो, गोकि वह उसके इस निश्चय पर अधिक विश्वास नहीं करती थी, परन्तु उसकी समझ में यह बात आ रही थी कि एक आदमी का किसी स्त्री से सिवाय विषय-भोग के और नाता या सम्बन्ध ही क्या हो सकता है। इसके अलावा उसे पसन्द न की जानेवाली स्त्री के अनन्तकाल से चले आनेवाले असन्तोष का अनुभव भी हुआ जो कि अन्ना के यहाँ आपस की होड़ से ख़ूब बढ़ाया जाता था; मगर जो अब उसके मन में नहीं था। फिर भी उसका मन असन्तोष से कुढ़ा। न जाने क्यों उसे लिखोनिन की बातों पर पूरी तरह विश्वास नहीं हो रहा था और बिना किसी प्रयत्न के वह लिखोनिन की बातों में से बनावटी बातों को छाँट छाँटकर सोच रही थी। सोलोवीव इस समय वैसी ही बातें कर रहा था, जैसी कि अन्ना के यहाँ आनेवाले विद्यार्थी आम बैठक में सारी छोकरियों के साथ बैठकर, हँसी-मजाक करते हुए, किया करते थे, जो कि उसकी समझ में नहीं आया करती थीं यद्यपि अकेले कमरे में उसके साथ सभी आदमी एक-सी बातें किया करते थे। फिर भी लिखोनिन से कहीं अधिक लियूबा का मन सोलोवीव की बातों पर बिश्वास करने को हो रहा था; क्योंकि उसकी भूरी, चौड़ी और चमकती हुई आँखों से एक सादी सचाई टपकती थी।

स्पैरोज़ रेस्टोराँ में लिखोनिन अपनी गम्भीरता, कोमल स्वभाव और हिसाब-किताब में सफ़ाई के लिए मशहूर था। अस्तु वहाँ पहुँचते ही उसको बैठने के लिए एक अलग कमरा दे दिया गया जो कि किसी भी विद्यार्थी के लिए एक काफ़ी सम्मान की बात थी और ऐसा सम्मान बहुत थोड़े-से विद्यार्थियों को ही नसीब होता था। इस रेस्टोराँ में दिन भर गैस का लैम्प जलता रहता था; क्योंकि रोशनी अन्दर आने के लिए सिर्फ एक ही छोटी-सी खिड़की थी जिसमें से बाहर सड़क पर चलनेवालों के सिर्फ़ जूते, छाते और छड़ियाँ ही दिखाई देते थे।

दूसरे कमरे में सिनोवस्की नाम का एक और विद्यार्थी मिला जिसको भी इन लोगों ने अपने साथ ले लिया। 'इस तरह मेरी नुमाइश करने से इसका क्या मतलब है?' लियूबा ने सोचा, 'ऐसा लगता है कि वह अपना दिखावा करना चाहता है।' अतएव मौक़ा मिलते ही उसने लिखोनिन के कान में कहा:

'इतने आदमी यहाँ क्यों हैं, मेरे प्यारे? मुझे बड़ी शर्म लगती है। इतने आदमियों के सामने मुझे बातचीत करना भी कठिन होगा।'

'कुछ हर्ज नहीं है, कुछ हर्ज नहीं है, मेरी प्यारी लियूबोच्का', लिखोनिन ने द्वार के पास ठिठककर जल्दी-जल्दी उसके कान में कहा, 'कुछ हर्ज नहीं है, मेरी बहिन। यह सब लोग अच्छे लोग हैं—अपने बन्धु हैं। यह तुम्हारी, हम दोनों की मदद करेंगे। इन लोगों की हँसी-मज़ाक और कभी-कभी बेवकूफ़ी की बातों की परवाह न करो। इन लोगों के दिल सोने के हैं।'

'मगर मुझे बड़ा बुरा लगता है...बड़ी शर्म आती है। यह सब जानते हैं कि तुम मुझे कहाँ से लाये हो।'

'अच्छा तो, उससे क्या हुआ! जानने दो उन्हें!' लिखोनिन ने जोश में भरते हुए कहा, 'अपने बीते की इतनी शर्म क्यों करती हो...चुपचाप उसे भूल जाओ! साल-भर में तुम हर एक आदमी से आँखें ऊँची करके मिल सकोगी और कह सकोगी :

'गिरते हैं शहसवार ही मैदाने जंग में,
वह तिफ्ल क्या गिरेंगे जो घुटनों के बल चलें।'

समझीं, लिबोच्का, छोड़ो इस शर्म को!'

सब लोग मेज़ पर बैठ गये और खाने की तश्तरियाँ आने लगीं, मगर सिमानोवस्की को छोड़कर और सब कुछ परेशान-से लग रहे थे, और सिमानोवस्की ही कुछ हद तक उनकी परेशानी का कारण था। उसका मुँह मुड़ा हुआ सफ़ाचट, बाल बड़े-बड़े और आँखों पर चिपकानेवाला चश्मा था, जिसकी काली रेशमी डोरी उसकी गरदन में पड़ी थी। उसका सिर पीछे की तरफ़ अकड़ा हुआ और होंठ सख़्त और कोनों पर नीचे की तरफ़ मुड़े हुए थे, जिनसे दूसरों के प्रति घृणा टपकती थी। उसके साथियों में कोई उसका दिली दोस्त नहीं था, मगर उसकी रायों और फ़ैसलों को वे लोग काफ़ी इज्ज़त की नज़र से देखते थे। ऐसा क्यों था, यह कहना कठिन है। मुमकिन है, उसके आत्मविश्वास के दिखाने के कारण उसका ऐसा प्रभाव उन लोगों पर था अथवा दूसरों की अस्पष्ट इच्छाओं और विचारों को समझकर उनको व्यक्त करने की उसकी योग्यता अथवा अपनी राय उचित मौक़ों पर ही प्रकट करने के कारण ऐसा था। हर समाज में इस तरह के काफ़ी लोग होते हैं। कुछ तो अपनी बहस से अपने साथिय

को प्रभावित करते हैं, कुछ अपने दृढ़ और अटल विश्वासों से, कुछ अपने ज़ोर-ज़ोर से बोलने से, कुछ हर एक पर ठट्ठा लगा-लगाकर, कुछ चुप रहकर, जिससे दूसरे उन्हें गहरा और अक्लमन्द समझने लगते हैं, कुछ अपने बातूनी पांडित्य से और कुछ अपने विरोधी की हर बात के प्रति घृणा दिखाकर। बहुत-से भयङ्कर शब्द 'वाहियात' का काफी प्रयोग करके अपना काम पूरा करते हैं। किसी सीधे आदमी की सच्ची, स्नेहपूर्ण और ईमानदार बात को भी वह 'वाहियात' कहकर रद्द कर देते हैं और यदि वह उनसे पूछने की हिम्मत करता है कि जनाब इसको 'वाहियात' क्यों समझते हैं तो वे तुरन्त ही उसके सिर पर लट्ठ-सा जड़ देते हैं 'वाहियात है इसलिए।' ऐसे लोग दुनिया में हर जगह काफ़ी होते हैं जो कि नम्र, शर्मीले, योग्यता से सङ्कोची और प्रायः बड़े दिमागों के सिर पर भी घण्टी लटकाने का प्रयत्न करते हैं। इसी किस्म के आदमियों में से एक सिमानोवस्की भी था।

मगर आधा खाना खत्म होते-होते सब खुलकर बातें करने लगे, सिर्फ एक लियूबा केवल 'हाँ' या 'ना' में बोलती रही और उसने खाना भी कुछ नहीं खाया। लिखोनिन, सोलोवीव और निजरज़े सबसे अधिक बातें कर रहे थे। लिखोनिन दृढ़ता से सुप्रबन्धक की तरह बोलता हुआ अच्छे और स्नेह पूर्ण शब्दों के पीछे कोई भीतरी वास्तविकता, जो उसे अखरती और परेशान-सी कर रही थी, छिपाने का प्रयत्न कर रहा था। सोलोवीव बच्चों की तरह ख़ुशी से, ज़ोर-ज़ोर से हाथ चलाता हुआ मेज़ पर अपने हाथ पटक-पटककर बोल रहा था। निजारज़े चालाकी से, पूरे वाक्य खतम न करता हुआ, इस तरह बोल रहा था, मानो वह जानता तो था कि उसे क्या कहना चाहिए, मगर कह नहीं रहा था, परन्तु छोकरी के विचित्र भाग्य में तीनों के तीनों बड़ी दिलचस्पी ले रहे थे और अपनी-अपनी राय ज़ाहिर करते हुए वे, न जाने क्यों, फिर-फिरकर बार-बार सिमानोवस्की की तरफ़ देखते थे, मगर सिमानोवस्की ख़ामोश था। वह अपना सिर उठाकर चुपचाप अपने चश्मे में से सिर्फ़ उनके मुँह की तरफ़ देखता था।

'अच्छा, अच्छा, अच्छा,' आखिरकार उसने मेज़ को अपनी उँगलियों से बजाते हुए कहा, 'लिखोनिन ने बहुत अच्छा और बहादुरी का काम किया है। सोलोवीव और शाहज़ादा भी लिखोनिन की इस काम में मदद करने को तैयार हैं, यह भी बहुत अच्छा है। मैं भी, जो कुछ मेरी शक्ति में है, करने को तैयार हूँ; मगर क्या यही

बेहतर न होगा कि हम लोग अपनी इन मित्र को वह काम करने दें जो इन्हें स्वभाव से पसन्द हो ? कहो, मेरी प्यारी मित्र,' उसने लियूबा की तरफ़ मुड़कर पूछा, 'तुम क्या काम जानती हो ? क्या काम तुम कर सकती हो ? कोई भी काम जो तुम्हें पसन्द हो और जो तुम कर सकती हो, शुरू कर दो—सीने, बिनने, काढ़ने का या और कोई काम ।'

'मुझे कोई काम नहीं आता,' लियूबा ने आँखें नीची करके, शर्म से लाल होकर, मेज़ के नीचे अपने हाथ मलते हुए कहा, 'मेरी समझ में यह कुछ नहीं आता ।'

'हम लोगों ने बडी गडबड की है', लिखोनिन ने बीच में बोलते हुए कहा, 'इनके सामने ही सारी बातें करके हम लोगों ने इन्हें सिटपिटा दिया है । देखो न इनकी ज़बान भी नहीं खुल रही है । चलो लियूब्का घर चलें । मैं तुम्हें वहाँ पहुँचाकर यहाँ फिर फौरन लौट आऊँगा । तब हम लोग बैठकर आगे का इन्तजाम सोचेंगे—तुम्हारे सामने नहीं । ठीक है न ?

'नहीं, मेरी चिन्ता न करो', बहुत धीरे लियूबा ने कहा, 'जो तुम्हे पसन्द होगा, मैं करने को तैयार हूँ, वसीलवसीलिश; परन्तु मैं घर जाना नही चाहती ।'

'क्यों ?'

'मुझे वहाँ अकेले अच्छा नहीं लगता । मैं बाहर सड़क पर पड़ी हुई बेंच पर बैठकर तुम्हारा इन्तज़ार करूँगी ।'

'अच्छा, अच्छा' लिखोनिन को याद आई, 'ऐलेक्जेन्ड्रा से यह बहुत डरती है ।' मैं उस खूसट को ठीक कर दूँगा ! अच्छा, लियूबा बाहर चलो ।'

लियूबा ने हिचकते हुए सबसे हाथ मिलाया और लिखोनिन के साथ बाहर चली गई ।

कुछ मिनट के बाद लिखोनिन लौटकर आया और अपनी जगह पर बैठ गया । उसको लगा कि उसके बारे में वे लोग उसके पीछे कुछ कह रहे थे । अस्तु, उसने सिटपिटाते हुए अपने तमाम साथियों के चेहरों की तरफ़ देखा । फिर मेज़ पर अपने हाथ रखकर वह बोला :

'दोस्तो, मैं जानता हूँ कि आप सब लोग मेरे अच्छे गहरे दोस्त हैं,' यह कहकर उसने सिमानोवस्की की तरफ़ एक तिरछी नज़र डाली 'और आप सहायता करने में विश्वास रखते हैं । मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप इस काम में मेरी मदद कीजिए ।

यह काम मैंने जल्दी में कर डाला है—यह मैं ज़रूर मानूँगा, मगर जो कुछ भी मैंने किया है, अच्छे भावों और विचारों से ही प्रेरित होकर ईमानदारी से किया है।'

'और ईमानदारी ही मुख्य चीज़ है,' सोलोवीव ने कहा।

'मुझे इस बात की ज़रा भी चिन्ता नहीं है कि मेरे परिचित अथवा दूसरे लोग मेरे बारे में क्या कहेंगे। मैं इस छोकरी को बचाने—माफ़ कीजिए इस शब्द के लिए—बचाने नहीं मदद करने और ज़िन्दगी में आगे बढ़ाने के अपने इरादे से मुँह मोड़ने को हरगिज़ तैयार नहीं हूँ। मैं उसके लिए एक छोटा-सा सस्ता कमरा किराये पर ले सकता हूँ और शुरू में अपने पास से उसके खाने-पीने का प्रबन्ध भी कर सकता हूँ। मगर बाद में आगे चलकर क्या होगा? उसका ख़र्च चलाने की अधिक फ़िक्र मुझे नहीं है। उसका तो मैं किसी न किसी तरह प्रबन्ध कर ही लूँगा, मगर बेकार बैठे-बैठे खाने-पीने से वह आलसी, लापरवाह और निकम्मी हो जायगी और उसका जो नतीजा होगा, वह आप सब जानते ही हैं। अस्तु हमें उसके लिए कोई काम सोचना है। इसके लिए हम सबको अपना दिमाग़ लगाकर कोई रास्ता निकालना है। दोस्तो, सोचो और सोचकर कोई अच्छी सलाह इस मामले में मुझे दो।'

'हम लोगों को देखना यह है कि वह क्या काम कर सकती है' सिमानोवस्की ने कहा, 'क्योंकि चकले में जाने से पहिले वह कोई न कोई काम ज़रूर करती रही होगी।'

लिखोनिन ने तहाश होकर हाथ फ़ैलाते हुए कहा:

'वह कोई काम नहीं जानती। गाँव की छोकरियों की तरह थोड़ा-बहुत सी सकती है। मगर उससे कामा न चलेगा। वह मुश्किल से पन्द्रह वर्ष की थी, तभी किसी सरकारी नौकर ने उसे कुमार्ग पर रख दिया। अस्तु वह कमरा झाड़ने, बर्तन धोने और दाल-भात बनाने के अतिरिक्त कुछ नहीं जानती है।'

'यह मुश्किल की बात है,' सिमानोवस्की ने कहा।

'इसके सिवाय उसे पढ़ना-लिखना भी कुछ नहीं आता।'

'पढ़ना-लिखना ज़रूरी भी नहीं है!' सोलोवीव ने उत्साह से छोकरी का पक्ष लेते हुए कहा, 'पढ़ी-लिखी छोकरी होती और उससे भी ख़तरनाक कहीं अधपढ़ी छोकरी होती तो हमें उसका जो कुछ प्रबन्ध हम लोग सोच रहे हैं करना भी मुश्किल हो जाता। गनीमत है कि वह बेपढ़ी-लिखी भोली छोकरी है।'

'ही...हो...ही!' निजारज़े मज़ाक में हिनहिनाया। सोलोवीव मजाक के लिए

अब इस मामले में तैयार नहीं था। अस्तु वह क्रोध से लाल होकर निजारज़े पर टूटा, 'देखो, शाहज़ादे! पवित्र से पवित्र विचार और अच्छा से अच्छा काम इस तरह घृणित और गन्दा बनाया जा सकता है। यह कोई होशियारी या काबिलियत की बात नहीं हैं। अगर हम लोग जो कुछ करने जा रहे हैं, उसे तुम इतना निकम्मा काम समझते हो, तो वह है तुम्हारा रास्ता,' उसने द्वार की तरफ़ इशारा करते हुए कहा, 'और ईश्वर तुम्हारी मदद करे! यहाँ से तुम चले जाओ।'

'हाँ, मगर तुम ख़ुद भी तो अभी कमरे में···' शाहज़ादे ने सिटपिटाकर कहा।

'हाँ, मैंने भी,' सोलोवीव ने ठण्डा होते हुए कहा, 'बेवकूफ़ी की बात कही। मुझे उसका अफ़सोस है। मगर मैं अब मानता हूँ कि लिखोनिन बहुत अच्छा और भला आदमी है और मुझसे जो कुछ बन सकेगा, मैं उसके लिए करने को तैयार हूँ। मैं फिर कहता हूँ कि पढ़ना-लिखना कोई ज़रूरी चीज़ नहीं है, वह खेलते-खेलते सीखा जा सकता है। ऐसो छोकरी के लिए पढ़ना, लिखना, गिनना, और खासकर स्कूल के बाहर अपने आप सीखना इतना हो आसान है, जितना कि बादाम को काटकर दाँत से दो टुकड़े करना, और जहाँ तक कोई व्यवसाय करके अपनी गुज़र चलाने का प्रश्न है, सो ऐसे व्यवसाय भी सैकड़ों ही हैं, जिनको दो हफ़्तों में सीखा जा सकता है।'

'मसलन?' शाहज़ादे ने पूछा।

'मसलन...मसलन···मसलन नक़ली काग़ज़ या कपड़े के फूल बनाने का व्यवसाय, या उससे भी बेहतर किसी फूलों की दूकान पर नौकरी कर लेने का काम बड़ा सुन्दर, अच्छा और साफ़ काम है।'

'उसके लिए शौक़ की ज़रूरत है,' सिमानोवस्की ने लापरवाही से कहा।

'योग्यता की तरह शौक़ भी पैदायशी नहीं होते। वरना शौक़ सिर्फ़ बड़े घरानों में पैदा होनेवालों को ही होते और कलाकार कलाकारों के यहाँ और गवैये गवैयों के यहाँ ही जन्म लेते, मगर ऐसा होता नहीं है। ख़ैर, मैं इस मामले में बहस नहीं करना चाहता। फूलों की दूकान पर न सही, कहीं और नौकरी मिल सकती है। मैंने हाल ही में एक दूकान में खिड़की के पास एक लड़की को बैठे पाँव से एक मशीन चलाकर कोई काम करते देखा था।'

'वाह! फिर मशीन की बात की!' शाहज़ादे ने मुसकराकर लिखोनिन की तरफ़ देखते हुए कहा।

'चुप रहो निजारज़े !' लिखोनिन ने धीरे से, मगर सख़्ती से उससे कहा, 'तुम्हें इस तरह बात करते हुए शर्म भी नहीं आती !'

'खर दिमाग़ !' सोलोवीव ने उससे कहा और अपनी बात कहने लगा :

'वह मशीन आगे-पीछे चलती थी और उसके ऊपर एक चौखटे पर पतली किरमिच थी। मेरी समझ में नहीं आया कि वह मशीन कैसे चलाई जाती थी। मगर वह छोकरी बैठी-बैठी एक ख़ास चीज़ को उस परदे पर फिरा रही थी और उसपर तरह-तरह के रङ्ग-बिरंगे बेलबूटे और चित्र बनते जा रहे थे। झील और उसमें उगे हुए सफ़ेद फूलों और हरे पत्तों के कमल और तालाब में आमने-सामने तैरते हुए दो हंस और पीछे एक बाग़ का दृश्य ; यह सब एक सुन्दर सच्चे चित्र की तरह बनता जा रहा था। मुझे यह काम इतना अच्छा लगा कि मैंने जाकर उस मशीन की क़ीमत मालूम की जो मामूली सीने की मशीनों से कुछ ही अधिक थी। यह मशीन किश्तों पर बिकती है और जिसको थोड़ा-सा भी सिलाई का काम आता है, इस मशीन पर एक घण्टे में काम सीख सकता है। तरह-तरह के काम के नमूने भी मिलते हैं और ख़ास बात यह है कि इस मशीन पर तैयार होनेवाला माल बड़ी आसानी से बाज़ार में बिक जाता है और काम करनेवाले को अच्छा पैसा मिल जाता है।'

'हाँ, यह भी एक व्यवसाय हो सकता है,' लिखोनिन ने उससे सहमत होते हुए विचार-पूर्वक अपनी दाढ़ी खुजलाई, 'मगर मैं जो करने को सोच रहा था वह यह है। मैं सोचता था कि इस छोकरी से शुरू में एक ऐसा छोटा-सा होटल खुलवा दिया जाय, जहाँ खाना अच्छा, सस्ता और ज़ायकेदार मिले ; क्योंकि विद्यार्थियों को इस बात की चिन्ता नहीं होती कि वे कहाँ और क्या खाते हैं। तमाम विद्यार्थियों के होटल खचाखच भरे रहते हैं। अस्तु हम लोग शायद अपने तमाम मित्रों और साथियों को इस होटल में खींच ला सकते हैं।'

'यह ठीक है,' शाहज़ादे ने कहा, 'मगर यह काम चलेगा नहीं, क्योंकि उधार खिलाना होगा और यह तो तुम जानते ही हो कि हम लोग उधार का रुपया आसानी से देना नहीं जानते हैं। एक बड़ा तजरबेकार खुर्राट आदमी ऐसे काम के लिए चाहिए और स्त्री हो तो उसके भाले के-से दाँत होने चाहिए और फिर भी उसकी पीठ पर उसकी मदद के लिए हमेशा एक मर्द मौजूद रहना चाहिए। लिखोनिन तो यह कर नहीं सकता कि वहाँ खड़ा-खड़ा यह देखे कि कोई खा-पीकर बिना पैसा दिये चल नहीं देता।'

लिखोनिन ने उसकी तरफ़ घूमकर देखा, परन्तु दाँत पीसता हुआ चुप रह गया।

सिमानोवस्की ने अपनी तुली हुई और लाजवाब आवाज़ में अपने चश्मे के शीशे को छूते हुए कहा :

'आप लोगों के इरादे तो बेशक बहुत अच्छे हैं, मगर आपको इस मामले के एक पहलू पर और ग़ौर कर लेना चाहिए। होटल खोलने के लिए अथवा और कोई व्यापार शुरू करने के लिए रुपये की ज़रूरत होती है जो किसी को गाँठ से निकालना पड़ेगा। ख़ैर, जैसा लिखोनिन ने कहा, उसका इन्तज़ाम किया जा सकता है। मगर इस तरह सब चीज़ आराम से इकट्ठी हो जाने पर जो काम वह शुरू करेगी, उसमें कुछ दिन बाद उसके आरामतलब और लापरवाह हो जाने की सम्भावना है, जिससे वह व्यापार ही बाद में ठण्डा हो जा सकता है। बच्चे को भी चलना पचास बार गिरने के बाद ही आता है। अस्तु, तुम सचमुच इस छोकरी की मदद करना चाहते हो तो उसे मेहनत के रास्ते पर रक्खो, आरामतलबी के रास्ते पर नहीं। यह ज़रूर है कि वह मार्ग कठिन होगा—मेहनत करनी पड़ेगी और तंगी में रहना होगा, मगर उसको पार कर गई तो हमेशा के लिए वह सुधर भी जायगी।

'तो फिर आप क्या चाहते हैं—उससे बर्तन माजने-धोने का काम करवाया जाय?' सोलोवोव ने उत्तर दिया, बर्तन धोने, कपड़े धोने या खानेपकाने इत्यादि का कोई भी काम उसे दिया जा सकता है। किसी भी क़िस्म की मेहनत करने से आदमी की तरक्की ही होती है।'

लिखोनिन ने सिर हिलाया।

'बड़ी बुद्धिमानी की बातें करते हो सिमानोवस्की। बर्तन धोने, खाना पकाने और खिदमतगारी करने का काम पहिले तो मुझे शक है कि वह ठीक तरह से कर भी सकेगी या नहीं; दूसरे वह ख़िदमतगारी कुछ घरों में कर चुकी है और घर के मालिकों की नज़रों का शिकार बनकर मज़ा चख चुकी है। क्या तुम अभी तक यह नहीं जानते कि नब्बे फीसदी वेश्याएँ खिदमगारनियों में से ही बनती हैं? अस्तु खिदमतगारनी बनकर जैसे ही उसकी पहली बेइज्ज़ती हुई अथवा उसपर डाँट पड़ी, वैसे ही वह फ़ौरन कोई अधिक खराब काम न कर बैठी तो कम से कम जहाँ से मैं उसे ले आया हूँ, वहीं लौट जायगी; क्योंकि वहाँ की ज़िन्दगी उसकी देखी हुई और इतनी भयङ्कर उसे न लगेगी, बल्कि शायद मालिक द्वारा बेइज्ज़ती सहने से बेहतर

होगी और इन सबके अलावा क्या यह मेरे योग्य है—मेरा मतलब है कि हम सबके योग्य है—कि हम इतनी मेहनत करके एक प्राणी को एक नरक से निकालें और उसे दूसरे नरक में ढकेल दें ?'

'ठीक कहते हो,' सोलोवीव ने कहा।

'तो फिर जैसी तुम्हारी ख़ुशी' सिमानोवस्की ने हिक़ारत से कहा।

'मगर जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है,' शाहज़ादे ने कहा, 'मैं एक मित्र और जिज्ञासु की हैसियत से इस प्रयोग में तुम्हारे साथ रहने के लिए और तुम्हारी हर तरह से मदद करने के लिए तैयार हूँ। मगर मैंने आज सुबह ही तुम्हें चेतावनी दे दी थी कि इस प्रकार के आज तक हमारी जानकारी में जितने प्रयोग किये गये, वह सब असफल हुए हैं और जो हमारी जानकारी में नहीं हुए और जिनके बारे में हम सुना ही सुना करते हैं, उनका विश्वास करना ठीक नहीं है। मगर तुमने यह काम उठा लिया है तो इसे पूरा करो, हम तुम्हारो मदद के लिए तैयार हैं।'

लिखोनिन ने हाथ पटककर ज़ोर से कहा :—

'नहीं ! सिमानोवस्की का कहना भी एक हद तक ठीक है। किसी शख़्श को लकड़ी का सहारा दे-देकर चलना भी खतरनाक ही होता है। मगर मुझे और कोई रास्ता नज़र नहीं आता। शुरू में मैं उसके लिए एक कमरे और खाने-पीने का प्रबन्ध कर दूँगा और ज़रूरत की चीज़ें ले दूँगा। फिर जो होगा सो देखा जायगा ! हम लोगों को उसका दिमाग़ थोड़ा शिक्षित बनाने का प्रयत्न करना चाहिए—उसका हृदय और आत्मा सुन्दर है, इसका मुझे पूरा विश्वास है। मेरे पास इसका कोई सबूत नहीं है। फिर भी मुझे लगता है कि मैं ठीक हूँ और मेरा विश्वास सच्चा है। निजारज़े ! मज़ाक बन्द करो !' उसने एकाएक ज़ोर से चिल्लाकर कहा और उसका चेहरा पीला पड़ गया, 'मैंने कई बार तुम्हारी बेवकूफ़ी के मज़ाक सुन-सुनकर दर गुज़र कर दिये हैं। मैं अभी तक तुम्हें दिल का अच्छा और शरीफ़ समझता रहा हूँ, मगर अब तुमने फिर कोई बेहूदा मज़ाक इस सम्बन्ध में किया तो मैं हमेशा के लिए अपनी राय तुम्हारे बारे में बदल दूँगा—समझे...हमेशा के लिए।'

'नहीं जी। मेरा कोई मतलब नहीं था। सच ! ऐसी बातें क्यों करते हो ? तुम्हें मेरी हँसी-मज़ाक पसन्द नहीं है, मैं चुप रहूँगा। लाओ अपना हाथ मुझे दो लिखोनिन !'

'ख़ैर, ठीक है, मुझसे चिपटो मत! बालकों की तरह व्यवहार मत करो! बिल्कुल टेढ़ा मत बन जाओ! हाँ, तो दोस्तो, मैं कहना चाहता था कि अगर हम लोगों को कोई ऐसा काम मिल जाय जो सिमानोवस्की की अक्लमन्द राय के अनुसार हो तो मैं अपना तरीका उसे शिक्षित करने का जारी रखूँगा, मैं उसे कुछ लिखा-पढ़ा सकूँगा—उसे अच्छे थियेटर दिखाने, आम व्याख्यान सुनने, अजायबघर दिखाने ले जाऊँगा; फिर उसको किताबें पढ़कर सुनाऊँगा और उसको अच्छा-अच्छा संगीत भी जो उसकी समझ में आ सके, सुनवाऊँगा। हाँ, यह ज़रूर है कि यह सब मैं अकेला ही न कर सकूँगा। मैं उम्मीद करता हूँ कि इन सबमें तुम लोग मेरी मदद करोगे और आगे ईश्वर मालिक है!'

'हाँ, खैर,' सिमानोवस्की ने कहा, 'यह काम हमारे लिए नया होगा। न मालूम हम उसमें कैसे साबित होंगे। तुम लिखोनिन, शायद एक अच्छी आत्मा के गुरु हो जाओ। मुझसे जो कुछ हो सकेगा, मैं करने को तैयार हूँ।'

'और मैं भी तैयार हूँ!' 'और मैं भी तैयार हूँ!' दूसरे दोनों ने भी उसका समर्थन किया और फ़ौरन वहीं पर चारों विद्यार्थियोंने ल्यूबा को शिक्षित करने का एक बड़ा लम्बा-चौड़ा प्रोग्राम बना लिया।

सोलोवीव ने उसे व्याकरण और लिखना सिखाने का ज़िम्मा अपने ऊपर लिया और यह तय किया कि वह थके और ऊबे नहीं; इसलिए उसे अच्छे-अच्छे ऐसे रूसी और विदेशी उपन्यास और क़िस्से-कहानियाँ पढ़कर सुनाये जायँ जो वह आसानी से समझ सके। लिखोनिन ने उसे हिसाब, इतिहास और भूगोल पढ़ाने का ज़िम्मा लिया।

मगर शाहज़ादे ने सीधे स्वभाव से और अबकी बार बिल्कुल मज़ाक न करते हुए कहा:

'मुझे तो दोस्तो, कुछ ऐसा आता-जाता नहीं जो मैं उसे सिखा सकूँ और जो आता भी है, वह भी बहुत कम और बुरा आता है। अस्तु, मैं अपने प्रान्त के महाकवि रूस्तेवली की कविताएँ उसे पढ़कर सुनाया करूँगा और हरएक लाइन का मतलब उसे समझाऊँगा। मुझे पढ़ाना-लिखाना किसी को आता नहीं है। एक बार मैंने शिक्षक का काम करने की कोशिश की थी। मगर मेरे दो सबक देखकर ही मुझे वहाँ से धता बता दी गई। मगर गितार, मैन्डोलीन और बैगपाइप बाजे बजाना मुझसे अच्छा कोई नहीं सिखा सकता!'

निजारज़े बिल्कुल गम्भीरता से कह रहा था, जिससे लिखोनिन और सोलोवीव उसपर हँसने लगे। मगर सबको यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि सिमानोवस्की ने उसका समर्थन किया। वह एकाएक बोला :

शाहज़ादा बड़ी अक्लमन्दी की बात कह रहा है। कोई भी बाजा बजाने की शिक्षा प्राप्त करने से आत्मा और बुद्धि शिक्षित होती हैं और ज़िन्दगी में बड़ी मदद मिलती है। खैर, मैं उसे मार्क्स का ग्रन्थ कैपीटल और मनुष्य-समाज की उन्नति का इतिहास पढ़कर सुनाऊँगा और इसके अलावा भौतिक शास्त्र, रसायन, सृष्टि-विज्ञान और सम्पति-शा॰त्र सिखाऊँगा।

सिमानोवस्की हमेशा की तरह गम्भीरता और दृढ़ता से न बोलता होता तो शेष तीनों विद्यार्थी उसपर खिलखिलाकर हँस पड़े होते, परन्तु चूँकि वह बड़ी गम्भीरता से बोल रहा था, वे केवल आँखें निकालकर उसकी तरफ घूरने लगे।

'हाँ, हाँ,' सिमानोवस्की बोला, मैं उसके सामने बहुत से ऐसे विज्ञान के प्रयोग करके दिखाऊँगा, जो आसानी से घर पर किये जा सकते हैं और जिन्हें देखकर बड़ी तबियत ख़ुश होती है और बहुत-सी ग़लतफहमियाँ दूर हो जाती हैं। साथ-साथ में उसे दुनिया कैसे बनी है और तत्त्व क्या चीज़ है, यह भी समझा दूँगा। जहाँ तक मार्क्स का सम्बन्ध है, याद रखिए, बड़े-बड़े ग्रन्थ साधारण आदमियों की समझ में आसानी से आ सकते हैं बशर्ते कि वे ठीक तरह पर समझाये जायँ। सारे महान् विचार सादा होते हैं।'

लिखोनिन ने बाहर निकलकर लियूबा को निश्चित स्थान पर—सड़क के किनारे एक बेंच पर बैठा पाया। वह उसके साथ घर को बड़ी अनिच्छापूर्वक गई। जैसा लिखोनिन ने सोचा था, बड़बड़ानेवाली ऐलेकजेन्ड्रा से मिलना उसे असह्य था; क्योंकि वह बहुत दिनों से रोज़मर्रा के जीवन की आदी नहीं रही थी जिसमें कठोरता और तरह-तरह की बदमजगियों का हर रोज़ सामना करना होता है, दूसरे इससे भी वह बड़ी परेशान थी कि लिखोनिन किसी से उसका पूरा भूत जीवन छिपाना नहीं चाहता था। मगर चूँकि अन्ना के घर में उसे अपना व्यक्तित्व खोकर, जो भी उसे ले जाय, उसी के साथ जाने की आदत पड़ चुकी थी, उसने लिखोनिन से कुछ न कहा और चुपचाप उसके साथ चली गई।

चालाक ऐलेक्जेन्ड्रा इस बीच में दौड़कर मकानों के सुपरिन्टेन्डेन्ट को ख़बर कर

'मेरे प्यारे, मेरे प्यारे,' लियूबा ने हँसी और रहम में प्रार्थना करते हुए कहा, 'तुम मुझे हमेशा इतना झिड़कते क्यों हो?' और यह कहकर उसने मोमबत्ती फूँक-कर बुझा दी और अँधेरे में उससे चिपटकर हँसने और रोने लगी।

'नहीं लियूबा, यह नहीं होगा। इस तरह नहीं चल सकता।' लिखोनिन दस मिनट बाद द्वार पर कम्बल लपेटे खड़ा कह रहा था, कल ही तुम्हारे लिए मैं किसी दूसरे घर में कमरा लूँगा। देखो, यह रोज़ नहीं होना चाहिए। ख़ुदा हाफिज अब जाओ। मगर मुझसे वायदा करती जाओ कि हम दोनों का सम्बन्ध केवल दोस्ती का रहेगा।'

'अच्छा प्यारे, मैं वायदा करती हूँ, मैं वायदा करती हूँ, मैं वायदा करती हूँ।' उसने मुस्कराते हुए कहा और पहिले उसके होठों को और फिर हाथ को स्नेह से चूम लिया।

आख़िर में लियूबा ने जो किया, वह बिल्कुल स्वाभाविक था। आज तक उसने कभी किसी मर्द का गिरजे के पादरी को छोड़कर हाथ नहीं चूमा था। शायद वह इस तरह लिखोनिन के प्रति, अपनी कृतज्ञता दिखाना चाहती थी अथवा उसके सामने उसी तरह झुकना चाहती थी, जैसे किसी बड़े व्यक्ति के आगे।

अट्ठाईसवाँ अध्याय

रूस के पढ़े-लिखे लोगों में से—बहुत से लोगों का कहना है—काफ़ी संख्या पुरानी रूसी सभ्यता के ऐसे सच्चे उपासकों की होती है—जो बहादुरी से, माथे पर एक शिकन तक न लाकर मौत का सामना कर लेते हैं, जो अपने विचारों के लिए कठिन से कठिन यातनाएँ सह लेते हैं, मगर जो एक दर्बान या धोबिन की डाँट सुनकर घबरा जाते हैं और पुलीसवालों के पास या थाने में जाते काँपने लगते हैं। बिल्कुल इसी तरह का आदमी लिखोनिन भी था। दूसरे दिन—पिछले दिन छुट्टी होने और देर हो जाने के कारण वह लियूबा का पासपोर्ट न ला सका था—वह बहुत सबेरे उठा और ख़्याल आते ही कि आज उसे लियूबा का पासपोर्ट लाना है, उसके मन की वही दशा होने लगी जो कि जब वह स्कूल में पढ़ता था, तब उसकी यह जानकर कि वह फेल अवश्य हो जायगा, इम्तहान में जाते हुए हुई थी। उसका सिर दुख रहा था

और हाथ-पाँव काम नहीं देते थे। सबेरे से ही धीरे-धीरे मेंह भी बरस रहा था, जिससे सड़क पर गन्दगी हो रही थी। 'जब कोई बुरी बात होने को होती है, तब हमेशा यह मनहूस मेंह भी बरस उठता है', लिखोनिन ने धीरे-धीरे कपड़े पहिनते हुए सोचा।*

कटरा लिखोनिन के रहने की जगह से बहुत दूर नहीं था। मुश्किल से दो तिहाई मील होगा। आम तौर पर वह वहाँ अक्सर जाया करता था। मगर दिन में वहाँ जाने का मौक़ा उसको आज तक कभी नहीं हुआ था। रास्ते में जाते हुए उसे ऐसा लगा कि हर एक आदमी जो उसे रास्ते में मिला, हर एक गाड़ीवाला और पुलिसवाला, उसकी तरफ़ आश्चर्य और घृणा से, उसके वहाँ जाने का आशय समझकर देख रहा था। जैसा कि हमेशा जिस दिन सबेरे ही से बादल घिर आते थे और मेंह बरसता था—लगता था, आज भी उसे रास्ते में मिला, उसका चेहरा उसे पीला, कुरूप और भोंड़ा लगा। बार-बार वह सोचता कि अन्ना के यहाँ और थाने में पहुँचकर वह क्या कहेगा और हर बार वह कोई न कोई नई बात मन में दोहराता। फिर अपने ऊपर क्रोध करता हुआ वह मन ही मन कहता :

'आह, पहिले से सोचने की क्या ज़रूरत है? मौके पर जो ठीक लगेगा, कहूँगा...'

मगर फिर उसके दिमाग़ में कल्पित बात-चीत शुरू हो जाती।

'तुम्हें उस छोकरी को उसकी इच्छा के विरुद्ध रोक रखने का क्या अधिकार है?'

'अच्छा, तो उसको यहाँ से जाने का अपने आप नोटिस देने दो। तुम बीच में क्यों पड़ते हो?'

'मैं उसके कहने पर ही उसकी तरफ़ से कहने आया हूँ।'

'इसका तुम्हारे पास क्या सबूत है?'. और फिर वह इस प्रकार के विचार अपने मन में आने से रोक देता।

चलते-चलते शहर का मैदान आ गया, जिसमें गायें चरती हुई फिर रही थीं। इस मैदान के किनारे-किनारे तार के साथ-साथ चलने के लिए एक चौड़ी पगडण्डी थी और जगह-जगह पर नालियों और छोटे-छोटे चश्मों के ऊपर हिलती हुई पुलियाएँ बनी थीं। मैदान पार करके वह कटरे में घुसा। अन्ना के घर की सारी खिड़कियों के

* भारतीयों से कैसी समता है।

द्वार बन्द थे। द्वार के बीच में दिल की शक्ल का एक-एक झरोखा बना था। कटरे के दूसरे तमाम मकान भी बन्द और चुप थे—जैसे कि महामारी के बाद किसी जगह शान्ति छा जाती है। धड़कते हुए दिल से लिखोनिन ने अन्ना के द्वार की घण्टी बजाई।

एक नौकरानी, नंगे पाँवों, लहँगे की लाँग लगाये हुए हाथ में एक भींगा चीथड़ा पकड़े और मुँह पर पोते, घण्टी के उत्तर में निकली। वह मकान के फ़र्श धो रही थी।

'मैं जेनेका से मिलना चाहता हूँ', लिखोनिन ने झिझकते हुए उससे कहा।

'श्रीमती जेनी एक मेहमान के साथ हैं। वे अभी तक सोकर नहीं उठे हैं।'

'अच्छा, तो टमारा को बुला दो।'

नौकरानी ने उसकी तरफ़ अविश्वास से देखा।

'श्रीमती टमारा...मैं कह नहीं सकती...शायद वह भी किसी मेहमान के साथ हैं। मगर आप चाहते हैं—मेहमान की तरह उनसे मिलना चाहते हैं या क्या?'

'हाँ ऐसा ही कुछ काम है?'

'मैं कह नहीं सकती कि वह खाली हैं या नहीं। अभी देखकर आती हूँ। ज़रा देर ठहरो।'

वह लिखोनिन को आधी-अँधेरी बैठक में छोड़कर चली गई। द्वारों के बीच के झरोखों में से अन्दर आनेवाले धूल के नीले स्तम्भ चारों तरफ़ की अँधियारी को चीर रहे थे। धुँधली रोशनी में कमरे का रङ्गीन फर्नीचर और दीवार पर लगी हुई तस्वीरें भयंकर लग रही थीं। कल की तम्बाकू, नमी और खटास की और उस प्रकार की बू कमरों से आ रही थी, जैसी कि आम तौर पर खाली पड़े रहनेवाले स्थानों, थियेटरों और हालों इत्यादि से निकला करती है। दूर से खटर-खटर शहरों में चलनेवाली छकड़ा गाड़ी की कहीं से आवाज़ आ रही थी। दीवार के पीछे से टँगी हुई घड़ी की सुस्त टिकटिक-टिकटिक की आवाज़ सुनाई दे रही थी। लिखोनिन एक विचित्र आवेश से बैठक में इधर से उधर और उधर से इधर टहलता हुआ अपने काँपते हुए हाथों को बराबर मल रहा था और न जाने क्यों इस प्रकार झुक रहा था, मानों उसे ठण्ड लग रही हो।

'यह नाटक मैंने शुरू न किया होता तो अच्छा होता,' उसने मन ही मन चिढ़कर सोचा, 'इसका यों ज़िक्र ही अब फ़िज़ूल है कि यूनिवर्सिटी भर में इस समय मेरी चर्चा

हो रही है। मुझे शैतान ने उकसा दिया ! कल तक भी, जब वह लौट जाने को तैयार थी, मेरे लिए आसानी थी। मैंने उसको वापिस जाने के लिए गाड़ी का भाड़ा दे दिया होता तो अभी तक सब ठीक हो गया होता। यह मुसीबत और परेशानी मुझे न देखनी होती। अब इस आफ़त से छुटकारा पाना मुश्किल है और कल और भी मुश्किल होगा और परसों उससे भी अधिक मुश्किल हो जायगा। किसी से एक बेवकूफी हो तो उसे फ़ौरन ही ठीक कर लेना चाहिए, वरना एक बेवकूफ़ी के लिए फिर दो बेवकूफियाँ करनी पड़ती हैं और दो के बाद फिर बीस। अभी भी शायद बहुत देर नहीं हुई है। शायद वह भी दूसरी वेश्याओं की तरह ही मूर्खा, अज्ञानी और पगली है। वह पशुओं की तरह भूसा खिलाकर रखने लायक़ और पलंग पर सोने लायक़ ही लगती है। हे भगवान !' लिखोनिन ने अपना सिर दोनों हाथों में दबाकर आँखें मूँद लीं। 'मैंने क्यों अपने आपको वैसा करने से नहीं रोका ?' वह मन ही मन बोला, 'दो बार से वैसा कर चुका हूँ और आगे भी शायद यह ऐसा ही चलता रहे...'

मगर इन विचारों के साथ-साथ दूसरे विचार भी, जो कि इन विचारों के बिल्कुल विरुद्ध थे, उसके मन में आ रहे थे :

'मगर मैं मर्द हूँ। अपनी बात का पक्का हूँ। मैंने जो कुछ भी किया है ऊँचे विचार, महान उद्देश्य और अच्छे इरादे से किया है। जब मैंने इस काम में पहला क़दम उठाया था, तो मेरा मन कैसा प्रसन्न हुआ था ! कैसा पवित्र और स्वर्गीय सुख मुझे मिला था ! अथवा वह सब मेरी निरी कल्पना ही थी जो कि दिमाग़ पर शराब के नशे का असर था, अथवा रात भर न सोने, सिगरेट पीने और बकवास करने का परिणाम था ?'

और फिर लियूबा उसके सामने आ जाती ; उसका भोला, शर्मीला. परेशान और प्यारा चेहरा उसकी आँखों के आगे नाच उठता ? वह उसको अपने बहुत दिनों की परिचित लगती और फिर उसको अपनी उससे यह जान-पहिचान व्यर्थ में अखरने लगती।

'क्या मैं कायर और निकम्मा हूँ ?' लिखोनिन हाथ मलता हुआ अपने मन में चिल्लाया, 'मुझे किस बात का डर है ? किसकी मुझे शर्म आती है ? क्या मैं सदा अपनी ज़िन्दगी का पूरा मालिक होने पर घमण्ड नहीं करता हूँ ? यह भी मान लिया

जाय कि किसी मनुष्य की आत्मा पर प्रयोग करने का फ़ितूर जो निन्यानबे फ़ी सदी असफल होता है, मेरे दिमाग़ में भर गया है, तो क्या मुझे इसके लिए किसी को जवाब देना अथवा किसी की राय से डरना है ? लिखोनिन ! दूसरे आम मनुष्यों की चिन्ता न करो ! तुम आदर्शवादी हो, वे आदर्शवादी नहीं हैं !'

जेनी बाल बिखेरे हुए ऊँघती हुई, लहँगा और एक कुर्ती ही पहिने हुए कमरे में घुसी।

'आ···आ !' उसने जमुहाई लेते हुए लिखोनिन की तरफ़ अपना हाथ मिलाने को बढ़ाया, 'कहो मेरे प्यारे विद्यार्थी, अच्छे तो हो ? तुम्हारी लियूबोच्का तो अपनी जगह––नई जगह––पर खुश है ? कभी मुझे भी दावत देना या तुम अपनी सुहाग-रात गुपचुप ही मना लोगे ? किसी बाहरवाले को न्योता न दोगे ?'

'छोड़ो यह बेवक़ूफ़ी की बातें, जेनेच्का। मैं उसका पासपोर्ट लेने आया हूँ !'

'अच्छा, पासपोर्ट चाहते हो !' जेनेच्का विचार में पड़ गई, 'यहाँ पासपोर्ट तो नहीं है, मगर उसका पीला टिकट घर की मालकिन से तुम ले लो और उसे ले जाकर थाने में देना। वहाँ से उसकी एवज़ में तुम्हें उसका पासपोर्ट मिलेगा। मगर इस मामले में, मेरे प्यारे, मैं तुम्हारी कोई मदद न कर सकूँगी। मुझे खाला या दरबान ने तुम्हारे पास भी देख लिया तो मुझे खूब मार खाने को मिलेगी। देखो, तुम ऐसा करो––नौकरानी को भेजकर खालाजान को बुलवा लो, यह कहलाकर भेजना कि रोज़-नामचा का एक मेहमान ज़रूरी काम से आया है और उससे फ़ौरन मिलना चाहता है, मगर मुझे माफ़ करो। मैं इस मामले में न पड़ूँगी। आशा है, आप मुझसे नाराज़ न होंगे। मुझे अपनी जान बचाने की पहले फ़िक्र है, लेकिन तुम यहाँ अँधेरे में क्यों खड़े हो ? जाकर उस कमरे में बैठो। चाहो तो मैं तुम्हारे लिए वहाँ शराब अथवा काफ़ी अथवा ..' आँखों में शैतानी भरकर उसने कहा, 'छोकरियाँ भिजवा दूँ ? टमारा तो फँसी हुई है, मगर नियूरा या वेरका को मैं भेज सकती हूँ।'

'बकवाद मत करो, जेनी ! मैं एक बड़े गम्भीर काम से यहाँ आया हूँ और तुमने यह मज़ाक···'

'अच्छा, अच्छा, माफ करो। मैं मज़ाक नहीं करूँगी। मैं तो यों ही कह रही थी। मैं देखती हूँ तुम बड़े पत्नी-भक्त हो ! बड़े शरीफ़ आदमी हो। अच्छा चलो, उस कमरे में चलो।'

वह उसको उसी कमरे में ले गई जहाँ लिखोनिन अपने मित्रों के साथ छोकरियों को लेकर पिछले दिन बैठा था। वहाँ उसको बैठाकर उसने खिड़कियाँ खोल दीं। सूर्य का कोमल और उदास प्रकाश कमरे को लाल और सुनहरी दिवारों, छत से लटकते हुए कन्दील और लाल मखमली फर्नीचर पर फैल गया।

'यहीं शुरूआत हुई थी,' लिखोनिन ने पश्चात्ताप और दुःख से सोचा।

'अच्छा, मैं जाती हूँ' जेनेका ने कहा, 'मगर तुम खाला से या सिमियन से दबना मत। डटकर उन्हें सुनाना। इस वक्त दिन है और वे तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते। अगर वे ज़रा भी चों-चपट़ करें तो तुम कहना कि फौरन ही गवर्नर के पास जाकर तुम उनकी शिकायत कर दोगे और चौबीस घण्टे के अन्दर तुम उन्हें जेल पहुँचवा दोगे। उन्हें ख़ूब ज़ोर-ज़ोर से डाँटना। तब वे तुमसे ठीक बातें करेंगे। अच्छा, ख़ुदा हाफ़िज़!'

वह यह कहकर चली गई। दस मिनट के बाद अन्ना एक नीली पोशाक पहिने हुए कमरे में घुसी। मोटी, गम्भीर चेहरा किये, जो माथे से नीचे गालों तक बुरी तरह मोटा होता गया था, बड़ी-बड़ी ठुड्डियाँ और छातियाँ हिलाती हुई, अपनी छोटी तीक्ष्ण आँखें चमकाती हुई, जिनके ऊपर भौहों के बाल नदारद थे और पतले-पतले घृणा-पूर्ण होठों को चबाती हुई वह अन्दर घुसी। लिखोनिन ने उठकर उसका मोटा थल-थल हाथ, जो उसने मिलाने के लिए बढ़ाया था और जिसकी उङ्गलियों में अँगूठियाँ भर रही थीं, पकड़ा और एकाएक उसे विचार आया :

'शैतान की मार हो इसपर! अगर इस चुड़ैल की आत्मा के भीतर कोई पैठ सके तो अवश्य उसे वहाँ बहुत से क़त्लों का भेद मिलेगा!'

कटरे को चलते हुए लिखोनिन ने अपनी जेब में काफ़ी रुपयों के साथ-साथ एक पिस्तौल भी रख ली थी और रास्ते में कई बार उसने जेब में हाथ डाल डालकर इस पिस्तौल को छुआ था। उसको झगड़े और बारदात का अन्देशा था; अस्तु वह उसके लिए पूरी तरह तैयार होकर चला था। मगर उसे आश्चर्य हुआ कि जो कुछ भी उसने सोचा था, केवल उसका भ्रम ही था। जो कुछ हुआ वह बड़ा ही सादा, थकानेवाला, भोंड़ा पर अप्रिय काम था।

'कहिए जनाब,' खालाजान ने एक नीची कुरसी में बैठकर, सिगरेट जलाते हुए, बड़प्पन से कहा, 'एक रात के दाम देकर आप छोकरी को ले गये और उसे एक रात

और एक दिन और रख लिया। पचीस रुपये आपको और देने हैं। एक रात के दस रुपये और चौबीस घण्टे के पचीस रुपये हमारी छोकरियों की फीस होती है। बिल्कुल टैक्स का-सा हिसाब बढ़ जाता है। कहिए, आप सिगरेट नहीं पियेंगे?' यह कहकर उसने सिगरेट का डिब्बा लिखोनिन की तरफ़ बढ़ाया और उसमें से लिखोनिन ने बिना कुछ सोचे या कहे, एक सिगरेट निकाल ली।

'मैं आपसे एक बिल्कुल दूसरी ही बात करने आया हूँ।'

'ओ! कहने की तकलीफ़ न करिए, मैं समझ गई। शायद आप उस छोकरी, लियूबा को बिल्कुल अपना करके रखना चाहते हैं अथवा आप रूसी लोग जैसे कहते हैं, उसे बचाना, उसका उद्धार करना चाहते हैं। हाँ, हाँ, ऐसा अक्सर होता है। बाइस बरस से मैं चकले में रहती हूँ। अतएव मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि सबसे मूर्ख नौजवान ऐसी हरकतें किया करते हैं, मगर मैं आपको विश्वास दिला देना चाहती हूँ कि इसका नतीजा कुछ न होगा।'

'नतीजा क्या होगा अथवा नहीं होगा—यह सोचना मेरा काम है' लिखोनिन ने कहा और उसने घुटनों पर रखे अपने काँपते हुए हाथों की तरफ़ एक उदास दृष्टि डाली।

'हाँ, बेशक वह सोचना आपका काम है' यह कहते हुए अन्ना के गुदगुदे गाल और गम्भीर ठुड्डियाँ मन्द हँसी से हिलीं, 'मैं अपनी अन्तरात्मा से आपके लिए प्रेम और मित्रता की इच्छा करती हूँ, मगर कृपया उस नीच स्त्री से मेरी तरफ़ से केवल इतना कह देने की तकलीफ़ कीजिएगा कि जब उसे आप दूध की मक्खी की तरह अपने घर से निकालकर फिर सड़क में फेक दें तो कम से कम वह फिर यहाँ अपना मुँह दिखाने की हिम्मत न करे। चाहे वह सड़क पर भूखी मरे या किसी अठन्नीवाले चकले में दाखिल होकर सिपाहियों को ख़ुश करे!'

'विश्वास रखिए, वह फिर लौटकर आपके पास न आयेगी, आप सिर्फ़ मुझे फौरन उसका टिकट दे देने की मेहरबानी करें।

'टिकट? जैसी आपकी इच्छा! अभी लीजिए, क्षणभर में। मगर कृपा करके उसका उधार खाता यहाँ का चुका दें। यह है उसका हिसाब, ज़रा इसे देख लीजिए। मैं इसे साथ ही लेती आई हूँ, क्योंकि मैं जानती थी कि आप आखिर में मुझसे क्या कहेंगे।' यह कहते हुए उसने अपनी चोली से एक छोटी-सी हिसाब की किताब

निकालकर दी और ऐसा करने में उसको अपनी बड़ी-बड़ी, मास की थैलियों की तरह पीली-पीली छातियों के दर्शन भी करा दिये। उस किताब के ऊपर लिखा था—'मिस आईरीन वोशचेनकोवा, अन्ना मारकोवा के चकले में, कटरे में रहनेवाली का खाता।' लिखोनिन ने पहला पन्ना उलटकर उस पर छपे हुए तीन-चार नियम पढ़े, उनमें रूखी और सूक्ष्म भाषा में लिखा था कि हिसाब की दो किताबें रखी जानी चाहिए। एक चकले की मालकिन के पास और दूसरी वेश्या के पास। सारी आमदनी और खर्च दोनों किताबों में दर्ज होना चाहिए। इक़रारनामे के अनुसार वेश्या को रहने, खाने, आग, रोशनी, बिस्तर, स्नान इत्यादि की सुविधाएँ मिलनी चाहिए और उसके लिए वेश्या को अपनी कमाई का दो तिहाई से अधिक भाग किसी हालत में नहीं देना चाहिए। बाकी आमदनी से उसे अपने लिए अच्छे और साफ़ कपड़े बनाने चाहिए और बाहर जाने के लिए कम से कम दो पोशाकें रखनी चाहिए। जब कभी मालकिन को रुपया दिया जाय तो उसके लिए मालकिन को बाक़ायदा स्टाम्प लगाकर वेश्या को रसीद देनी चाहिए और हर महीने के अन्त में हिसाब-किताब पूरा हो जाना चाहिए। अन्त में यह भी लिखा था कि वेश्या जब चाहे तब चकला छोड़कर, चाहे उस पर चकले की मालकिन का कर्ज़ा भी चढ़ा हो, जा सकती है। मगर मालकिन उससे अपना कर्ज़ा दूसरे कर्ज़ों की तरह क़ानूनों के अनुसार वसूल कर सकती है।

लिखोनिन ने नियमों के इस वाक्य पर अपनी उङ्गली फिराई और किताब घुमाकर मालकिन को यह वाक्य दिखाते हुए कहा :

'आहा देखो, इसमें भी साफ़ लिखा है कि उसको जब चाहे तब चकला छोड़कर चले जाने का हक़ है। अतएव वह जब चाहे तब यह तुम्हारा गन्दगी, नीचता, क्रूरता और बेहयाई से भरा हुआ घर छोड़कर जा सकती है...'

'जी हाँ, मुझे उसमें ज़रा भी शक नहीं है। वह जा सकती है, मगर उसको सिर्फ़ यह रुपया अदा करना होगा।'

'रुपया अदा करने के लिए वह तुम्हें हुण्डी या दस्तावेज़ लिख कर दे सकती है।'

'हुण्डी या दस्तावेज़ ! पहले तो वह अपढ़ है और लिख नहीं सकती ; दूसरे लिख भी सके तो उसकी हुण्डी या दस्तावेज़ लेगा कौन ? उसकी कीमत ही क्या है ! हाँ, वह कोई अच्छा ज़ामिन ला सके तो मुझे कोई उज्र न होगा।'

'नियमों में ज़ामिन का तो कहीं ज़िक्र नहीं है।'

'नियमों में सब बातें लिखी नहीं होतीं ! नियमों में यह भी तो लिखा नहीं है कि आप बिना मालकिन को नोटिस दिये किसी छोकरी को निकालकर ले जायँ ।'

'ख़ैर, उसका टिकट तो तुम्हें मुझको दे देना ही पड़ेगा ।'

'ऐसी बेवक़ूफ़ी मैं हरगिज़ न करूँगी ! किसी भले आदमी को लेकर पुलिस के साथ यहाँ आइए और जब पुलिस इस बात का सर्टीफिकेट दे दे कि वह तुम्हारा दोस्त हैसियत का आदमी है और तुम्हारा दोस्त ज़ामिन होने की हामी भरे और पुलिस इस बात का सर्टीफिकेट भी दे कि तुम छोकरी को व्यापार के लिए अथवा किसी दूसरे चकले में बेचने के लिए नहीं ले जा रहे हो, तब मैं तुम्हें उसका टिकट दे सकती हूँ ! फिर तुम उससे जो चाहो सो कर सकते हो !'

'शैतान की नानी !' लिखोनिन ने चिल्लाकर कहा, 'और मैं ही उसका ज़ामिन हो जाऊँ तो ! मैं ही हुण्डी या दस्तावेज़ लिखने पर राज़ी हो जाऊँ तो···'

'भोले जवान ! न जाने तुम्हारी यूनवर्सिटियों में तुम्हें क्या पढ़ाया जाता है ? मगर क्या तुम मुझे इतना काठ का उल्लू समझते हो ? भगवान् ही जाने इस समय तुम जो पतलून पहिने हो, उसके सिवाय तुम्हारे पास दूसरी कोई पतलून भी है या नहीं ! भगवान् ही जाने कि परसों तुम नानबाई की दूकान से अपने लिए बासी रोटी भी खाने को खरीद सकोगे या नहीं ! और तुम मुझसे हुण्डी या दस्तावेज़ लिखने को कहते हो ! क्यों तुम मेरा व्यर्थ में सिर खपा रहे हो ?'

लिखोनिन के गुस्से का पार न रहा । उसने जेब में से अपना रुपयों का बटुआ निकालकर मेज़ पर पटककर कहा :

'अच्छा, तो मैं तुम्हें अभी सारा रुपया दिये देता हूँ !'

'अच्छा, अच्छा यह बात ही दूसरी है,' मीठे शब्दों में, मगर फिर भी अविश्वास से ख़ाला ने कहा, 'ज़रा हिसाब के पन्ने उलटकर यह तो देख लेने की तकलीफ़ कीजिए कि आपको प्यारी को कितना कर्ज़ा अदा करना है ।'

'चुप, चुड़ैल कहीं की !'

'मैं चुप हूँ, मूर्ख !' शान्तिपूर्वक ख़ाला ने उत्तर में कहा ।

हिसाब को किताब के बायें पृष्ठ पर आमदनी और दाहिने पर ख़र्च दर्ज था । लिखोनिन ने पढ़ना शुरू किया :

'रसीद देकर वसूल पाया तारीख़ १५ अप्रेल को १०) रुपया ; ता० १६ को

४) रु० ; ता० १७ को १२) रु० ; ता० १८ को बीमार ; ता० १९ को बीमार ; ता० २० को ६) रु० ; ता० २१ को २४) रु० ।'

'हे ईश्वर ! घृणा और दुःख से लिखोनिन ने सोचा, 'एक रात में बारह आदमी !'

महीने के अन्त में लिखा था—'कुल मीज़ान ३३०) रु० ।' बाप रे ! कैसे जीवित रहती थी ? एक मास में एक सौ पैंसठ आदमियों से ।' लिखोनिन ने अन्ना के चकले की दो रुपये फ़ी आदमी की फ़ी बार की फीस के हिसाब से जोड़ते हुए अपने मन में सोचा और आगे का हिसाब देखा फिर उसने दाहिने पृष्ठ पर ख़र्च का हिसाब देखना शुरू किया :

एक लाल रेशमी पोशाक दर्जिन एल्डोकी मोवा से बनवाई कीमत ८४) रु० । एक सुबह की पोशाक क़ीमत ३५) रु० । छः जोड़ी रेशमी मोजे कीमत ३६) । मोटरभाड़ा, मिठाइयाँ, इत्र इत्यादि । कुल मीज़ान २०५), इसके बाद ३३०) रु० की आमदनी में से २२०) रु० मालकिन का हिस्सा रहने, खाने-पीने इत्यादि का खर्चा घटा दिया गया था । इस तरह महीने के आखिर में ११०) बचा था ; अस्तु पोशाक इत्यादि दूसरी चीज़ों की क़ीमत अदा कर चुकने पर आइरीन वोश्चेनकोवा के नाम ९५) रु० कर्ज़ा निकलता था जिसमें पिछले साल का ४१८) रु० का कर्ज़ा मिला देने पर कुल कर्ज़ा ५१३) उसके नाम पर था ।

इस हिसाब को देखकर लिखोनिन के होश उड़ गये । उसने ख़रीदी जानेवाली चीज़ों की अधिक कीमत की शिकायत की । मगर खालाजान ने बड़ी ठण्डी तबियत से उत्तर में कहा—'इन सबसे मेरा कोई सरोकार नहीं है । हम तो अपनी छोकरियों से भले घरकी छोकरियों की तरह अच्छे कपड़े पहिनने को कहते हैं । फिर वे चाहे बेशकीमती कपड़े पहिनें या सस्ते, इससे हमें कोई सरोकार नहीं रहता । हमसे वे कर्ज चाहती हैं तो हम कर्ज़ उधार देते हैं ।'

'मगर यह तुम्हारी लोमड़ी दर्जिन कौन है' लिखोनिन ने ज़ोर से कहा, यह मकड़ी भी तुझ खून चूसनेवाली जोंक से पूरी तरह साज़िश में है ! आदमियों का खून चूसनेवाली डायन ! तेरे आत्मा भी है या नहीं ?'

जितना ही वह गरम होकर चिढ़ता था उतनी ही अन्ना ठण्डी होकर उसे चिढ़ाती थी ।

'मैं फिर कहती हूँ कि इन सब से मेरा कोई सरोकार नहीं है और देखो नौजवान,

तुम इस तरह मुझसे नहीं बोल सकते। वरना मैं अभी दरबान को बुलाकर तुम्हें द्वार के बाहर निकलवा दूँगी।'

लिखोनिन को मजबूर होकर उस क्रूर औरत से बड़ी देर तक सौदा करना पड़ा। यहाँ तक कि उसका गला पड़ गया। आखिरकार अन्ना किसी तरह इस बात पर राजी हुई कि २५०) रु० तो उसको फ़ौरन नक़द दे दिये जायँ और सौ रुपये का लिखोनिन अपने नाम से कर्ज़े का दस्तावेज़ लिख दे। यह बात उसने तब मानी जब अपना सर्टीफिकेट दिखाकर लिखोनिन ने उसे यह विश्वास दिला दिया कि छः महीने में ही अपनी पढ़ाई खत्म करके वह वकील हो जानेवाला है।

खालाजान टिकट लेने गई और लिखोनिन कमरे में इधर-उधर टहलने लगा। वह दीवार पर टँगी हुई सारी तस्वीरों को देख चुका था। एक तस्वीर में एक स्त्री एक हंस के पास समुद्र के तट पर नहा रही थी; दूसरी तस्वीर में हरम में एक बेगम बैठी थी; तीसरी तस्वीर में एक दैत्य एक नंगी परी को हाथों में उठाये लिये जा रहा था। एकाएक उसकी निगाह एक छपे हुए कागज़ पर पड़ी जो शीशे के चौखट में जड़ा तस्वीरों के साथ दीवार पर लटका था और एक तस्वीर से आधा छिप रहा था। लिखोनिन की निगाह आज पहली ही बार इस कागज़ पर पड़ी थी और उसको पढ़कर घृणा और आश्चर्य से वह दंग रह गया। निर्जीव सरकारी तथा पुलिस के थानों की निर्लज्ज भाषा में इस कागज़ पर वेश्याओं के लिए सब क़िस्म की हिदायतें लिखी हुई थीं। उनको कौन-सी दवाओं का किस तरह इस्तेमाल करना चाहिए, जिससे उनको और मेहमानों को गन्दी बीमारियाँ न हों, शरीर की सफ़ाई रखने के लिए क्या-क्या उपाय करने चाहिए और हर हफ्ते में डाक्टरी मुआइना किस तरह कराना चाहिए। उसमें यह भी लिखा था कि कोई चकला गिरजाघर, शिक्षालय, तथा न्यायालय के सौ क़दम के भीतर नहीं हो सकता। स्त्रियों के अलावा न तो कोई और चकला रख सकता है और न चकला रखनेवाली स्त्री के नाते-रिश्ते की सात बरस से ऊपर की कोई स्त्री और मर्द उसके साथ चकले में रह सकते हैं। चकले की मालकिनों को और चकले में रहनेवाली छोकरियों को, एक दूसरे के साथ और आनेवाले मेहमानों के साथ नम्रता का व्यवहार करना चाहिए और शराब पीकर शोरोगुल गाली-गलौज और झगड़ा-बखेड़ा नहीं करना चाहिए। वेश्या को ख़ुद नशे में हो जाने पर या किसी नशे में हो जानेवाले मेहमान को चूमना या प्यार करना नहीं चाहिए। इसके अलावा दूसरे

ख़ास मौकों पर भी, जिनका जिक्र था, वेश्या को किसी हालत में भी गर्भपात नहीं कराना चाहिए। 'यहाँ भी जर्म की रक्षा की जाती है !' लिखोनिन ने घृणा से अपने मन में विचारा।

आख़िरकार अन्ना से काम पूरा हुआ। रुपया लेकर अन्ना ने रसीद लिखी और रसीद को टिकट के साथ उसने लिखोनिन की तरफ़ देने के लिए बढ़ाया। लिखोनिन ने अपना दस्तावेज़ उसकी तरफ़ बढाया। दोनों एक दूसरे की आँखों और हाथों को बड़े गौर से देख रहे थे। स्पष्ट था कि दोनों में से किसी को एक दूसरे की किसी भी हरकत का विश्वास नहीं था। लिखोनिन ने रसीद और टिकट अपनी जेब में रख लिये और उठकर चला। अन्ना उसको जीने के द्वार तक पहुँचाने उसके साथ गई और जब वह जीने से उतरकर सड़क पर पहुँच गया तो ऊपर से झुककर चिल्लाई :

'विद्यार्थी, ओ विद्यार्थी !'

लिखोनिन रुक गया और मुड़कर उसकी तरफ देखने लगा।

'क्या है ?' उसने पूछा।

'सुनो, एक बात रह गई है, वह भी सुनते जाओ। तुम्हारी लियूबा बिल्कुल कूड़ा है ! वह चोर है और उसको आतशक की बीमारी है ! हमारे यहाँ आनेवाले अच्छे मेहमानों में से कोई भी उसे पसन्द नहीं करता था। अच्छा हुआ तुम उसे ले गये। वरना हमीं उसे यहाँ से निकाल बाहर करनेवाले थे ! मैं तुम्हें यह भी बता देना चाहती हूँ कि वह दरबान, पुलिसवालों, चौकीदारों और गिरहकटों के साथ ख़ूब सोती थी। तुम्हारे उससे विवाह करने पर तुम्हें मेरी हार्दिक बधाई।'

'अरी कुतिया !' लिखोनिन उस पर चिल्लाया।

'उल्लू कहीं का !' खाला बोली और उसने जोर से द्वार बन्द कर लिया।

लिखोनिन किराये की एक मोटरगाड़ी में बैठकर थाने की तरफ चला। रास्ते में उसे ख्याल आया कि उसने उस मशहूर पीले टिकट को जिसके बारे में उसने इतना सुना था, अच्छी तरह देखा भी नहीं था कि उस पर क्या लिखा था; अस्तु उसने उसे जेब से निकाला। टिकट डाकख़ाने में बिकनेवाले लिफ़ाफ़ों के बराबर एक छोटी-सी किताब की तरह था। उसके एक पृष्ठ पर लियूबा का नाम, उसके बाप का नाम और उसका पेशा 'वेश्या' दर्ज था। दूसरे पृष्ठ पर सूक्ष्म में वही बेशर्मी से भरे वेश्याओं की सफ़ाई और व्यवहार के नियम थे जिनको उसने दीवार पर टँगे हुए कागज़ पर कुछ

देर पहले ही पढ़ा था। वह पढ़ने लगा—'हर मेहमान को वेश्या से उसके पिछले डाक्टरी मुआयने का सर्टीफिकेट माँगकर देखने का हक़ है।' यह पढ़ते ही लिखोनिन का दिल फिर भर आया।

'बेचारी स्त्रियों की' उसने दुःख से सोचा, 'क्या-क्या अधोगति की जाती है? कौन-सा दुरुपयोग उनका नहीं किया जाता! और वे बेचारी कोल्हू के बैल की तरह आँखें मींचे सब कुछ सह लेने की आदी हो जाती हैं!'

थाने में पहुँचने पर उसे हल्के का थानेदार बरकेश मिला। वह रात भर ड्यूटी पर गश्त लगाता रहा था, जिससे काफ़ी न सो सकने के कारण चिढ़ा हुआ था। उसकी लम्बी, तथा पखे की तरह चौड़ी लाल-लाल दाढ़ी उलझी और मुड़ी हुई थी। उसके चेहरे का दाहिना हिस्सा, तकिये पर एक तरफ पड़े रहने से अभी तक लाल था। मगर उसकी आश्चर्यजनक, साफ़, ठण्डी और नीली आँखें चीनी के बर्तन की तरह लचक रही थीं। रात में गिरफ्तार की हुई शराबियों की भीड़ से जो अब छोड़ी जा रही थी, गालियाँ देते और कोसते हुए, सवाल पूछ-पूछकर और उनके नाम दर्ज कर-करके, वह सिर के पीछे दोनों हाथ लगाकर, दीवान की पीठ पर टेक लगाकर, इतनी जोर से अँगड़ाया कि उसके हाथ की उँगलियाँ और शरीर के सारे जोड़ चटख गये। उसने लिखोनिन की तरफ़ इस तरह देखा जैसे कि लिखोनिन कोई निर्जीव वस्तु हो और पूछा:

'कहिए, आप क्या चाहते हैं?'

लिखोनिन ने अपना काम सूक्ष्म में उसे बता दिया।

'अस्तु मैं उसको,' अन्त में लिखोनिन ने कहा, 'ले जाकर अपने पास रखना चाहता हूँ...उसके लिए क्या मुझे करना होगा?...उसको मेरी नौकरानी अथवा मेरी रिश्तेदार मानकर मुझे बताइए कि इस मामले में क्या करना होगा।...'

'या कहिए कि उसको आपकी रखेल या स्त्री मानकर', बरकेश ने चाँदी का एक सिगरेट का बक्स जिस पर नक्काशी के चित्र बन रहे थे, हाथ में उछालते हुए कहा, 'मैं आपके लिए कुछ न कर सकूँगा...कम से कम इस वक़्त फ़ौरन ही तो कुछ भी नहीं हो सकता। अगर आप उससे विवाह करना चाहते हैं तो आपको यूनीवर्सिटी के अधिकारियों की इजाज़त का पत्र दाखिल करना होगा। और अगर आप उसको सिर्फ़ रखेल बनाकर अपने खर्च पर रखना चाहते हैं तो ज़रा सोचिए तो कि यह कौन-सी

अक्ल की बात है ? आप एक छोकरी को वेश्याघर से निकालकर तो ले जाते हैं, मगर रखते उसको अपनी वेश्या बनाकर ही हैं ?'

'नहीं, नौकरानी की तरह वह मेरे यहाँ रहेगी,' लिखोनिन बोला।

'नौकरानी की तरह ही सही। उस हालत में आपको अपने मकान-मालिक का अपनी सफ़ाई में एक बयान हल्फी दाखिल करना होगा, क्योंकि मैं समझता हूँ कि आप खुद ही मकान-मालिक न होंगे और किसी किराये के मकान में रहते होंगे कि आपकी हैसियत नौकर रखने की है और उसके साथ ही आपको अपनी यूनीवर्सिटी या पैदाइश या रहने के ज़िले से अपनी शनाख्त के कागजात भी दाखिल करने होंगे कि आप सचमुच वही शख्स हैं जो आप अपने आपको बतलाते हैं। मुझे उम्मेद है आपका नाम तो सरकारी कागज़ातों में होगा ही ? या शायद आप भी.. बेक़ायदा लोगों में हैं ?'

'नहीं, मेरा नाम कागज़ातों में है।' लिखोनिन ने बेसब्री दिखाते हुए कहा।

'यह बड़ा अच्छा है। मगर उन श्रीमतीजी का, जिनके लिए आप इतनी तकलीफ़ कर रहे हैं, उनका भी नाम कागज़ातों में दर्ज है ?'

'नहीं, उसका नाम अभी तक दर्ज नहीं है। मगर उसका पीला टिकट मैं ले आया हूँ, जिसको लेकर मुझे उम्मीद है, आप, उसका पासपोर्ट मुझे लौटा देंगे और उसको पाते ही फौरन मैं जाकर उसका नाम भी सरकारी क़ागजातों में दर्ज कर दूँगा।'

बरकेश ने अपने दोनों हाथ फैलाये और चाँदी का सिगरेट का बक्स फिर हाथ से उछालने लगा।

'मुझे अफ़सोस है मिस्टर, मैं आपके लिए तब तक कुछ नहीं कर सकता जब तक आप तमाम क़ागज़ात नहीं ले आते। उस छोकरी को चकले के सिवाय और कहीं रहने का हक़ नहीं है, इसलिए उसे आपको फ़ौरन थाने में भेज देना होगा। हाँ, अगर वह चाहे तो फिर चकले में लौटकर जा सकती है। अच्छा, आदाबअर्ज़।'

लिखोनिन ने जल्दी से अपनी टोपी उठाकर सिर पर रख ली और दरवाजे की तरफ़ चला। मगर एकाएक उसके दिमाग़ में एक विचार आया जिससे उसे स्वयं बड़ी घृणा हुई। उसका जी ऊब उठा और उसके हाथ-पाँव ठण्डे होकर झनझना उठे। मगर वह इस विचार के आते ही लौटा और लौटकर बरकेश की मेज़ तक गया और उससे लापरवाही दिखाता हुआ, होशियारी से बोला :

'माफ़ कीजिए, इन्स्पेक्टर साहब, मैं सबसे ज़रूरी काम तो भूल ही गया। आप के दोस्त ने आप से कुछ कर्ज़ लिया था, वह उन्होंने मुझे आप को लौटा देने के लिए दिया था।'

'हूँ! मेरे दोस्त ने मुझसे कर्ज़ लिया था?' बरकेश न अपनी नीली-नीली आँखें खोलकर पूछा, 'कौन-से दोस्त ने?'

'बार...बारबारीसोव ने।'

'ओहो, बारबारीसोव ने? अच्छा, अच्छा, मुझे याद आ गया, मुझे याद आ गया!'

'यह लीजिए दस रुपये। वह उन्होंने मुझे आपको लौटाने को दिये थे।'

बरकेश ने सिर हिलाते हुए रुपया लेने से इनकार करते हुए कहा :

'यह आपका मित्र बारबारीसोव—मेरा और आपका दोनों ही का मित्र—बड़ा सूअर है। उसने दस रुपये नहीं, पचीस रुपये लिये थे। बड़ा बदमाश है! पचीस रुपये और उसके साथ कुछ रेज़गारी भी उसने मुझसे ली। ख़ैर, रेजगारी की फ़िक्र मुझे नहीं है। भगवान उसी का भला करें? बिलियर्ड खेलने में उसने यह रुपया मुझसे लिया था। मगर वह है बड़ा धोखेबाज़...खेलने में बड़ी बेईमानी करता है... ख़ैर, मेरे नौजवान दोस्त, पन्द्रह मुझे और चाहिए।'

'अच्छा, मगर आप भी बड़े छटे हुए हैं, इन्सपेक्टर साहब!' लिखोनिन ने रुपये निकालते हुए कहा।

'अरे; मुझ पर रहम खाइए!' बरकेश ने पिघलते हुए उत्तर में कहा, 'मैं बाल-बच्चेदार और बड़ी गृहस्थीवाला आदमी हूँ...और जो तनख़्वाह हमको मिलती है, वह तो आप जानते ही हैं. यह लीजिए, अपनी छोकरी का पासपोर्ट। रसीद लिखिए। ईश्वर आपको सुखी करे।

बड़ी विचित्र बात हुई! लिखोनिन को यह ज्ञान होते ही कि आख़िरकार पास-पोर्ट मेरी जेब में आ गया, एकाएक बड़ा उत्साह और खुशी हुई।

'अच्छा जी,' उसने सड़क पर जल्दी-जल्दी चलते हुए विचारा, 'अब सब ठीक हो जायगा। काम का सबसे कठिन हिस्सा पूरा हो गया। बढ़े चलो लिखोनिन, हिम्मत मत हारो! जो कुछ भी तुम कर रहे हो, बहुत अच्छा और ऊँचा है। इसका जो कुछ भी नतीजा हो भुगतने को तैयार रहो! कोई अच्छा काम करना और उसके एवज में फ़ौरन ही इनाम की इच्छा करना बड़ी शर्म की बात है। मैं कोई छोटा-सा सिखा हुआ

कुत्ता अथवा छोकरियों के स्कूल का विद्यार्थी तो हूँ नहीं। मैंने कल उन ज्ञानी मित्रों से सलाह करके बड़ी गलती की। मुझे इतनी जल्दी नहीं करनी चाहिए थी बड़ी बेवकूफी हुई। ख़ैर, जिन्दगी में ऐसी गलतियाँ भी हो जाती हैं और फिर सब ठीक हो जाता है। भारी से भारी नुकसान और बड़ी से बड़ी बेइज़्ज़ती भी आदमी को वक्त गुज़र जाने पर छोटी लगने लगती है...'

उसको यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि लियूबा ने पासपोर्ट वापिस मिल जाने पर खास खुशी नहीं दिखाई। हाँ, उसे लिखोनिन के वापिस लौट आने पर ज़रूर खुशी थी। शायद यह भोली-भाली पुरानी चाल की स्त्री अपने रक्षक पर निर्भर हो उठी थी। वह दौड़कर उसके गले मे चिपटने लगी परन्तु लिखोनिन ने उसे रोककर धीरे से उसके कान में पूछा :

'लियूबा, मुझे एक बात बताओ, निडर होकर बिल्कुल सच-सच बताना। मुझसे वहाँ उन लोगों ने अभी कहा कि तुम्हें एक बुरी बीमारी है...मेरा मतलब है आतशक की बीमारी है। यदि मुझ पर तुम्हें कुछ भी स्नेह है मेरी प्यारी, तो सच-सच बता दो! क्यों है न तुम्हें यह बीमारी?'

लियूबा का चेहरा लाल हो गया। उसने दोनों हाथों से अपना मुँह ढांक लिया और दीवान पर पड़कर रोने लगी।

'मेरे प्यारे! वसील वसीलिश! मेरे वसीन्का! ईश्वर की सौगन्ध! ईश्वर की सौगन्ध खाकर मैं कहती हूँ कि मुझे कभी कोई ऐसी बीमारी नहीं थी। मैं हमेशा उससे बड़ी सचेत रहती थी। मुझे उसका सदा बड़ा भय रहता था। मैं तुम्हें इतना चाहती हूँ! ऐसा होता तो मैं अपने आप ही तुमसे कह देती।'

यह कहते हुए उसने दोनों हाथ पकड़कर अपने आँसुओं से भीगे हुए चेहरे से लगा लिये और उसको इस प्रकार अपनी सच्चाई का सिसक-सिसकर विश्वास दिलाने लगी, जिस प्रकार एक छोटा बच्चा उस पर झूठा इलज़ाम लगाये जाने पर करता है।

लिखोनिन ने उस पर अपनी आत्मा से विश्वास कर लिया।

'मैं तुम्हारी बात पर बिल्कुल विश्वास करता हूँ,' उसने उसके सिर पर हाथ रखकर कहा, 'तुम इतनी दुखी क्यों होती हो? इस तरह रोती क्यों हो? ख़ैर, अपनी कमज़ोरी का शिकार फिर हम लोगों को कभी न होना चाहिए। जो हो चुका, सो हो चुका, आगे फिर वैसा ही कभी न होना चाहिए।'

'जैसी तुम्हारी खुशी,' छोकरी उसके हाथ और उसके कोट का सिरा चूमती हुई बड़बड़ाई, मैं तुम्हें खुश नहीं करती तो फिर जैसी तुम्हारी मर्ज़ी है, वैसा ही होगा।'

मगर आज रात को भी फिर वही हुआ और रोज-रोज़ उसी तरह होता रहा। यहाँ तक कि लिखोनिन को अपने गिरने पर शर्म आना बन्द हो गई और वह उसकी आदत हो गई। दिल में खटक और पश्चात्ताप होना ख़त्म हो गया।

उन्तीसवाँ अध्याय

मगर सच यह है कि लिखोनिन ने लियूबा का जीवन शान्तिपूर्ण, निश्चिन्त और स्थायी बनाने के लिए कोई कसर उठा न रखी। वह समझता था कि उसे यह मकान—यह छत पर का अपना घोंसला छोड़ देना होगा। इसलिए नही कि वहाँ रहने के लिए जगह कम थी या कोई तकलीफ़ थी—बल्कि इसलिए कि एलेक्ज़ेन्ड्रा का व्यवहार उनके प्रति दिन पर दिन अधिक ख़राब, चिड़चिड़ा और भयंकर होता जाता था। अस्तु, उसने शहर के छोर पर दो कमरे और एक रसोईघर का सस्ता-सा मकान अर्थात् आग के बिना नौ रुपये महीने पर ले लिया। यह ज़रूर है कि इस नये मकान से लिखोनिन को अपने विद्यार्थियों को जाकर पढ़ाना बहुत दूर पड़ता था, परन्तु उसे अपने स्वास्थ्य और अपने पैरों पर काफ़ी विश्वास था। अक्सर वह कहता, 'मेरी टाँगें तो मेरी ही हैं! किसी से किराये पर या उधार ली हुई नहीं हैं। उनको मैं जितना चाहूँ, इस्तेमाल कर सकता हूँ।'

और सचमुच वह बहुत चल सकता था। एक बार उसने मज़ाक ही मज़ाक में अपनी दिन भर की चलाई का जोड़कर हिसाब लगाया तो उसने पाया कि वह पचीस मील दिन भर में चला था। उसे काफ़ी दौड़-धूप करनी होती थी; क्योंकि लियूबा के पासपोर्ट लेने और अपने नये घर के लिए फर्नीचर और सामान खरीदने में उसकी ताशों से जीती हुई सारी कमाई खर्च हो चुकी थी। अतएव उसने थोड़े-थोड़े रुपये से फिर ताश खेलना शुरू किया, उसे शीघ्र ही मालूम हो गया कि ताशों से फिर उसका भाग्य जगनेवाला नहीं था।

अब उसका लियूबा से जो सम्बन्ध था, वह सब दोस्तों को मालूम हो चुका था, परन्तु फिर भी वह उनके सामने लियूबा से दोस्ताना और बिरादराना ताल्लुक का नाटक

जारी रखता था। किसी वजह से वह न तो यह समझता था और न समझना चाहता ही था कि उसका लियूबा से जो ताल्लुक था, उसको साफ़-साफ सबसे ज़ाहिर कर देना ही उसके लिए उचित, अच्छो और अक्लमन्दी की बात थी। शायद वह यह समझता हो, मगर एक बार जो सबके सामने कह चुका था, उसे बदलना नहीं चाहता था। उसके और लियूबा के सम्बन्ध में प्रेम और चुम्बन की शुरुआत ल़ियूबा की तरफ़ से ही हुआ करती थी—उसकी तरफ़ से नहीं। पासपोर्ट से उसका असली नाम आईरीन जान लेने पर भी वह उसे लियूबा ही कहता रहा।

वह, जो रोज़ अपना शरीर बड़े दिखावटी उत्साह से, रोज दसों आदमियों को और महीने में सैकड़ों को दिया करती थी, अब स्त्री के पूरे प्रेम और ईर्ष्या से लिखोनिन की हो गई थी और उसे अपने शरीर, भावों और विचारों से प्रेम करती थी। शाहज़ादा उसको विदूषक और मज़ाकिया लगता था। बड़ी-बड़ी बातें करनेवाले सोलोवीव से मिलकर उसकी तबियत ख़ुश होती थी, मगर मिमानोवस्की की अधिकार-पूर्ण बातों से उसे बड़ा डर लगता था और लिखोनिन तो उसका सर्वस्व और देवता ही था, और जो सबमे ख़तरनाक और खराब बात है—उसकी ज़ायदाद और शरीर का सुख था।

यह बहुत दिनों की मानी हुई बात है कि मर्द जो काफी प्रेम कर चुकता है और विषय-भोग से थक चुकता है, फिर कभी किसी एक औरत से पवित्र, त्यागपूर्ण और अच्छा प्रेम नहीं कर सकता, मगर स्त्रियों के बारे में यह सत्य लागू नहीं है। यह बात ल़ियूबा के मामले में और भी साबित हो गई; क्योंकि वह लिखोनिन की दासी और गुलाम बनकर रहने और उसके आगे रेंगने को तैयार थी; मगर साथ ही वह यह भी चाहती थी कि वह बिलकुल उसका होकर रहे—मेज़ की तरह, छोटे से कुत्ते की तरह, रात की पोशाक की तरह उसका होकर रहे। और वह इस मामले में हमेशा फिसड्डी रहता, इस अचानक प्रेम के आक्रमण को सँभाल न पाता, जो कि एक छोटे से चश्मे से इतनी जल्दी बढ़कर एक बड़ा दरिया हो गया था और किनारों को लाँघकर बह उठा था। अक्सर वह दुखी हृदय से अपने आपको लानत-मलामत करता हुआ सोचता था :

'रोज शाम को मैं यूसुफ और ज़ुलेख़ा के खेल में यूसुफ़ का पार्ट खेलता हूँ। मगर यूसुफ़ ज़ुलेख़ा से अपने आपको किसी तरह छुड़ाकर, उसके हाथ में अपना कपड़ा छोड़कर, भाग तो गया था! मैं इस जुए से कब मुक्त होऊँगा?'

इसके अतिरिक्त लिखोनिन अपने मित्रों और बन्धुओं के अपने और लियूबा के प्रति व्यवहार से भी बड़ा दुखी था। वे उसके ग़रीब मगर ख़ातिरदारी घर पर उसी तरह मड़राते रहते थे, जैसे कि दीपक पर पतङ्गे; मगर उसे उनके शब्दों, लहज़ों, और हाव-भावों में लियूबा के लिए उस सम्मान और शिष्टता के चिन्ह नहीं दीखते थे जो कि नौजवान मित्र अपने किसी साथी की पत्नी, प्रेमिका या बहिन के प्रति दिखाते हैं। अपने साथियों के लियूबा के प्रति ऊपरी अच्छे व्यवहार में वह उनके भीतरी विचार भी इस प्रकार देखता था :

'तुम्हें चकले से सस्ते आनन्द के लिए यहां लाया गया है। वहां तुम रुपये के लिए बीसियों और सैकड़ों आदमियों के साथ सोती थीं। यहां भी अभी तक तुम्हारा वही पेशा है। जो तुम वहां थी, वही तुम यहां भी रहोगी। एक रात के लिए तुम्हें बुला लेना कोई मुश्किल काम नहीं है। तुम बिना सोचे-विचारे अपनी आदत के अनुसार बड़ी आसानी से चली आओगी।'

यह सोचकर उसके मन में बड़ी आत्मग्लानि होती; क्योंकि उसे लगता कि इस प्रकार के विचार अपने मन में रखकर उसके मित्र लियूबा का ही नहीं, बल्कि उसका भी अपमान करते थे। वे उसको भी लियूबा की तरह समझते थे।

अस्तु लियूबा के लिए उसके मन में एक प्रकार का द्वेष उत्पन्न होने लगता और उसके मन में उससे किसी तरह पीछा छुड़ा लेने के लिए तरह-तरह के विचार आने लगते। इन विचारों में कुछ विचार तो ऐसी बेईमानी से भरे होते थे कि कुछ ही घण्टे बाद या दूसरे दिन लिखोनिन फिर जब उन्हें सोचता तो मन ही मन शर्म से सिर नीचा कर लेता।

'मेरा पतन हो रहा है! मेरा नैतिक और मानसिक पतन हो रहा है!' वह कभी कभी घबराकर सोचने लगता :

'मैंने कहीं पढ़ा या सुना था कि ऊँचे दर्जे के मर्द का नीच स्त्री से सम्बन्ध हो जाने पर स्त्री ऊँची नहीं उठती; बल्कि मर्द को ही नीचा कर लेती है।' दो हफ़्ते के बाद लिखोनिन का लियूबा में रस ख़त्म हो गया। वह उसके बोसों और प्रार्थनाओं के कारण दया-भाव से चुपचाप उसको ज़बरदस्ती चूमा-चाटी कर लेने देता था।

फिर भी लियूबा, जिसमें आराम करने से जान आने लगी थी, कुछ ही दिनों में उसी तरह खिल उठी, जिस तरह मुर्झाई हुई कली बहुत-सा पानी मिलने पर खिल

उठती है। उसके कोमल चेहरे से धब्बे और डरी हुई चिड़िया की-सी परेशानी और आँखों के चारों तरफ़ की कालिमा ग़ायब हो गई और उसका चेहरा चमकने लगा। उसके शरीर में ताक़त आने लगी और वह भरने लगा। उसके होंठ लाल होने लगे। चूँकि लिखोनिन उसको रोज़ देखता था, अतएव उसका ध्यान न तो स्वयं ही इन बातों की तरफ़ गया और न उसने लोगों की बधाई पर विश्वास किया जो वह लियूबा को उसकी इस शारीरिक उन्नति पर देते थे। वह अपने मन में सोचता, 'यह सब इन लोगों का मज़ाक है।'

घर-गृहस्थी के काम में लियूबा साधारण से भी ख़राब निकली। वह थोड़ा-बहुत ख़राब खाना पका लेती थी, जिसका खाना मुश्किल होता था। लिखोनिन की मदद से उसने चाय बनाना सीख लिया, मगर इससे अधिक खाना बनाना वह न सीख पाई। हाँ, उसे मकान का फ़र्श धोना बड़ा अच्छा लगता था। वह काम उसने दिन में इतनी बार और इतने उत्साह से करना शुरू किया कि तमाम घर में शीघ्र ही सील हो गई और मच्छर भिनभिनाने लगे।

लिखोनिन ने अख़बार में एक बुनाई की मशीन का इश्तहार पढ़ा। वह उसे बहुत पसन्द आया। अतएव उसने एक बुनाई की मशीन लियूबा के लिए क़िश्तों पर ख़रीद ली। इस मशीन पर काम करना – जिस पर काम करके इश्तहार के मुताबिक तीन रुपया रोज़ पैदा किया जा सकता था – इतना सहल निकला कि उसको लिखोनिन, सोलोवीव और निजारद़्ज़े ने चन्द घण्टों में सीखकर एक जोड़ी मज़बूत परन्तु ऐसे बड़े-बड़े मोज़ों को बुन डाला, जिनमें कुम्भकर्ण के पाँव भी आसानी से चले जा सकते थे; परन्तु लियूबा उस मशीन पर काम करना न सीख सकी! ज़रा-ज़रा सी दिक़त पर उसे इन मर्दों की मदद की जरूरत होती थी, मगर उसने कपड़े के नक़ली फ़ूल बनाना बड़ी जल्दी सीख लिया और सिमानोवस्की की राय के विरुद्ध भी बड़े सुन्दर और अच्छे फ़ूल बनाने लगी। यहाँ तक कि महीने भर में ही टोप बेचनेवाले उसका माल ख़रीदने लगे। बड़े अश्चर्य की बात तो यह है कि उसने इस काम को जाननेवाले एक होशियार आदमी से इस काम के सिर्फ़ दो पाठ ही सीखे थे। बाक़ी उसने किताबों में बने फ़ूल देख-देखकर अपने ही बनाना शुरू कर दिया। एक सप्ताह में एक रूपये से अधिक के फूल वह नहीं बना पाती थी, मगर अपनी कमाई के इस एक रुपये पर उसे बड़ा अभिमान होता था। पहिले आठ आने जो उसने फूल

बनाकर कमाये, उनसे उसने लिखोनिन के लिए एक सिगरेट पीने की नली खरीदी।

कई वर्ष बाद लिखोनिन ने अपनी अन्तरात्मा से यह बात पश्चात्ताप और दुःख के साथ कबूल की कि उसकी ज़िन्दगी के ये दिन उसके विश्वविद्यालय और वकालत के सारे दिनों से अधिक शान्ति-पूर्ण और आराम के थे। भोंड़ी-भाँड़ी और सीधी-सादी परन्तु शायद मूर्ख लियूबा में कोई ऐसी बात थी, जिससे वह घर में अपने चारों ओर आनन्द और आराम का वातावरण उत्पन्न करती थी। उसके लिखोनिन के यहाँ रहने के कारण लिखोनिन का घर लिखोनिन के दोस्तों, बन्धुओं और दूसरे तमाम विद्यार्थियों के लिए, जो बेचारे किसी तरह ज़िन्दगी से झगड़ते हुए अपने दिन काटते थे, आराम और शान्ति का केन्द्र बन गया जहाँ उनको आकर ऐसा लगता था, मानों वे अपने घर में ही हों। लिखोनिन तब कृतज्ञता-पूर्ण दुःख के साथ लियूबा के उस शान्तिपूर्ण और मौन चेहरे की याद करने लगा जो शाम को, दिन भर की बहस और झगड़ों के बाद, समोवार के पास बैठकर सब दोस्तों को चाय पिलाते हुए, उसका होता था। लियूबा से अलग हो जाने के कुछ ही दिन बाद लिखोनिन के उसके प्रति सारे ख़राब, द्वेष-पूर्ण और क्रूर विचार ख़त्म हो गये थे; मगर ऐसा अक्सर होता है।

लियूबा की शिक्षा का काम बड़ा कठिन हो गया, तमाम स्वयं-शिक्षक, जिन्होंने उसे शिक्षित बनाने का बीड़ा उठाया था, अलग-अलग और एक साथ शिक्षा का उद्देश्य आन्तरिक विकास बताते थे; मगर लियूबा को सिखाते समय वे दिमाग़ में उन तमाम चीज़ों को ठूँसने की कोशिश करते थे, जिनको सीखना वे स्वयं ज़रूरी समझते थे। इसलिए वे उन स्वाभाविक कठिनाइयों से अपना सिर मारने लगे, जिनकी चिन्ता न करने से कोई हानि नहीं होती।

मसलन लिखोनिन लियूबा का गिनती का तरीक़ा भोंड़ा और ग़लत समझता था; क्योंकि वह इकड़ी, दुकड़ी, तिकड़ी, और चौकड़ी में गिनती करती थी। मसलन बारह को लियूबा दो तिकड़ी की एक दुकड़ी अथवा उन्नीस को तीन पचकड़ी और दो दुकड़ी कहती थी; मगर इस तरह वह सौ तक बड़ी जल्दी-जल्दी गिन सकती थी। उससे आगे न तो कभी उसे जाने की हिम्मत होती थी और न उसकी उसे कोई ज़रूरत ही पड़ती थी। लिखोनिन ने व्यर्थ में उसे बाक़ायदा गिनती सिखाने में अपना मग़ज़ खपाना शुरू किया, मगर उसका नतीजा कुछ न निकला। वह उस पर ग़ुस्सा करत

और चिल्लाता और वह आश्चर्य से मुँह बाकर और आँखों में आँसू भरकर उसकी तरफ़ चुपचाप घूरती। जोड़ और गुणा न जाने क्योंकर उसे जल्द आ गया, मगर घटाना और भाग देना उसके लिए पहाड़ हो गया। फिर भी कठिन से कठिन जबानी पहेलियाँ वह बड़ी आसानी और शीघ्रता से सुलझा देती थी और उसे ऐसी बहुत-सी ग्रामीण पहेलियाँ स्वयं भी याद थीं। भूगोल में उसे कोई रस नहीं था। सड़क, बाग़ या घर के कमरे में वह चारों दिशाएँ ऐसी आसानी से बता देती थी, जैसी कि लिखोनिन भी नहीं बता पाता था; क्योंकि किसान का ख़ून उसकी रगों में था; मगर पृथ्वी की गोलाई अथवा क्षितिज उसकी समझ में नहीं आये। जब उसको बताया गया कि पृथ्वी आकाश में घूमती है तो वह हँसने लगी। भूगोल के नक्शों के केवल रङ्ग ही उसकी समझ में आते थे, मगर नक्शों में बने हुए विभिन्न आकार उसने सही सही और जल्दी याद कर लिये। 'इटली कहाँ है?' लिखोनिन उससे पूछता, 'यह है बूट-सा' लियूबा तुरन्त इटली पर उङ्गली रख देती। 'और स्वीडन और नार्वे?' 'यह कुत्ता जो छत से कूद रहा है।' 'और बाल्टिक सागर?' 'अपने घुटनों पर खड़ी होनेवाली विधवा यह है।' और 'काला सागर?' 'यह है जूता।' 'स्पेन?' 'यह है मोटा टोपीवाला!'...इत्यादि-इत्यादि। इसी तरह इतिहास की शिक्षा का भी हाल रहा। लिखोनिन की समझ में यह नहीं आया कि लियूबा की बाल-आत्मा को किस्से-कहानियाँ अधिक प्रिय होने से वह उसे इतिहास को रसपूर्ण और वीरता की कहानियों में सिखाता तो वह आसानी से सीख सकती थी; मगर उसे स्कूल के छोकरों को पढ़ा-पढ़ाकर इम्तहानों के लिए तैयार करने की आदत पड़ी हुई थी, इसलिए वह लियूबा का दिमाग़ इतिहास की तारीखों और नामों से भरने की कोशिश करने लगा। इसके अतिरिक्त लिखोनिन को पढ़ने में सब्र और सयम भी कम था और बड़ी जल्दी ग़ुस्सा आ जाता था। वह बहुत जल्द उससे थक जाता और अस्पष्ट—जो कि दिन पर दिन बढ़ रही थी घृणा, उस छोकरी के प्रति जो उसके जीवन पर एकाएक आच्छादित हो गई थी, पाठ पढ़ाते समय अक्सर बेजा तौर पर फूट पड़ती थी।

निजारजे को सिखाने में सबसे अधिक सफलता मिली। उसका गिटार[1] और मैन्डोलीन[2] हमेशा खाने के कमरे में रेशमी फीतों से खूटियों पर लटकते रहते थे। मैन्डोलीन से लियूबा को गिटार अधिक पसन्द था। निजारज़े के इन लोगों के यहाँ

१. २, सितार और सारङ्गी की तरह बाजों के नाम।

आने पर—वह हफ़्ते में तीन-चार बार आता था—लियूबा ख़ुद उठकर खूँटी पर से गिटार उतारती और उसे रूमाल से झाड़-पोंछकर निजारज़े के हाथ में दे देती। वह कुछ देर तक गिटार के स्वर ठीक करता और फिर खाँसकर अपना गला साफ़ करता और एक पैर दूसरे पैर रखकर, लापरवाही से कुरसी की पीठ पर टिककर, कुछ-कुछ भर्राई हुई परन्तु मीठी आवाज़ से गाना शुरू कर देता। गाते-गाते वह अपने गाने पर स्वयं मुग्ध होकर बेहोश हो जाने की नकल करता। आँखें मूँदकर सिर हिलाता और प्रेमपूर्ण गीत के वाक्यों या ऊँची-नीची तानों के समय दाहिना हाथ गिटार के तारों से एकाएक हटाकर पत्थर की तरह मुग्ध हो जाता और एक क्षण तक लियूबा की आँखों से अपनी मीठी, गोली और नम्र आंखें मिलाकर घूरता। उसे बहुत से प्रेम के और पुरानी चाल के लोकगीत याद थे जो लियूबा को बहुत पसन्द आते थे। शाहजादे को बहुत से मज़ाकिया दोहे भी मालूम थे, जो सब एक ही धुन में गाये जाते थे। लियूबा इन दोहों को सुनकर हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाती थी—यहाँ तक कि हँसते-हँसते उसका पेट दुखने लगता था और आँखों में आँसू आ जाते थे और उसको अपनी हँसी बन्द करना असम्भव हो जाता था। जोश में भरकर वह भी निजारज़े के साथ स्वर मिलाकर गा उठती थी और उन दोनों का स्वर मिलकर बड़ा अच्छा हो जाता था। धीरे धीरे जब शाहज़ादे से उसकी काफ़ी जान-पहिचान हो गई तब वह और शाहज़ादा, दोनों मिलकर अक्सर साथ-साथ गाने लगे। ईश्वर की कृपा से लियूबा का गला बड़ा अच्छा था और उसके व्यभिचारी जीवन से भी उसकी आवाज़ अभी तक ख़राब नहीं हुई थी। धीरे धीरे ऐसा होने लगा कि लियूबा शाहज़ादे से गाने के लिए प्रार्थना नहीं करती थी; बल्कि शाहज़ादा उससे कोई सुन्दर लोकगीत गाने का आग्रह करता जो कि उसे बहुत से आते थे और वह अपनी कुहनियाँ मेज़ पर टेककर और उन पर अपना सिर उठाकर, किसान औरतों की तरह झिझकती और हिचकती हुई मीठे-मीठे गीत सुनाती।

गीत के आख़िरी शब्द शाहज़ादा भी उसके साथ गाने लगता। शाहज़ादा बिछुड़े हुए प्रेमी की तरह अपना सिर हिलाता हुआ एक तरफ़ को गिरा लेता और वे दोनों अपनी तानें उठाकर गिटार की तानों से ऐसी मिला देते कि फिर गिरने में न तो दोनों की गूँज में कोई भेद रहता और न धीरे-धीरे उनके हवा में मिल जाने से यही पता चलता कि कब स्वर खत्म हुए और शान्ति शुरू हुई।

मगर शाहज़ादे के प्रदेश के सबके प्रिय महाकवि रूस्तेवेली की कविताएँ लियूबा को कभी पसन्द न आ सकीं, उन कविताओं का सौन्दर्य जार्जियन भाषा के चुने हुए शब्दों के स्वरों में था ; मगर उन शब्दों को बकरे की आवाज़ की तरह अपने गले से जैसे ही शाहज़ादा निकालना शुरू करता, वैसे ही लियूबा दबी हुई हँसी से काँपने लगती और फिर कुछ ही क्षण में अपने आपको न रोक सकने के कारण ठट्ठे लगाती हुई हँसी से लोटने लगती। निज़ारज़े क्रोध में भरकर रूस्तेवेली की कविताओं की किताब पटककर बन्द कर देता और लियूबा को खच्चर और ऊँट कह-कहकर कोसता हुआ कहता, 'भैंसों के आगे बीन बजाने से कोई लाभ नहीं होता।' मगर फिर दोनों की आपस में शीघ्र ही सुलह हो जाती।

कभी-कभी निज़ारज़े शैतानी में भरकर नाटक भी करता। वह लियूबा को अपने सीने से लगा लेने का बहाना करता हुआ, अपनी आँखें स्नेह में डुबोकर उसकी तरफ़ लुढ़काता और हाव-भाव दिखाता हुआ, प्रेम से जलता हुआ, फुफकारता, 'मेरी रूह ! अल्लाह के बग़ीचे का सबसे बेहतरीन गुलाब ! तेरे होंठों में शहद और दूध भरा है और तेरी साँसों से शामी कबाब की ख़ुशबू आती है। मुझे अपने होंठों का एक प्याला अमृत दे दे ! ज़ालिम ! मुझे तबाह न कर !'

लियूबा उसके इस नाटक पर हंसती हुई गुस्सा दिखाती और उसके हाथों को पीटती हुई कहती, 'मैं लिखोनिन से तुम्हारी शिकायत करूँगी !'

'वाह ! ख़ूब कहा !' निज़ारज़े अपने हाथ फैलाकर कहता, 'लिखोनिन से क्या शिकायत करोगी ? वह तो मेरा दोस्त, मेरा भाई, मेरा दिली दोस्त है ! मगर उसने शायद 'लोफे' नहीं देखा है ? तुम उत्तरी लोग 'लोफे' को क्या जानो ? हम जार्जियन ही उसे अच्छी तरह जानते हैं ! देखो लियूब्का, 'लोफे' ऐसा होता है।' यह कहकर वह घूसे तानकर, आगे की तरफ़ शरीर झुकाकर, ऐसी भयङ्कर आँखें घुमाता और दाँत पीसता हुआ, दहाड़ता कि लियूब्का बच्चों की तरह डरने लगती और—यद्यपि वह जानती थी कि निजारज़े मज़ाक कर रहा है—डरकर वहाँ से दूसरे कमरे को भागने लगती।

मगर इस छोकरे को, जो कि हर जगह और हर तरह की स्त्रियों से गलीकूचे प्रेम करता फिरता था, अपने माता-पिता से एक प्रकार की नैतिक शिक्षा मिली थी, जिसके अनुसार मित्र की स्त्री उसके लिए पवित्र थी और शायद वह यह भी समझता

था—पूर्वी देशों के लोगों को अपने भोलेपन के साथ-साथ ऐसी समझ पश्चिमी लोगों से अधिक होती है—कि एक बार भी लियूब्का से छिपकर प्रेम कर लेने के बाद उसको फिर इस घर में यह घरेलू आनन्द की संस्थाएँ जिनका वह अब आदी-सा हो चला था, गुज़ारना असम्भव हो जायगा। उसकी यूनिवर्सिटी भर में लगभग सभी से अच्छी जान-पहिचान थी, मगर फिर भी वह इस शहर में और इस प्रदेश में, जिसको वह अभी तक अच्छी नहीं समझता था, अपने आपको बड़ा अकेला पाता था।

सोलोवीव को लियूब्का के पढ़ाने का काम सबसे अधिक भाया। यह विशाल, बलवान् और लापरवाह आदमी, आप से आप, बेसमझे-बूझे, स्त्री-जादू के प्रभाव में आ रहा था—जो जादू अक्सर भद्दी, कठोर और चिड़चिड़ी स्त्रियाँ तक मर्दों पर डाला करती हैं। सोलोवीव पर इस जादू ने यहाँ तक असर किया कि विद्यार्थी हुक्म चलाने लगा और शिक्षक हुक्म बजाने लगा। लियूब्का की आत्मा भोंड़ी परन्तु ताज़ी, गहरी और मौलिक होने के कारण वह दूसरों के कहे पर न चलकर ख़ुद ही नये-नये रास्ते ढूँढ़कर उनपर चलना चाहती थी। मसलन, जैसा बहुत-से बच्चे करते हैं, उसने पढ़ना सीखने से पहले लिखना सीख लिया। वैसे तो वह स्वभाव से नम्र और आज्ञाकारी थी ; परन्तु एक बात के न सीखने में उसके स्वभाव ने बड़ा हठ दिखाया। वह पढ़ने में व्यंजन और स्वर को मिलाकर कभी न पढ़ पाती, गोकि लिखने में वह दोनों को मिलाकर आसानी से लिख देती। उसे लिखने में बड़ा मज़ा आता था, गोकि पढ़ना-लिखना शुरू करनेवाले विद्यार्थी आम तौर पर लिखना पसन्द नहीं करते हैं। वह कागज़ पर बिल्कुल झुककर, थककर हाँफती हुई, मानो वह कागज़ पर से फूँक-फूँककर अदृश्य खाक उड़ाती हो, अपने होंठ चाटती और कभी इस गाल को और कभी उसको, अपनी जबान से फुलाकर बाहर को निकालती। सोलोवीव उसको मना नहीं करता था। जिस तरह उसका जी चाहता, उसे सीखने देता। डेढ़ महीने में ही इस विशाल, लम्बे-चौड़े शरीरवाले मनुष्य की आत्मा इस कमज़ोर और क्षणिक स्त्री के स्नेह-बन्धन में पड़ गई, मगर उसका स्नेह इस स्त्री के लिए समझदारी का, अजीब-सा, सहृदयता का, कुछ-कुछ आश्चर्यमिश्रित ऐसा था जैसा कि एक कृपालु हाथी का नदी में डूबती हुई चिड़िया पर होता है।

पढ़ना दोनों ही को अच्छा लगता था, मगर कौन-सी किताब पढ़ी जाय, कौन-सी नहीं, इसका निश्चय लियूब्का अपने इच्छानुसार ही करती थी। सोलोवीव तो केवल

पढ़ने के उतार-चढ़ाव में और लहरों और मौजों में उसका साथ देता था ; मसलन लियूब्का को डौनक्विकजोट का क़िस्सा पसन्द नहीं आया। वह उसको सुनते-सुनते थककर ऊब उठती, मगर रौबिन्सनक्रूसो का क़िस्सा उसे बड़ा अच्छा लगता और जब वह लौटकर अपने नाते-रिश्तेदारों से मिलता तो उसका हाल पढ़ते हुए वह रोने लगती। उसे अँग्रेज़ी लेखक डिकेन्स के हास्यरसपूर्ण क़िस्से भी अच्छे लगते, परन्तु अँग्रेज़ी तरीक़े और रिवाज़ उसकी समझ में न आते। रूस के प्रख्यात लेखक चेखोव की कहानियाँ उसने कई बार पढ़ीं और उनका रचना-सौन्दर्य और दुःख उसने अच्छी तरह समझ लिया। बालकों की पुस्तकों की कहानियाँ उसको ऐसी अच्छी लगतीं, ऐसा प्रभावित करतीं कि उसका चेहरा देखते ही बनता था। एक बार सोलो-वीव ने चेखोव की 'दौरा' नाम की कहानी उसे पढ़कर सुनाई जिसमें एक विद्यार्थी पहली बार चकले में जाता है और दूसरे दिन ऐसा पश्चात्ताप से दुखी होता है कि उसे अपने पाप पर आत्मग्लानि और अपार दुःख का एक दौरा-सा हो जाता है। सोलोवीव की इस कहानी से लियूब्का पर जो असर हुआ, उसकी स्वप्न में भी आशा नहीं थी। वह रो-रोकर, हाथ मलती हुई, बार-बार चिल्लाकर पूछती थी, 'हे भगवान्! इस लेखक को इन बातों का पता कहाँ से चला होगा! सचमुच बिल्कुल ऐसा ही होता है!'

एक बार वह 'मेनौन लेकाट और वीर ग्रेक्स का इतिहास' नाम की पुस्तक लाया जो फ्रान्सीसी लेखक पादरी प्रेवोस्ट की लिखी हुई थी। इस सुन्दर पुस्तक को सोलो-वीव स्वय भी पहली ही बार पढ़ने बैठा था, परन्तु फिर भी लियूब्का ने इस पुस्तक को सोलोवीव से कहीं अधिक अच्छी तरह समझा और पसन्द किया। इस पुस्तक में आम तौर पर उपन्यासों की तरह कोई प्लाट नहीं था। इस उपन्यास के भोले वर्णन, प्रेम की अधिकता और पुरानी चाल की लेखन-शैली इत्यादि सोलोवीव को कोई ख़ास पसन्द न आई, मगर लियूबा ने इस विचित्र अमर उपन्यास के रोचक, दुखी, हृदय-विदारक और ससार की मानवीय वस्तुओं के प्रति निरादर-पूर्ण वर्णन अपने कानों, आँखों और भोले दिल से सुने।

'सैण्ट डेनिस के गिरजे में जाकर अपनी शादी करने का इरादा हम लोग बिलकुल भूल गये,' सोलोवीव अपना सुनहरे बालोंवाला सिर, जो लैम्प की रोशनी पड़ने से चमक रहा था, किताब पर झुकाये हुए पढ़ रहा था, 'धार्मिक क़ानूनों को हमने भंग कर डाला और विवाह का बिना विचार किये ही हम दोनों दम्पति भी बन गये।'

'अरे, ये लोग क्या कर रहे हैं? आप ही आप दम्पति भी बन गये? बिना गिरजे में विवाह किये?' लियूब्का ने परेशानी से, अपने नकली फूल बनाना बन्द करते हुए पूछा।

'हाँ, हाँ! क्या हुआ? उन दोनों में प्रेम था—जैसा तुममें और लिखोनिन में है।'

'मेरी बात छोड़ो, मेरी बात दूसरी है! तुम जानते ही हो लिखोनिन मुझे कहाँ से लाया है परन्तु यह लड़की तो एक भले घर की जवान और भोली लड़की है! इसके साथ ऐसा करना इस आदमी के लिए बड़ा नीच काम है! मैं सच कहती हूँ सोलोवीव, यह आदमी बाद में इस छोकरी को अवश्य छोड़ देगा! बेचारी छोकरी! अच्छा, अच्छा, आगे पढ़ो।'

मगर कुछ ही पृष्ठ और पढ़ने के बाद लियूब्का उस वीर का पक्ष लेने लगी जिसको उसकी प्रेमिका ने धोखा दिया और उसके प्रति सच्ची साबित नहीं हुई।

'मगर उस आदमी के छिप-छिपकर मेरे यहाँ आने से मैं बड़ा परेशान रहने लगा। मुझे मेनौन की छोटी-छोटी ख़रीदारियों का भी ख़्याल आता जो कि हमारी हैसियत से बिल्कुल बाहर थीं और किसी नये प्रेमी की कृपा का फल लगती थीं। मगर मैं अपने मन में कहता, 'नहीं, नहीं। ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता! मेनौन मुझे कभी धोखा न देगी! वह अच्छी तरह जानती है कि मैं उसी के लिए जीता हूँ! वह अच्छी तरह जानती है कि मैं उस पर जी-जान से निछावर हूँ।'

'अरे भोले मूर्ख! अरे मूर्ख!' लियूब्का चिल्लाई, 'तुझे दीखता क्यों नहीं कि वह उस अमीर आदमी के चंगुल में है! कैसी नीच छोकरी थी!'

और जैसे-जैसे इस उपन्यास का क़िस्सा आगे बढ़ा, लियूबा का उसमें रस अधिकाधिक होता गया। उसे इस बात की कोई शिकायत नहीं थी कि मेनौन अपने प्रियतम और भाई की मदद से उसपर कृपा करनेवालों की जेबें काटा करती थी, अथवा ग्रेक्स क्लब में बैठकर लोगों को ठगा करता था। मगर जब मेनौन छिपकर और ग्रेक्स को धोखा देकर, किसी दूसरे से प्रेम करती थी, तब वह क्रोध में भर जाती और वीर ग्रेक्स की मुसीबतों पर दुःख के आँसू बहाने लगती। एक बार उसने पूछा:

'प्यारे सोलोवीव, यह लेखक कौन था?'

'एक फ्रान्सीसी पादरी था।'

'तो वह रूसी नहीं था।'

'नहीं, मैंने कहा न फ्रान्सीसी था। देखो न उसके वर्णन में भी शहरों और आदमियों के तमाम नाम फ्रान्सीसी हैं।'

'वह पादरी था, तुमने कहा? तो उसको ऐसी तमाम बातों का पता कहाँ से लगा?'

'जानता था! वह भी तो ख़ुद एक दुनियादार आदमी, ख़ुद पहले एक ज़मींदार था। पीछे से पादरी हो गया था। उसने अपनी ज़िन्दगी में काफ़ी दुनिया देखी थी। बाद में उसने फिर पादरी का बाना छोड़ दिया था। देखो, उसके बारे में किताब के अग्रपृष्ठ पर सब कुछ लिखा है।'

यह कहकर उसने पादरी प्रेवोस्ट की जीवनी का हाल पढ़कर लियूबा को सुनाया। लियूबा ने उसका सारा हाल, सिर हिलाते हुए, बड़े ग़ौर से सुना और जहाँ-जहाँ कोई बात उसकी समझ में ठीक-ठीक न आई, सोलोवीव से पूछती गई। अन्त में जब उसने पढ़ना ख़त्म किया, तब वह कहने लगी :

'अच्छा तो यह पादरी था। बड़ा अच्छा क़िस्सा इसने लिखा है। जाने यह छोकरी इतनी नीच क्यों थी? वह तो उसे जी-जान से चाहता था, मगर वह जाने क्यों उसे हमेशा धोखा ही देती रहती थी!'

'ख़ैर लियूबा, क्या किया जा सकता है? वह भी उसे प्यार करती थी, परन्तु वह चंचल स्वभाव की थोथली स्त्री थी—उसे अपने चीथड़ों, घोड़े और हीरे जवाहरातों की ही अधिक फ़िक्र रहती थी।'

लियूबा ने क्रोध में भरकर अपने एक हाथ पर दूसरा हाथ मारा और कहने लगी :

'मैं होती तो उसको भुरकुस बना डालती! नीच कहीं की! किसी मर्द पर स्नेह होता है। वह जेल जाय तो उसके साथ स्त्री को भी जेल जाना चाहिए। वह चोरी करे तो उसकी मदद करनी चाहिए। वह भिखारी बनकर भीख माँगे तो उसके साथ झोली डालकर भीख माँगनी चाहिए। प्रेमी को कौन-सी बात असम्भव है—प्रेम और रोटी का एक टुकड़ा जीवन के लिए काफ़ी है। बड़ी नीच स्त्री थी! मैं इस आदमी की जगह पर होती तो उसे अवश्य छोड़ देती; या रोने के बजाय उस छिनाल को पकड़कर ऐसा ठोंकती कि वह फिर कभी न भूलती!'

उपन्यास का अन्त उसे पूरी तरह सुनना कठिन हो गया। सुनते-सुनते वह बीच में ऐसा फूट-फूटकर रोने लगती कि सोलोवीव को उपन्यास पढ़ना ही कुछ देर के लिए बन्द कर देना पड़ता, अतएव उपन्यास का आख़िरी अध्याय चार बार में पढ़ा जा सका।

प्रेमियों के दुःखों की कहानी, उनके जेल में पड़ने, मेनौन के ज़बरदस्ती अमरीका भेजे जाने, ग्रेक्स के उसके पीछे-पीछे जाने के आत्म-त्याग की कहानी सुनकर वह ऐसी भौंचक्की-सी हो गई कि उसके मुँह से शब्द निकलने तक बन्द हो गये। अन्त में मरुभूमि में मेनौन की शान्ति और सुन्दर मृत्यु का हाल सुनकर वह स्तब्ध, सीने पर हाथ रखे, रोशनी की तरफ़ एकटक देखने लगी और उसकी घूरती हुई आँखों से आँसुओं की झड़ी, मेज़ पर टपटप-टपटप गिरने लगी। मगर फिर वीर ग्रेक्स ने दो दिन तक, मेनौन की लाश के पड़े रहने के बाद, जब अपनी तलवार से उसकी क़ब्र खोदनी शुरू की, तब लियूबा इस तरह सिसकियाँ भरने लगी कि सोलोवीव को घबराकर उसके पानी लेने के लिए दौड़ना पड़ा, मगर कुछ शान्ति हो जाने पर भी बड़ी देर तक वह सिसकती ही रही और फूले हुए होंठों को लटकाये बड़बड़ाती रही, 'बेचारों की ज़िन्दगी बड़ी मुसीबत की रही! कैसे अभागे थे! प्यारे सोलोवीव, हमेशा ऐसा ही होता है कि जब कभी एक मनुष्य और स्त्री सचमुच एक दूसरे को स्नेह करने लगते हैं, जैसा कि इन दोनों का हुआ, तभी ईश्वर उनके सिर पर कोई आफ़त का पहाड़ गिराता है! क्यों? ऐसा क्यों होता है, बताओ?'

तीसवाँ अध्याय

मगर लियूबा की आत्मा और बुद्धि को विचित्र ढङ्ग से शिक्षित बनाने के लिए उस पर जो बुद्धिमत्ता की सुइयाँ गड़ाई जा रही थीं, उनसे उसे जार्जियन और सोलो-वीव के बर्ताव से कुछ चैन मिलता था। लिखोनिन उसे शिक्षा देने में जो सख़्ती करता था उसको वह उसके प्रति अपने सच्चे और अथाह प्रेम के कारण उसी प्रकार क्षमा कर देती थी, जिस प्रकार मार-गालियों अथवा उसके और किसी जुर्म को वह क्षमा कर देने के लिए तैयार थी, मगर सिमानोवस्की का पढ़ाना उसे असह्य और अपने ऊपर बिल्कुल जुल्म और भारी बोझ की तरह लगता था। वह बड़ी सख़्ती से उसे

बिना नागा रोज़ इस तरह पढ़ाने आता था, मानो वह उससे किसी पिछले जन्म का बदला निकाल रहा हो ।

वह अपने अटल विचारों, अपने लहजे में भरे हुए आत्मविश्वास और विद्वत्तापूर्ण कहने के ढंग से बेचारी लियूबा का उसी तरह दिल बैठाने लगता था, जिस तरह वह यूनीवर्सिटी के विद्यार्थियों की आम सभाओं में व्याख्यन देकर नये आनेवाले विद्यार्थियों पर अपना रोब गाँठ लिया करता था । सभाओं में ज़बरदस्त व्याख्यानदाता, विद्यार्थियों के खाने-पीने के प्रबन्धों में सबसे आगे, अध्यापकों के व्याख्यानों को लिखने इत्यादि और छपाने के प्रबन्ध में आगे, अपनी कक्षा का मानीटर और अन्त में विद्यार्थियों के फण्ड का संचालक और प्रबन्धक था । वह उन लोगों में से था, जो अपनी शिक्षा समाप्त करने के बाद राजनैतिक दलों के नेता होते हैं और भोले-भाले लोगों के भाग्य-विधाता बनकर, शोरोगुल मचाकर देश भर के लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचते हैं, फिर अपने त्याग की दुहाई दे देकर अपनी वकालत बढ़ा लेते हैं, फिर बुद्धिमान् बनकर आराम से जिन्दगी गुज़ारने लगते हैं जिससे उनके पेट बढ़ जाते हैं और वे जिगर और पेट की बीमारियों से परेशान रहते हैं और दुनिया भर से असन्तोष प्रकट करते हुए कहा करते हैं, 'लोग हमें नहीं समझते ! लोगों में अब आदर्शों की कमी और ख़ुदग़रजी बढ़ती जाती है !' अपने घरवालों से ऐसे लोग बड़ा स्वेच्छाचारी बर्ताव करते हैं और अक्सर सूदख़ोरी भी करने लगते हैं ।

सिमानोवस्की के दिमाग़ में लियूबा को शिक्षित करने का तरीका स्पष्ट था । जो कुछ भी उसके दिमाग़ में आता, वह हमेशा स्पष्ट ही हुआ करता था ! वह पहले लियूबा के लिए रसायन और विज्ञान में रस उत्पन्न करना चाहता था ।

'स्त्री का भोला-भोला दिमाग़' उसने सोचा 'रसायन और विज्ञान के करिश्मे देखकर दंग हो जायगा, जिससे उसके दिमाग पर मेरा प्रभाव जम जायगा और मैं उसके दिमाग़ को विश्वज्ञान के उन मुख्य तत्त्वों की तरफ ले जा सकूँगा, जिनको जानकर और समझकर उसके दिमाग़ से ग़लतफहमियां निकल जायँगी और वह दुनिया को समझने लगेगी ।'

अतएव उसने लियूबा को ऐसी चीज़ें दिखानी शुरू कीं, जिन्हें देखकर उसे आश्चर्य हो और उसका दिमाग़ प्रभावित हो । एक बार वह उसके लिए कागज़ के पट्टे का एक बड़ा-सा साँप बनाकर लाया, जिसके अन्दर बारूद भरी थी और ऊपर मज़बूत डोरियाँ लपटी थीं । उसने साँप में दियासलाई लगाई और वह शोर मचाता हुआ,

धुँआ और दुर्गन्ध छोड़ता हुआ, देर तक, कमरे में उछलता फिरा। लियूब्का को उसे देखकर कोई आश्चर्य नहीं हुआ। वह बोली 'अरे, यह तो आतिशबाज़ी का साँप है। मैंने इसे पहले भी देखा है। इससे मैं नहीं डर सकती!' मगर यह कहने के बाद उसने सिमानोवस्की से कमरे की खिड़की खोल देने की इज़ाजत माँगी, जिससे कमरे में भर जानेवाली बदबू और धुआँ बाहर निकल जाय।

इसके बाद सिमानोवस्की एक 'लीटन जार' बनाकर ले आया और उसमें विद्युत्-शक्ति को जमाया। लियूबा की उँगली में धक्का लगा और वह घबराकर चिल्लाई, 'अरे तुझ पर शैतान की मार हो! कम्बख़्त!'

फिर उसने रेत में मिले हुए पर औक्साइड आँव मैंगेनीज़ को गरम करके उसमें से एक जार भरकर औक्सीज़न निकाला। इसमें उसने गरम कार्क, कोयला और फासफोरस डाला जो इतनी तेजी से चमकने लगे कि उसकी आँखें चौंधियाकर बन्द हो गईं और दुखने लगीं, मगर वह खुशी से तालियाँ पीटती हुई चिल्लाई :

'मिस्टर प्रोफेसर, और! मिहरबानी करके और कीजिए!' मगर फिर उसने एक खाली बोतल में हाईड्रोजन और औक्सीजन मिलाकर, बोतलको सावधानी के लिहाज से तौलिया से ढककर, जब लियूबा को पकड़ाकर, बोतल का मुँह आग के पास ले जाने को कहा तो उसके वैसा करने पर बोतल में से ऐसा धड़ाका हुआ, मानों चार तोपें एक साथ दग गई हों—जिस धड़ाके से छत और दीवारों का पलस्तर तक निकलकर गिर पड़ा तब लियूबा काँप उठी और बड़ी मुश्किल से फिर सँभलकर काँपते हुए होंठों से गम्भीरतापूर्वक बोली :

'माफ़ कीजिए! अब मैं भली स्त्रियों की तरह घर-गृहस्थी में रहती हूँ, चकले में नहीं। अतएव मैं आपसे प्रार्थना करूँगी कि आप मेरे घर में ठीक-ठीक व्यवहार करें। मैं समझती थी कि आप शिक्षित और शरीफ़ आदमियों की तरह यहाँ आकर अच्छा व्यवहार करेंगे, मगर आप तो यहाँ ऐसी बेहूदा बातें करते हैं, जिनके लिए जेल तक हो सकता है!'

बाद में लियूबा ने बहुत दिनों बाद बतलाया कि उसके एक विद्यार्थी दोस्त ने उसे एक बार एक बम बनाकर दिखलाया था।

शायद सिमानोवस्की, जो कि नौजवानों में बड़ा गम्भीर और प्रभावशाली आदमी समझा जाता था, क्योंकि वहाँ उसे बातें ही बातें करनी होती थीं और जो कि एक

जीवित आत्मा से व्यवहार के क्रियात्मक प्रयोग का मौक़ा आते ही ऐसा मूर्खतापूर्ण व्यवहार करने लगा था, सचमुच में ही मूर्ख था, परन्तु वह अपने इस अद्वितीय गुण को छिपाने में बड़ा होशियार था।

विज्ञान के अध्ययन में असफल होने पर उसने दर्शनशास्त्र का अध्ययन शुरू कर दिया था। एक बार उसने ऐसी दृढ़ता से लियूबा से कहा कि परमात्मा नहीं है, मानो उसका कहना बिल्कुल अखण्डनीय था। वह ज़ोर देकर लियूबा से बोला, 'पाँच मिनट में मैं अभी साबित कर सकता हूँ कि परमात्मा नहीं है।' उसकी इस बात को सुनते ही लियूबा अपनी जगह से उछल पड़ी और दृढ़ता से बोली, 'देखिए, मैं अधम वेश्या तो ज़रूर हूँ, मगर मैं परमात्मा के अस्तित्व में विश्वास रखती हूँ और इस बात को हरगिज़ पसन्द नहीं करूँगी कि आप परमात्मा के विरुद्ध मेरे सामने कुछ कहें। आप नहीं मानेंगे और अपनी वितण्डा मुझे सुनाने का हठ करेंगे तो मैं वसील वशीलिस से आपकी शिकायत कर दूँगी।'

'और मैं उससे यह भी कहूँगी' उसने रुँआसी आवाज़ से कहा, 'कि आप मुझे सिखाते-पढ़ाते तो कुछ भी नहीं हैं, ऐसी ही ख़राब-ख़राब और गन्दी बातें मुझसे करते रहते हैं। मेरे घुटने पकड़ते हैं और बदतमीजी करते हैं।' यह कहकर लियूबा, जो कि आज तक सिमानोवस्की से शरमाकर और दबकर बोला करती थी, उसके पास से हटकर दूर जा बैठी।

इस प्रकार की असफलताएँ होने पर भी वह लियूबा के दिल व दिमाग पर अपना असर डालने का प्रयत्न करता ही रहा। उसने लियूबा को डारविन का विकासवाद का सिद्धान्त समझना शुरू किया। लियूबा उसको ध्यान से सुनती, मगर उसकी आँखों से एक प्रकार की बेसब्री-सी टपकती, मानों वह उससे कहती, 'अरे, इसे कब ख़त्म करोगे।' वह मुँह पर रूमाल रखकर जमुहाई लेने लगती, मगर फिर दोषी की भाँति समझाने लगती, 'माफ़ कीजिए, मेरी तबियत कुछ ठीक नहीं है।' मार्क्स के सिद्धान्त उसे समझाने में भी सिमानोवस्की को सफलता नहीं मिलती। वह ऊबी-सी-बैठी सिमानोवस्की से बड़े-बड़े आर्थिक शब्दों की व्याख्या सुनती, जो उसे निरी खोखली और निरर्थक लगती थी, अतएव जब चुकन्दर का शोरवा उफनकर पतीली में से चूल्हे में गिरने लगता अथवा कोई द्वार खटखटाता तो वह बड़े उत्साह और ख़ुशी से उठकर दौड़ती हुई जाती।

यह नहीं कहा जा सकता कि सिमानोवस्की स्त्रियों के साथ सफल नहीं होता था। उसकी दृढ़ता और आत्मविश्वास से बोलने का ढंग नौजवान, भोली-भाली, कुँवारी छोकरियों के दिमाग पर हमेशा असर करता था। लम्बे सम्बन्धों से वह हमेशा बड़ी आसानी से अपना पीछा छुड़ा लेता था—या तो वह किसी बड़े ज़रूरी काम का बहाना बना देता था, जिसके सामने घर-गृहस्थी का प्रेम हेय होता था ; अथवा वह एक ऐसा असाधारण व्यक्ति बन जाता था, जिसको जो चाहे सो करने का अधिकार होता है। लियूबा की मौन, स्पष्ट, परन्तु दृढ़ इनकार से उसे चिढ़ और उत्तेजना होती थी। सबसे अधिक उसे इस बात से क्रोध होता था कि यह स्त्री, जो कल तक हर एक के लिए खुली थी, एक-एक दिन में कई-कई आदमियों से केवल दो रुपये के लिए प्रेम करने को तैयार थी, अब एकाएक इतनी पतिव्रता बनने लगी है। आत्मा से बेहयाई की कालिमा और दिमाग से व्यभिचार की याद मुश्किल से जाया करती है।

'अजी नहीं!' वह मन में सोचता, 'ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता। बनती है! अथवा मैं ठीक तरह से उसके दिल तक पहुँचने की कोशिश नहीं करता हूँ।'

अतएव वह दिन पर दिन कड़ा, नुखताचीनी का और सख्ती का व्यवहार लियूबा से करने लगा। उसे अपने स्वभाव के अनुसार, बे-समझे-बूझे, अपने प्रभाव से दूसरों के दिलों और दिमागों पर अपना असर डालने की शक्ति पर विश्वास था, जो कि ज़ाहिर नहीं मालूम होता था।

एक बार लियूबा ने लिखोनिन से उसको इस प्रकार शिकायत की, 'वह मुझसे बड़ा सख्त व्यवहार करता है, बसील-वसीलिश। मेरी समझ में जो कुछ भी वह सिखाता है, बिल्कुल नहीं आता। मैं उससे कुछ भी सीखना नहीं चाहती।' किसी तरह लिखोनिन ने लियूबा को समझा-बुझाकर शान्त किया, मगर उसने सिमानोवस्की से उसके लियूबा के प्रति ऐसे व्यवहार का कारण पूछा। सिमानोवस्की ने ठण्डी तबियत से उसे उत्तर दिया, 'जैसी आपकी इच्छा, जनाब! अगर आपको या लियूबा को मेरा सिखाने का ढंग पसन्द नहीं है तो मैं इस काम से इस्तीफ़ा देने को तैयार हूँ। मेरी सारी कठिनाई यह है कि मैं लियूबा की शिक्षा को ठीक और नियमबद्ध करने की कोशिश करता हूँ। उसको समझ में कोई चीज़ नहीं आती है तो मैं उसे उस चीज़ को कंठस्थ करने के लिए बाध्य करता हूँ। धीरे-धीरे यह बन्द हो जायगा, परन्तु यह अनिवार्य है। लिखोनिन, याद करो, हमको और तुमको हिसाब के बाद बीजगणित

सीखना कैसा कठिन लगता था। हम लोगों की समझ में यह आना कठिन हो गया था कि संख्याओं की जगह अक्षरों का प्रयोग क्योंकर हो सकता है; उसी तरह हम लोगों की समझ में यह भी नहीं आता था कि व्याकरण सीखने की क्या ज़रूरत है—सीधी कहानियाँ और कविताएँ ही हमें लिखनी-पढ़नी क्यों नहीं सिखाई जातीं?'

इसके बाद दूसरे दिन ही, लैम्प के पास बैठी हुई लियूबा के ऊपर झुका हुआ और उसकी छातियों और बगलों पर फुसकारता हुआ, सिमानोवस्की उससे कह रहा था, 'एक त्रिकोण बनाओ...हाँ, हाँ, इस तरह। उसके ऊपर लिखो 'प्रेम'। केवल 'प' अक्षर लिखो, और नीचे लिखो 'म' और 'स' अर्थात् मनुष्य और स्त्री। अतएव मनुष्य और स्त्री के प्रेम का यह त्रिकोण बना, समझीं।'

इसके बाद देववाणी की तरह, अतर्क्य और गम्भीर, उसने उसे बहुतसी प्रेम की बातें सुनाते हुए, एकाएक कहा, 'अतएव लियूबा, देखो। प्रेम की इच्छा भी मनुष्य को उसी प्रकार होती है, जिस तरह खाने, पीने और श्वास लेने की ज़रूरत होती है।' यह कहकर उसने उसकी जाँघ घुटनों से बहुत ऊपर पकड़कर ज़ोर से दबाई। लियूबा ने घबराकर मगर उसे नाराज़ न करने के डर से धीरे-धीरे अपनी जाँघ उसके हाथों के नीचे से हटा ली।

'कहो, क्या तुम्हारी बहिन, मा या पति को यह बात बुरी लगेगी कि किसी कारण से तुमने अपने घर पर एक दिन खाना न खाकर किसी होटल में खा लिया? यही प्रेम का भी हाल है। बिल्कुल वैसा ही! प्रेम एक प्रकार की मानसिक भूख होती है जो कि शायद दूसरी भूखों से अधिक ज़बरदस्त होती है। मसलन इस समय मेरी इच्छा तुम्हारे लिए हो रही है। मैं तुम्हें अपनी स्त्री की तरह चाहता हूँ और तुम......'

'बन्द करिए इस बकवास को, मिस्टर' लियूबा ने उसकी बात काटते हुए कहा, 'आप एक ही बात की धुन क्यों पूरे हुए हैं? कोई दूसरी बात करिए। आपसे मैं कितनी बार 'न, न, न' कर चुकी हूँ! मुझे दीखता नहीं है, आप क्या चाहते हैं? मगर वसील वसीलिश के प्रति, जो मुझे उस नरक से छुड़ाकर लाया है और मुझसे इतना प्रेम करता है, मैं कभी विश्वासघात न करूँगी...आपकी बेवकूफी की बातों से मुझे आपसे घृणा होने लगी है।'

एक बार उसने, अपने मौलिक सिद्धान्तों के कारण, लियूबा को बड़ा कष्ट पहुँचाया।

यूनीवर्सिटी में इस बात की काफ़ी चर्चा हो रही थी कि लिखोनिन चकले से एक छोकरी को बचाकर ले आया है और आजकल उसकी नैतिक उन्नति करने में लगा हुआ है। यह खबर यूनीवर्सिटी में पढ़नेवाली विद्यार्थिनियों तक भी पहुँची जो दूसरे विद्यार्थियों से ख़ूब मिला-जुला करती थीं। एक दिन सिमानोवस्की दो यूनीवर्सिटी की विद्यार्थिनियों को, जिनमें से एक इतिहास की विद्यार्थिनी और दूसरी साहित्य की और स्वयं कुछ-कुछ कवि और समालोचक भी थीं, लेकर, उन्हें लियूबा से मिलाने के लिए आया और उनका लियूबा से बड़ी गम्भीरतापूर्वक, मूर्ख की तरह परिचय कराता हुआ, कभी उन दोनों की तरफ़ और कभी लियूबा की तरफ़ हाथ फैलाकर कहने लगा :

लीजिए, कामरेड, यही हैं लियूबा ! करिए इनसे परिचय और तुमको लियूबा, ये साधु, विद्वान् और त्यागी स्त्री युवतियाँ तुम्हारे नये जीवन में, हर तरह की सहायता पहुँचा सकेंगी ; और तुम कामरेडों, इनको, जो उस अन्धकारपूर्ण नरक से मुक्ति पाकर आई हैं, जिनमें हमारा समाज स्त्रियों को डालता है, अपनी छोटी बहिन समझकर हर तरह से मुझे आशा है, सहायता पहुँचाने का प्रयत्न करोगी।'

बिल्कुल यही शब्द तो उसने नहीं कहे, मगर लगभग इसी प्रकार की बातें उसने कहीं। लियूबा ने लज्जा से लाल होकर, भोंड़ी तरह से हाथों की उँगलियाँ मोड़े-मोड़े उन दोनों, रङ्गीन पोशाकों पर पेटियाँ लगाई हुई, स्त्रियों से हाथ मिलाये ; उनकी चाय और मुरब्बों से खातिर की और उनके सिगरेट जल्दी से दियासलाई से सुलगाये ; परन्तु बार-बार उनके कहने पर भी वह उनके बराबर पर न बैठी। वह उनसे 'हाँ, न, अच्छा, जैसी आपकी मर्ज़ी' ही कहती रही और उनमें से एक श्रीमतीजी का रूमाल ज़मीन पर गिरा तो वह उसे उठाने के लिए फ़ौरन दौड़ पड़ी।

आगन्तुक स्त्रियों में से एक तगड़ी, लाल और मोटी आवाज़ की थी जिसका चेहरा सिर्फ़ दो बड़े-बड़े गालों का बना लगता था, जिनके बीच से ऊपर को उठी हुई, एक ऐसी नाक निकली हुई थी, जिसे देखकर हँसी आती थी। उसकी आँखें दो छोटे-छोटे सूखे हुए अंगूरों की तरह थीं, जिनसे वह लियूबा को बार-बार सिर से पैर तक चुपचाप इस तरह घूर रही थी, मानो वह उसे घृणा करती हो। 'क्या बात है ? मैंने इससे किसी आदमी को तो नहीं छीना है ?' लियूबा ने दोषी की तरह सोचा। दूसरी आगन्तुक स्त्री ऐसी विचारहीन थी कि उसने लियूबा से पहले-पहले — गोकि लियूबा के लिए शायद वह सौवीं बार था — यही पूछना शुरू कर दिया, कि वह वेश्या कैसे बनी।

इस जोशीली, जवान, पीली, बड़ी सुन्दर और घूँघरवाले बालों की स्त्री ने, जो कि एक ऐसे लाड़ले बिल्ली के बच्चे की तरह दीखती थी, जिसकी गर्दन पर बिल्ली का पंजा लग चुका हो, लियूबा से पूछा 'कहो तो वह बदमाश...वह आदमी जिसने पहले-पहले...तुम मेरा मतलब समझ गई होगी...वह कौन था ?'

लियूबा के दिमाग़ में अपनी पूर्व सङ्गिनियों, जेनेका, टमारा इत्यादि की तस्वीरें चमक उठीं, जो कि आत्माभिमानी, वीर, चतुर और इन आगन्तुक छोकरियों से कहीं बुद्धिमान् थीं। लियूबा के मुँह से अचानक, जिसकी उसको भी स्वयं आशा न थी, निकला :

'बहुत-से थे। और सब ने एक साथ ही किया। मुझे याद नहीं आता। कोल्का, मिटका, बोलोदका, सरेज्का, ग्रीश्का, पेटका, कुज्का और गुश्का इत्यादि बहुत-से एक गुट्ट में थे। मगर आपको यह जानने की क्या चिन्ता हुई ?'

'मैं...मैं मैंने तुमसे इसलिए पूछा कि मेरे हृदय में तुम्हारे लिए सहानुभूति है!'

'मगर क्या तुम्हारा भी कोई प्रेमी है ?'

'माफ़ कीजिए, मैं आपका मतलब नहीं समझी! आप क्या कह रही हैं ? चलो यहाँ से चलें, हम लोगों को देर हो रही है।'

'आप क्या नहीं समझीं ? मैंने आपसे यह पूछा कि आप कभी किसी मर्द के साथ सोई हैं ?'

'बन्धु सिमानोवस्की', बिल्ली की बच्ची ने सख़्ती से कहा, 'मैं नहीं जानती थी कि आप मुझे ऐसे व्यक्ति के पास ला रहे हैं! धन्यवाद। आपने हमारे साथ अच्छा व्यवहार किया!'

लियूबा के लिए पहला क़दम कठिन होता था। वह उस स्वभाव के लोगों में से थी जो बहुत कुछ बरदाश्त करना जानते हैं, मगर जब वे फटते हैं तो एकदम फटते हैं। वह आम तौर पर शर्मीली और चुप रहनेवाली थी, परन्तु इस समय उसको पहिचानना मुश्किल हो गया था।

'लेकिन मैं जानती हूँ!' वह क्रोध से चिल्लाकर बोली, 'कि तुम भी वैसी हो हो जैसी मैं! मगर तुम्हारे बाप है, मा है ; तुम्हारी रक्षा करनेवाले हैं; ज़रूरत होती है तो तुम गर्भपात तक कराती हो—बहुत-सी कराती हैं। मगर तुम भी मेरी ही-सी परिस्थिति में होतीं, खाने के लिए कुछ न होता, नासमझ छोकरी होतीं, पढ़ना-लिखना

भी न आता होता, और कुत्तों की तरह मर्द तुम्हारे चारों तरफ़ लगे होते तो तुम्हारा भी वही हाल होता जो मेरा हुआ—तुम भी चकले की शरण लेतीं। एक ग़रीब छोकरी के सामने आकर इस तरह बनना तुम्हें शोभा नहीं देता—इतना इतराना अच्छा नहीं है ; समझीं !'

सिमानोवस्की बड़ी परेशानी में पड़ गया और हास्यरस के पुराने नाटकों की तरह अपनी साथी छोकरियों को दिलासा देता और समझाता हुआ उन्हें लेकर वहाँ से चला गया।

लियूबा बहुत दिनों से लिखोनिन से कहती थी कि सिमानोवस्की का वहाँ आना अच्छा नहीं लगता है, मगर लिखोनिन उसकी बातों को स्त्रियों की व्यर्थ की बातें समझकर कोई परवाह नहीं करता था ; क्योंकि सिमानोवस्की की खोखली, कल्पित, हवाई बातों का उसके हृदय पर बड़ा प्रभाव था। कुछ प्रभाव ऐसे होते हैं जिनसे निकलना आदमी को कठिन ही नहीं, बल्कि असम्भव हो जाता है। दूसरे लियूबा से विषय भोग करना भी उसे बड़ा अखरता और एक बोझ की तरह लगने लगा था। अक्सर वह अपने मन में सोचता, 'यह मेरी ज़िन्दगी बर्बाद किये डाल रही है। मैं एक साधारण आदमी की तरह मूर्ख होता जाता हूँ ! मैं कड़वे-मीठे और मूर्खतापूर्ण परमार्थ में घुला जा रहा हूँ। अन्त में इससे शायद शादी कर लूँगा और किसी दफ़्तर में क्लार्क अथवा कहीं शिक्षक का काम करने लगूँगा और लोगों से घूस लेने लगूंगा और बैठा-बैठा गप्प लगाया करूँगा ! मेरे विचारों की शक्ति, जीवन के सौन्दर्य और मानवता के लिए प्रेम और उसके उत्थान के सारे स्वप्न हवा में ही रह जायँगे ?' कभी-कभी वह अपने मन की बातें ज़ोर-ज़ोर से भी कह उठता और अपने सिर के बाल पकड़कर खींचने लगता। अतएव लियूबा जब उससे शिकायतें करती तो वह उसकी शिकायतों की छान-बीन करके उन्हें समाझने का प्रयत्न करने के वजाय नाराज़ होकर चिल्लाने और पैर पटकने लगता। बेचारी नम्र लियूबा सब से चुपचाप रसोई में चली जाती और वहाँ दिल भर रोती।

अब वह बार-बार जब उससे और लियुबा से कोई झगड़ा होता तो लियूबा से यह कहने लगा, 'मेरी प्यारी लियूबा, हम दोनों की एक दूसरे से निभ नहीं सकती। देखो, हम दोनों का स्वभाव भिन्न है। यह लो सौ रुपये। इन्हें लेकर तुम अपने गाँव लौट जाओ। तुम्हारे सगे-सम्बन्धी तुम्हारे लौटने पर ख़ुश होंगे। वहाँ कुछ दिन रहकर

अतएव वह अपनी आलमारी में उन्हें शक्कर, चाय और नाबू इत्यादि के साथ छिपाकर चुपचाप रख लेती थी। वह कभी-कभी क्रोध में भरकर लिखोनिन को आत्महत्या कर लेने की धमकियाँ भी देने लगी थी।

'भाड़ में जाय कम्बख़्त !' लिखोनिन अपने नीच विचार सोचता हुआ मन में कहता, 'चाहे इन दोनों में मित्रता के अतिरिक्त और कोई सम्बन्ध न भी हो ! परन्तु मैं ऐसा नाटक रचूँगा... ऐसा दृश्य करूँगा।'

और वह मन ही मन सोचने लगता' 'मैं कहूँगा, अच्छा !.. अच्छा ! मैंने तुम्हें अपने घर की शरण दी और तुमने यह किया ? ऐसी कृतघ्नता दिखाई ! . और तुमने, मेरे मित्र होते हुए भी मेरी सारी ख़ुशी को मुझसे ही ले लेने का प्रयत्न किया !.. अच्छा तो लो, तुम दोनों साथ-साथ रहो ! मैं अपना टूटा हुआ दिल लेकर यहाँ से जाता हूँ। मेरी ज़रूरत यहाँ नहीं है ! मैं तुम लोगों के मार्ग में काँटा नहीं होना चाहता इत्यादि।'

और उसके ठीक यहीं स्वप्न, उसके यह छिपे हुए इरादे, उसके ऐसे क्षणिक, परन्तु वास्तव में नीच विचार जिनको लोग बाद में अपनाना पसन्द नहीं करते, अचानक पूरे हो गये। सोलोवीव की लियूबा को पढ़ाने की बारी थी। उसको यह देखकर बड़ी ख़ुशी हुई कि लियूबा, बिना रुके या झिझके, अपने आप पूरा पाठ पढ़ गई, 'मिखी के पास एक अच्छा हल है। सिसोई के पास भी एक अच्छा-सा हल है...एक चिड़िया ..एक झूला...बच्चे ईश्वर को प्रेम करते हैं...' और इसके इनाम में सोलोवीव ने उसे एक सुन्दर वीरता की कहानी पढ़कर सुनाई, जिसको सुनकर लियूबा उछलने लगी। मगर वह सोलोवीव को अपने विचार इस कहानी के सौन्दर्य के विषय में अच्छी तरह न बता पाई ; क्योंकि उसे एक ज़रूरी काम से जल्दी ही चला जाना पड़ा। द्वार में जाते हुए उसे सिमानोवस्की आता हुआ मिला। दोनों ने एक दूसरे को नमस्कार किया। मगर सिमानोवस्की को देखते ही लियूबा का मुँह लटक आया। इस कठोर शिक्षक और भोंड़े आदमी से लियूबा को असह्य घृणा होने लगी थी।

आज उसने इस विषय पर व्याख्यान झाड़ना शुरू किया कि 'मनुष्य के लिए कोई क़ायदे-क़ानून या नियम नहीं हैं ; न उसके कोई अधिकार हैं, न कर्तव्य और न उसके लिए कोई अच्छाई या बुराई है। मनुष्य स्वयंभू और सर्वस्व है। वह किसी दूसरे

पर अथवा किसी चीज़ पर निर्भर नहीं है। मनुष्य ईश्वर का अंश है और चाहे तो स्वयं ईश्वर हो सकता है।'

इसके बाद वह, प्रेम क्या चीज़ है, इस पर व्याख्यान देना चाहता था, परन्तु अफ़सोस है कि उसने बेमव्रो मे ज़रा जल्दी कर दी और लियूबा को अपने सीने से लगाकर उसे दबाने लगा। 'वह मेरे चुम्बन और आलिङ्गन से प्रेम में डूब जायगी और मेरी बात मान लेगी!' सिमानोवस्की ने अपने मन में सोचा था। अतएव उसने अपना मुँह उसके होंठों को चूमने के लिए झुकाया, परन्तु लियूबा ने एक चीख़ मारकर उसके मुँह पर थूक दिया। उसका सारा ऊपरी भला व्यवहार एकाएक ग़ायब हो गया।

'निकल यहाँ से, बाज़ारू कुत्ता कहीं का! सूअर, पाजी, दुँगाड़ा! नहीं तो अभी मैं तेरी थूथड़ी तोड़ दूँगी!'

चकले का सारा शब्दकोष उसे याद हो आया और वह उसे उसके ऊपर उगलने लगी। सिमानोवस्की का चश्मा नाक से उछलकर कहीं जा पड़ा और वह मुँह बनाये, आँखें मिचकाता हुआ, बड़बड़ाया, 'मेरी प्यारी, तुम्हारा क्या बिगड़ जायगा एक क्षण का आनन्द! हम दोनों क्षण भर आनन्द में डूब जायँगे! किसी को कोई पता न चलेगा! मेरी हो जाओ।'

इसी वक्त, लिखोनिन कमरे में दाख़िल हुआ।

उसकी अन्तरात्मा ने उससे यह तो अवश्य नहीं कहा कि वह नीचता करने पर उतारू हो जाय, परन्तु उसके मन में यह विचार आया कि उसका चेहरा पीला हो गया है और वह ऐसे शब्द कहने जा रहा है जो बड़े भयंकर होंगे।

उसने उदास मुख करके नाटक के अन्तिम दृश्य में ऐक्टर की तरह, दोनों हाथ गिराकर, और मुँह नीचा करके, काँपते हुए कहा, 'मुझे कम से कम इसकी आशा नहीं थी! लियूबा, तुझसे तो मैं क्या कहूँ? तू तो जंगली है ही! सिमानोवस्की, तुम्हारे लिए मेरे दिल में बड़ी इज़्ज़त थी! ख़ैर, मैं अभी तक समझता हूँ कि तुम भले आदमी हो। कामदेव बड़ा ज़बर्दस्त होता है, आदमी की बुद्धि भ्रष्ट कर देता है। यह तो पचास रुपये मैं लियूबा के लिए छोड़ता हूँ। तुम मुझे यह रुपये बाद में लौटा दोगे—इसमें मुझे ज़रा-सा भी सन्देह नहीं है। अब तुम इसके भाग्य-विधाता!... तुम बुद्धिमान्, दयावान् और ईमानदार आदमी हो! मैं—और मैं ("नीच और

अधम हूँ", किसी की आवाज़ उसके कानों में आई)—मैं अब यहाँ से जाता हूँ, क्योंकि मेरे लिए यह दुःख असह्य है ।'

उसने रुपयों का बटुआ अपनी जेब में से निकालकर ज़ोर से मेज़ पर पटक दिया और सिर के बाल हाथों में पकड़कर कमरे में से निकल भागा ! मगर द्वार पर पहुँचकर वह चिल्लाया, 'तुम्हारा पासपोर्ट मेरे डेस्क में रखा है !'

अपना पिण्ड छुड़ाने के लिए यही रास्ता उसे ठीक जँचा । जैसा वह सोचता था, ठीक वैसा ही नाटक का अन्त हो गया ।

इकतीसवाँ अध्याय

लियूबा ने अपनी यह सारी कहानी जेन्का के कन्धे पर अपना सिर रखकर, सिसकियाँ भर-भरकर सुनाई, मगर उसने जो कुछ जेन्का से कहा वह वास्तव में जो कुछ हुआ था, उससे बिल्कुल भिन्न था ।

उसके कहने के अनुसार लिखोनिन उसको जान-बूझकर, लालच देकर, इसी लिए बहकाकर चकले से निकाल ले गया था कि उससे ख़ूब जी भरकर मज़े उड़ाये और अपनी तबियत भर जाने पर उसे सड़क पर ढकेल दे ; मगर वह मूर्ख की तरह सचमुच लिखोनिन को प्रेम करने लगी थी और चूँकि वह उसके और उसके मित्र कालिज में पढ़नेवाली, कमर में पेटी बाँधनेवाली छोकरियों के प्रति ईर्ष्या दिखाती थी, लिखोनिन ने उसके प्रति यह नीच कर्म किया था । जान-बूझकर और सिखा-पढ़ाकर उसने अपने मित्र सिमानोवस्की को उसके पास भेजा और जैसे ही सिमानोवस्की ने उसे पकड़कर ज़बर्दस्ती अपने सीने से लगाया वैसे ही लिखोनिन ख़ुद भी आ गया और शोर मचाने लगा और लियूबा को घर से निकाल दिया ।

यह ज़रूर सच है कि लियूबा के बयान में आधा सच ही था । मगर उसे जो सच लगा था, वह उसने जेन्का से कहा ।

फिर इसके बाद की अपनी मुसीबतों की कहानी भी उसने सुनाई । लिखोनिन द्वारा घर से निकाल दी जाने पर उसका कोई सहायक या सहारा न होने से, उसने एक अकेली गली में जाकर एक गन्दे होटल की छत पर रहने के लिए एक छोटा-सा कमरा किराये पर लिया और वहाँ रहने लगी ; परन्तु वहाँ भी पहले ही दिन से होटल

के तजुर्बेकार दलालों ने, बिना उसके पूछे ही, उसके शरीर का व्यापार शुरू कर दिया। अतएव वह होटल छोड़कर एक दूसरी जगह कमरा लेकर रहने लगी; मगर वहाँ भी एक बुढ़िया कुटनी, जो ग़रीब घरों के ईर्द-गिर्द घूमा करती है, उसके पीछे पड़ी।

शान्ति का जीवन बिताने पर भी लियूबा के चेहरे, बातचीत और रङ्ग-ढङ्ग में देखनेवालों को कई ख़ास बातें दीखती थी; या शायद ऐसा नहीं भी था तो कम-से-कम इस व्यापार से सम्बन्ध रखनेवाले उसे देखते ही फ़ौरन पहिचान लेते थे।

मगर एक बार सच्चा—यद्यपि वह क्षणिक था—प्रेम कर चुकने के बाद उसमें इतनी शक्ति आ गई थी कि वह फिर वेश्यावृत्ति को अपनाने के लिए तैयार नही थी। अपने इस वीरतापूर्ण इरादे में उसने यहाँ तक किया कि अख़बार में नौकरी ढूँढने के लिए ईश्तहार छपवाये, मगर उसको सिफारिश करनेवाला कोई न था। इसके अतिरिक्त नौकरियाँ दिलानेवाले दफ़्तरों में, जहाँ-जहाँ वह नौकरी ढूंढ़ने गई, वहाँ-वहाँ, उन दफ़्तरों की मालकिनें उसे देखने ही फ़ौरन पहचान गईं कि वह उनके पतियों, भाइयों, पिताओं और बेटों को लुभानेवालियों में से है। अतएव वह उसे किसी अच्छे घर में नौकरी न दिलाकर अकेली रहनेवाली बुढ़ियाओं अथवा क्रूर-दृष्टि और भारी आवाज़ की और उँगलियों में हीरों की अँगूठियाँ लटकानेवाली तगड़ी औरतों के पास भेज देती थी, जिनको देखते ही लियूबा बड़ी आसानी से पहिचान लेती थी कि वे सिपाहियों इत्यादि के लिए गुप्त छोटे-छोटे चकले रखनेवाली अनुभवी स्त्रियाँ है।

अपने गाँव में लौटकर जाना उसने बिल्कुल व्यर्थ समझा। उसका ज़िला इस शहर से सिर्फ़ पन्द्रह मील दूर था और वहाँ इस बात की खबर, शहर में आने-जानेवाले उसके गाँववालों के द्वारा, बहुत दिन पहले ही पहुँच चुकी थी कि वह चकले में जा बैठी है। उसके पड़ोसियों ने, जो शहर में आकर कुलीगिरी, होटलों में नौकरी, गाड़ियाँ हाँकने और छोटे-मोटे ठेकेदारी के काम करते थे, ख़त लिख-लिखकर और जबानी लियूबा का सारा हाल गाँव में पहुँचा दिया था, अतएव वह जानती थी कि इस शोहरत की दुर्गन्ध को अपने साथ लेकर जाने से गाँव में उसका क्या हाल होगा। गाँव में लौटकर जाने से बेहतर तो उसके लिए यही था कि वह आत्महत्या कर ले।

अमली ज़िन्दगी और रुपये-पैसे के मामले में वह इतनी ही होशियार थी, जितना कि पाँच बरस का बच्चा होता है। अतएव थोड़े ही रोज़ में उसके पास जो थोड़ा-बहुत रुपया था, सब ख़त्म हो गया। एक फूटी कौड़ी भी उसके पास न रही। चकले

में फिर लौट जाने की उसको हिम्मत न होती थी, परन्तु गली-कूचे की वेश्यावृत्ति का लालच उसके सामने हर समय रहता था और उसको बार बार ललचाता था। शाम को सड़कों पर घूमनेवाली पुरानी और अनुभवी वेश्याएँ लियूबा को देखते ही उसका पुराना पेशा समझ जाती थीं। अक्सर उनमें से कोई उसके पास आकर साथ-साथ चलती हुई, मीठे कृतज्ञता पूर्ण शब्दों में उससे कहतीं, 'क्यों बहिन ? इस तरह अकेली क्यों घूम रही हो ? आओ मेरे साथ आओ। चलो हम-तुम दोनों मिलकर साथ-साथ घूमें। इसमें हम दोनों का अधिक फायदा है ; क्योंकि छोकरियों के साथ आनन्द से समय बितानेवाले लोग आम तौर पर दो जोड़ों का साथ पसन्द करते हैं। दूसरे तुमको भी मेरे साथ रहने में सहूलियत होगी ; क्योंकि मैं सारे इन्सपेक्टरों को अच्छी तरह पहिचानती हूँ।'

'कैसे इन्सपेक्टर ?' लियूबा चौंककर बोली। वे ही इन्स्पेक्टर जो बेटिकट रोज़गार करनेवाली वेश्याओं को खोजते फ़िरते हैं। वे उन्हें पाते ही गिरफ़्तार कर लेते हैं और पकड़कर थाने में ले जाते हैं। बेचारी छोकरियाँ उन्हें कैसे पहिचान सकती हैं ; क्योंकि वे वर्दी न पहिनकर, साधारण कपड़ों में घूमते-फिरते हैं ? और वे उन सबको अच्छी तरह पहिचानते हैं जो टिकट लेकर धन्धा कर रही हैं। थाने में ले जाकर वे पासपोर्ट छीन लेते हैं और पीले टिकट दे देते हैं। टिकटवाली स्त्रियों को भी इन्स-पेक्टर जब चाहते हैं, पकड़कर थाने में ले जाते हैं और रातभर उन्हें हवालात में बन्द करके कठोर लकड़ी के नङ्गे तख्तों पर सुलाते हैं। नशे में होने या लोगों को सड़क पर तङ्ग करने का इलजाम लगाकर वे पकड़ लेते हैं और चालान कर देते हैं। फिर मजिस्ट्रेट बिल्कुल निर्दोष होने पर भी, दो हफ़्ते की कम से कम सज़ा करके जेल में बठा देता है और कमाई बन्द हो जाती है। हाँ, इन्सपेक्टर को घूस देकर अथवा उसके साथ किसी होटल में जाकर पीछा ज़रूर छुडाया जा सकता है, मगर बेचारी गरीब छोकरियों के पास घूस देने के लिए पैसा नहीं होता और इन्सपेक्टरों के जिस्म से ऐसी बदबू आती है कि उसके साथ होटल में जाने को तबियत नहीं होती...।'

'अतएव मेरे साथ-साथ रहने से तुम्हें भी फ़ायदा है ; क्योंकि मेरी मदद से तुम इन्सपेक्टरों के हाथों में पड़ने से बची रहोगी। मैं उन्हें खूब पहिचानती और इससे भी अच्छा तो यह हो कि तुम मेरे साथ चलकर मेरे घर की मालकिन से मिल

लो और मेरे साथ ही रहो भी। हम लोग वहाँ तीन हैं, परन्तु चौथी के लिए भी वहाँ आसानी से जगह हो सकती है—ख़ासकर जब कि वह ऐसी सुन्दर हो जैसी तुम हो।'

और इसके बाद अनुभवी भर्ती करनेवाली स्त्री धीरे-धीरे उस मालकिन के यहाँ रहने के फायदे और सुभीते बताने लगती—अच्छा खाने-पीने को मिलता है, घूमने-फिरने की पूरी स्वतन्त्रता रहती है और निश्चित वेतन से अधिक होनेवाली आमदनी को मालकिन से छिपाकर बचा लेने का मौका रहता है। इतना कहने के बाद उसने चकलों में रहनेवाली वेश्याओं को खरी-खोटी सुनाते हुए उनकी तरह-तरह की बुराइयाँ करनी शुरू कर दी। लियूबा उसकी इन बुराइयों का मतलब अच्छी तरह समझती थी; क्योंकि चकलों में भी तो गली-कूचों में फिरनेवाली वेश्याओं की इसी तरह बुराइयाँ की जाती थीं।

आखिर वही हुआ जो होना था। फ़ाकेमस्ती के दिन सामने आते देख और अपनी मुसीबतों और अनिश्चित भविष्य को सोचकर उसने आखिरकार एक भले दीखने-वाले छोटे क़द के बूढ़े आदमी की दावत मजूर कर ली, जो अच्छी पोशाक में अच्छी हैसियत का दीखता था, परन्तु वास्तव में बड़ा अस्वाभाविक निकला। उसके साथ अस्वाभाविक विषय-भोग करके लियूबा को रुपया मिला। लियूबा ने उसकी अस्वा-भाविकता का कोई विरोध नहीं किया; क्योंकि चकले में रह चुकने से इस मामले में उसकी कोई स्वेच्छा या शक्ति नहीं रही थी, मगर दूसरी बार इसी भले बुड्ढे ने अपनी इच्छा पूरी कर लेने के बाद लियूबा को एक रुपया भी नहीं दिया। 'मैं अभी नोट भुनाकर लाता हूँ' कहता हुआ वह बाहर निकल गया और फिर लौटकर न आया।

एक बार एक ख़ूबसूरत नौजवान ने, जो एक चपटी सी टोपी कानों तक टेढ़ी किये सिर पर लगाये था और रेशमी कमीज़ पर कमर में एक फ़ीता बाँधे हुए बड़े ठाट बाट से घूमता था, लियूबा को अपने साथ होटल में चलने की दावत दी। वहाँ पहुँचकर उसने होटलवाले से शराब और खाना मँगवाया और लियूबा के साथ बैठकर खाना खाता हुआ और शराब पीता हुआ, बड़ी-बड़ी डींगें हाँकता हुआ, अपने आप को एक बड़े अमीर का लड़का बताता हुआ कहने लगा कि बिलियर्ड खेलने में शहर भर में कोई उसका मुकाबला नहीं कर सकता, सारी स्त्रियाँ उसपर मोहित हैं और

लियूबा को अपने साथ रखकर वह उसका भविष्य बना देगा, मगर फिर वह भी उसी नीच बूढ़े की तरह क्षण भर के लिए कुछ काम का बहाना करके बाहर गया और ग़ायब हो गया। होटल के चौकीदार ने लियूबा को पकड़कर, खाने और शराब के दाम न दे सकने पर, ख़ूब देर तक मुँह बन्द करके पीटा ; मगर बाद में यह विश्वास हो जाने पर कि दोषी सचमुच वह नौजवान ही था, लियूबा नहीं, उसने लियूबा का बटुआ जिसमें एक रुपया और कुछ आने थे, उससे छीन लिया और ज़मानत में उसके सिर का टोप भी उतारकर रख लिया और उसे वहाँ से चली जाने दिया।

दूसरे एक पैंतालीस वर्ष की उम्र के आदमी ने जो काफ़ी अच्छी पोशाक में था, दो घण्टे तक उसे सताकर, होटल के कमरे का किराया और बारह आने पैसे उसे दिये। लियूबा उसके इतने कम दाम देने पर शिकायत करने लगी तो उसने उसकी नाक पर मुक्का रखकर, धमकाते हुए कहा : 'चुप, बदमाश कहीं की ! तूने ज़रा भी और चीं-चपड़ की तो मैं अभी पुलिस को बुलाकर कहूँगा कि तूने मुझे सोते में लूट लिया। क्यों बुलाऊँ पुलिस ? कितने दिनों से तू जेल नहीं गई है ?'

इस प्रकार धमकाकर वह चलता बना और इसी प्रकार के दूसरे बहुत-से वाक़-यात भी हुए। अन्त में एक दिन जब उसके मालिक-मकान ने जो कि एक खेवट था और उसकी स्त्री ने लियूबा के कपड़े-लत्ते भी, किराया न मिलने के कारण उठाकर घर से बाहर फेंक दिये और वह रातभर मेंहमें, सड़कों पर, पुलिस की निगाह से बचती हुई भटकती रही, तब उसने शर्म और घृणा से लिखोनिन की शरण में जाने का निश्चय किया, मगर लिखोनिन शहर में नहीं था। लियूबा को जिस रोज़ उसने अन्यायपूर्ण अपमानित करके अपने घर से निकाल दिया था, उसके दूसरे रोज़ ही वह भी दूसरों को शर्म से अपना मुँह न दिखाने के डर से शहर छोड़कर भाग गया था, अतएव लियूबा ने हताश होकर सुबह को चकले में फिर लौट जाने और मालकिन से अपनी ग़लती की माफ़ी माँगने का विचार किया था।

× × ×

'जेनेच्का ! तुम बड़ी चतुर, वीर और अच्छे दिल की हो ; तुम मालकिन से मेरी तरफ़ से प्रार्थना करोगी तो वह अवश्य मान लेगी' लियूबा ने जेनेका से गिड़-गिड़ाते हुए कहा और उसके खुले हुए कन्धों को चूमकर अपने आँसुओं से भिगो दिया।

'नहीं, वह किसी की नहीं सुनेगी' दुःख से जेनेच्का ने उत्तर में कहा—'तुम ऐसे मूर्ख और नीच मनुष्य के साथ व्यर्थ ही गईं !'

'जेनेच्का, मगर तुमने तो मुझे उसके साथ जाने की सलाह दी थी' झिझकते हुए लियूबा ने कहा।

'मैंने सलाह दी थी ?···मैंने तुम्हें ऐसी सलाह कब दी थी ?...मेरे सिर झूठ-मूठ का दोष क्यों मढ़ती हो ! क्या मैं ऐसी मर गई हूँ···ख़ैर, अच्छा चलो मालकिन के पास चलें।'

ऐम्मा ऐडवार्डोव्ना को लियूबा के लौट आने का काफ़ी देर से पता था। जब लियूबा, चारों तरफ़ देखती हुई, मकान के आँगन में घुसी थी, तभी उसने उसे देख लिया था। मन में वह लियूबा को फिर चकले में लेने के बिलकुल विरुद्ध नहीं थी। उसको चकले से चले जाने देने के लिए भी वह केवल रुपये के लालच से तैयार हो गई थी, क्योंकि उसने जो रुपया उसे दिया था, उसका आधा उसने स्वयं ले लिया था। साथ ही उसका यह भी विचार था कि अगले बिक्री के मौसम में उसे बहुत-सी नई-नई वेश्याएँ मिल जायँगी ; जिनमें से वह चुनकर अच्छी और नई छोकरियाँ अपने चकले में रख लेगी, मगर उसका यह विचार ग़लत निकला था ; क्योंकि पिछले मौसम में बहुत कम नई छोकरियाँ बिकने आई थीं। अतएव उसने लियूबा को देखते ही उसे फिर चकले में लेने का पक्का इरादा कर लिया था, परन्तु वह अपनी शान और रोब क़ायम रखने के लिए लियूबा को सबक़ सिखाना चाहती थी।

'क्या...कहा ?' उसने तमककर लियूबा का घबराहट से भरा बड़-बड़ाना अच्छी तरह सुनने से पहले ही कहा, 'फिर लौटकर यहाँ आना चाहती है ?···न जाने किन-किन कुत्तों के साथ गली-कूचों में तूने कुकर्म किये होंगे और अब फिर तू कुतिया भले घर में घुसना चाहती है ?···तूँ ! रूसी कुतिया ! भाग यहाँ से !...'

लियूबा ने मालकिन के हाथ पकड़कर चूमना चाहे, मगर उसने झटककर अपने हाथ लियूबा से छुड़ा लिये और उसने लाल-पीली होते हुए, मुँह बनाकर, होंठ चबाते हुए, तानकर पूरी ताक़त से लियूबा के मुँह पर ऐसे ज़ोर से एक तमाचा मारा कि लियूबा तिलमिलाकर बैठ गई ; मगर हाँफती हुई वह फौरन ही फिर उठी और सिसकती हुई गिड़गिड़ाई :

'मेरी प्यारी खालाजान, मुझे मारो मत···मेरी प्यारी मुझे मत मारो···'

मगर ऐम्मा ने फिर उसके मुँह पर एक ज़ोर का तमाचा मारा जिससे तिलमिलाकर वह अबकी बार ज़मीन पर चारो खाने चित्त जा गिरी।

इस प्रकार करीब दो मिनट तक उसने क़साई की तरह जी भरकर लियूबा को पीटा। पहले तो जेनेका चुपचाप अपनी आदत के अनुसार घृणापूर्वक देखती रही, मगर फिर एकाएक उसको वह असह्य हो उठा और वह जंगली की तरह चीखती हुई ऐम्मा पर झपटी। उसने ऐम्मा के बाल पकड़कर खींचने शुरू कर दिये और उसके कपड़े नोंचती हुई ज़ोर से चिल्लाई :

'अरी कसाई !...बदमाश !...कातिल !...नीच कुटनी !...चोर।...'

तीनों स्त्रियाँ ज़ोर-ज़ोर से चीखने और चिल्लाने लगीं और उनकी चीखें और चिल्लाहट की प्रतिध्वनि मकान के तमाम कमरों और रास्तों में गूँज उठी। वह आम दौरा शुरू हो गया जो कि जेलों में बन्द क़ैदियों को और पागलखाने के तमाम निवासियों को कभी-कभी एकाएक आ जाता है।

एक घण्टे में सिमिय़न, अपने पड़ोसी दो हम-पेशा मददगारों की मदद से, जो उसकी मदद को दौड़कर आ गये थे, बड़ी मुश्किल से बलवा बन्द कर सका। चकले की तमाम, तेरह की तेरह छोकरियों को ख़ूब पीटा गया, मगर जेनेका को जिसने बलवा शुरू किया था, सब से अधिक और कसकर मार मिली। पिटने के बाद भी लियूबा रेंगती हुई, मालकिन से गिड़गिड़ाती हुई प्रार्थना करती ही रही कि जब तक कि मालकिन उसे फिर चकले में रख लेने के लिए राज़ी न हो गई। लियूबा जानती थी कि जेनेका की आज की हरकत का बदला उसे भी किसी न किसी दिन अच्छी तरह भुगतना होगा। जेनेका जाकर अपने पलँग पर बैठ गई और पालथी मारे शाम तक बिना कुछ खाये-पिये, मुँह लटकाये, बैठी रही। उसकी साथिनें उससे मिलने गईं तो उसने उन्हें फ़ौरन अपने कमरे से निकाल दिया। उसकी आँख के ऊपर एक छोटा-सा घाव हो गया था, जिसके ऊपर उसने एक पैसा चिपका लिया था। फटी हुई कमीज़ के नीचे से उसकी गर्दन तक एक लम्बी लाल-लाल रस्सी की तरह, चोट का निशान दीखता था, जो सिमियन ने उसके लगाया था। बड़ी देर तक वह जङ्गली जानवर की तरह, अँधेरे में आँखें चमकाती हुई, नथने फुलाये हुए, दाँत पीसती हुई बैठी-बैठी बड़बड़ाती रही ; 'ठहरो ठहरो...बदमाशों...देखो मैं तुम्हें दिखा दूँगी...ओ आदमखोरो !...' मगर शाम होते ही जैसे ही चिराग जले और जोसिया ने द्वार खटखटाकर कहा—'श्रीमती' कपड़े

पहिनकर तैयार हो जाइए···बैठक में चलिए !' वैसे ही उसने उठकर, जल्दी-जल्दी हाथ-मुँह धोकर कपड़े पहिने और पाउडर से चोटों को ढाँककर, बैठक में आ बैठी। उसके चेहरे पर दुःख और अभिमान झलक रही थी। वह मुरझाई हुई थी, परन्तु उसकी आँखों से असह्य रोष की ज्वाला और एक दैवी सौन्दर्य छलक रहे थे।

बहुत से लोगों का—जिन्होंने आत्महत्या करनेवाले लोगों को आत्महत्या करने से कुछ घण्टे पहले देखा है—कहना है कि आत्महत्या करनेवाले लोगों की आकृति में एक विचित्र, रहस्यपूर्ण, समझ में न आनेवाला आकर्षण-सा आ जाता है। आज रात को और दूसरे दिन कुछ घण्टों तक जिसने भी जेनेका को देखा, उसी की उसकी तरफ़ आश्चर्यपूर्ण टकटकी बँध गई।

और सबसे विचित्र बात यह हुई—भाग्य के खेल भी निराले होते हैं—कि उसकी मृत्यु का साधन, उस आख़िरी तिनके की तरह जिसके रखते ही तराजू का पलड़ा एकदम नीचा हो जाता है, वही सैनिक अफ़सर कोल्या ग्लेडीशेव हुआ जो उसे दिल से चाहता था और उसपर मेहरबान था।

बत्तीसवाँ अध्याय

कोल्या ग्लेडीशेव एक अच्छा, ख़ुशमिज़ाज और शर्मीला छोकरा था जिसका सिर काफ़ी बड़ा था। उसके लाल-लाल गुलाबी गालों पर, ऊपरी होंठ के ऊपर और उसकी नई-नई निकलनेवाली मूँछों के भीतर एक विचित्र, टेढ़ी, सफेद लाइन बनी हुई थी जो ऐसी लगती थी, मानो दूध की बनी हो। उसकी आँखें भूरी और भोली थीं और सिर के बाल इतने छोटे कटे थे कि उनके रेशमी रूओं के अन्दर से उसके सिर की खाल, ऐसी चमकती थी, जैसी कि एक अच्छी जात के दुधमुँहे सुअर की खाल चकमती है। पिछले जाड़े में जेन्का इसी छोकरे से उसकी मा की तरह अथवा उसको गुण्डा समझकर प्रेम किया करती थी और जब वह शर्म से सिटपिटाता हुआ जाने लगता था तो उसको फल और मिठाइयाँ खाने के लिए देती थी।

अबकी बार जब वह आया तो उसमें, सैनिक कैम्पों में काफ़ी दिन रहने के बाद, उम्र का वह फ़र्क, जो अक्सर छोकरों को बहुत जल्द और अस्पष्ट तौर पर कुमार से जवान बना देता है, दीखता था। वह सैनिक शिक्षालय में अपनी शिक्षा पूरी करके

अब पूरा सैनिक जवान बन चुका था। इस बात का उसे अभिमान था, मगर फिर भी अक्सर मौक़ों पर वह अभी तक सैनिक शिक्षालय की वर्दी में ही घूमा करता था जो कि उसे वास्तव में पसन्द नहीं था। उसका क़द लम्बा और शरीर सुगठित और अधिक फुर्तीला हो गया था। कैम्प के जीवन से उसे बड़ा लाभ हुआ था। उसकी आवाज़ मोटी हो गई थी और स्तनों की ढेपनियाँ सख़्त हो गई थीं जिस पर उसे अभिमान था, क्योंकि वह जानता था कि यह उसकी मर्दानगी के परिपक्व होने के चिह्न थे। सैनिक शिक्षालय के नियमित कठोर जीवन के बाद वह इस समय छुट्टियाँ मना रहा था, जिसमें उसे हर तरह की स्वतन्त्रता थी, जो कि उसे बड़ी अच्छी लगती थी। घर पर उसे बड़ों के सामने सिगरेट पीने की अब इजाज़त मिल गई थी—यहाँ तक कि ख़ुद उसके पिता ने उसे एक चाँदी का सिगरेट रखने का डिब्बा, जिस पर उसके नाम का मोनोग्राम बना था, भेंट दिया था। पिता ने अपने पुत्र के जवान हो जाने और सैनिक शिक्षा ख़त्म कर लेने की ख़ुशी में उसके लिए पन्द्रह रुपये मासिक का जेबख़र्च भी देना शुरू कर दिया था।

कोल्या का पहली बार स्त्री से सम्बन्ध अन्ना के चकले में ही, वह भी जेनेका से हुआ था।

बहुत से मासूम लोगों का स्त्रियों से पहिला सम्बन्ध, गो कि यह बात लोगों को मालूम नहीं है, चकलों अथवा गली-कूचों की वेश्याओं से ही शुरू हुआ करता है; मगर जब नौजवानों से ही नहीं बल्कि पचास-पचास वर्ष के बूढ़े दादाओं से भी यह बात पूछी जाती है कि उनको यह आदत कैसे पड़ी तो वे उसी पुराने झूठ को दुहराने लगते हैं कि घर की नौकरानी ने उन्हें पहले-पहल यह काम सिखाया था। यह झूठ उन बहुत से विचित्र, स्थायी और पुराने इन्सानी झूठों में से है जिनका विचारक और सुधारक न तो कभी ज़िक्र करते हैं और न कभी उन्हें नष्ट करने का प्रयत्न ही करते हैं।

हममें से हर एक, अगर अपने दिल पर हाथ रखकर देखे, तो पायेगा कि हम सभी बहुत-से ऐसे झूठ अपनी ज़िन्दगी में दुहराते रहते हैं, जिनको पहले-पहल हमने अपने बचपन में हँसी-हँसी में एक बार किसी से कहा और जब उसने हमारे झूठ पर विश्वास कर लिया तो हमने दो, तीन, पाँच और दस बार उसी झूठ को दूसरों से कहा—और उस झूठ को बार बार कहने की हमारी आदत हो गई। और अब हम उसी झूठ को इतिहास की तरह ऐसी दृढ़ता से कहते हैं कि लोगों को उस पर विश्वास

हो जाता है। कोल्या भी इसी प्रकार मौका पड़ने पर अपने दोस्तों से अपनी एक दूर की चाची की जो जवान और धनवान् थी, उससे प्रथम प्रेम की कहानी सुनाता था। यह ज़रूर सच है कि इस स्त्री से, जिसकी आँखें बड़ी-बड़ी और काली थीं, जिसका चेहरा दूध का धुला-सा लगता था और जो भीनी और सुगन्धित दक्षिणी स्त्री थी—उसका प्रेम था; मगर उसका यह प्रेम उन दुखी, निठल्ली और लज्जापूर्ण कामवासना के मनमोदकों की तरह था जिनका स्वाद सौ फ़ीसदी नहीं तो निन्यानबे फ़ीसदी मर्दों के मन तो ज़रूर ही चुपचाप चखा करते हैं।

बहुत कम उम्र, करीब नौ या साढ़े नौ वर्ष की उम्र में ही विषय-भोग क्या होता है, जान लेने से कोल्या प्रेम अथवा संभोग के उस अन्त की महत्ता नहीं जानता था, जो ठण्डे दिल से या वैज्ञानिक दृष्टि से देखने पर बड़ा भयकर लगता है। दुर्भाग्य से उस ज़माने में वे विद्वान स्त्रियाँ कोल्या के आस-पास नहीं थीं, जो अपने बच्चों को यह कहकर कि छोटा भैया खेत में पड़ा मिला, धोखे में नहीं डालतीं, बल्कि स्नेह से समझाकर विषय-सम्बन्धी सच्चा ज्ञान देती हैं।

उस ज़माने के शिक्षालयों में विद्यार्थियों को बड़ी सख़्ती से शिक्षा दी जाती थी। विद्यार्थियों की दिमाग़ी और नैतिक शिक्षा ऐसे शिक्षकों को सुपुर्द की जाती थी, जो नियमों का पुलिसवालों की तरह सख़्ती से पालन कराते थे और बड़े बेसब्र, उतावले, लालची और बूढ़ी नौकरानियों की तरह चिड़चिड़े और क्रोधी होते थे। अब ऐसा नहीं होता, मगर उस समय छोकरों की शिक्षा डण्डे के ज़ोर से होती थी। छोटे लड़के, जिनके दूध के दाँत भी नहीं गिर पाते थे, घर के स्नेनहपूर्ण और सुन्दर वातावरण से हटाकर, इन कठिन शिक्षालयों में रख दिये जाते थे, जहाँ स्नेह का प्रदर्शन 'छोकरापन' कहा जाता था; मगर स्नेह के वातावरण के लिए—चुम्बन, आलिङ्गन और प्रेम की बातें छिप-छिपकर करने के लिए—सभी लालायित रहते थे।

समझदारी और स्नेह के व्यवहार से, स्नान और खुली हवा में व्यायाम करने से—ज़बरदस्ती की क़वायद और वरज़िशों से नहीं, बल्कि अपनी इच्छानुसार जिसको जो व्यायाम पसन्द हो उससे—उम्र के इस तकाज़े की कठोरता कम की जा सकती थी और ठीक मार्ग पर लगाई जा सकती थी, मगर उस समय के शिक्षालयों में इस बात का कोई ख़्याल नहीं रखा जाता था।*

* हमारे देश के शिक्षालयों में तो आज भी इसका ख़याल नहीं रखा जाता।

मा-बाप और बहिनों के स्नेह की भूख, जो शिक्षालयों में एकाएक चले आने से अतृप्त रह जाती थी, अस्वाभाविक बनकर सुन्दर छोकरों के प्रेम में जो 'परियाँ' कहलाते थे—और एक दूसरे को अँधेरे कोनों में आलिङ्गन करने, हाथ में हाथ डालकर घूमने और स्त्रियों से अपने प्रेम की कल्पित कहानियाँ कहने में परिणत होने लगती थी। ऐसा ही छोकरियों के शिक्षालयों में भी होता था। ऐसा करने में उन्हें बाल्यकालीन कहानी-प्रेम का और उनमें इस उम्र में जाग्रत होनेवाली विषय-वासना का, दोनो ही का, आनन्द आता था। अक्सर पन्द्रह वर्ष का कोई छोकरा जिसको खेल-कूद और खाने-पीने से ही अधिक प्रेम होना चाहिए था, किसी सस्ते उपन्यास को पढ़कर अपने दोस्तों को चुपचाप एक अमीर और सुन्दर नौजवान विधवा से गुप्त प्रेम की कहानी सुनाता हुआ कहता था—'हर शनिवार को छुट्टी होते ही मैं चुपचाप उसके घर चला जाता हूँ। वहाँ मेरी ख़ूब खातिर होती है। हम दोनों के पलँग के पास की मेज़ पर फलों और मिठाइयों से भरी तश्तरियाँ और क़ीमती शराब की बोतलें रखी रहती हैं और हम दोनों ख़ूब एक दूसरे को प्यार करते है।

इन शिक्षालयों में विद्यार्थी तरह-तरह की पुस्तकें जी भरकर पढ़ते हैं और इन किताबोंके पढ़ने का उन पर बिल्कुल वैसा ही असर होता है, जैसा कि किसी पर अधिक शराब पीने का होता है। कितनी ही देख-भाल और सख़्ती क्यों न की जाय, परन्तु विद्यार्थी उन्हीं किताबों को पढ़ते हैं जिनके पढ़ने का उन्हें निषेध किया जाता है। निषेध से उन्हें रोकना न तो आज तक सम्भव ही हो सकता है और न आगे ही कभी सम्भव होगा; क्योंकि निषेध करने से विद्यार्थियों के मन में निषिद्ध वस्तु के प्रति जिज्ञासा और बढ़ती है। शिक्षालयों के और छोटे-छोटे दर्जों में भी सस्ते, लैला-मजनू किस्म के उपन्यास ख़ूब हाथों-हाथ बटा करते और पढ़े जाते हैं।*

मगर चाहे यह आश्चर्य की बात अथवा विचित्र विरोधाभास ही क्यों न लगे, परन्तु सच तो यह है कि इन उपन्यासों के पढ़ने या नग्न चित्र देखने से ही काम-जिज्ञासा बालकोंमें उत्पन्न नहीं हो जाती। ऐसे उपन्यासों और चित्रों में तो छोकरों

---

* आशा है कि पाठक शिक्षा के आधुनिक सिद्धान्तों से परिचित हैं, नहीं तो उन्हें इस विषय से अवश्य परिचय प्राप्त करना चाहिए, क्योंकि बाल-बच्चों को उत्पन्न करके भी इस विषय को न समझना वैसा ही है, जैसा कि बाग लगाकर पेड़ों की ज़रूरतों से अनभिज्ञ रहना।

का रस इसी से होता है कि उनको वर्जित किया जाता है। सैनिक शिक्षालय के पुस्तकाल में तमाम सर्वश्रेष्ठ रूसी लेखकों के उपन्यास भी थे। और इनमें से किसी लेखक की रचनाओं का कोल्पा के जीवन पर प्रभाव पड़ा तो वह तुर्गनेव था जो कि रूस का एक महान लेखक माना जाता है। महान तुर्गनेव की रचनाओं में हर स्थान पर प्रेम को एक घूँघट में छिपाकर रखा जाता है, जिससे जिज्ञासा और बढ़ती है जैसी कि घूँघट से चेहरा छिपाकर चलनेवाली स्त्री का चेहरा देखने को तबियत होती है। उसकी रचनाओं में कुमारियाँ कामदेव के आगमन का आभास पाते ही उत्तेजित होने, शर्माने, काँपने और लाल होने लगती हैं; विवाहित स्त्रियाँ अपने कर्तव्य, धर्म और मान मर्यादा का विचार करने लगती हैं और रो-रोकर गिरती हैं अथवा बहादुरी से कामदेव के बाण सहती हुई उससे युद्ध करती हैं, अथवा अक्सर क्रूर भाग्य के झोंके आकर उनकी जीवनलीला ही ऐसे क्षण पर खत्म कर देते हैं जब कि फल पककर हवा के एक ज़रा से झोंके से ही नीचे गिर पड़ने के लिए तैयार होता है। और इन सबके होते हुए भी तुर्गनेव के पात्र हमेशा अनुचित प्रेम के प्यासे रहते हैं, उसके लिए रोते और विलाप करते हैं, पाकर ख़ुश होते हैं और उसमें पड़कर दुनिया से विरक्त हो जाते हैं। बालकों के विचार करने का ढंग हम बाउम्र लोगों के विचार करने के ढंग से भिन्न होता है। हर चीज़, जो हम उनके लिए वर्जित करते उनसे छिपाते अथवा खोलकर कहने से डरते हैं उनके लिए वे दुगनी बल्कि तिगुनी जिज्ञासा का पात्र हो जाते हैं। अतएव वे ऐसी पुस्तकों को पढ़कर यही नतीजा निकालते हैं कि बाउम्र लोग उनसे कुछ बातें छिपाते हैं।

एक और बात का ज़िक्र कर देना ज़रूरी है। कोल्या ने एक बार बचपन में जैसा कि उसकी उम्र के छोकरों को अक्सर मौका होता है, अपनी घर की नौकरानी फ़रोसिया को, जिसके गाल गुलाबी और चिकने, चेहरा हमेशा ख़ुश और टाँगे लोहे की तरह सख़्त थीं, जिसकी पीठ पर हँसी-हँसी में उसने एक दिन थप्पड़ भी लगाया था, अपने बाप के कमरे से, जब वह अपने बाप से मिलने के लिए अचानक उसके कमरे में घुस गया था, अपने कपड़े ठीक करते हुए भागते देखा था और उसने यह भी देखा था कि बाप का चेहरा शर्म से लाल हो गया था और नाक नीली और लम्बी हो गई थी। कोल्या के मन में, उस समय विचार हुआ था, 'अरे पिताजी कैसे मुर्गे की तरह लग रहे हैं!' और एक बार कोल्या ने पिता की खुली रह जानेवाली मेज़

की एक दराज़ में से निकालकर चित्रों का एक ऐसा संग्रह भी देखा था जिन्हें बेचनेवाले 'असली कोकशास्त्र' और कमजोर दुनियादार 'स्वर्गीय आनन्द' के चित्र कहते हैं।

और उसने अपनी मा को भी पाल ऐडवार्डोविश के साथ जो किसी दूतावास में अफ़सर था और ख़ूब सज-धजकर और इत्र लगाकर आया करता था, गाड़ी में बैठकर सैण्टपीटर्सबर्ग के अमीरों के रिवाज के अनुसार, हवा खाने के लिए और नदी के किनारे बैठकर सूर्यास्त देखते देखा था। उसने ऐसे मौक़ों पर अपनी मा के चेहरे को विशेष आनन्द से दमकते, उसकी छाती फूलते और विचित्र व्यवहार करते देखा था। उसने यह भी देखा था कि उसकी मा घरवालों और नौकरों से ग़ुस्से में ज़ोर से बोलती होती थी तो भी पाल ऐडवार्डोविश के आते ही उसकी आवाज़ एकदम काँपकर धीमी और मख़मल की तरह कोमल और मधुर हो जाती थी और वह धूप में एक घास से हरे-भरे मैदान की तरह चमक उठती थी। काश कि वे लोग जो काफी दुनिया देख चुके हैं, यह भी जानते होते कि उनके छोटे-छोटे बच्चे, उनकी नन्हीं-नन्हीं बच्चियाँ जिनके बारे में वे कहते हैं, 'अरे, वोद्या, पीटो अथवा किटी की चिन्ता न करो.. वह बहुत छोटी है...कुछ नहीं समझती!·· काश कि वे यह जानते कि ये छोटे-छोटे बालक कितनी अधिक बातें समझते हैं!···लगभग सभी कुछ समझते हैं!'

इसी तरह ग्लेडीशेव के बड़े भाई के इतिहास का असर भी ग्लेडीशेव पर हुआ था। कोल्या का बड़ा भाई सैनिक शिक्षालय से शिक्षा पाकर एक तोपखाने के दस्ते में शरीक हो चुका था। छुट्टी पर घर रहने के लिए वह आया हुआ था और उसके रहने के लिए दो कमरे अलग दे दिये गये थे। इस समय नियूशा नाम की एक नौकरानी इस घर में काम करती थी जो काले-काले बालों की ऐसी सुन्दर और आकर्षक छोकरी थी कि उसके कपड़े बदल दिये जाते तो वह बड़ी आसानी से किसी नाटक की सुनकरऐक्ट्रेस अथवा किसी राजकुल की शाहज़ादी, अथवा कोई राजनैतिक कार्यकर्ता लग सकती थी। इस छोकरी को इस घर में हँसी में श्रीमती अनीता के नाम से भी पुकारा जाता था। हँसी-हँसी में ही कोल्या का बड़ा भाई इस छोकरी को प्रेम करने लगा। कोल्या की मा ने इस बात से आँख फिराई। उसने अपने मन में सोचा कि 'मेरा बोरेन्का वेश्याओं अथवा गली-कूचों में फिरनेवाली स्त्रियों के पास जाय उससे

तो यही अच्छा है कि वह अपना भोलापन और पवित्र शरीर इस मासूम लड़की पर न्योछावर करे।' उसके मन में अपने पुत्र के हित का ही विचार था। कोल्या इन दिनों प्रेम के उपन्यास ख़ूब पढ़ा करता था, अतएव उसने अपने भाई के व्यवहार के जो उसकी समझ में आये, मतलब निकाले जो कि कभी सच और कभी कल्पित होते थे ; मगर छः मास के बाद उसने द्वार के पीछे से जो दृश्य देखा, उसका ज़िन्दगी भर भूलना उसे मुश्किल था। उसकी मा जो हमेशा शरीफ़ और गम्भीर बर्ताव किया करती थी, अपने कमरे में अनीता को चिल्ला-चिल्लाकर बुरी से बुरी गालियाँ सुना रही थी। अनीता को गर्भ का पाचवाँ महीना था। अगर अनीता रोई और चिल्लाई न होती तो वे लोग उसको कुछ रुपया दे-दिलाकर चुपचाप वहाँ से विदा कर देते, परन्तु वह कोल्या के भाई को दिल से प्रेम करने लगी थी। रुपया नहीं चाहती थी और रोती थी। अतएव वे उसे पुलिस की मदद से घर से निकाल रहे थे।

पाँचवें या छठे दर्जे में ही कोल्या के बहुत से साथियों ने इस विषय का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। छोकरों के दलों में यह बात खास तौर पर मर्दानगी की समझी जाती थी कि गुप्त बाज़ारू वस्तुओं को खुले नामों से पुकारा जाय। कोल्या के एक साथी विद्यार्थी को इसी समय एक गुप्त रोग भी हो गया जो ख़तरनाक तो नहीं था, मगर फिर भी गन्दा रोग था। इस बहादुरी के लिए यह छोकरा तमाम दूसरे छोकरों की पूजा का तीन मास तक पात्र बना रहा। बहुत-से छोकरे चकलों में भी जाते थे और उनकी इन हवाख़ोरियों का ज़िक्र उसी उत्साह के साथ तमाम लड़कों में किया जाता था जिस तरह वीरों की बहादुरी की कहानियाँ कही जाती हैं। सच तो यह है कि ऐसे छोकरों को उच्चतम वीर ही समझा जाता था।

अतएव एक बार ऐसा हुआ कि यह छोकरे ग्लेडीशेव को भी अन्ना के चकले में ले गये। वे क्या ले गये, वह ख़ुद ही खुशामद करके उनके साथ गया। बहुत दिनों से उसकी वहाँ जाने की इच्छा हो रही थी जिसे वह दबा न सका। बाद में इस शाम को वह हमेशा घृणा, आत्मग्लानि और एक धुँधले, परेशान करनेवाले स्वप्न की तरह याद किया करता था। कैसे गाड़ी में बैठने से पहले उसने अपनी हिम्मत बढ़ाने के लिए शराब पी, जिसमें से खटमलों की-सी बदबू आती थी ; कैसा फिर उसका जी मिचलाने लगा, कैसे वह चकले की बैठक में घुसा तो उसको क़न्दील और दीवारें घूमती हुई-सी लगीं, कैसे वह रङ्ग-विरङ्गी पोशाकों में सफ़ेद-सफ़ेद हाथों और गर्दनों

को देखकर चौंधिया-सा गया इत्यादि, अब उसे याद आना भी मुश्किल हो गया था। उसके किसी साथी ने एक छोकरी के कान में झुककर कुछ कहा और वह दौड़ती हुई उसके पास आई और कहने लगी :

'देखो मेरे सुन्दर नौजवान, तुम्हारे साथी कहते हैं कि तुम अभी तक बिल्कुल मासूम हो···आओ मेरे साथ···मैं तुम्हें सब सिखा दूँगी।'

उसने यह बात मिहरबानी से कोल्या से कही थी, मगर अन्ना के घर की दीवारों ने यह बात कई सौ बार सुनी थी। ख़ैर, फिर जो कुछ हुआ उसकी याद करना कोल्या को इतना दुःखद हो जाता था कि वह सोचते-सोचते, बीच में ही प्रयत्न करके अपना दिमाग़ दूसरी तरफ़ फिरा देता था। उसे केवल लैम्प से निकल-निकलकर आँखों के आगे आनेवाले चक्करों, लगातार चुम्बनों, परेशान कर देनेवाले आलिङ्गनों—उसके बाद एक अचानक तेज़ दर्द की जिससे भय और आनन्द, दोनों से, चीख़ पड़ने को जी चाहता है और फिर अपने काँपते हुए हाथों को जिनसे कपड़ों का बटन लगाना भी मुश्किल हो गया था, एक धुँधली धुँधली-सी याद आती थी।

प्रथम बार यह दर्द सभी मनुष्यों को दुःखी करता है, परन्तु यह नैतिक दर्द भी जिसका जीवन पर बड़ा गहरा और गम्भीर प्रभाव होता है, शीघ्र ही ख़त्म हो जाता है और इसका प्रभाव अधिकतर आदमियों पर इतना ही रहता है कि कभी-कभी तमाम जि़न्दगी···उनके हृदय में ख़ास मौकों पर यह एक खटक करके चुप हो जाया करता है। शीघ्र ही कोल्या भी इसका आदमी हो गया। उसकी हिम्मत बढ़ी; स्त्रियों से परिचय बढ़ा और इस बात से ख़ुशी होने लगी कि जब वह अन्ना के चकले में दाख़िल होता था तो तमाम छोकरियाँ और सबसे पहले बेरका चिल्लाकर जेनेका से कहती थी :

'जैनका, तुम्हारा प्रेमी आ गया!'

कोल्या को अपनी, अभी तक अच्छी तरह न निकलनेवाली, मूँछों पर ताव देते हुए, अपने मित्रों को यह बात सुनाते हुए बड़ा अच्छा लगता था।

तैंतीसवाँ अध्याय

अभी शाम ही थी। करीब नौ बजे होंगे। अगस्त का महीना था। पानी बरस रहा था। अन्ना की रोशनी से चमचमाती हुई बैठक करीब ख़ाली-सी थी, सिर्फ़ दरवाज़े

के पास तारघर का एक क्लर्क, अपनी टाँगें शर्म से भोंडी तरह कुर्सी के नीचे किये हुए, बैठा मोटी किटी से उस प्रकार की दुनियाबी और अनियमित बातचीत शुरू करने का प्रयत्न कर रहा था, जो नम्र समाज में नृत्य के अवसरों पर करना उचित समझी जाती है। लम्बी-लम्बी टाँगोंवाला रोलीपोली कमरे में घूमता हुआ कभी इस छोकरी के पास कभी उस छोकरी के पास बैठ-बैठकर उन्हें अपनी लगातार बकबास से खुश करने का प्रयत्न कर रहा था। कोल्या ग्लेडीशेव के बैठक में घुसते ही सबसे पहले उसे गोल-गोल आँखोंवाली वेरका ने देखा, जो सदा की भाँति अपनी घुड़सवार की पोशाक पहिले थी। उसे देखते ही वह तालियाँ बजा-बजाकर नाचने और चिल्लाने लगी :

'जैनेच्का, जैनेच्का, जल्दी आओ, तुम्हारा छोटा-सा बालम आ पहुँचा...छोटा-सा सिपाही आ गया···कैसा बाँका छोटा जवान है!'

मगर जेनेका इस समय बैठक में नहीं थी। एक तगड़ा रेलवे का गार्ड उसे ले गया था।

यह काफी उम्र का, गम्भीर, शानदार दीखनेवाला रेलवे का गार्ड, जो रेल की बत्तियाँ चुरा-चुराकर बेचा करता था, और बेटिकट मुसाफिरों को रिश्वत लेकर सस्ता सफर कराया करता था, बड़े सुभीते का मेहमान था, क्योंकि वह कभी बीस मिनट से अधिक इस घर में नहीं ठहरता था। उसे अपनी ट्रेन छूट जाने का डर लगा रहता था, जिससे वह जितनी देर भी यहाँ रहता, बराबर अपनी घड़ी देखता रहता था। इस बीच में वह हमेशा चार बोतलें बीयर शराब की पीता था और चलते वक्त छोकरी को आठ आना मिठाई खाने के लिए और सिमियन को चार आना शराब पीने के लिए देकर जाता था।

कोल्या ग्लेडीशेव अकेला नहीं आया था। उसके साथ उसी के स्कूल का एक साथी पेट्रोव नाम का विद्यार्थी भी था जो कि आज पहली ही बार चकले की सीढ़ी पर चढ़ रहा था। ग्लेडीशेव के बार-बार प्रलोभन देने पर वह उसके साथ चला आया था। शायद इस समय उसकी भी वही हालत हो रही थी जो पहली बार चकले में आने पर, डेढ़ वर्ष पहले ग्लेडीशेव की हुई थी जब कि उसके पैर काँप उठे थे, मुँह सूख गया था और कमरे के क़न्दील चक्करों में उसकी आँखों के आगे घूम उठे थे।

सिमियन ने उन दोनों के ओवरकोट उनके कन्धों से उतारकर इस तरह सँभालकर खूँटी पर टाँग दिये थे कि जिससे उनके फ़ौजी बटन और तमगे दिखाई न पड़ सकें।

गम्भीर मुख सिमियन को जिस तरह कालिजों और स्कूलों के छोकरों का चकले में आना पसन्द नहीं था; क्योंकि वे बड़ी-बड़ी और ऊटपटाँग बातें करते थे, उसी तरह उसको इन सैनिक शिक्षालय के विद्यार्थियों का यहाँ आना भी पसन्द नहीं था।

'ऐसे लोगों के आने से कोई फ़ायदा नहीं है' वह अपने हमपेशा दर्बानों से कभी-कभी गम्भीरता-पूर्वक कहता, 'कहीं इन लोगों की यहाँ अपने अफ़सरों से मुठभेड़ हो गई तो हमारा चकला भी बन्द कर दिया जायगा! याद है न तोन वर्ष पहले लुपेनडिखा का चकला इसी तरह बन्द कर दिया गया था! हाँ, यह ज़रूर सच है कि उसके बन्द करने पर भी उसका चकला वास्तव में बन्द नहीं हो सका; क्योंकि उसने फ़ौरन ही एक दूसरे नाम से नया चकला खोल दिया, मगर फिर जब उस पर मुक़-दमा चला और उसे डेढ़ साल की सज़ा हुई तब तो उसका दिवाला ही पिट गया—अकेले बरकेश को उसे चार सौ रुपये देने पड़े थे! कभी-कभी यह भी होता है कि यह सूअर बीमारी के शिकार हो जाते हैं और घर पर जाकर फिर जब, 'हाय बाबा रे मरा! हाय अम्मा, मरा!' चिल्लाते हैं तो इनसे पूछा जाता है, 'बदमाश! बता तूने यह बीमारी कहाँ से पाई?' और फिर जब यह कह देते हैं 'वहाँ से…वहाँ से' तो फ़ौरन ही हम लोगों की धर-पकड़ शुरू हो जाती है और हमें मुसीबतों का सामना करना पड़ता है। बताओ भाई, तुम्हीं कहो, ऐसी हालत में इन लोगों का यहाँ आना बुरा है न?'

'चलिए, अन्दर चलिए' उसने सख़्ती से कोल्या और उसके साथी से कोट लेकर कहा।

दोनों विद्यार्थी रोशनी की चमक से आँखें चिमचिमाते हुए, कमरे में घुसे। पेट्रोव जो अपना दिल कड़ा करने के लिए शराब पी चुका था, कमरे में घुसते ही काँपा और पीला पड़ गया। कमरे में घुसकर वे दोनों एक तस्वीर के नीचे जा बैठे और फ़ौरन ही दो छोकरियाँ—वेरका और टमारा उनके दायें-बायें जा बैठीं।

'बाँके नौजवान, एक सिगरेट तो मुझे पिलाओ!' वेरका ने पेट्रोव से कहा और अपनी मज़बूत और गरम जाँघ उसकी टाँग से इस प्रकार सटाकर रखते हुए मानो इत्तफ़ाक़ से ऐसा हो गया हो, वह कहने लगी, 'तुम कैसे अच्छे लगते हो!'

'जेनी कहाँ है?' ग्लेडीशेव ने टमारा से पूछा, 'किसी और के साथ है?'

टमारा ने उसकी आँखों में घूरकर देखा—इतना घूरकर कि छोकरा सिटपिटा गया और उसकी तरफ़ से मुँह फेर लिया।

'नहीं ; किसी और के साथ क्यों होगी ? केवल उसका सिर दुख रहा है । आज दिन भर उसके सिर में दर्द होता रहा है । वह द्वार के पास खड़ी थी । एकाएक खाला ने द्वार खोला, जिससे किवाड़ उसके सिर में लग गया । अतएव बेचारी आज सबेरे ही से माथे पर भीगा कपड़ा रखे पड़ी है, मगर क्या आप बहुत बेसब्र हो रहे हैं ? अभी पाँच मिनट में वह बाहर आती होगी । घबराइए मत, वही आकर आपको सन्तुष्ट करेगी ।'

वेरका पेट्रोव के पीछे पड़ी हुई थी, 'प्यारे ! मेरे प्यारे ! कैसे तुम भोले-भाले हो ! मुझे तुम्हारे जैसे पीले जवान बड़े पसन्द हैं ! वे ईर्ष्या करते हैं और दिल भर-कर प्यार करते हैं !'

मीठी आवाज़ से धीरे-धीरे अपने 'बाँके, छैला सँवरिया' की तारीफ़ में एक गीत गाकर उसने पूछा, 'प्यारे, तुम्हारा नाम क्या है ?'

'जार्ज' पेट्रोव ने भर्राई हुई सैनिक की मोटी आवाज़ में कहा ।

'जार्जिक ! जोरोच्का ! आहा, कितना अच्छा नाम है !'

एकाएक अपना मुँह उसके कान से लगाकर उसने चतुराई से कहा, 'जोरोच्का, मुझे ले चलो ।'

पेट्रोव शर्मा गया और सिटपिटाता हुआ कहने लगा, 'मैं कुछ नहीं कह सकता··· जैसी मेरे साथी की राय होगी···'

वेरका खिलखिलाकर हँस पड़ी :

'ओहो ! कैसे दुधमुँहे बच्चे हो ! किसी गाँव में होते तो अभी तक कई बच्चों के बाप हो गये होते ! कहते हो जैसी मेरे साथी की राय होगी !' साथी से क्यों, तुम्हें अपनी धाय से पूछकर आना था ! दूध पिलानेवाली धाय से ! देखो तो टमारा प्यारी, मैं इनसे कहती हूँ, 'चलो मेरे साथ सोओ' तो यह कहते हैं, 'साथी से राय ले लूँ' ! 'कहिए जनाब साथी, क्या आप ही इनका लालन-पालन करते हैं ?'

'बहुत बकबास मत कर शैतान !' पेट्रोव ने झुँझलाकर मोटी आवाज़ में झग-ड़ालू सैनिक की तरह भोंड़े तौर पर कहा ।

पतला, खूसट रोलीपोली, जिसके बाल अब बहुत पक चुके थे, चलकर छोकरों के पास आया और अपना लम्बा पतला सिर एक तरफ़ को झुकाकर, चेहरे पर दयनीय भाव लाकर गिड़गिड़ाया :

'श्रीमान् सैनिक विद्यार्थियों ! प्रचण्ड विद्वानो ! बुद्धिमानों के सरताजों ! भावी सेनापतियों ! क्या आप एक बूढ़े को अपने सिगरेटों में से एक सिगरेट देना पसन्द नहीं करेंगे ? मैं ग़रीब आदमी हूँ, मगर मुझे यह सिगरेट बड़े पसन्द हैं ।'

और सिगरेट मिलते ही, फौरन वह खुला ; दाहिना पाँव आगे को झुकाकर और कमर पर एक हाथ रखकर उसने अपनी एक तुकबन्दी गानी शुरू कर दी :

'कभी हम भी देते थे दावतें,
चलते जहाँ थे जाम पर जाम ।
अब रोटियों के भी हैं लाले,
ज़िन्दगी हो चुकी नाकाम ।।
झुक-झुककर आदाब बजाते,
जो दरबान मेरे आने पर ।
धक्के देकर बाहर करते,
आज वही गर्दन पकड़ कर ।।'

'भद्र पुरुषो !' एकाएक रोलीपोली ने अपना गाना बन्द करके, अफ़सोस से छाती पीटते हुए कहा, 'मैं अच्छी तरह जानता हूँ, आप इस मुल्क के किसी दिन बड़े सेनापति होंगे ; मगर मैं फ़ौज की ख़ाक छान चुका हूँ । मैं जिस ज़माने में जङ्गलात का रेन्जर बनने के लिए पढ़ता था, उस समय महकमा जङ्गलात भी सेना-विभाग का ही एक अङ्ग था, अतएव मैं आपके दिलों के सुनहरे और जवाहराती द्वारों को खटखटाकर आपसे प्रार्थना करना चाहता हूँ कि आप मुझे थोड़ा-सा वह सोमरस पिलाने के लिए जो कि देवताओं को भी प्रिय है, कुछ चन्दा देने का उपकार करें ।

'रोली ! मोटी किटी कमरे के उस कोने से चिल्लाकर बोली, 'इन सैनिक अफ़सरों को अपनी बिजली की नक्ल करके दिखाओ ; मुफ्त में ही रुपया मत माँगो !'

'अच्छा, अच्छा, अभी लो !' रोलीपोली ने ख़ुशी से उत्तर दिया, 'देखिए, मेरे मालिक ! मैं आपको ज़िन्दा तस्वीरें दिखाता हूँ । जून के महीने में बिजली की चमक कैसे होती है, मैं आपको दिखाता हूँ । यह महा नाटककार उपनाम रोलीपोली की कृति है, जिसकी दुनिया ने क़द्र नहीं की । देखिए, पहली तस्वीर शुरू होती है ।

'जून का महीना है । सूरज तेज़ी से चमक रहा है । घास और फूलों से लदे

चरागाह धूप की रोशनी में दमक रहे हैं…' यह कहकर रोलीपोली ने अपना झुर्राया हुआ, उदास चेहरा हँसी से खिला दिया और आँखें छोटी कर लीं।

'मगर शीघ्र ही आसमान में बादल घिर उठते हैं और एक के ऊपर एक केंकड़ों की तरह चढ़ते हुए वे धीरे-धीरे नीले आकाश में भर जाते हैं...'

यह कहकर धीरे-धीरे रोलीपोली के चेहरे से मुसकान मिटने लगी और वह अधिक गम्भीर और कठोर होने लगा।

'आख़िरकार बादल सूरज को घेर लेते हैं ..और मनहूस अन्धकार छा जाता है...'

यह कहकर रोलीपोली ने अपना चेहरा बिल्कुल और भयङ्कर बना लिया।

'पानी की बूँदें गिरने लगती हैं…'

रोलीपोली ने अपनी उङ्गलियों से कुर्सी पर टप-टप-टप करने लगा।

'…आकाश में बिजली चमकती है .'

रोलीपोलो ने जल्दी-जल्दी आँखें खोली और बन्द कीं और मुँह का बाँया कोना टेढ़ा करके हिलाया।

' एकाएक मूसलाधार पानी बरसने लगता है और बिजली ज़ोर ज़ोर से चौंधियाती है…'

यह कहकर रोलीपोलो ने बड़ी चतुरता से आँखों, नाक, ऊपरी होंठों और निचले होंठों के हाव-भावो से बिजली की टेढ़ीमेढ़ी चालों की बड़ी सुन्दर नक़्लें की।

'…कड़ककर बिजली गिरती है…तड़ड़...धड़ाम् और एक बड़ा पुराना और ऊँचा वृक्ष सोक की तरह नीचे गिर पड़ता है…

यह कहकर रोलीपोली, ऐसी आसानी से जिसकी उसकी उम्र से आशा नहीं की जा सकती थी, पीठ या घुटने बिना झुकाये, सिर्फ़ सिर एक तरफ को लटकाकर, मूर्ति की तरह सीधा, फौरन ज़मीन पर गिरा और फिर चपलता से उछलकर अपने पावों पर खड़ा हो गया।

'मगर फिर तूफ़ान धीरे-धीरे कम होने लगता है। बिजली की चमक और बादलों की गरज कम होने लगती है।...बादल हटने लगते हैं।...और सूर्य्य भगवान् के फिर दर्शन होते हैं...'

रोलीपोली फिर मुसकराने लगा।

'...और धीरे-धीरे फिर सूरज भींगी हुई पृथ्वी पर ज़ोर से चमकने लगता है...'

रोलीपोली के बूढ़े चेहरे पर बेवकूफ़ी की हँसी खिल गई। सैनिक अफ़सरों ने उसे एक एक अठन्नी इनाम में दी। उसने उसे हाथ में लेते ही आकाश की तरफ़ हाथ फेंककर कहा :

'अरे बाप रे, गईं !' और उसके हाथ में से दोनों अठन्नियाँ ग़ायब हो गईं।

'टमारेच्का, बड़ी बेईमान हो तुम ?' उसने झिड़ककर कहा, 'एक बूढ़े पेन्शन याफ़्ता का, जो एक बड़ा अफ़सर होते होते रह गया, आखिरी पैसा उससे झटकते हुए तुम्हें शर्म भी नहीं आती ? यह तुमने यहाँ मेरे पैसे छीनकर क्यों छिपाये हैं ?'

यह कहकर उसने उङ्गलियाँ चटखाईं और टमारा के कान में से दोनों अठन्नियाँ निकाल लीं।

'मैं अभी लौटकर आता हूँ, मेरे बिना परेशान मत होइए' उसने दोनों सैनिक जवानों से कहा, 'परन्तु आपको जाने की जल्दी हो और आप मेरा इन्तज़ार न करें तो मैं बुरा न मानूँगा। अच्छा, धन्यवाद...'

'रोलीपोली !' नन्हीं मनका ने चिल्लाकर उससे कहा, मेरे लिए बाज़ार से मिठाई लेते आना...यह तो . !'

रोलीपोली ने घूमकर मनका के फेंके हुए दामों को बड़ी सफ़ाई से गपक लिया, और बनावटी अदब से झुककर उसे सलाम करके अपनी हरी किनारी की टोपी को टेढ़ी करके लगाते हुए, चल दिया।

लम्बी हैन्रीटा सैनिकों के पास गई और उनसे एक सिगरेट माँगकर अँगड़ाती हुई कहने लगी :

'आप लोग थोड़ा नाच क्यों नहीं कराते ! बैठे-बैठे हम लोगों के तो शरीर दुखने लगते हैं।'

'अच्छा नाचो !' कोल्या ने उसकी बात मानते हुए कहा, 'बजना शुरू करो।' उस्तादों ने साज बजाना शुरू कर दिया और छोकरियाँ दो-दो के जोड़ों में रिवाज के मुताबिक पीठ सीधी करके और शर्म से आँखें झुकाकर थिरकने लगीं।

कोल्या को नाच का बड़ा शौक़ था। उससे बैठा न रहा गया। अतएव उसने टमारा को अपने साथ नाचने के लिए बुलाया। पिछले जाड़ों से वह जानता था कि टमारा दूसरों से अच्छी नाचती है। कोल्या जब नाचने में ही लगा था, तभी रेलवे

का तगड़ा गार्ड होशियारी से उन लोगों के बीच से होकर निकलकर चला गया। कोल्या ने उसे जाते नहीं देख पाया।

वेरका के बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी वह पेट्रोव को अपनी जगह से बिल्कुल टस से मस न कर सकी। शराब का हल्का नशा उसके दिमाग़ से निकल चुका था जिससे उसे वह कार्य, जिसके लिए वह यहाँ आया था, क्षण-क्षण अधिक मुश्किल और भयङ्कर लगने लगा था। वह सोच रहा था कि सिरदर्द का बहाना करके अथवा 'कोई पसन्द नहीं आई' कहकर यहाँ से रास्ते नापे। मगर वह जानता था कि कोल्या उसे वहाँ से यों जाने नहीं देगा। साथ ही उसे अपनी जगह से उठकर कुछ क़दम चलना भी कठिन लग रहा था। कोल्या से इस विषय पर कुछ कहने की उसमें शक्ति नहीं थी।

नाच खतम हो जाने पर, टमारा और कोल्या, फिर आकर उसके पास बैठ गये।

'अरे, मगर जैनेच्का अभी तक नहीं आई?' कोल्या ने बेसब्री से पूछा।

टमारा ने वेरका पर एक ऐसी नज़र डाली, जिसका मतलब न जाननेवालों की समझ में नहीं आ सकता था। वेरका ने फ़ौरन आँखें नीची कर लीं। इसका अर्थ था—हाँ, वह चला गया।

'मैं अभी जाकर जैनेच्का को बुलाये लाती हूँ' टमारा ने कहा।

'मगर तुम अपनी जैनेच्का पर ही इतने लट्टू क्यों हो?' हैन्रीटा ने कहा, 'मेरे साथ क्यों नहीं चलते!'

'अच्छा, दूसरी बार तुम्हीं को ले जाऊंगा।' कोल्या ने उत्तर में कहा और जल्दी-जल्दी सिगरेट पीने लगा।

× × ×

जैनेका ने अभी अपने कपड़े पहिनने भी शुरू नहीं किये थे। आईने के सामने बैठी वह अपने चेहरे पर पाउडर लगा रही थी।

'क्या है टमोरच्का?' उसने पूछा।

'तुम्हारा प्रेमी सैनिक-अफ़सर आया है। बैठा तुम्हारा इन्तज़ार कर रहा है।'

'ओह! वही पारसाल जो बच्चा आता था! भाड़ में जाय...'

'हाँ, हाँ, वही। मगर वह अब लम्बा, तगड़ा और बड़ा सुन्दर जवान हो गया है...देखकर तबीयत खुश होती है! अच्छा तुम उसके साथ नहीं चाहती हो तो मैं चली जाऊँगी।'

टमारा ने आईने में देखा कि यह सुनकर जैनका की भौंहें चढ़ गईं। वह बोली:

'नहीं, ज़रा ठहर जाओ, टमारा। तुम्हारे जाने की ज़रूरत नहीं है। मैं ही उससे मिल लेती हूँ। मेरे पास भेज दो। उससे कह देना कि मेरी तबियत ठीक नहीं है, सिर दुखता है।'

'मैं उससे कह चुकी हूँ कि खाला ने ऐसा द्वार खोला कि तुम्हारे सिर पर किवाड़ लगा जिससे तुम्हारे सिर में चोट आ गई और तुम ठण्डे पानी की पट्टी बांधे पड़ी हो। मगर जैनेच्का, क्या इस सबकी ज़रूरत है?'

'इसकी ज़रूरत है या नहीं, यह तय करना मेरा काम है टमारा, तुम्हारा काम नहीं है,' जैनेका ने गुस्ताख़ी से कहा।

टमारा ने सँभलकर पूछा, 'तो क्या तुम्हें कोई अफ़सोस नहीं है?'

'मगर तुम्हें तो मेरे लिए कोई अफ़सोस नहीं है?' यह कहकर उसने अपने चोट के निशान को, जो गर्दन तक जाता था, छुआ और फिर बोली, 'और न तुम्हें अपने ऊपर कोई अफ़सोस है? न पाशा के लिए तुम्हें अफ़सोस है? तुम मानव-प्राणी थोड़े ही हो, मांस का एक लोथड़ा हो।'

टमारा अभिमानपूर्ण चतुरता से मुसकराई और बोली, 'नहीं' मैं मांस का लोथड़ा ही नहीं हूँ! मेरे भी दिल है। वक्त आने पर तुम्हें मालूम हो जायगा, जैनेच्का! शायद शीघ्र हो! ख़ैर, लड़ो मत—वैसे ही हम लोगों की ज़िन्दगी कौन सुख की है! अच्छा, मैं जाकर अभी उसे तुम्हारे पास भेज देती हूँ।'

उसके चले जाने पर जैनेका ने उठकर नीले क़न्दील की रोशनी कम कर दी और रात की पोशाक पहिनकर पलँग पर लेट गई। एक मिनट के बाद ग्लेडीशेव कमरे में घुसा। उसके पीछे-पीछे टमारा पेट्रोव को हाथ पकड़कर घसीटे ला रही थी और वह सिर झुकाये हुए इनकार कर रहा था। सबके आख़िर में जोसिया का गुलाबी, तेज़ लोमड़ी का-सा चेहरा, जिसकी आँखें ऐंचाताना थीं, दीख रहा था।

'हाँ, अब ठीक है' वह नखरे दिखाती हुई बोली, 'दो सुन्दर जवान और दो परियाँ। अब ठीक दीखता है! पूरा गुलदस्ता बन गया! कहिए, किस चीज़ से आप लोगों की अब ख़ातिर करूँ? बीयर या और कोई शराब लाऊँ?'

ग्लेडीशेव की जेब में आज इतना रुपया था जितना आज तक कभी उसकी जेब में एकदम नहीं आया था। उसकी जेब में इस वक्त नक़द पच्चीस रुपये थे और वे

ख़र्च होने के लिए खुलखुला रहे थे। बीयर वह केवल अपने आपको बहादुर साबित करने के लिए पी लिया करता था। वरना उसका स्वाद उसे बिल्कुल ही पसन्द नहीं था और उसे इस बात पर मन-ही-मन आश्चर्य भी होता था कि दूसरे लोग उसे कैसे पीना पसन्द करते हैं। अतएव उसने एक बड़े शौक़ीन ऐयाश की तरह होंठ लटकाकर, अविश्वास से कहा, 'मगर तुम्हारे यहाँ तो रद्दी शराबें होंगी ?'

'खूब कहा आपने, खूब कहा मेरे नौजवान आपने ! हमारे यहाँ आपको अच्छी-से-अच्छी शराबें मिल सकती हैं। के हार्स[1] टेनेरिफ[2] और फ्रान्सीसी लाफीट[3] और पोर्ट वाइन[4] जो चाहे सो आपको मिल सकती हैं, मगर छोकरियों को लाफीट और लेमोनेड बहुत पसन्द है।'

'और क़ीमतें क्या हैं ?'

'बहुत मामूली। तमाम चकलों में एक ही भाव है—लाफीट की एक बोतल पाँच रुपये को और चार बोतलें लेमोनेड की दो रुपये को यानी कुल मिलाकर सात रुपये...'

'बस, बस, जोसिया' जेनेका ने उसे लापरवाही से रोकते हुए कहा, 'इन छोकरों से इस तरह फ़ायदा करते तुम्हें शर्म भी नहीं आती ? पाँच रुपये काफ़ी हैं ! देखती नहीं हो ये कौन लोग हैं। ऐसे-वैसे नहीं हैं !'

मगर ग्लेडीशेव का चेहरा शर्म से लाल हो गया। लापरवाही से दस रुपये का नोट फेंककर वह बोला : 'ख़ैर जाने भी दो कुछ हर्ज नहीं। अच्छा ले आओ।'

'लाइए आपके यहाँ आने की फ़ीस भी मैं लेती जाऊँ। रात भर आप रहेंगे या कुछ वक्त तक ? आपको फीस मालूम ही है—रात भर की पाँच रुपया और कुछ वक्त की दो रुपया।'

'अच्छा, अच्छा, कुछ वक्त हो ठहरेंगे' जेनेका ने गुस्से में भरकर कहा। कम-से-कम इतना विश्वास तो आप हम पर भी कर सकती थीं कि हम उसका रुपया ले लेंगे।'

शराब लाई गई। टमारा ने लालच से मिठाई भी मँगा ली थी। जेनेका ने नन्हीं मनका को भी दावत में शरीक होने के लिए बुलाने की इजाज़त मांगी। जेनेका ने ख़ुद शराब नहीं पी। न वह बिस्तर से उठी। वह शरीर शाल में लपेटे पड़ी रही,

---

१, २, ३, ४ शराबों के नाम।

गोकि कमरे के अन्दर काफ़ी गरमी थी। वह ग्लेडीशेव के सुन्दर चेहरे को, जिस पर अब इतनी मर्दानगी आ गई थी, घूरती रही।

'क्या हुआ है तुम्हें, मेरी प्यारी ?' ग्लेडीशेव ने उसके बिस्तर पर बैठकर उसका हाथ थपथपाते हुए पूछा।

'कुछ नहीं, चोट लग गई···सिर दुखता है···'

'उसकी तरफ से ध्यान हटाने की कोशिश करो।'

'प्यारे, तुम्हारे आते ही मेरी तबियत अच्छी होने लगी है। इतने दिन तक तुम कहाँ रहे ? क्यों नहीं आये ?'

'कैम्पों से ही छुट्टी नहीं मिलती थी—वक्त नहीं मिल सका। पच्चीस मील रोज़ पैदल तय करना होता था। दिन भर क़वायद करते-करते और चलते-चलते इतना थक जाते थे कि शाम को ऐसा लगता था कि शरीर में पाँव ही नहीं रहे हैं··· नक्ली लड़ाइयाँ भी लड़नी होती थीं···कठिन ज़िन्दगी थी...'

'हाय ! हाय !' नन्हीं मनका ने एकाएक ताली पीटकर कहा, 'तुम जैसे परीजादों को इतना तङ्ग क्यों किया जाता है ? मेरे तुम जैसा भाई या लड़का होता तो मैं ऐसा कभी भी बर्दाश्त न करती ! लीजिए आपके सम्मान में मैं यह शराब पीती हूँ !'

उसने उनके गिलास से अपना शराब का गिलास टकराकर शराब पी ली। जेनेका ध्यान-पूर्वक ग्लेडीशेव के चेहरे को घूरती रही।

'और तुम, जैनेच्का ?' ग्लेडीशेव ने एक गिलास उसकी तरफ़ बढ़ाते हुए कहा।

'मैं नहीं पीना चाहती' उसने सुस्ती से उत्तर दिया, 'मगर श्रीमतियो, आप अब शराब पी चुकीं और गपशप भी कर चुकीं—अब इतना यहाँ न रुको कि मेहमान आपसे थकने लगें।,

'तुम आज मेरे साथ रात-भर रहोगे न ?' उसने दूसरों के चले जाने पर ग्लेडीशेव से पूछा, 'रुपये की चिन्ता मत करना, मेरे प्यारे। तुम्हारे पास काफ़ी रुपया न हो तो मैं दूँगी। देखो, तुम कितने सुन्दर हो कि छिनालें तुम पर उल्टा रुपया ख़र्च करतीं हैं।' यह कहकर वह हँसने लगी।

ग्लेडीशेव ने उसको घूरकर देखा। उसको जेनेका की आवाज़ कुछ विचित्र-सी लगी—न तो वह उदास थी, न कोमल और न तिरस्कार-पूर्ण।

'नहीं मेरी प्यारी, ऐसा न हो सकेगा। मेरी खुद तुम्हारे साथ रातभर ठहरने की

बड़ी इच्छा है। मैं खुद रहना चाहता हूँ! मगर ठहर न सकूँगा। दस बजे तक घर पहुँच जाने का मैं वादा करके आया हूँ।'

'इन्तज़ार करेंगे तो क्या हुआ! अब तुम बालक थोड़े ही रहे हो! तुम्हें किसी को जवाब थोड़े ही देना है कि कहाँ रहे?...मगर ख़ैर, जैसी तुम्हारी इच्छा। क्या मैं रोशनी बिल्कुल बुझा दूँ या जैसी है, वैसी ही ठीक है? कौन-सी बत्ती जलती रहने दूँ—इस दीवाल की या बाहरवाली?'

'कोई भी रहने दो, मेरे लिए दोनों एक-सी हैं,' उसने काँपती हुई आवाज़ से उत्तर दिया; और अपनी बाहों में जेनेका का गरम और खुश्क शरीर लेकर, अपने सीने से लगाकर, उसने अपना मुँह उसके होंठ चूमने को बढ़ाया, मगर जेनेका ने उसको धीरे से अपने पास से दूर हटाते हुए कहा:

'ठहरो मेरे प्यारे, ज़रा ठहरो—चूमने के लिए अभी बहुत वक्त हम लोगों के पास है। क्षण भर के लिए जरा चुपचाप लेटे रहो.. हाँ, इसी तरह...चुपचाप, बिल्कुल शान्त. ज़रा भी हिलना-डुलना मत...'

इन विचित्र और अधिकारयुक्त शब्दों का ग्लेडीशेव पर जादू का-सा असर पड़ा। वह उसके कहने के अनुसार बाहों पर अपना सिर रखकर चुपचाप लेट गया। जेनेका ने अपना सिर ज़रा उठाया और कुहनी ऊँची करके, उस पर सिर रखकर, चुपचाप धुँधली रोशनी में उसका शरीर देखने लगी—जो बहुत गोरा, मजबूत, और सुगठित दीख रहा था। चौड़ी छाती और कन्धे, ठोस पसलियाँ, पतली कमर और मज़बूत फूली हुई जाँघें बड़ी सुन्दर लग रही थीं। चेहरे और गर्दन का रंग शरीर के गौर वर्ण से कन्धों और छाती पर जानेवाली एक लाइन-सी अलग कर रहा था।

ग्लेडीशेव क्षण भर तक आँखें मिचमिचाता रहा। उसको जेनेका की घूमती हुई नज़र अपने सारे शरीर को छूती हुई और इस प्रकार गुदगुदाती हुई-सी लगी जैसे कंघी को, जिसमें बाल भरे हों, हाथ पर छुआने से धीमी-धीमी गुदगुदी-सी होती है।

उसने आँखें फाड़कर अपने बिल्कुल पास उस स्त्री की बड़ी बड़ी काली, विचित्र आँखों को देखा, जो उसको इस समय बिल्कुल अपरिचित-सी लगीं।

'क्या देखती हो, जेनी?' उसने धीरे से पूछा, 'क्या सोच रही हो?'

'मेरे प्यारे छोटे लड़के।...तुम्हें कोल्या कहते हैं न? क्यों?'

'हाँ'

'कोल्या मुझपर ख़फ़ा न हो ; मेरी एक इच्छा पूरी कर दो। करोगे ? अपनी आँखें फिर बन्द कर लो...नहीं···और ज़ोर से बन्द करो...मैं ज़रा रोशनी तेज़ करके तुम्हारे शरीर को अच्छी तरह देखना चाहती हूँ। हाँ, ठीक है। काश कि तुम जानते कि तुम कितने सुन्दर हो...कितने सुन्दर तुम इस समय दीखते हो! कुछ दिन के बाद तुम भी भोंड़े दीखने लगोगे और तुम्हारे शरीर से भी बकरों-की-सी बदबू आने लगेगी, मगर इस समय तुम्हारे शरीर से ताज़े दूध और फूलों-की-सी महँक आ रही है! बन्द रखो···लो आँखें बन्द रखो!'

उसने उठकर रोशनी तेज़ कर दी और लौटकर अपनी जगह पर पालथी मारकर बैठ गई। दोनों चुप रहे। दूर से, कई कमरों के उस छोर से एक टूटे पियानो की टिनटिन आ रही थी ; किसी की हँसी की आवाज़ बहती हुई आ रही थी और दूसरी ओर से एक गीत और रूसी मज़ाक की ध्वनि आ रही थी ; मगर बातचीत साफ़ सुनाई नहीं देती थी। दूर गली में एक गाड़ी खड़खड़ाती हुई चली जा रही थी...

'कुछ ही क्षण में मैं इसे भी दूसरों की तरह बीमार कर दूँगी' जैनेका ने उसकी सुगठित टाँगों, भविष्य में अच्छा खिलाड़ी बननेवाले के अभी तक अर्धपक्व शरीर को, सिर के नीचे रखती हुई बाँहों के उठे हुए कठोर पुट्ठों को घूरते हुए सोचा, 'मुझे इस पर तरस क्यों आ रहा है ? क्या इसलिए कि यह इतना सुन्दर जवान है ? नहीं। मेरे मन में बहुत दिनों से इस प्रकार के विचार तक आने बन्द हो गये हैं। तो क्या इसलिए कि यह अभी तक निरा छोकरा ही है ? साल भर ही तो हुआ, मैंने जाते समय इसकी जेब में सेब रास्ते में खाने के लिए हँसी में रख दिये थे। क्यों मैंने अभी तक इससे वह बात नहीं कही है जो मैं अब हिम्मत करके कहना चाहती हूँ ? क्या इसलिए कि उसे मेरी बात का पूरी तरह यक़ीन नहीं होता ? या इसलिए कि वह मुझसे ख़फ़ा होकर चला जायगा ? किसी दूसरी के पास चला जायगा ? कभी न कभी तो हर आदमी को यह बीमारी होनी ही है...इसने मुझे पैसों से खरीदने की चेष्टा की है, यह मैं क्योंकर भूल सकती हूँ ? या इसने भी दूसरों की तरह अन्धेपन में ही ऐसी हरकत की है ?···'

'कोल्या!' वह धीरे से बोली, 'अपनी आँखें खोलो।'

उसने आज्ञाकारी की तरह आँखें खोल दीं और घूमकर उसकी तरफ़ देखा ;

अपनी बाहें उसके गले में डाल दीं और उसने अपनी तरफ़ खींचकर छाती पर उसे चूमना चाहा। उसने फिर स्नेह से, परन्तु दृढ़ता से उसे दूर हटा दिया।

'नहीं, ठहरो, अभी ज़रा और ठहरो। मेरी बात सुनो। क्षण भर और रुको। मेरे प्यारे छोकरे, कहो तो तुम यहाँ हम लोगों के पास क्यों आते हो?'

कोल्या धीरे-धीरे भर्राई हुई आवाज़ से हँसता हुआ बोला :

'कैसी पागल हो तुम! यहाँ लोग क्यों आते हैं? मैं क्या आदमी नहीं हूँ? मुझे लगता है कि मैं भी अब उस उम्र पर पहुँच चुका हूँ, जब हर मर्द को स्त्री की ज़रूरत होती है; इसलिए कि मैं और दूसरी क़िस्म की गन्दगियों में नहीं पड़ना चाहता हूँ!'

'ज़रूरत? सिर्फ़ इसलिए कि तुम्हें स्त्री की ज़रूरत है? जैसी कि संडास की ज़रूरत होती है? क्यों?'

'नहीं, ऐसा क्यों?' कोल्या ने हंसते हुए उत्तर दिया, मैंने तो तुम्हें पहले दिन ही पसन्द किया था पहले दिन से ही मेरा दिल तुम पर है। तुम पर मेरा एक हद तक प्रेम है···कम-से कम मैं किसी दूसरी के पास नहीं गया हूँ।'

'अच्छा, अच्छा! तो पहिले दिन तुम जब यहाँ आये तो तुम्हें एक स्त्री की ज़रूरत थी?'

'नहीं, शायद ऐसा नहीं था; मगर फिर भी कुछ-कुछ मुझे ज़रूरत तो थी ही··· मेरे दोस्तों ने बातें कर करके मेरे मन में स्त्री के लिए इच्छा उत्पन्न कर दी थी··· बहुत-से मुझसे पहल यहाँ आ चुके थे···अतएव मैं भी···'

'पहली बार जब तुम यहाँ आये तो तुम्हें शर्म नहीं लगी?'

कोल्या सिटपिटाया। ये प्रश्न उसे अच्छे नहीं लग रहे थे। उसे लगा कि यह बिस्तर की वह व्यर्थ गल्प नहीं है, जिसका उसको अपने थोड़े ही अनुभव से काफ़ी पता था, बल्कि कोई दूसरी ही गम्भीर बात है।

'शर्म···शर्म न कहकर यह कहा जा सकता है कि बुरा लग रहा था—परेशानी हो रही थी···जिसको दूर करने के लिए मैंने शराब पी ली थी।'

जेनी फिर उसकी बगल में लेट गई; सिर उठाकर, कुहनी पर झुकाकर, बार-बार उसने उसकी तरफ़ ध्यान से घूरा। अन्त में इतनी धीमी आवाज़ से, जिसको कोल्या भी मुश्किल से सुन सका, उसने पूछा :

'कहो तो, मेरे प्यारे, एक बात और बता दो! यहाँ आकर जो तुम रुपया देते हो, ये दो गन्दे रुपये, उसका मतलब भी तुम समझते हो? रुपये से प्रेम खरीदना—मुझे इसलिए रुपये देना कि मैं तुम्हें प्रेम करूँ, तुम्हें चूमूँ, तुम्हें अपने हृदय से लगाऊँ, और तुम्हें अपना शरीर दूँ—इसपर तुम्हें लज्जा नहीं आई? कभी यह सोचकर तुम्हारा सिर शर्म से नहीं झुका?'

'हे भगवान्! ऐसे प्रश्नों से तुम्हारा क्या मतलब है? दूसरे सभी तो रुपया देकर प्रेम लेते हैं! मैं तुम्हें रुपया न देता तो कोई और देता···तुम्हारे लिए तो यही बात होती।'

'क्या तुमने किसी से सचमुच प्रेम किया है, कोल्या? सच-सच, बतलाना! अधिक नहीं तो कम-से-कम मन ही मन, थोड़ा-थोड़ा किसी से सचमुच प्रेम किया है?... किसी को फूल ले जाकर दिये हैं...किसी के हाथ में हाथ डालकर चाँदनी में घूमे हो? कभी ऐसा हुआ है?'

'हाँ' कोल्या ने गम्भीरता से मोटी आवाज़ में कहा, 'जवानी में किससे मुग्धता नहीं होती! सभी जानते हैं कि...'

'किसी नाते-रिश्ते की छोकरी से? किसी पढ़ी-लिखी छोकरी से? किसी स्कूल की विद्यार्थिनी से?···कभी किसी से प्रेम तो तुमने किया ही होगा।'

'हाँ, हाँ, क्यों नहीं! सभी करते हैं'

'अच्छा, तो वह तुमसे यह कहती कि मुझसे तुम्हारे जो मन में आये सो करो—सिर्फ दो रुपये मुझे दे दो तो तुम उसे छूते? तुम उसे फौरन ही छोड़कर भाग नहीं गये होते? क्यों? सच कहो। तुमने उससे क्या कहा होता?'

'मेरी समझ में तुम्हारी बातें नहीं आईं, जेनेच्का!' ग्लेडीशेव ने एकाएक क्रोध में भरकर कहा, 'इतना तुम बन क्यों रही हो? यह क्या नाटक खेल रही हो! ईश्वर की सौगन्ध, मैं अभी उठकर, कपड़े पहिनकर यहाँ से चल दूँगा।'

'ठहरो ज़रा, ज़रा ठहरो कोल्या! एक और, सिर्फ एक ही और, आखिरी प्रश्न मैं तुमसे करना चाहती हूँ।'

'हे राम!' कोल्या नाराज़गी से गुर्राया।

'क्या यह तुम कभी नहीं सोचते···मान लो क्षण भर के लिए···कि तुम्हारा कुटुम्ब एकाएक ग़रीब हो जाता है...तबाह हो जाता है। तुम्हें अपनी रोटी कमाने के

लिए कहीं क्लर्की' करनी होती है, या बढ़ईगिरी या लुहारगिरी करनी पड़ती है और तुम्हारी बहिन हमारी तरह···हाँ, हाँ, बिल्कुल हमारी तरह ग़लत रास्ते पर पड़ जाती है, कोई ख़रदिमाग उसे बहकाकर ख़राब कर देता है...और फिर वह एक आदमी के पास से दूसरे के पास जाती गिरती है···तब तुम्हें कैसा लगेगा !'

'फूँ !···ऐसा कभी नहीं हो सकता...' कोल्या ने उसकी बात काटकर कहा, 'ख़ैर, क़ाफ़ी हो चुका, मैं जाता हूँ !'

'जाओ, मगर एक मिहरबानी मुझपर करते जाओ ! मेरे पास दस रुपये हैं— वह, वहाँ आईने के पास, उस चाकलेट के ख़ाली डिब्बे में रखे हैं –उन्हें अपने लिए लेते जाओ । मुझे उनकी ज़रूरत नहीं है । उनसे कछुये की खाल की बनी एक पाउडर की सुनहरी डिबिया अपनी मा के लिए और तुम्हारे कोई नन्हीं-सी बहिन हो तो उसके लिए एक सुनहरी गुड़िया ख़रीदकर लेते जाना और इन्हें ले जाकर देना और कहना कि, 'एक छिनाल ने जो अब मर चुकी है, अपनी याददाश्त में तुम्हें ये चीज़ें भेजी थीं । जाओ मेरे छोटे लड़के, जाओ' कोल्या गुस्से से मुँह सिकोड़ता हुआ, बिस्तर से उछलकर और पलङ्ग के पास पड़ी हुई छोटी चटाई पर नङ्गा, सुडौल और जवानी से चमकता हुआ शरीर ले जाकर खड़ा हो गया ।

'कोल्या !' जैनेका ने उसे धीरे से, स्नेह और हठ-पूर्वक बुलाया 'कोलेच्का !'

कोल्या ने मुड़कर उसकी ओर देखा और इस प्रकार साँस खींची, मानो वह दङ्ग रह गया हो ; आज तक अपने जीवन में उसने कभी किसी चित्र तक में, ऐसा स्नेह, विडम्बना और स्त्री की शान्त झिड़की का सुन्दर भाव नहीं देखा था । वह पलङ्ग की पट्टी पर बैठ गया और उमङ्ग से उसकी नङ्गी बाँहों में अपनी बाँहें डालकर जैनेका को अपने सीने में लगा लिया ।

'हम लोगों को आपस में झगड़ना नहीं चाहिए जैनेका' उसने प्रेम में डूबकर कहा ।

जैनेका उससे लिपट गई और अपनी बाँहें उसकी गर्दन में डालकर उसकी छाती में उसने अपना सिर गड़ा दिया । कुछ क्षणों तक दोनों चुपचाप इसी दशा में रहे ।

'कोल्या,' जेनी ने सुस्ती से पूछा, 'मगर तुम्हें कभी बीमारी का डर नहीं हुआ ?'

कोल्या काँप गया । एक ठण्डा, भयंकर भय उसकी आत्मा में दौड़ता हुआ घुसा जिससे वह काँप गया । कुछ देर तक उसके मुँह से कोई उत्तर नहीं निकला । फिर वह बोला :

'ज़रूर, ज़रूर, मैं बहुत डरता हूँ...उसके विचार से मैं काँप ही जाता हूँ ईश्वर मुझे बचाये ! मगर मैं तुम्हारे सिवाय और किसी के पास नहीं जाता हूँ ! और तुम कोई ऐसी बात होती तो मुझसे ज़रूर कह देतीं ।'

'हाँ,, मैं तुमसे कह देती,' जेनी ने सोचते हुए कहा और फिर फौरन ही, समझ-कर, मानो उसने अपने शब्दों को तौलकर उनका वज़न जान लिया हो, वह बोली 'हाँ, जरूर, ज़रूर, मैं तुमसे कह देती ! मगर तुमने कभी सुना है, आतशक क्या चीज़ होती है ?'

'हाँ, हाँ, मैंने सुना है···बड़ी खराब बीमारी होती है...उसमें मनुष्य की नाक गिर जाती है···'

'नहीं, कोल्या, सिर्फ नाक ही नहीं ! सारा शरीर सड़ने लगता है; हड्डियाँ, रगें, दिमाग़ सभी खराब हो जाते हैं...डाक्टर कहते हैं कि इस बीमारी का इलाज हो सकता है···मगर वे झूठ कहते हैं ! इसका इलाज नहीं है ! इसके बीमारों को दस-दस; बीस-बीस, तीस-तीस बरस तक सड़ना पड़ता है । फालिज मार जाता है जिससे चेहरे का दाहिना हिस्सा, दाहिना हाथ, दाहिना पाँव निकम्मे हो जाते हैं—आदमी जीवित नहीं रहता, बल्कि उसका सिर्फ एक छोटा-सा हिस्सा ही जीवित रह जाता है ! आधा आदमी—आधी लाश ! अधिकतर इसके मरीज़ पागल हो जाते हैं और इस रोग से पीड़ित हर आदमी समझता है—अच्छी तरह समझता है कि वह खाने-पीने, बोसा देने, यहाँ तक कि साँस लेने से भी अपने निकटवर्ती प्रियजनों बहिन, स्त्री, लड़कों को भी यह रोग दे सकता है...इस रोग से पीड़ित आदमियों के बच्चे भयङ्कर पशुओं की तरह, टेढ़ुयें निकले, क्षयी और मूर्ख होते हैं । अक्सर वे गर्भ में ही नष्ट हो जाते हैं । इसका नाम आतशक है, कोल्या ! अतएव...' जेनेका ने एकाएक सतर्क होकर, कोल्या की नङ्गी बाहें ज़ोर से दबाकर पकड़ लीं और उसकी तरफ इस तरह घूरती हुई जिससे कि उसकी आँखों के धधकते हुए विचित्र तेज और दुःख से कोल्या की आँखें चौंधिया उठीं, बोली :

'अतएव अब मैं तुम्हें यह बता देना चाहती हूँ कि मैं एक मास से इस घोर रोग से पीड़ित हूँ और इसी लिए मैंने तुम्हें अपना मुँह नहीं चूमने दिया···'

'तुम मज़ाक करती हो !...तुम मुझे जान-बूझकर तङ्ग कर रही हो जेनी !' लेडीशेव ने गुस्से और परेशानी से सिटपिटाकर कहा ।

'मज़ाक करती हूँ ?...आओ, इधर आओ !'

उसने कोल्या को अपनी जगह से उठकर एक दियासलाई जलाने पर मजबूर किया और बोली :

'देखो, अब जो कुछ मैं तुम्हें दिखाऊँगी, ग़ौर से देखना...'

यह कहकर उसने अपना मुँह खोला और उसके अन्दर दियासलाई इस तरह दिखाई कि उसका हलक़ अच्छी तरह दिखाई देने लगा। कोल्या ने देखा और काँपकर पीछे हट गया।

'देखे तुमने मेरे हलक़ में यह सफ़ेद-सफ़ेद दाग़ ? यही है आतशक, कोल्या ! समझते हो ? यही है आतशक का भयङ्कर रूप। अब अपने कपड़े पहिनो और ईश्वर को धन्यवाद दो।'

कोल्या चुपचाप, जेनेका की तरफ़ घूमकर न देखते हुए, जल्दी-जल्दी अपने कपड़े पहिनने लगा—इतनी जल्दी कि टाँग पतलून में डालता था तो बाहर जाती थी। उसके हाथ काँप रहे थे और दाँत बज रहे थे। जेनेका सिर झुकाये हुए धीरे-धीरे कह रही थी :

'सुनो कोल्या, तुम्हारा भाग्य अच्छा है कि तुम्हें एक ईमानदार औरत मिल गई—कोई दूसरी होती तो तुम्हें हरगिज़ यों न छोड़ती ! समझते हो ? हम लोग, जिनकी इज्जत खराब करके तुम लोग अपने घरों से निकाल देते हो और फिर हमारे पास आकर हमें दो रुपये देकर हमारा शरीर लेते हो ! हमें समझते हो ?' उसने एकाएक अपना सिर उठाया, 'हम लोग हमेशा तुम्हें हृदय से घृणा करते हैं और कभी तुम लोगों पर दया करने का विचार भी नहीं करते !'

कोल्या अपने कपड़े छोड़कर, पलंग पर जेनेका के पास बैठ गया और अपना मुँह दोनों हाथों से ढँककर, बच्चों की भाँति रोने लगा।

'हे भगवान ! हे भगवान !' वह बड़बड़ाया, 'सचमुच यह कितना कमीनापन है !···हमारे घर भी ऐसा हुआ था ; हमारे यहाँ नियूशा नाम की एक छोकरी नौकर थी···उसको हम लोग श्रीमती भी कहते थे...सुन्दर छोकरी थी·· मेरे भाई से उसका सम्बन्ध हुआ...मेरा बड़ा भाई जो कि फ़ौज में अफ़सर था···उसके चले जाने के बाद उसके गर्भ निकला...जिसपर मा ने उसे घर से निकाल दिया दूध की मक्खी की तरह उसे घर से निकाल दिया।···अब वह कहाँ है ? और पिताजी ? पिताजी ने भी एक नौकरानी ..

आधी नङ्गी जेनेका, पतित और नास्तिक जेनेका, जो गालियाँ बकती और झगड़ा करती थी, बिस्तर से उठकर, कोल्या के आगे खड़ी हो गई और आकाश की तरफ़ हाथ उठाकर, भगवान् के नाम पर उसे आशीर्वाद देती हुई, कृतज्ञतापूर्ण अति प्रेम से बोली :

'भगवान तुम्हारी रक्षा करें, मेरे भले छोकरे !'

यह कहकर उसने दौड़कर कमरे का द्वार खोल दिया और पुकारा, 'खालाजान !'

खाला के दौड़कर आने पर जेनेका ने उससे कहा, 'मेरी प्यारी खालाजान, देखो, हमारा या नन्हीं मनका में से जो कोई खाली हो उसे फ़ौरन यहाँ भेज दो ।'

कोल्या पीछे से कुछ बड़बड़ाया, मगर जेनेका ने जान-बूझकर उसे नहीं सुना ।

'जल्दी ही भेज दो, प्यारी खाला, जितना जल्द हो सके, फ़ौरन भेज दो, समझी !'

'अभी लो, अभी भेजती हूँ ।'

'क्यों, यह तुम क्या कर रही हो, जेनी ?' ग्लेडीशेव ने दुखी आवाज़ से कहा, 'क्यों बुला रही हो ? क्या उससे यह कहना चाहती हो ?'

'ठहरो ज़रा, तुम्हें क्या मतलब कि मैं क्या करना चाहती हूँ, ठहरो...मैं कोई ऐसी बात नहीं करूँगी जिससे तुम्हें कठिनाई हो ।'

क्षण भर में मनका, स्कूली लड़कियों की-सी, सादा कत्थई पोशाक पहिने सामने आ खड़ी हुई और बोली :

'क्यों जेनी, मुझे क्यों बुलाया है ? क्या तुम लोगों का झगड़ा हो गया है ?'

'नहीं, झगड़ा नहीं हुआ है मनेच्का ; मगर मेरा सिर बहुत दुख रहा है, जेनेका ने शान्ति-पूर्वक उत्तर दिया, 'अतएव कोल्या को मैं ख़ुश नहीं कर पाती । तुम्हीं इन्हें आज मेरी बजाय ख़ुश करो, मनेच्का !'

'बस-बस, जेनी, चुप हो जाओ, मेरी प्यारी !' कोल्या ने हृदय से दुःखी आवाज़ में कहा, 'मैं समझता हूँ, मैं समझता हूँ···इस सबकी ज़रूरत नहीं है...मेरा इस तरह अपमान मत करो !'

'मामला क्या है ?···मेरी समझ में नहीं आता' हँसोड़ी मनका ने दोनों हाथ फैलाकर कहा, 'तुम मुझ जैसी एक गरीब छोकरी को भी कुछ खिलाओ-पिलाओगे ?'

'अच्छा, जाओ, जाओ !' जेनेका ने उसको नम्रता से हटाते हुए कहा, 'मैं अभी आती हूँ, मनका । मैंने यों ही मज़ाक किया था ।'

कपड़े पहिनने के बाद जेनी और कोल्या, दोनों कमरे के द्वार पर खड़े-खड़े एक दूसरे को चुपचाप, दुःख से देर तक देखते रहे। कोल्या की समझ में तो न आया, परन्तु उसे ऐसा लगा कि उसकी आत्मा में इस समय वह क्रान्ति हो रही थी, जिससे जीवन की कायापलट हो जाती है।

फिर उसने जेनी का हाथ स्नेह से दबाकर कहा :

'माफ़ करो . जेनी, मुझे माफ़ कर दो! क्यों मुझे माफ़ कर दोगी न?...'

'हाँ, हाँ, ज़रूर! मेरे प्यारे, ज़रूर, ज़रूर!...'

जेनी ने बड़े स्नेह से, मा की तरह प्यार से उसका सिर सहलाया और उसको धीरे से कमरे के बाहर कर दिया :

'अब तुम कहाँ जाओगे?' आधा द्वार खोलकर फिर इसने कोल्या से जाते समय पूछा।

'मैं अपने दोस्त को पहुँचाकर सीधा अपने घर जाऊँगा।'

'जैसी तुम्हारी मर्ज़ी!...ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे, मेरे प्यारे!'

'मुझे माफ़ करना! मुझे माफ़ करना!...' कोल्या ने फिर उसकी तरफ़ एक बार हाथ फैलाकर कहा।

'मुझे भी माफ़ कर देना···क्योंकि अब हम लोग फिर कभी एक दूसरे से न मिलेंगे!'

जेनी ने द्वार बन्द कर लिया और वह कमरे में अकेली रह गई।

× × ×

रास्ते में ग्लेडीशेव ठिठका, क्योंकि उसे यह नहीं मालूम था कि प्रेटोव टमारा के साथ किस कमरे में है। ज़ोसिया से पूछने पर उसने उसको कमरा बता दिया और डरी हुई और परेशान उसके पास से झपटती हुई, निकल गई।

'मेरे पास तुमसे उलझने को वक्त नहीं है!' उसने भागते हुए गुर्राकर कहा, 'बायें हाथवाले तीसरे कमरे में है।'

कोल्या ने जाकर कमरे का द्वार खटखटाया। अन्दर से कुछ घुसपुस-घुसपुस और चलने-फिरने की आवाज़ आ रही थी। उसने फिर द्वार खटखटाया।

'कर्कोवियस, द्वार खोलो! मैं हूँ—सोलीटरोव।'

सैनिक विद्यार्थी जब इस क़िस्म के कामों पर चलते थे तो आपस में बातचीत

के लिए एक दूसरे के मसनूई नाम रख लेते थे। यह वे इसलिए नहीं करते कि जिससे वे अपने अधिकारियों और बड़ों की निगरानी से बच सकते थे अथवा उनके खानदान का कोई परिचित चकले में मिल जाय तो उसे धोखा दे सकते थे, फ़र्ज़ी नाम रखना उनकेलिए एक प्रकार का खेल-सा था जो जासूसी उपन्यासों से उन्होंने सीखा था।

'अन्दर मत आना!' टमारा की आवाज़ अन्दर से आई, 'अन्दर मत आना। हम लोग अभी खाली नहीं हैं।'

परन्तु पेट्रोव की मोटी आवाज़ ने फौरन ही उसकी बात काट दी, 'नहीं! झूठ बोलती है। अन्दर आओ। कुछ नहीं है।'

कोल्या ने द्वार खोला।

पेट्रोव अपने कपड़े पहिने एक कुर्सी में, शर्म से लाल, दुखी, बच्चों की तरह मुँह लटकाये, आँखें नीची किये बैठा था।

'वाह, वाह, कैसे अच्छे दोस्त आप अपने साथ लाये हैं!' टमारा ने मज़ाक उड़ाते हुए क्रोध से कहा, 'मैंने समझा था यह भी मर्द होगा, मगर यह तो बिल्कुल छोकरी है। इसको अपने सतीत्व को खो देने का बड़ा डर लगता है। क्या आदमी है! यह लो अपने दो रुपये भी वापिस लिये जाओ!' उसने एकाएक पेट्रोव से चिल्लाकर कहा, 'इन्हें किसी ग़रीब नौकरानी या भिखारिन को देना! या इनसे अपने लिए दस्ताने या मिठाई ख़रीद लेना!'

'मगर मुझे धिक्कारती क्यों हो?' पेट्रोव आँखें नीची किये हुए ही बड़बड़ाया, 'मैं तो तुम्हें धिक्कार नहीं रहा हूँ। क्यों? फिर तुमने मुझे धिक्कारना शुरू कर दिया? मुझे अपने इच्छानुसार, जैसा चाहूँ वैसा करने का अधिकार है। मैंने तुम्हारा वक्त लिया है, उसकी फीस तुम अपनी ले लो, मगर ज़बरदस्ती करना मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है और ग्लेडीशेव—मेरा मतलब है सोलीट्रोव्—तुमने मुझे यहाँ लाकर अच्छा नहीं किया। मैं समझता था कि यह अच्छी छोकरी होगी—परन्तु यह तो मुझे लगातार चूमती और भगवान् जाने क्या-क्या करती रही...'

टमारा क्रोधित होते हुए भी हँस पड़ी।

'अरे मूर्ख छोकरे! अरे निरे मूर्ख छोकरे! खैर, नाराज़ मत हो—मैं तुम्हारे रुपये रखे लेती हूँ; मगर देखना, आज शाम को ही देखना' अपनी हरकत पर फ़ख़-

मगर जैसे ही ग्लेडीशेव ने आगे बढ़ने की कोशिश की वैसे ही सिमियन की नश्तर की तरह तेज़ उँगलियों ने उसकी कुहनियाँ पकड़कर उसे पीछे को घसीट लिया।

'कुछ नहीं है, उसमें देखने के लिए अब कुछ नहीं रहा है' सख्ती से हुक्म देते हुए कहा, 'जाओ, फौरन यहाँ से। अब अपना रास्ता नापो नौजवानो! अब यहाँ तुम्हारा ठहरना ठीक नही है। पुलिस आती होगी...तुमको गवाह बना लेगी.. बस फिर तुम्हें अपने सैनिक कालिज से भी निकलना पड़ेगा! ख़ैर इसी में है कि यहाँ से फ़ौरन सिर पर पाँव रखकर भाग जाओ!'

वह उनके साथ घर के द्वार तक गया और उनके ओवरकोट उन्हें थमाकर और भी अधिक सख्ती से बोला :

'भागो यहाँ से.. फ़ौरन भाग जाओ . जितना जल्द हो सके! जिससे तुम्हारी गन्ध भी यहाँ न रह जाय और दूसरी बार तुम लोग फिर यहाँ आये तो मैं तुम्हें अन्दर घुसने भी न दूँगा। बड़े अक़्मन्द छोकरे हो न क्यों? तुम्हीं ने उसे विस्की पीने के लिए रुपया दिया था, जिसके पीते ही बूढ़ा अपनी ज़िन्दगी से भी हाथ धोकर चल बसा।'

'ज़्यादा होशियार मत बन!' ग्लेडीशेव ने उसे डाँटकर कहा।

'क्या कहा, होशियार मत बन? . ' सिमियन ने क्रोध से चिल्लाकर पूछा अ उसकी बिना भौंहों की काली आँखें ऐसी भयकर हो गईं कि दोनों छोकरे डरे।

'ऐसा झापड़ मुँह पर जगाऊँगा कि नानी की याद आ जायगी! भागो यहाँ से, वरना अभी ठीक करता हूँ!'

इसी समय जीने में होकर दो आदमी, टेढ़ी टोपियाँ लगाये; एक नीला और एक लाल लम्बा-लम्बा कुरता पहिने जिनके ऊपर वे जाकेट पहिने थे, जिनके बटन खुले थे, ऊपर आये। स्पष्ट था कि वे दोनों सिमियन के हमपेशा साथी थे जो उसकी मदद के लिए आये थे।

'क्या है?' उनमें से एक ने नीचे से ही चिल्लाकर हँसते हुए पूछा, 'रोलीपोली हो गया टें?'

'हाँ ऐसा ही लगता है।' सिमियन ने जवाब में कहा 'फ़ौरन ही उसे उठाकर बाहर फेंकना है, वरना उसका भूत घर में कहीं बस न जाय। बाहर पड़ा मिलेगा तो लोग समझेंगे कि ज़्यादा पी जाने से सड़क पर ही टें हो गया।'

'मगर मारा तुमने तो उसे नहीं था···क्यों तुमने तो···उसे नहीं मारा ?'

'क्या मूर्खता की बातें करते हो ! उसे मारने की वजह ही क्या हो सकती थी ? बिल्कुल सीधा-सादा आदमी था बेचारा, बिल्कुल मेमने की तरह ! समय आ गया !'

'और कोई जगह भी मरने के लिए नहीं मिली ! इससे भी और कोई ख़राब जगह उसकी समझ में नहीं आई ?' लाल कुरतेवाले ने कहा ।

'सच कहते हो यार !' दूसरे ने उसका समर्थन करते हुए कहा, 'दाँत निपोर-निपोरकर जिया और यहाँ आकर मरा ! ख़ैर, चलो अपना काम पूरा करें ।'

दोनों छोकरे जल्दी-जल्दी वहाँ से भागे । अँधेरे में जाते हुए उन्हें ज़मीन पर सिकुड़ा हुआ पड़ा रोलीपोली सामने दीखने लगा, जिससे उनके जवान हृदय जिन्हें मृत्यु ख़ास तौर पर बड़ा भयकर लगती है और ख़ासकर अँधेरी रात में उसका ख़्याल और भी भयंकर हो जाता है, धड़कने लगे ।

'ग्लेडीशेव ! बड़े हो जाने पर आज की रात को याद रखना ! और इसका ज़िक्र अपने लड़कों से अवश्य करना ! करोगे ?'

चौंतीसवाँ अध्याय

सुबह से ही मेंह की नन्हीं-नन्हीं बौछारें बरस रही थीं—धूल की तरह लगातार इधर-उधर उड़ती हुई वे जी उकताने लगी थीं । प्लेटोनोव बन्दरगाह पर नावों में से तरबूज़ उतार रहा था । उसने गरमियों में मिल में काम करने का प्रयत्न किया था, परन्तु वहाँ उसके भाग्य ने उसका साथ नहीं दिया था, क्योंकि एक हफ़्ता काम करने के बाद ही उसका मिल के मिस्त्री से, जो कामगारों से बड़ी क्रूरता का व्यवहार करता था, झगड़ा हो गया था, अतएव एक मास तक सर्जी आइवानोविस यों ही इधर-उधर भटकता रहा और अखबारों के लिए गली-कूचों के वाक़यातों और कचहरियों के मुक़द्दमों और मज़ाकिया दृश्यों पर लेख लिख-लिखकर अपना गुजारा किसी तरह चलाता रहा; मगर यह काम उसे पसन्द नहीं था । उसे नये-नये उत्साह के और खुली हवा में मेहनत के ऐसे काम पसन्द थे, जिनमें आरामतलबी के लिए ज़रा भी जगह नहीं होती । उसे आज़ादी की आवारागर्दी पसन्द थी, जिसमें आदमी को अपने इर्द-गिर्द की कोई फ़िक्र नहीं रहती और यह भी पता नहीं रहता कि कल कैसे रोटी मिलेगी या

क्या होगा। अतएव नीपर नदी में नीचे को तरफ़ से तरबूज़ों से लदी नावें आनी शुरू हुईं तो वह बड़ी खुशी से मजदूरों के एक गिरोह में, जिन्हें वह पिछले साल से जानता था और जो उसके हँसोड़े स्वभाव, भ्रातृ-भावना और हिसाब रखने की योग्यता के कारण उसे पसन्द करते थे, शामिल हो गया था।

नावों से तरबूज़ उतारने का काम मज़दूरों को मिल-जुलकर और होशियारी से करना होता था। एक-एक नाव पर पाँच-पाँच मज़दूरों के चार-चार गिरोह एक साथ काम करते थे। एक मज़दूर नाव से ऊपर चढ़कर नाव के नीचे खड़े दूसरे को तरबूज़ फेंकता था और दूसरा मजदूर तीसरे को जो घाट पर खड़ा होता था, और तीसरा चौथे को और चौथा पाँचवें को, जो घोड़ा-गाड़ी पर चढ़कर तरबूज़ लादता था। काने सफ़ेद और धारीदार तरबूज़ चमकते हुए हाथोंहाथ कतार में दौड़ते हुए जाते थे। यह काम सुथरा, तबियत को खुश करनेवाला और जल्दी-जल्दी होता है। मज़दूरों का अच्छा गिरोह मिल जाने पर जिस तरह वे तरबूज़ों को हाथोंहाथ फुरती से उछा-लते हुए, सरकस की तरह जल्दी-जल्दी और आसानी से गाड़ियों में भरते हैं, उसे देख-देखकर तबियत बड़ी खुश होती है। यह काम सिर्फ़ उन्हीं मज़दूरों को मुश्क़िल लगता है जो बिल्कुल ही नये होते हैं और जिनके हाथ ऐसे काम का अनुभव न होने के कारण, सधे न होने से, संतुलित रूप में तरबूज़ फेंक नहीं पाते। तरबूज़ों को हाथ में पकड़ लेना इतना कठिन नहीं होता जितना उनको पकड़ लेने के बाद फिर सहज रूप से फेंकना होता है।

प्लेटोनोव को अपना पिछले साल का अनुभव अच्छी तरह याद था। तीन-चार बार वह तरबूज़ पकड़कर हाँफता हुआ, जब बीच में रुक गया था तो काम धीमा हो गया था और उसके फेंके हुए दो तरबूज़ दूसरे मज़दूर के हाथों तक न पहुँचकर, रास्ते में ही फिरकर फच्च से ज़मीन पर कचर गये थे और तीसरा तरबूज़ उसके घबरा जाने से हाथ से गिरकर फट गया था जिससे उस पर चारों ओर से बुरी-बुरी गालियों की बौछार होने लगी थी। पहले दिन तो उन्होंने उसके फूहड़पन पर दया दिखाई, परन्तु दूसरे दिन उन्होंने हर टूट जानेवाले तरबूज़ की पाँच आना क़ीमत उसकी मज़दूरी के हिस्से से काट ली ; इस पर भी जब वह न सुधरा तो उन्होंने उसे अपने गिरोह में से निकाल देने की धमकी दी, जिससे प्लेटोनोव को इतना क्रोध आया कि वह बिल्कुल लापरवाही से तरबूज़ उठा-उठाकर फेंकने लगा ; मगर उसको

यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उसके ऐसा करते ही तरबूज़ अपने निशाने पर आसानी से पहुँचने लगे और उसके रग-पुट्ठे, नज़र और साँस ऐसे नियमित हो गये कि उसे बड़ा आनन्द मिलने लगा। तब उसकी समझ में आया कि तरबूजों के गिरकर टूट जाने की चिन्ता न करने से तरबूज़ आसानी से और बिना गिराये फेंके जा सकते हैं। फिर जब उसको यह काम अच्छी तरह आ गया तब तो उसके लिए यह बहुत दिनों तक एक प्रकार का अच्छा खेल-सा ही बन गया था ; मगर बाद में फिर खेल नहीं रहा और वह पाँच आदमियों और तरबूजों की जज़ीर की यांत्रिकता की तरह काम करने लगा।

इस समय नाव पर चढ़े हुए मज़दूर के पास वह दूसरे नम्बर पर खड़ा था। नीचे को झुक-झुककर, दोनों हाथों से, ताल के साथ, बिना देखे ठण्डे और भारी तरबूजों को पकड़कर, दाहिनी तरफ़ को झुलाता हुआ, वह बिना देखे ही अथवा सिर्फ़ कनखियों से देखकर, उन्हें उछाल-उछालकर फेंक रहा था और फिर फौरन ही दूसरा तरबूज़ पकड़ने के लिए झुक जाता था। तरबूज़ों के हाथों पर पड़ने को थप-थप थप-थप आवाज़ उसके कानों में आ रही थी और वह झुकते ही, फाँय-फाँय साँस भरता और निगलता हुआ, फिर तरबूज़ पकड़ता और झुलाकर उछाल देता था।

इस काम में अच्छे दाम मिल रहे थे। उसकी टोली में चालीस मज़दूर थे, जिन्होंने तरबूजों की फ़सल अच्छी होने और बहुत-सी नावें आने से दिन भर की मज़दूरी के बजाय ठेके पर, एक गाड़ी तरबूजों से लाद देने की मज़दूरी तय कर ली थी। ज़ेवोरोटनी ने जो शरीर से हृष्ट-पुष्ट और बलिष्ट था और इन चालीस मज़दूरों का चौधरी था, बड़ी चालाकी से नावों के मालिक को, जो शायद नया और अनुभव-हीन था, समझा-बुझाकर ठेके पर मज़दूरी तय कर ली थी। बाद में उसको अपनी ग़लती समझ में आई और उसने मज़दूरी बदलनी चाही, परन्तु नावों के अनुभवी मालिकों ने उसे ऐसा न करने की सलाह देते हुए चेतावनी दी, 'खबरदार, ऐसा अब हरगिज़ न करना, वरना ये मज़दूर तुम्हें मार डालेंगे। अस्तु सौभाग्य के इस अच्छे झोंके के कारण हर एक मजदूर चार रुपये तक रोज़ मज़दूरी पा रहा था। हरएक मज़दूर बड़ी मेहनत और उत्साह से काम कर रहा था। कोई मापदंड लगाकर नापना सम्भव होता तो मालूम हो जाता कि हरएक की ताक़त कितनी गुना बढ़ गई थी।

फिर भी चौधरी ज़ेवोरोटनी को सन्तोष नहीं था। वह छोकरों से और भी

जल्दी-जल्दी काम लेने के लिए बराबर चिल्लाता रहता था। उसे अपने पेशे में इतना होशियार होने पर अभिमान हो रहा था और वह हर मज़दूर को कम से कम पाँच रुपया रोज़ दिलवा देने की फ़िक्र में था। अस्तु ख़ुशी से, जल्दी-जल्दी उछलते हुए, बन्दरगाह से हरे-हरे सफ़ेद-सफ़ेद तरबूज़, नाचते और चमकते हुए, गाड़ियों में भर रहे थे और उनके सधे हुए हाथों पर गिरने की थप-थप सुनाई दे रही थी।

नदी पर खुदाई का काम करनेवाले मशीनों के इञ्जन भों-भों-भों करके जब चिल्लाने लगे तब चौधरी ने ज़ोर से हुँकारा और आखिरी बार थप-थप करके काम बन्द हो गया।

प्लेटोनोव ने ख़ुशी से अपनी कमर सीधी की और फिर उसने पीछे की तरफ़ झुकाकर अपने सूजे हुए हाथ आगे को फैला दिये। उसने बड़ी ख़ुशी से सोचा कि उसके सारे रग-पुट्ठे में, वह दर्द जो पहले-पहल काम शुरू करने पर होने लगता है, अब नहीं होता था; परन्तु आज तक सुबह को, अपनी कोठरी में सोकर, वह जब निश्चित भोंपे की आवाज़ सुनकर उठता था तो अपने सारे शरीर में—गरदन, पीठ, हाथों और पाँवों में—ऐसा दर्द पाता था कि उसे लगता था कि उसका चारपाई से उठकर खड़ा हो जाना और दो-चार क़दम चल सकना भी एक करिश्मा ही होगा।

'जाओ, जाकर खाना खाओ' चौधरी ने चिल्लाकर कहा।

मजदूर नदी की तरफ़ गये और पानी के पास पहुँचकर, घुटनों पर झुक गये अथवा नावों पर पट सोकर, चुल्लुओं से पानी ले-लेअर पसीने से लथपथ अपने गरम हाथ और मुँह धोने लगे। हाथ-मुँह धोकर, नदी के किनारे घास पर, एक तरफ़ वे खाना खाने बैठे। उन्होंने अपने आगे दस पके-पके तरबूज़, काली रोटी और सूखा साग खाने के लिए रखा। गैब्रिउश्का एक बोतल का अद्धा लिये, गाता हुआ, शराब की भट्ठी की तरफ़ दौड़ा जा रहा था।

शरीर पर चीथड़े लटकाये, जिनमें से सारा शरीर दीखता था, एक छोकरा नंगे पांवों, इन लोगों की तरफ़ दौड़ता हुआ आया।

'तुममें से प्लेटोनोव किसका नाम है?' उसने अपनी चोर की-सी नज़र उन पर जल्दी से फेंकते हुए पूछा।

'मेरा नाम प्लेटोनोव है। तुम कौन हो?'

'वहाँ देखो, उस गिरजे के पीछे एक नौजवान छोकरी तुम्हारा इन्तज़ार कर रही है। उसने यह ख़त तुम्हारे लिए दिया है।'

मज़दूरों के सारे गिरोह ने ज़ोर-ज़ोर से खखारना शुरू कर दिया ।

'खखारते क्यों हो मूर्खों ? प्लेटोनोव ने उन्हें शान्तिपूर्वक डाँटा और छोकरे से कहा, 'कहाँ है खत, लाओ !'

खत जेनेका का था जो उसने गोलमटोल, सीधे-सादे और बच्चों के-से अक्षरों में ग़लत-सलत लिखा था :

'सरजी आइवानिश, माफ करो; मैं तुम्हें कुछ तकलीफ़ देना चाहती हूँ। मुझे तुमसे कुछ बड़ी ज़रूरी बातें करनी हैं। कोई मामूली-सी बात होती तो मैं तुम्हें हरगिज़ तकलीफ़ न देती। सिर्फ़ दस मिनट के लिए मैं तुम्हें चाहती हूँ। जेनेका जिसको अन्ना के घर से तुम जानते हो।'

प्लेटोनोव खत पढ़कर उठ खड़ा हुआ।

'मैं कुछ देर के लिए जा रहा हूँ,' उसने चौधरी से कहा 'काम शुरू होने तक मैं आ जाऊँगा।'

'चलो, तुम्हें काम मिल गया!' चौधरी ने सुस्ती से घृणापूर्वक कहा, 'ऐसे कामों के लिए रात काफ़ी नहीं है ? जाओ, जाओ···मुझे क्या मतलब ! मगर काम शुरू होने तक तुम अपनी जगह पर नहीं आ गये तो आज दिन भर की तुम्हारी ग़ैरहाज़िरी शुमार की जायगी। मैं किसी भी अनाड़ी आदमी को जो मिलेगा तुम्हारी जगह पर रख लूँगा और जितने तरबूज़ उसके हाथों टूटेंगे, उनके दाम तुम्हारी मज़दूरी में से जायँगे, समझे ! मैं नहीं जानता था प्लेटोनोव कि तुम भी इस तरह कुत्तों की भाँति मारे-मारे फिरते हो !···'

घाट और गिरजों के बीच में, एक छोटे से मैदान में जिसमें सिर्फ़ दस मनहूस से पेड़ खड़े थे, जेनेका उसका इन्तज़ार कर रही थी। वह एक सादा खाकी पोशाक पहिने थी और सिर पर एक सादा-सा गोल स्ट्रा-हैट लगाये थी, जिस पर एक काला फीता बँधा था।

'इतनी सादी पोशाक पहिनने पर भी' प्लेटोनोव दूर से ही उसे देखकर सोचने लगा, 'कोई भी आदमी जो इसके पास से गुज़रेगा, तीन-चार बार फिर-फिरकर अवश्य देखेगा क्योंकि वह उसको देखते ही फ़ौरन उसे पहचान लेगा।'

'कहो जेनेका, कैसी हो ? तुमसे मिलकर बड़ी खुशी हुई' उसने छोकरी का हाथ स्नेह से दबाकर कहा, 'मैं तुम्हारे यहाँ आने की बात कभी सोच भी नहीं सकता था।'

जेनेका चुप, सुस्त और किसी चीज़ से परेशान थी। प्लेटोनोव ने उसे देखते ही फ़ौरन उसके मन की स्थिति समझ ली।

'माफ़ करो, जेनेका। मुझे फौरन ही खाना खाना है' वह बोला।

'तुम भी मेरे साथ चलो। मैं खाता जाऊँगा और तुम, जो कुछ तुम्हें कहना है, कहती जाना। यहाँ से थोड़ी दूर पर ही एक सराय है। इस वक्त वहाँ बिलकुल भीड़ नहीं होती। एक छोटा-सा कमरा भी अलग बैठने को है। उसमें बैठकर हम लोग बड़े मज़े से बातचीत कर सकेंगे। चलो! तुम भी कुछ खाना पसन्द करोगी?'

'नहीं, मुझे कुछ खाने की इच्छा नहीं है' जेनेका ने भर्राई हुई आवाज़ से कहा, 'मैं तुम्हारा अधिक समय नहीं लूँगी। सिर्फ कुछ मिनट थोड़ी-सी बातचीत करनी है। मुझे कुछ सलाह लेनी है. मगर मेरा कोई ऐसा नहीं है जिससे सलाह ले सकूँ।'

'अच्छा, अच्छा. चलो! मैं जो कुछ भी कर सकता हूँ, उसके लिए हमेशा हाज़िर हूँ। मैं तुम्हें बहुत प्यार करता हूँ, जेनेका!'

जेनेका ने उसकी तरफ़ उदासी और कृतज्ञता से देखा।

'मैं जानती हूँ सरजी, इसी लिए तो मैं तुम्हारे पास आई हूँ।'

'शायद तुम्हें रुपये की ज़रूरत है? कहो, शर्माओ मत। मेरे पास तो अधिक रुपया नहीं है, मगर मैं समझता हूँ कि मेरे मज़दूरों की टोली मुझ पर विश्वास करके मुझे पेशगी रुपया दे देगी।'

'नहीं, धन्यवाद. ऐसी बात नहीं है। चलो, मैं तुमसे जहाँ हम लोग चल रहे हैं, वहाँ चलकर अभी सब कहे ही जो देती हूँ।'

नीची छतवाली, धुँधली, सराय में, जहाँ चोर और गिरहकट अपना बाँट-बटवारा करने के लिए इकट्ठे हुआ करते थे, जिससे शाम से लेकर काफ़ी रात तक ख़ूब दूकान-दारी हुआ करती थी, पहुँचकर प्लेटोनोव एक अँधेरे से कोने में जा बैठा।

'लाओ मेरे लिए उबला गोश्त, ककड़ियाँ, एक गिलास ताड़ी और खाने के लिए रोटी' उसने पहुँचते ही दूकान के नौकर को हुक्म दिया।

नौकर ने, जो कि गन्दे चेहरे और फूली नाक का एक जवान छोकरा था और इतना गन्दा था कि लगता था, अभी किसी नाले या दलदल में से निकलकर आया है, अपने होंठ पोंछते हुए, मोटी आवाज़ में कहा :

'रोटी कितने की लाऊँ?'

'जितने की जो में आये, ले आओ ।'

यह कहकर प्लेटोनोव हँसा और कहने लगा 'ले आओ, जितनी ला सको ले आओ, दामों का हिसाब पीछे से हो जायगा । थोड़ी-सी शराब भी लेते आना !'

'अच्छा, कहो जेनी, तुम पर क्या मुसीबत है?...मैं तुम्हारे चेहरे से देखता हूँ कि तुम बड़ी परेशान हो अथवा यों ही दुनिया से घबरा उठी हो...कहो, जो कुछ कहना है, खुलकर कहो ।'

जेनेका बड़ी देर तक अपने हाथों में रूमाल पकड़कर दबाती रही और अपने जूतों की तरफ़ देखती रही, मानो वह कहने के लिए दिल कड़ा कर रही हो । उसको कहने की हिम्मत नहीं हो रही थी और बहुत प्रयत्न करने पर भी शब्द दिमाग़ में नहीं आ रहे थे । प्लेटोनोव ने उसको दिलासा देते हुए कहा :

'घबराओ मत, मेरी प्यारी जेनी, जो कुछ भी कहना है, दिल खोलकर कहो ! तुम जानती ही हो कि मैं बिल्कुल तुम्हारे घरवालों की तरह हूँ और कभी तुम्हारा भेद किसी को नहीं बताऊँगा । शायद मैं तुम्हारी बात सुनकर तुम्हें कोई ठीक सलाह दे सकूँ । कहो, कहो, जो कुछ भी कहना है, फ़ौरन कहना शुरू कर दो !'

'मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि कैसे कहूँ' जेनेका ने अनिश्चित भाव से कहा, 'बात यह है, सरजी, कि मैं बीमार हूँ,...समझे?...बड़ी बुरी तरह बीमार हूँ .. और बहुत ही गन्दे रोग से बीमार हूँ...समझते हो किस रोग से?'

'हाँ, हाँ, कहे जाओ !' प्लेटोनोव ने सिर हिलाते हुए कहा ।

'काफ़ी दिन से मैं बीमार हूँ...क़रीब एक मास से . या डेढ़ महीने से शायद । त्रिदेव के त्योहार के दिन मुझे अपने शरीर में इस बीमारी का पहले-पहल पता लगा था...' प्लेटोनोव ने जल्दी से अपना माथा पोंछते हुए, सिटपिटाकर कहा, 'ठहरो . हाँ याद आ गया...उसी रोज़ न जिस रोज़ मैं तुम्हारे यहाँ उन विद्यार्थियों के साथ गया था...क्यों?'

'हाँ, सरजी, ठीक उसी रोज़...'

'आह जेनेका', प्लेटोनोव ने झिड़की और दुःख से कहा, 'तुम्हें पता है, उन विद्यार्थियों में से दो को उस दिन के कुछ रोज़ बाद ही यह रोग हो गया...शायद तुम्हीं से उन्हें लगा?'

जेनेका की आँखें क्रोध और घृणा से चमक उठीं । वह बोली :

'हाँ, शायद मुझसे ही उन्हें यह रोग मिला हो...मगर मुझे क्या पता ? कितने आदमी मेरे पास आते-जाते थे...हाँ, मुझे अब याद आता है कि एक विद्यार्थी जो तुमसे झगड़ना चाहता था...लम्बा, ख़ूबसूरत बालों का, नाक पर चश्मा लगाये था...'

'हाँ, हाँ, उसका नाम सोबाश्नीकोव था। उसी को यह रोग, मुझे विद्यार्थियों ने बताया, हो गया था ; मगर उसकी मुझे इतनी चिन्ता नहीं, क्योंकि वह बिल्कुल कूड़ा-कर्कट था। मुझे अफ़सोस तो दूसरे का है। मैं जानता तो उसे इतने दिनों से था, मगर मैंने कभी उसका ठीक-ठीक नाम नहीं पूछा...सिर्फ़ मुझे इतना याद है कि वह किसी शहर का रहनेवाला था...पोलीयाश्क या जेनोगोडस्क का ..उसके साथी उसे रामसेस कहते थे। वह जब डाक्टरों के पास इलाज के लिए गया और उन्होंने उसे निश्चयपूर्वक बता दिया कि उसे यही रोग है तो उसने घर जाकर, गोली मारकर आत्म-हत्या कर ली। एक खत लिखकर वह छोड़ गया था, जिसमें उसने इस प्रकार को बड़ी विचित्र बातें लिखी थीं—जीवन का अर्थ मैं बुद्धि, सौन्दर्य और नेकी की विजय मानता था, मगर इस बीमारी से मैं आदमी न रहकर एक सड़ा पशु बन गया हूँ ; किसी भी दिन मुझे फ़ालिज मार सकता है। ऐसे जीवन से मैं मृत्यु ही अच्छी समझता हूँ ; मगर जो कुछ भी मैंने किया उसके लिए और आज अपनी मृत्यु के लिए केवल मैं ही दोषी हूँ। मैंने क्षणिक पाशविकता के वश होकर स्त्री का स्नेह पैसे से ख़रीदने का जो अधम काम किया था, उसी का मुझे आज दण्ड यह मिल रहा है कि मैं स्वयं अपने हाथों अपनी जान ले रहा हूँ ..'

'मुझे उसके लिए बड़ा दुःख है,' प्लेटोनोव ने कहा। जेनका ने अपने नथने फुला लिये।

'मगर मुझे.. मुझे उसके लिए ज़रा भी अफ़सोस नहीं है।'

'यह बुरा है. अच्छा नौजवान तुम खाना रखकर बाहर जाओ। ज़रूरत होने पर मैं तुम्हें बुला लूँगा,' प्लेटोनोव ने नौकर से कहा और बोला, 'यह बहुत ही बुरा है, जेनेच्का ! यह आदमी बड़ा ही ओजस्वी और होनहार था ऐसे आदमी मुश्किल से हज़ारों में एक होते हैं। मैं आत्महत्या पसन्द नहीं करता। आम तौर पर आत्महत्या करनेवाले उन बच्चों की तरह होते हैं जो मिठाई न मिलने पर दीवार से अपना सिर मारकर इसलिए तोड़ लेते हैं कि उससे आस-पास के लोगों को दुःख हो अथवा सबक मिल सके, परन्तु उसकी मृत्यु पर मैं दुःख और सम्मान से सिर झुकाता

हूँ । वह एक बुद्धिमान, उदार और दयावान् आदमी था जो सबका बड़ा ध्यान रखता था और जो, जैसा उसने अपने साथ अन्त में किया, अपने साथ कठोर था ।'

'मगर मेरे लिए सब एक से ही हैं' हठपूर्वक जेनेका ने उसका विरोध करते हुए कहा, 'बुद्धिमान् या मूर्ख, ईमानदार अथवा बेइमान, बूढ़े या जवान मेरे लिए सब एक-से ही हैं । मैं सभी से एक-सी घृणा करती हूँ, क्योंकि देखो न मुझको...मैं क्या हूँ? एक तरह का दुनिया भर का उगाल-दान, नाली, संडास मैं हूँ! सोचो तो प्लेटोनोव, कितने आदमियों ने — कितने हज़ारों आदमियों ने—अपनी गन्दगी मुझ पर डाली है । मैं उन सबको, चाहे वे मेरे साथ आकर बिस्तर में लेटे हों अथवा आकर लेटनेवाले हों, घृणा करती हूं! मेरी ताक़त में होता तो मैं इन सबको सींक पर चढ़ाकर आग में भूनती! मैं उन्हें ..'

'तुम बड़ी घमण्डी और प्रतिकारपूर्ण हो जेनी' प्लेटोनोव ने शान्तिपूर्वक कहा ।

'हाँ, पहिले न तो मैं घमण्डी ही थी और न प्रतिकारपूर्ण थी, परन्तु अब हूँ। दस वर्ष से कम जब मेरी उम्र थी, तभी मेरी अपनी माता ने ही मुझे बेच डाला था । तबसे बराबर मैं एक मर्द से दूसरे के पास जाती रही हू···किसी ने मुझे कभी मानव-प्राणी नहीं समझा! नहीं, मैं एक कीड़े, कूड़े के बर्तन, भिखारी और चोर से बदतर, कातिल से भी बदतर ही सदा समझी गई!···आदमियों को फाँसी पर चढ़ानेवाले जल्लाद से भी खराब मैं मानी गई, क्योंकि मेरे पास सरकारी जल्लाद भी आता था और वह भी मुझे हिकारत की नज़र से देखता था । मैं कुछ नहीं हूँ...एक सार्वजनिक छिनाल हूँ! समझते हो, सरजी! इस सार्वजनिक शब्द को समझते हो? सार्वजनिक का अर्थ है किसी की नहीं...न तो मा की न बाप की . न तो रूसी... न रियाजना ..बल्कि सबकी...जो रुपये दे उसकी! कभी किसी के दिमाग में यह नहीं आया कि मेरे पास आकर सोचता, 'अरे! यह भी मानवप्राणी है! इसके भी दिल है, इसके भी दिमाग है, मोम की बनी नहीं है । इसके शरीर में भुस नहीं भरा है! फिर भी मुझे अकेले मुझे ही ऐसा लगता है । चकले की तमाम छोकरियों में से अकेली मुझे ही ऐसा लगता है कि मैं एक काले, बदबूदार गढ़े में हूँ; मगर तमाम छोकरियाँ जिनमें मैं आज तक मिली हूँ और जो मेरे साथ रह रही हैं, मेरे इस वेदना को समझती हैं और मुझसे सहानुभूति रखती हैं!...फिर उन्हें यह वेदना क्यों नहीं

होती ?...क्या वे निरी बोलने और चलनेवाली माँस की लोथें ही हैं ? अपनी वेदना से भी अधिक मुझे इस बात की वेदना है !...'

'सच कहती हो।' प्लेटोनोव ने धीरे से उत्तर दिया, 'इस प्रश्न का उत्तर बड़ा मुश्किल है ! शायद ही कोई तुम्हें इसका उत्तर दे सके...'

'कोई इसका उत्तर नहीं दे सकता ! कोई भी नहीं ' उत्तेजित होकर जेनेका ने कहा, 'तुम्हें याद है, उस रोज तुम्हारे सामने ही एक विद्यार्थी लियूबा को चकले से ले गया था . '

'हाँ, हाँ, अच्छी तरह याद है.. ! अच्छा तो फिर क्या हुआ ?'

'फिर क्या हुआ ? थोड़े दिन रखकर उसे निकाल दिया ! कल वह फटे कपड़ों, में, भीगी...रोती हुई फिर चकले में लौटकर आ गई ! उस बदमाश ने उसे छोड़ दिया !...कुछ दिन तक उसके साथ खेला, मेहरबानी दिखाई और फिर निकाल दिया ! 'तुम मेरी बहिन हो' वह कहता था, 'मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा। उद्धार करूँगा.. '

'सच कहती हो ?'

'हाँ, हाँ, बिल्कुल सच कहती हूँ !...अभी तक मैंने सिर्फ एक ही मर्द सचमुच दयावान और सहायक देखा है, जिसके मन में कुत्ते का भाव नहीं पाया...और वह, सरजी, तुम हो ; मगर तुम उन सबसे बड़े भिन्न हो। तुम एक विचित्र-से आदमी हो। तुम हमेशा फिरते रहते हो...हमेशा कुछ ढूँढते फिरते हो . माफ़ करना, मुझे तुम बालक की तरह भोले लगते हो !...इसी से तो मैं सिर्फ़ तुमसे मिलने आई हूँ...'

'कहो, कहो, जेनेच्का, जो कुछ कहना हो कहो '

'तो जब मुझे मालूम हुआ कि मुझे यह बीमारी है तो क्रोध से मेरा दिमाग़ खराब हो गया.. मेरा दम सा घुटने लगा...मैंने सोचा, चलो मेरी ज़िन्दगी का क़िस्सा ही ख़तम हुआ। अब किसपर दया ! किसका अफ़सोस ! और काहे की उम्मीद !.. क़िस्सा ही ख़तम है ! मगर मुझपर जो जुल्म हुआ है, क्या इसका बदला दुनिया में कोई नहीं है ? क्या दुनिया से न्याय बिल्कुल उठ गया है ? क्या मैं बदला लेकर अपनी छाती ठण्डी नहीं कर सकती ? मैंने आज तक स्नेह क्या होता है, नहीं जाना, घर क्या होता है, केवल सुना है ; मगर यह मैं अपने अनुभव से जानती हूँ कि गन्दी कुतिया की तरह अपने पास बुलाकर वे कुछ देर तक प्यार से थपथपाते हैं

और फिर अपना जूता मेरे सिर पर रखते हुए चले जाते हैं ! यह मैं जानती हूँ कि मानव प्राणी के दर्जे से—अपने बराबरों के दर्जे से—उन्होंने मुझे गिराकर ज़मीन की गन्दगी साफ़ करने के लिए सिर्फ़ एक चीथड़ा, उसके आनन्द का मैला बहा ले जानेवाली नाली ही समझा !...हाय राम !...और अन्त में यह गन्दा रोग मुझे दिया गया ! क्या इस सबको मैं चुपचाप सहन करूँ ? ..क्या मैं ऐसी गुलाम हूँ ?...ऐसी बेबस हूँ ?...ऐसी पशु हूँ ? ..अस्तु प्लेटोनोव मैंने सबको ही यह बीमारी देने का निश्चय कर लिया...ग़रीब, अमीर, बूढ़ा, जवान, ख़ूबसूरत, बदसूरत—जो भी मेरे पास आवे सबको...!

प्लेटोनोव जो काफ़ी देर से खाना बन्द कर चुका था, उसके चेहरे को आश्चर्य से बल्कि बड़ा डरकर देख रहा था। उसने जिसने अपने जीवन में बहुत दुःख, गन्दगी और कभी-कभी ख़ूनख़राबी भी देखी थी, जेनी की अपार और अतृप्त घृणा को देखकर भय से गाय की तरह डर गया था। अपने आपको सँभालते हुए वह बोला :

'एक बड़े लेखक ने ऐसा एक किस्सा लिखा है। ज़रमनों ने जब फ्रांस पर कब्जा कर लिया और उस पर हर तरह अपना अधिकार चलाने लगे, मर्दों को बन्दूकों का निशाना बनाने, स्त्रियों का सतीत्व नष्ट करने, घरों को लूटने और खेतों और खलिहानों को जलाने लगे, तब एक बड़ी सुन्दर फ्रान्सीसी स्त्री ने जिसको जरमनी से यह बीमारी मिली थी, सबको जो उसके पास आवें, जान बूझकर यह बीमारी देने का निश्चय किया और सैकड़ों हज़ारों जरमनों को उसने इस बीमारी का शिकार बनाया और अन्त में जब वह अस्पताल में मरने लगी तो उसे अपने इस प्रतिकार को सोच-सोचकर बड़ा आनन्द और अभिमान होता था ; मगर उसने अपने दुश्मनों से जो उसकी मातृभूमि को पददलित कर रहे थे और उसके देश-बन्धुओं की जानें ले रहे थे, ऐसा भयङ्कर बदला लिया था...मगर तुमने जेनेच्का ! . '

'मगर मैंने जो भी मेरे पास आया, उससे ही बदला निकाला है ! कहो सरजो, तुम्हीं कहो कि तुम्हें सड़क पर एक ऐसा बच्चा मिले जिसे किसी ने बुरी तरह से बेइज़्ज़त और ख़राब किया है...उसकी नाक-कान काटकर उसकी आँखें निकाल ली हैं और तुम्हारे पास से वही आदमी, जिसने ऐसा किया है, निकले और ईश्वर के सिवाय—यदि ईश्वर है तो—और कोई उस समय तुम्हें नहीं देखता हो, तो तुम क्या करोगे ?'

'नहीं मालूम,' प्लेटोनोव ने सिर झुकाकर सुस्ती से कहा ; मगर उसका चेहरा पीला पड़ गया और मेज़ के नीचे रखे हुए उसके हाथों की मुट्ठियाँ बँध उठीं 'शायद मैं उसे मार डालूँगा...।'

'शायद नहीं, तुम उसे ज़रूर मार डालोगे। मैं तुम्हें जानती हूँ, मैं देख रही हूँ, तुम क्या करोगे। अच्छा, तो अब सोचो तो हम सबके साथ बचपन में ऐसा ही व्यवहार हुआ है!...जब हम बिल्कुल बच्चे थे!...' जेनेका ने दुख से कराहकर कहा और क्षणभर के लिए अपना चेहरा दोनों हाथों से ढक लिया। 'तुमने भी शायद उसी त्रिदेव के त्योहार की शाम को हमारे यहाँ यही बात कही थी?...कि हम लोग बच्चों की तरह हैं– मूर्ख, हर एक पर जल्दी से विश्वास कर लेनेवाली, अन्धी, लालची और ओछी जिससे हमें अपने जुये से निकलना असम्भव होता है...निकलकर जांय भी कहां? क्या करें? यह मत समझना सरजी कि मेरे मन में उन्हीं के प्रति प्रतीकार की अग्नि जलती है जिन्होंने मेरे साथ दुर्व्यवहार किया है...नहीं, मेरा मन उन सभी से जलता है जो हम लोगों के पास चकलों में आते हैं. उन तमाम वीर बहादुरों के प्रति छोटे से लेकर बड़े तक...अस्तु मैंने अपना और अपनी बहिनों का सभी से बदला लेने का निश्चय किया है। क्यों, यह ठीक है कि नहीं? '

'जैनेच्का, मैं क्या बताऊँ मुझे कुछ भी कहना कठिन लगता है...मेरी हिम्मत कुछ कहने को नहीं होती...मेरी समझ मे कुछ नहीं आता।'

'मगर इतना ही नहीं है...मुख्य बात तो दूसरी है, मैं जो मेरे पास आता था, उसे यह रोग दे देती थी और मेरे मन में कोई, किसी प्रकार की भी दया, पश्चात्ताप अथवा दोष का विचार नहीं आता था ; बल्कि मेरे में ऐसा करने के बाद एक प्रकार की ख़ुशी-सी होती थी जैसा कि भूखे भेड़ियों को ख़ून पी लेने पर होती है ; मगर कल एक ऐसी घटना हुई जो मेरी भी समझ में नही आती। एक सैनिक विद्यार्थी मेरे पास आया जो निरा छोकरा ही था - मूर्ख—जिसके मुँह से मा का दूध भी अभी तक सूखा नही लगता था। वह पिछले जाड़ों में मेरे पास आया-जाया करता था। मुझे कल उसे देखकर उस पर दया आ गई...इसलिए नहीं कि वह बड़ा सुन्दर और नौजवान था.. इसलिए भी नहीं कि उसका व्यवहार सदा नम्र और स्नेहपूर्ण होता था। नहीं, इसलिए हरगिज नहीं, क्योंकि मेरे पास सुन्दर नौजवान, नम्र और स्नेहपूर्ण व्यवहार करनेवाले पहले भी आ चुके थे, जिन्हें मैंने नहीं छोड़ा, बल्कि उन्हें तो मैं

छाँट-छाँटकर चुन लेती थी जैसे कि जानवरों को चुन-चुनकर गरम-गरम लोहे से दाग़ दिया जाता है ; मगर न जाने क्यों इसपर मुझे एकाएक दया आई...मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसा क्यों हुआ ? मैं बहुत सोचती हूँ, मगर मेरी समझ में कोई कारण नहीं आता। मुझे कुछ ऐसा लगा कि उसके साथ ऐसा व्यवहार करना ऐसा हो होगा, जैसा कि किसी मूर्ख या पागल को ठग लेना, अथवा किसी अन्धे के मुँह पर तमाचा मारना या किसी सोते हुए आदमी का गला घोंट देना। अगर वह काफ़ी उम्र का कोई अनुभवी आदमी होता तो मैं उसे कभी न छोड़ती, मगर वह स्वस्थ और बलिष्ट था और उसकी छाती और बाहें मूर्तियों की तरह गढ़ी हुई लगती थीं। अस्तु उसे बर्बाद करने को मेरा जी न हुआ.. और मैंने उसका रुपया उसे लौटा दिया और उसे अपनी बीमारी दिखा दी, सूक्ष्म में मैंने बड़ी ही मूर्खता का काम किया। वह तो रोता हुआ मेरे पास से चला गया, मगर तबसे फिर मुझे नींद आना असम्भव हो गया है और मैं इस प्रकार चलती-फिरती हूँ, मानो मैं अन्धकार में हूँ। मुझे लगता है कि मेरा दुनिया भर को—जो मेरे पास आये उसको, उनके बापों को, उनकी माओं को, बहिनों को, सबको—अपनी बीमारी देकर सड़ाने का स्वप्न व्यर्थ था, फ़िज़ूल था ; क्योंकि मैंने इस आदमी को छोड़ दिया ! फिर अब मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा है, सरजी आइवानोविश, तुम बड़े बुद्धिमान् हो, तुमने इतनी दुनिया देखी है—तुम्हीं मेरी मदद करो, तुम्हीं बताओ कि मैं क्या करूँ ?'

'मैं नहीं जानता, जेनेच्का !' प्लेटोनोव ने धीरे से कहा, 'यह बात नहीं है कि मुझे तुमसे कुछ कहते या तुम्हें सलाह देते हुए डर लगता है। सच तो यह है कि मुझे इस सम्बन्ध में कुछ भी मालूम नहीं है। यह मेरी बुद्धि के परे की बात है... मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा है...'

जेनी अपने हाथ मलकर, उङ्गलियाँ चटखाती हुई कहने लगी, 'समझ में मेरी भी कुछ नहीं आ रहा है...इसलिए मैं समझती हूँ कि जो मैंने सोचा था, वही ठीक है; अस्तु आज सुबह मैंने सोचा कि अब मेरे लिए एक ही रास्ता रह गया है...'

'नहीं, नहीं जेनेच्का !...ज़ेनी !...' प्लेटोनोव ने फ़ौरन उसकी बात काटते हुए कहा।

'अब मेरे लिए एक ही रास्ता रह गया है कि मैं अपने गले में फाँसी लगाकर मर जाऊँ...'

'नहीं, नहीं, जेनी, ऐसी बात हरगिज नहीं सोचनी चाहिए !...अगर कोई दूसरा रास्ता न होता तो मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि मैं तुम्हें हिम्मत से ऐसा कर डालने की सलाह दे सकता था। मैं कहता, 'जेनी, अब कुछ नहीं रहा है, दूकान बढ़ा दो।' मगर इसकी तुम्हें ज़रूरत बिल्कुल नहीं है। तुम चाहो तो मैं तुम्हें एक रास्ता बता सकता हूँ। उससे भी तुम उसी प्रकार दुनिया से अपने प्रति अन्याय का बदला ले सकती हो...उससे तुम अपने क्रोध को सौगुना अधिक उतार सकती हो...'

'वह कौन-सा रास्ता है ?' जेनी ने थकावट से पूछा, मानो एकाएक चमक उठने के बाद वह फिर मुर्झाने लगी हो।

'देखो, वह यह है...तुम अभी जवान हो और मैं तुम्हें सच बता दूँ, बड़ी सुन्दर हो। तुम चाहो तो लोगों को अपने चंगुल में आसानी से फँसा सकती हो—जो कि सुन्दरता से भी कहीं बड़ी बात है, मगर आज तक तुमने शायद कभी अपनी इस ताक़त को अच्छी तरह नहीं समझा है। तुम नहीं जानतीं कि तुम्हारे स्वभाव की स्त्रियाँ किस तरह मर्दों पर अपना जादू चलाती हैं, कैसे उनको अपने चंगुल में करके उनको गुलाम और पशु बना देती हैं...तुम अभिमानी हो, बहादुर हो, आज़ाद तबियत की हो और चतुर स्त्री हो। मैं यह भी जानता हूँ कि तुमने काफ़ी पढ़ा है—गोकि सस्ते उपन्यास ही सही—फिर भी तुमने पढ़ा तो है, तुम्हारी बातचीत का ढङ्ग दूसरों से भिन्न है। तुम चाहो तो अपना जीवन बदल सकती हो, अपना इलाज कराकर ठीक हो सकती हो और इन चकलों के जीवन से अपना पिण्ड छुड़ाकर आज़ाद हो सकती हो ! तुम चाहो तो तुम्हारी उङ्गलियों के इशारों पर सैकड़ों नौजवान नाच सकते हैं, जो तुम्हारे लिए चोरी, बदमाशी और ग़बन सब कुछ करने को तैयार हो जायँगे...उनकी रानी बनकर तुम बैठो और उन पर हाथ में कोड़ा लेकर सख्ती से राज्य करो !...उनको बर्बाद और पागल करो जब तक तुम्हारा मन और शरीर तुम्हारा साथ दे !...देखो, मेरी प्यारी जेनी, आज भी ज़िन्दगी पर स्त्रियाँ ही राज्य करती हैं ! कल की नौकरानी, धोबिन और गानेवाली लाखों की मालकिन बन बैठती है ! मुश्किल से अपने हस्ताक्षर कर सकनेवाली स्त्री भी कभी-कभी, एक आदमी के ज़रिये से बादशाहतों का भाग्य अपने हाथ में कर लेती है। शाही घरानों के शाहज़ादे सड़कों पर फिरनेवाली स्त्रियों, कल की रखेलियों से विवाह कर लेते हैं। जैनेच्का, तुम चाहो तो गज़ब ढा सकती हो...जितना बदला चाहो दुनिया से ले सकती हो !

मैं तुम्हें दूर से देख-देखकर सराहूँगा ! सचमुच तुममें ऐसी ताक़त है...तुम चील को तरह झपटकर जिस मनुष्य को चाहो अपने पंजे में फँसा सकती हो.. सबको न भी सही तो भी कुछ को तो आसानी से फंसा सकती हो.. ,

'नहीं,' जेनेका ने धीरे से मुसकराते हुए कहा, 'मैंने पहले एक बार ऐसा सोचा था...मगर अब मेरे शरीर से जान निकल चुकी है। अब मुझमें न तो शक्ति ही रही है, न कोई इरादा और न इच्छा। मैं अन्दर से बिल्कुल गलकर खाली हो गई हूँ।.. तुमने उस सड़े हुए कुकुरमुत्ते को तो देखा ही होगा जिसको पकड़कर ज़रा दबाते ही वह चूर-चूर हो जाता है। मैं भी बिल्कुल उसी तरह हो गई हूँ। मेरी ज़िन्दगी में अब घृणा के सिवाय और कुछ नहीं रहा है, मगर जैसा मेरा शरीर खोखला है वैसी ही, मुझे लगती है कि मेरी घृणा भी निरी खोखली ही है ; क्योंकि मैं फिर किसी छोटे बालक को देखूँगी.. और उसे देखकर फिर मुझे दया हो आयेगी और फिर अपनी कमज़ोरी पर मुझे दुःख होगा।.. नहीं, इससे वही बेहतर है... अब यही बेहतर है।...

वह चुप हो गई। प्लेटोनोव की समझ में भी न आया कि क्या कहे। दोनों बड़ी उलझन और परेशानी में पड़ गये। अन्त में जेनेका उठी और उठकर प्लेटोनोव की तरफ़ न देखते हुए, उसने अपना ठण्डा और कमज़ोर हाथ उसकी तरफ़ मिलाने को बढ़ाते हुए कहा :

'बन्दगी, सरजी आइवानोविश ! माफ़ करना, मैंने तुम्हारा बड़ा वक्त ख़राब किया...मैं देखती हूँ कि तुम मुझे सहायता कर सकते तो अवश्य करते...मगर अब कुछ करने के लिए रहा नहीं है...कुछ हो नहीं सकता ! अस्तु बन्दगी !'

'लेकिन कोई बेवकूफ़ी का काम मत कर बैठना, जेनेच्का ! यह मेरी तुमसे प्रार्थना है !...'

'नहीं, कोई बेवकूफ़ी का काम नहीं करूँगी।' उसने थकावट से हाथ हिलाकर कहा !

मैदान के पास आकर दोनों ने अपना-अपना रास्ता पकड़ा, मगर कुछ ही क़दम चलकर जेनेका फिर मुड़ी और उसको पुकारा, 'सरजी आइवानोविश, ओ सरजी आइवानोविश !'

वह रुक गया और मुड़कर फिर उसके पास लौट आया।

'सुनो सरजी, रोलीपोली का दम कल हमारी बैठक में निकल गया। वह बड़ी देर

से उछल-कूद रहा था, एकाएक नीचे गिरा और दम निकल गया···ख़ैर, बड़ी अच्छी मौत रही। और एक बात और मैं तुमसे पूछना भूल ही गई, सरजी···एक आखिरी बात···ईश्वर है या नहीं ?'

प्लेटोनोव ने भौंहें चढ़ाकर कहा, 'मैं इस प्रश्न का तुम्हें क्या जवाब दूँ ? मुझे ख़ुद पता नहीं ! मैं समझता हूँ ईश्वर है, परन्तु ऐसा नहीं है जैसा हम उसे समझते हैं। वह उससे कहीं अधिक बुद्धिमान् और न्यायी है, जैसा हम उसे समझते हैं···'

'और इस जीवन के बाद भी कोई जीवन होता है क्या ? मृत्यु के बाद भी कुछ होता है ? जैसा कहा जाता है स्वर्ग और नरक होते हैं, क्या सच है ? बताओ सच क्या है ? और यह सब झूठ है, मृत्यु के बाद कुछ नहीं होता ? सिर्फ़ ऊजड़ आकाश होता है ? एक नींद होती है जिसमें स्वप्न तक नहीं आते ? एक अँधेरी कोठरी होती है ?'

प्लेटोनोव चुपचाप खड़ा रहा। अपनी आँखें उठाकर जेनेका की तरफ़ देखने की भी उसकी हिम्मत नहीं हुई। उसका दिल दुःख और भय से बैठा जा रहा था।

'मुझे पता नहीं,' आखिरकार उसने अपने आपको बड़े प्रयत्न से सँभालकर कहा, 'मैं तुमसे झूठ नहीं कहना चाहता।'

जेनेका ने एक गहरी साँस ली और एक दयापूर्ण टेढ़ी मुसकान उसके चेहरे पर नाच उठी।

'अच्छा, धन्यवाद, मेरे प्यारे ! इतना कहने के लिए भी धन्यवाद...मेरी तुम्हारे लिए शुभ कामना है। हृदय से मैं तुम्हारा भला चाहती हूँ। अच्छा, बन्दगी...'

यह कहकर वह मुड़ी और धीरे-धीरे, काँपते हुए पैरों से, टीले पर चढ़ने लगी।

× × ×

प्लेटोनोव लौटकर जब नावों के पास पहुँचा तो काम शुरू हो ही रहा था ! मज़दूर अपने शरीर खुजलाते हुए, जमुहाई लेते हुए और अपनी स्थिति ठीक करते हुए, अपनी-अपनी जगहें ले रहे थे। चौधरी ने दूर से ही प्लेटोनोव को आता देखकर बड़ी ज़ोर से चिल्लाकर कहा :

'अच्छा, अच्छा, आ गया वक्त से···राक्षस का अवतार !...मैं सोच ही रहा था कि तेरी दुम पकड़कर इस गिरोह में से बाहर निकालकर फेंक दूँ···अच्छा, खड़ा हो जा अपनी जगह पर !'···

'मगर यार निकले तुम बड़े छिपे रुस्तम, सरेज्का!' फिर वह स्नेह से बोला, 'कहीं रात होती तो न जाने तुम क्या करते! दिन में ही तुम्हारा यह हाल है!...'

पैंतीसवाँ अध्याय

शनिवार का दिन था। साप्ताहिक डाक्टरी मुआयने के लिए चकले के हर घर में छोकरियाँ काँपती हुई तैयारी कर रही थीं जिस तरह कि फैशनेबल स्त्रियाँ डाक्टरों के पास जाने के लिए तैयारियाँ करती हैं। अच्छी तरह से साफ़-सुथरी होकर और शृंगार करके वे साफ़ और अच्छे कपड़े पहिन रही थीं। सड़क की तरफ़ की तमाम खिड़कियों के द्वार बन्द थे और आँगन की तरफ़ की एक खिड़की से सटी हुई, लेटने के लिए एक मेज़ रखी थी जिसपर पीठ को नीचे से उठाने के लिए एक लकड़ी का तकिया-सा बना था।

तमाम छोकरियाँ परेशानी से सोच रही थीं, 'कहीं मुझे कोई ऐसी बीमारी न निकल आये, जिसका मुझे पता नहीं लग सका है!...ऐसा हुआ तो अस्पताल में जाकर पड़ना होगा, बदनामी होगी, अस्पताल में मुश्किल से दिन कटेंगे, खाना भी अच्छा नहीं मिलेगा, इलाज की सख्तियाँ सहनी होंगी...

केवल मोटी मनका, जिसको मगरमच्छ भी कहते थे और हेन्रीटा जिन सबकी उम्र तीस बरस की हो चुकी थी, जिससे वे चकले के रिवाज के अनुसार पुरानी हो चुकी थीं, सब कुछ देख चुकी थीं, और सरकस के घोड़ों की तरह जीवन के उतार-चढ़ावों की आदी हो गई थीं; पूर्ण शान्त थीं, मगरमच्छ मनका तो कभी-कभी मन ही मन कहती भी थी, 'मैं सब कुछ देख चुकी हूँ...और मुझे क्या होगा?'

जेनेका आज सुबह ही से चुपचाप किसी विचार में थी। उसने नन्हीं मनका को एक सोने की माला, एक पतली जंजीर जिसमें उसका अपना एक छोटा-सा फोटो जड़ा था और एक चाँदी की सलीब जिसमें गले से लटकाने के लिए एक रेशमी डोरा पड़ा था, भेंट की और टमारा से उसने हठ किया कि वह उसकी यादगार में दो अँगूठियाँ अपने पास रख ले। एक तीन तारों की चाँदी की अँगूठी थी। ये तार अलग हो सकते थे और उनके बीच में एक चाँदी का दिल और दूसरे दोनों तारों

पर दो हाथ बने हुए थे जो तीनों तारों के मिलाकर पहनने से दिल को पकड़ लेते थ। दूसरी अँगूठी पतली-सी सोने की थी, जिसपर एक नगीना जड़ा था।

'और मेरी कुरती, टमोरच्का, तुम नौकरानी अनूश्का को दे देना। वह उसे अच्छी तरह धोकर मेरी याद में पहिनेगी।'

दोनों टमारा के कमरे में बैठी थीं। जेनेका ने आज सबेरे ही काग्नेक शराब पीने के लिए मँगा ली थी और इस समय बैठी हुई, सुस्ती से धीरे-धीरे, गिलास पर गिलास चढ़ा रही थी और शराब पीकर नीबू और शकर चख रही थी। टमारा ने आज पहली ही बार उसे ऐसा करते देखा था, जिससे उसे बड़ा आश्चर्य हो रहा था; क्योंकि जेनेका को हमेशा से शराब नापसन्द थी और कभी-कभी मेहमानों के बहुत मजबूर करने पर ही वह शराब पिया करती थी।

'आज तुम्हें क्या हुआ है? कैसी बातें कर रही हो?' टमारा ने पूछा, 'मानो तुम मरने के लिए तैयार हो रही हो अथवा संन्यास ले रही हो?'

'हाँ, मैं चली जाऊँगी', जेनेका ने सुस्ती से कहा, 'मैं ऊब गई हूँ, टमोरच्का!...'

'और हममें से ख़ुश ही कौन है यहाँ?'

'हाँ, शायद!···मगर मैं ऊब ही नहीं गई हूँ···मुझे सब चीज़ें एक-सी लगने लगी हैं···मैं तुमको देखती हूँ और फिर इस मेज़ को, इस बोतल को, अपने हाथों और पाँवों को देखती हूँ और ये सब चीज़ें मुझे एक-सी···एक-सी निरर्थक लगती हैं···किसी चीज़ का कोई उद्देश्य नहीं लगता।···मुझे सारा जीवन एक पुरानी, बड़ी पुरानी उस तस्वीर की तरह लगता है जिसे देखते-देखते उससे घृणा हो उठती है। देखो, वह सिपाही सड़क पर जा रहा है, मगर वह सजीव सिपाही है अथवा एक निर्जीव गुड़िया जिसे तारों से चलाया जा रहा है, मुझे दोनों एक-से ही हैं। वह मेंह में भीग रहा है, इसकी भी मुझे चिन्ता नहीं होती और यह सोचकर कि वह मर जायगा, मैं मर जाऊँगी और तुम भी टमारा, मर जाओगी। मुझे न तो कोई आश्चर्य ही होता है और न डर ही...सभी चीज़ें मुझे एक-सी साधारण और अर्थहीन लगती हैं···'

जेनेका कुछ देर तक चुप रही। एक गिलास शराब उसने पिया, थोड़ी शकर चखी और फिर सड़क की तरफ़ देखती हुई एकाएक बोली:

'टमारा, मैंने आज तक तुमको कभी नहीं पूछा—तुम इस घर में कहाँ से और क्यों कर आईं? तुम हम लोगों से बिल्कुल भिन्न दीखती हो, तुम सब कुछ जानती

हो, जो कुछ भी घटता है उसके लिए तुम कुछ न कुछ अच्छी और बुद्धिमानी की बात कहती हो···तुम फ्रेंच बोल रही थीं। मगर हममें से कोई भी तुम्हारे बारे में कुछ नहीं जानता।...कहो तो, तुम कौन हो?'

'प्यारी जैनेच्का, मेरे बारे में कोई खास जानने योग्य बात नहीं है...मेरी ज़िन्दगी भी ऐसी ही है जैसी दूसरों की···मैं पहले एक स्कूल में थी, फिर एक जगह बच्चों की देखरेख करती और उन्हें शिक्षा देती थी, फिर गाने का काम करने लगी थी, उसके बाद कुछ दिन तक मैंने एक जुआ-घर चलाया, फिर एक धोखेबाज़ के साथ में पड़ गई और मैंने बन्दूक चलाना सीखा और मैं सरकसों में अमेरिकन अमेजन स्त्री का पार्ट करती फिरी। मैं बड़ी अच्छी निशानेबाज़ हो गई···मगर फिर मैं एक आश्रम में जाकर रहने लगी। वहाँ मैं दो वर्ष तक रही...मैं ऐसी ही बहुत मारी-मारी फिरी हूँ···सब याद नहीं आता···मैं चोरी भी करती थी···'

'तुमने बहुत दुनिया देखी है ..तरह तरह की ज़िन्दगी देखी है।'

'हाँ, मेरी काफ़ी उम्र भी तो हो चुकी है। तुम क्या समझती हो, मेरी अब क्या उम्र होगी?'

'बाईस-तेईस बरस की?...'

'नहीं, मेरी प्यारी, पिछले सप्ताह मेरी बत्तीसवीं वर्षगाँठ थी। मैं शायद इस घर की सभी छोकरियों से उम्र में बड़ी हूँ। मैं न तो किसी चीज़ पर आश्चर्य करती हूँ और न किसी बात का दुःख करती हूँ। तुम जानती ही हो मैं शराब भी नहीं पीती हूँ...और मैं अपने शरीर का बहुत फ़िक्र रखती हूँ और ख़ास बात, सबसे ख़ास बात तो यह है कि मैं कभी किसी मर्द पर लट्टू होकर, उसकी बातों में नहीं आती...'

'मगर, तुम्हारा सेनका?'

'सेनका की बात दूसरी है...औरत का दिल मूर्ख और अस्थिर होता है...और शायद बिना प्रेम के नहीं रह सकता। फिर भी मैं उसे प्रेम नहीं करती, लेकिन यों ही . अपने आपको धोखा देती हूँ।...मगर फिर भी, मुझे शीघ्र ही सेनका की बड़ी ज़रूरत होगी।'

जेनेका में एकाएक जान-सी आ गई और उसने उसकी तरफ़ उत्सुकता से देखते हुए पूछा, 'मगर तुम यहाँ कैसे आ फँसी? तुम इतनी चतुर, सुन्दर और मिलनसार हो...'

'वह सब कहानी कहने के लिए बड़ा वक्त चाहिए...और मैं बड़ी आलसी हूँ...
यहाँ प्रेम के कारण आई। एक नौजवान से मेरा प्रेम हो गया और मैंने उसके
ान्ति में भाग लिया। हम स्त्रियों का ढङ्ग है...जो हमारा प्रेम देखता है, हम
लगती हैं...करता है, हम भी करने लगती हैं...मुझे सचमुच हृदय से
में विश्वास नहीं था, परन्तु उसके साथ साथ मैं भी उसके काम में लग
ा चापलूस, चतुर, बड़ी अच्छी-अच्छी बातें करनेवाला और अच्छा दीखने
जवान था...मगर बाद में वह बड़ा धोखेबाज़ साबित हुआ। वह इधर
ग लेने का बहाना करता था, ऊधर पुलिस से जाकर सारा हाल बता
क्रान्तिकारियों ने उसे गोली से मार डाला और तब मेरी आँखें खुलीं,
अपने आपको छिपाने की ज़रूरत हुई...और मैंने अपना पासपोर्ट
मुझे सलाह दी गई कि छिपने के लिए सबसे सुरक्षित पीले टिकट
यहाँ आ गई!...यहाँ मैं उसी तरह हूँ, जिस तरह चरागाह में
रते हैं; मौक़ा आते ही, काम में सफलता होते ही, मैं यहाँ से चली

'कहाँ चली जाओगी?' जेनी ने उत्सुकता से पूछा।

'दुनिया बहुत बड़ी है...और मुझे ज़िन्दगी से प्रेम है!...इसी तरह मैं उस आश्रम में भी रहती रही, पूजापाठ करती थी और ख़ूब भजन गाती थी; फिर जब मुझे काफ़ी आराम मिल गया और मैं वहाँ की ज़िन्दगी से ऊब उठी तो मैं वहाँ से चल दी और जाकर नाचने-गाने का काम करने लगी! उसी तरह यहाँ से भी किसी दिन चल दूँगी...जाकर किसी थियेटर या सरकस में काम करने लगूँगी...मगर जैनेच्का, न जाने क्यों मुझे चोरी का व्यवसाय बहुत पसन्द है...उसमें हिम्मत की ज़रूरत पड़ती है, खतरा होता है, मुश्किलें आती हैं और बड़ा मज़ा आता है! मेरा मन चोरी करने को होता है! यह मत समझना कि मैं देखने में शरीफ़ और भली लगती हूँ और पढ़ी-लिखी होने का दिखावा कर सकती हूँ! मैं बिल्कुल दूसरी ही किस्म की हूँ।'

उसकी आँखें एकदम दमक उठीं और वह आनन्द में भरकर बोली, 'मेरे अन्दर शैतान है!'

'तुम्हारे लिए यह सब ठीक है,' जेनी ने थकावट से विचारपूर्वक कहा, 'तुम्हारे

मन में कोई इच्छा तो है, मगर मेरी आत्मा तो लाश की तरह हो गई है...मेरी उमर पच्चीस वर्ष की है, मगर मेरी आत्मा बूढ़ी खूसट है...काश कि मैंने अपनी ज़िन्दगी अक्लमन्दी से गुज़ारी होती !...उफ़ ! . कोई मन में भाव होता !'

'छोड़ो जेनेका, मूर्खता की बातें मत करो। तुम चतुर हो, मौलिक हो ; तुम में वह शक्ति है जिसके आगे मर्द झुक-झुककर बड़ी ख़ुशी से रेंगते हैं। तुम भी यहाँ से चली जाना। मेरे साथ नहीं—क्योंकि मैं हमेशा अकेली रहती हूँ—मगर अपने आप अकेली ही यहाँ से चली जाना।'

जेनेका ने सिर हिलाया और चुपचाप बिना आँसू बहाये, दोनों हाथों से अपना मुँह ढक लिया।

'नहीं,' वह काफ़ी देर तक चुप रहने के बाद बोली, 'नहीं, यह मुझसे नहीं होगा, मैं अन्दर से बिलकुल खोखली हो गई हूँ !...मैं अब इन्सान नहीं रही हूँ, बल्कि एक प्रकार की गन्दगी हूँ !' एकाएक उसने निराशा का भाव प्रकट करते हुए अपने आपसे कहा, 'आओ जेनेच्का शराब पियो और थोड़ा नीबू चखो !...'बाप रे... कैसा ! बुरा स्वाद है !...जाने कहाँ से अनूस्का ऐसी शराब उठाकर लाती है ? कुत्तों के बालों पर यह शराब लगा दी जाय तो उसके सारे बाल गिर जायँ ! मगर यहाँ यह नीच इसके लिए दूसरी जगहों से आठ आना ज़्यादा दाम लेती है। मैंने एक दिन पूछा, 'इतना रुपया जोड़कर क्या करोगी ?' तो वह बोली 'अपनी शादी के लिए जोड़ रही हूँ। अपने पति को मैं अपना निर्दोष शरीर ही भेंट न करूँगी, बल्कि रुपयों की एक अच्छी थैली भी !' वह बड़ी ख़ुश है !...उस आइने के नीचे रखे हुए छोटे-से बक्स में मेरा कुछ रुपया है ; वह तुम कृपया उसे दे देना ..'

'तुम क्या करने का विचार कर रही हो, मूर्ख ! क्या तुम मरने की तैयारी कर रही हो, क्या ?' टमारा ने उसे डाँटकर कहा।

'नहीं, मैंने यों ही कहा। कोई बात हो जाय तो...उस रुपये को ले लो...अभी लेकर अपने पास रख लो ! मुमकिन है मुझे अस्पताल जाना पड़े ।...हो सकता है कि कोई घटना यहाँ ही हो जाय। मैंने यही सोचकर कुछ रुपये बचाकर रख लिये हैं कि न जाने क्या हो...मान लो कि मैं सचमुच आत्महत्या ही करना चाहती हूँ, टमोरच्का, तो क्या तुम उसमें अड़चन डालोगी ?'

टमारा ने उसकी तरफ़ चुपचाप, ध्यानपूर्वक घूरकर देखा। जेनी की आँखें-दुखी

और खाली-सी दीखती थीं। उनमें से जीवन की आग बुझ-सी चुकी थी और वे धुँधली और मुर्झाई हुई लग रही थीं।

'नहीं', टमारा ने आखिरकार शान्तिपूर्वक, मगर दृढ़ता से कहा, अगर तुम प्रेम के कारण आत्महत्या करने का विचार करती तो मैं तुम्हारा मन समझा-बुझाकर उस पर से हटाती, मगर कुछ परिस्थियाँ ऐसी होती हैं जिनमें बाधा नहीं डालना चाहिए। मैं तुम्हारी मदद तो ऐसे काम में अवश्य नहीं करूँगी, मगर मैं तुम्हें पकड़ूँगी और रोकूँगी भी नहीं।'

इतने में फुर्तीली ज़ोसिया तमाम कमरों के आगे से चिल्लाती हुई निकल गई, 'श्रीमतियो, कपड़े पहिनो! डाक्टर साहब आ गये। श्रीमतियो, कपड़े पहिनकर तैयार हो जाओ।'

'अच्छा, टमारा जाओ, जाओ,' जेनेका ने उठते हुए स्नेहपूर्वक कहा। 'मैं एक मिनट के लिए अपने कमरे में जाती हूँ। मैंने अभी तक कपड़े भी नहीं बदले हैं, गो कि सच तो यह है कि उसकी भी मुझे बिल्कुल फ़िक्र नहीं है। मेरा नाम पुकारा जाने लगे और मुझे कुछ देर हो जाय, वक्त से न पहुँच सकूँ तो तुम दौड़कर मुझे ले जाना।

टमारा के कमरे से निकलते हुए उसने टमारा को कन्धों से पकड़कर चिपटा लिया, मानो यों ही उसने ऐसा किया हो और उसके कन्धों को प्यार से थपथपाया।

× × ×

डाक्टर क्लीमेन्को, शहर का सरकारी डाक्टर, कमरे में डाक्टरी मुआयने के लिए तमाम ज़रूरी चीजें ठीक कर रहा था—वैसलीन, दवाएँ, छोटा-सा एक आइना इत्यादि और ठीक करके उन्हें एक छोटी मेज़ पर रख रहा था। इसी मेज़ पर तमाम छोकरियों के टिकट और उनके नामों की सूची भी रखी थी। छोकरियाँ सिर्फ एक कपड़ा, मोज़े और स्लीपर पहिने खड़ी या बैठी थीं। मेज़ के पास मालकिन अन्ना मारकोव्ना खड़ी थी और उसके कुछ पीछे दोनों खालाएँ ऐम्मा ऐडवार्डोव्ना और ज़ोसिया।

डाक्टर बूढ़ा, बेदिल, सिलकिल्ला-सा दीखता था, जिसको किसी चीज़ की फ़िक्र नहीं लगती थी। उसने अपना चश्मा नाक पर टेढ़ा रखा और सूची उठाकर पुकारा :

'ऐलेकजेन्ड्रा बुडजिन्सकाया!...'

क्रोधी चेहरे, मोटी नाकवाली, छोटी नीना, निकलकर आई। चेहरे पर क्रोधी भाव

बनाये हुए, शर्म और सिटपिटाहट और मेहनत से हाँफती हुई वह भोंड़ी तरह से मेज पर चढ़ी। डाक्टर ने चश्मे में से आँखें टेढ़ी कर-करके और चश्मा उतार-उतारकर उसका मुआयना किया।

'जाओ ठीक है!' उसने कहा और टिकट को पीठ पर लिख दिया 'तारीख़ २८ अगस्त। ठीक।' लिखना ख़तम करने से पहिले ही उसने फिर पुकारा :

'वोश्चेन्कोवा आईरीन!...'

अब लियूबा की बारी थी! डेढ़ महीने तक आज़ाद रहने से वह इन साप्ताहिक डाक्टरी मुआयनों की आदी नहीं रही थी। अस्तु, जब डाक्टर उसकी छाती पर से कपड़ा उठाकर उसे देखने लगा तो लज्जा से उसका मुँह लाल हो गया जैसी कि बड़ी शर्मीली स्त्रियाँ अपनी गर्दन दिखाती हुई भी शर्माती हैं। उसके बाद ज़ो का मुआयना हुआ, उसके बाद नन्हीं मनका का, उसके बाद टमारा का और उसके बाद नियूरा का। नियूरा में डाक्टर ने सूज़ाक की बीमारी पाई और उसे फ़ौरन अस्पताल भेजने का हुक्म दिया।

डाक्टर ने सबका मुआयना बड़ी आश्चर्यजनक शीघ्रता से कर डाला। बीस वर्ष से लगातार वह इसी तरह सैकड़ों छोकरियों का हर सप्ताह मुआयना करता था, अस्तु उसमें पेशेवर लोगों की वह हाथ की सफ़ाई और फुर्ती आ गई थी जो कि आम तौर पर सरकस के खिलाड़ियों, ताश के खेल करनेवालों, फर्नीचर उठानेवालों और पैक करनेवालों इत्यादि में पाई जाती है। उसने अपना मुआयना उसी तरह पूरा किया जिस तरह मवेशियों के डाक्टर सैकड़ों जानवरों का मुआयना एक दिन में कर डालते हैं।

क्या उसने क्षण भर के लिए···यह भी सोचा कि वह इन्सानों का मुआयना कर रहा है अथवा वह उस भयकर जंजीर की आख़िरी और सबसे ज़रूरी कड़ी है जिसका नाम कानूनी वेश्यावृत्ति है?

नहीं! शायद उसने अपना पेशा शुरू करने पर पहले-पहल जब यह काम किया हो, तब कभी ऐसा सोचा हो तो सोचा हो। अब तो उसके सामने सिर्फ़ नंगे पेट, नंगी गरदनें और खुले हुए मुँह इन स्त्रियों के, जिनका वह हर शनिवार को मुआयना करता था, तमाम झुण्डों में से किसी को, वह सड़क पर मिलने पर, शायद ही पहिचान सकता था। उसे तो केवल हरएक का जल्दी-जल्दी मुआयना ख़त्म करने की फ़िक्र होती थी

जिससे कि एक घर ख़तम करके वह दूसरे का, तीसरे का, नवें का, और बीसवें का मुआयना कर सके।

'सुसान्नाह रायटज़ीना !' अन्त में डाक्टर ने पुकारा। कोई बढ़कर मेज़ तक न आया। तमाम स्त्रियाँ एक दूसरे का मुँह देखने लगीं और घुसपुस-घुसपुस करने लगीं।

'जेनेका . कहाँ है जेनेका !...'

मगर जेनेका वहाँ नहीं थी।

तब टमारा ने, जिसका डाक्टर ने अभी मुआयना ख़तम किया था, आगे बढ़कर कहा; :

'वह अभी नहीं आई है। वह तैयार नहीं हो पाई है। माफ़ करिए डाक्टर साहब, मैं जाकर उसे अभी बुलाये लाती हूँ।'

वह दौड़ती हुई वहाँ से गई, मगर फिर देर तक वापिस न आई। उसके पीछे पहले ऐम्मा ऐडवार्डोवना, फिर जोसिया, कई छोकरियाँ और अन्त में खुद अन्ना गई।

'फू, कैसी वाहियात बात है !.. ' ऐम्मा रास्ते में घृणा से मुँह बनाकर कह रही थी, 'हमेशा जेनेका ही ऐसी हरकतें करती है !...हमेशा यह जेनेका ही !...मेरे सब्र की हद हो गई है ...'

मगर जेनेका कहीं न मिली। न तो वह अपने कमरे में थी और न टमारा के कमरे में। तमाम कमरों में उसे ढूँढा गया। मकान के हर कोने में उसकी तलाश की गई, मगर वह कहीं न मिली।

'पाखाने में देखना चाहिए...शायद वहाँ गई हो ?' ज़ो ने कहा।

मगर पाखाना अन्दर से बन्द था—चटखनी लग रही थी। ऐम्मा ने द्वार घूँसों से खटखटाया।

'जेनी बाहर आओ ! कैसी मूर्खता का काम करती हो ?' फिर आवाज़ ऊँची करके वह बेसब्री से धमकाती हुई चिल्लाई :

'सुनती है कि नहीं, सूअर ?...फ़ौरन निकल आ, डाक्टर साहब इन्तजार कर रहे हैं !'

मगर किसी किस्म का कोई उत्तर न मिला।

सब एक दूसरे के मुँह की तरफ़ डरकर देखने लगीं। सभी के दिमाग में एक ही विचार आया।

ऐम्मा ने द्वार का हैन्डल पकड़कर ज़ोर से धक्का दिया, मगर द्वार टस से मस न हुआ।

'सिमियन को बुलाओ !' अन्ना ने कहा।

सिमियन बुलाया गया। वह ऊँघता हुआ और सुस्त, जैसी उसकी आदत थी, आया। छोकरियों और खाला के परेशान चेहरे देखते ही उसने फ़ौरन समझ लिया कि कोई ऐसी बात हो गई है, जिसमें उसकी क्रूरता और ताकत की ज़रूरत है। उन्होंने जब उसको सारा मामला समझा दिया तो उसने द्वार का हैन्डल पकड़कर, दीवार से सटकर, ज़ोर से द्वार पर धक्का मारा।

हैण्डल निकलकर उसके हाथ में आ गया और वह ज़मीन पर गिरते-गिरते बच गया, मगर द्वार फिर भी न खुला।

'अच्छा, अच्छा' उसने गुर्राते हुए कहा, 'एक छुरी तो मुझे दो !'

किवाड़ों की दराज़ में से उसने अन्दर से बन्द चटख़नी छुरी से छुई। धीरे-धीरे छुरी से खुरच-खुरच और घुमा-घुमाकर उसने किवाड़ों की दराज़ कुछ चौड़ी की जिसमें छुरी घुसेड़कर वह आसानी से उससे अन्दर की चटख़नी छूने लगा। फिर उसने धीरे-धीरे छुरी से चटख़नी को घिसना और हिलाना शुरू किया। सब चुपचाप खड़े थे। केवल चटख़नी पर छुरी की रगड़ की आवाज़ सुनाई देती थी।

आख़िरकार चटख़नी गिरी और सिमियन ने धक्का देकर द्वार खोल दिया।

पाख़ाने के बीचौंबीच छत में लगी लेम्प की रस्सी से जेनेका फाँसी लगाये लटक रही थी। उसका शरीर, जिससे जान जल्दी ही शायद निकल गई थी, लटकता हुआ धीरे-धीरे दायें-बायें घूम रहा था। उसका चेहरा नीला और लाल हो रहा था और जकड़ी हुई दाँतो में से जबान का सिरा बाहर को निकल आया था ; लेम्प जिसको रस्सी में से खोलकर ज़मीन पर रख दिया गया था, फर्श पर गिरा पड़ा था।

किसी के मुँह से ज़ोर की एक चीख़ निकली और सब छोकरियाँ चिल्लाती और सिसकती हुई, एक दूसरे को धक्का देती हुई, भेड़ों की तरह भागीं।

डाक्टर चीख़ने की आवाज़ सुनकर आया...आया, भागा नहीं। जो कुछ उसने देखा, उस पर उसे आश्चर्य या उत्तेजना नहीं हुई। इतने दिनों की सरकारी डाक्टरी में उसने ऐसे बहुत से वाक़यात और दृश्य देखे थे जिससे वह इन चीज़ों का—घावों और मृत्यु का—आदी हो गया था। उसने सिमियन से जेनेका की लश पकड़कर ज़रा

ऊपर उठाने को कहा और खुद एक कुर्सी पर चढ़कर उसने उसके गले की रस्सी काट दी। उसने फ़ौरन जेनेका की लाश जेनेका के कमरे में ले चलने का हुक्म दिया और वहाँ उसने सिमियन की मदद से, जेनेका के शरीर में मालिश करके उसके प्राण लौटाने का प्रयत्न किया। अस्तु, पाँच मिनट तक प्रयत्न करके वह रुक गया। शरीर से बिल्कुल जान निकल चुकी थी। उसने अपनी नाक पर चश्मा जो टेढ़ा हो गया था, सँभालकर रखा और बोला, 'पुलिस को रपट तैयार करने के लिए बुलाओ।'

फिर बरकेश आया और उसने अन्ना के कमरे में बैठकर उससे देर तक घुसपुस की और फिर अपनी जेब में उसने एक सौ रुपये का नोट रखा।

पाँच मिनट में रिपोर्ट तैयार हो गई और जेनेका जैसी आधी नङ्गी फाँसी पर लटकी थी, वैसी ही एक किराये की गाड़ी में, दो चटाइयों में लपेटकर अस्पताल भेज दी गई।

ऐम्मा एडवार्डोवना को पहले-पहल जेनेका का पत्र मेज़ पर रखा मिला। अपनी उस आमदनी और खर्च की किताब में से जो क़ानूनन हर वेश्या को रखना ज़रूरी था, उसने एक सफ़ा फाड़कर उस पर पेन्सिल से बच्चों की तरह गोल-गोल अक्षरों में यह खत लिखा था जिससे यह स्पष्ट था कि आत्महत्या करने के कुछ क्षण पहले तक भी उसके हाथ काँपे नहीं थे। खत में लिखा था :

'मेरी प्रार्थना है कि मेरी मृत्यु का इलजाम किसी के सिर न मढ़ा जाय। मैं खुद अपनी जान दे रही हूँ; क्योंकि एक तो मैं बुरी बीमारी की शिकार हो गई हूँ, दूसरे मैंने यह भी अनुभव किया है कि सभी लोग बदमाश हैं जिससे इस दुनिया में रहने की तबियत नहीं होती। मेरी चीज़ों का बटवारा किस प्रकार किया जाय, मैंने टमारा को बता दिया है। वह सब जानती है।'

ऐम्मा ऐडवार्डोवना टमारा की तरफ़ मुड़ी जो वहीं दूसरी छोकरियों के साथ खड़ी थी और मुड़कर उसपर एक रूखी व घृणा-पूर्ण दृष्टि डालती हुई फुसकारी :

'अच्छा तो इस नीच को सब कुछ पता था। क्यों कुतिया, तुझे मालूम था कि यह क्या करनेवाली है?.. फिर भी तूने मुझे नहीं बताया!...'

उसने अपनी आदत के अनुसार घुमाकर टमारा को ज़ोर से मारने के लिए अपना हाथ बढ़ाया, मगर टमारा का चेहरा देखते ही वह हक्का-बक्का होकर, आँखें निकाले, हाथ रोककर जैसी की तैसी खड़ी रह गई। उसे ऐसा लगा कि वह आज

टमारा को पहली ही बार देख रही थी। टमारा जो उसकी तरफ़ एक दृढ़, क्रोधपूर्ण और असह्य दृष्टि से देख रही थी, धीरे-धीरे नीचे से उठाते हुए आखिरकार एक चमकती हुई सफ़ेद धातु की चीज़ उसके हक्का-बक्का मुख के बिल्कुल पास ही ले आई।

छत्तीसवाँ अध्याय

उसी दिन शाम को अन्ना के घर में एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटना घटी। तमाम पेढ़ी—मय ज़मीन और मकान के, मय सारे जीवित और निर्जीव माल के -ऐम्मा ऐडवार्डोवना के हाथों में चली गई।

इस बात की चर्चा तो अक्सर इस घर में हुआ करती थी कि एक दिन अन्ना की पेढ़ी की मालकिन ऐम्मा ऐडवार्डोवना हो जायगी, परन्तु जेनो के मरते ही जब एका-एका पेढ़ी की मालकिन सचमुच ऐम्मा के हो जाने की ख़बर सुनाई गई तो तमाम छोकरियाँ आश्चर्य और भय से ऐसी घबरा उठीं कि काफ़ी वक्त वे अपने आपे में न रहीं। इस जरमन औरत ऐम्मा के मातहत में रह चुकने के कारण वे उसकी क्रूरता, दिखावटी बड़प्पन, उसके लालच, उसकी धृष्टता और उसके कभी इस छोकरी और कभी उस छोकरी के प्रति अस्वाभाविक प्रेम से परिचित थीं। इसके अतिरिक्त यह भी सभी को मालूम था कि उन पन्द्रह हज़ार रुपयों में से, जो ऐम्मा ने अन्ना को पेढ़ी की कीमत के तौरपर दिये थे, पाँच हज़ार रुपये पुलिस के दारोगा बरकेश के थे, जिसका बहुत दिनों से मोटी खाला ऐम्मा से आधा दोस्ताना और आधा व्यापारी ताल्लुक था। ऐसे दो निर्लज्ज बेरहम और लालची जीवों के हाथों में आ जाने पर कौन-सी ऐसी मुसीबत और तकलीफ़ थी जो इन छोकरियों पर नहीं आ सकती थी?

अन्ना मारकोवसा ने अपनी पेढ़ी इतनी सस्ती इसलिए नहीं बेच डाली कि बरकेश जो उसके जुर्मों को पहले से जानता था, जब चाहता तब उसको मुसीबत में फँसाकर हड़प कर सकता था। इस काम के लिए तो वह जब चाहता तब काफी बहाने ढूँढ़ सकता था और अन्ना की पेढ़ी बन्द ही नहीं कर सकता था; बल्कि उसको अदालत में भी घसीट सकता था।

सच बात यह थी कि यद्यपि अन्ना ने ऊपर से बड़ी-बड़ी ऊँह-ऊँह की और अफ़सोस ज़ाहिर किया, मगर दिल से वह इस सौदे पर भी ख़ुश थी। उसे काफ़ी

दिनों से लग रहा था कि अब उसका बुढ़ापा आ चला है—वह कमज़ोर हो चली थी और तरह-तरह की बीमारियों की शिकार होने लगी थी जिससे वह शान्तिमय जीवन बिताना चाहती थी। वे तमाम चीज़ें जिनको वह कभी अपनी जवानी में, जब वह स्वयं एक साधारण वेश्या थी, पाने का स्वप्न में भी विचार नहीं करती थी—धीरे-धीरे उसे एक-एक करके, आप से आप मिल चुकी थीं। शान्तिमय बुढ़ापा; शहर के बीचोबीच सबसे मशहूर सड़क पर, एक सुन्दर आलीशान मकान; एक लाख बीस हज़ार रुपये बैंक में; प्यारी बच्ची—चिड़िया—जिसकी अवश्य एक दिन किसी बड़े आदमी से शादी हो जायगी जो कोई इंजीनियर, मकानों का मालिक अथवा चुङ्गी का मेम्बर होगा; क्योंकि उसके लिए अन्ना काफ़ी रुपया और काफी गहने रख रही थी। अस्तु, अन्ना के लिए अब यह सम्भव था कि वह शान्तिपूर्ण अपने दिन बिताये, किसी काम की जल्दी न हो, मज़े से बैठकर भोजन करे और मीठी चीज़ें पिये, जिसका उसे बड़ा शौक़ था। उसे ज़िन्दगी में सबसे अच्छी बात यह लगती थी कि खाना खाने के बाद बैठकर, आराम से, घर की बनी तेज़ चेरी-ब्रांडी* पिये और शाम को अपनी प्रख्यात स्त्री मित्रों के साथ बैठकर ताश खेले, जो उसके साथ कभी ऐसा व्यवहार नहीं करती थीं जिससे यह प्रकट हो सके कि वे उसका असली पेशा क्या है, जानती हैं; मगर जो वास्तव में उसके पेशे का हाल अच्छी तरह जानती थीं, वे उसके इस पेशे से इतनी अधिक आमदनी पर ईर्ष्या भी करती थीं। अन्ना की इन प्रख्यात मित्र स्त्रियों में, जो उसके शांतिपूर्ण बुढ़ापे का सुख और सन्तोष होनेवाली थीं, एक तो सूदखोरी करती थी; दूसरी रेल के स्टेशन से सटे हुए बड़े सजीव होटल की मालकिन थी; तीसरी की एक सोने-चाँदी की दूकान थी जो बहुत बड़ी तो नहीं थी, मगर ख़ूब चलती थी और तमाम बड़े चोरों में प्रख्यात थी। इन सब के बारे में अन्ना को भी कुछ ऐसी बातें मालूम थीं, जिससे उन्हें सजा हो सकती थी, परन्तु आपस में एक दूसरे के कुटुम्ब की आमदनी के ज़रियों का ज़िक्र वे शिष्ट नहीं समझती थीं। एक दूसरे की चतुरता, बहादुरी, सफलता और शिष्ट व्यवहार की चर्चा करना ठीक समझती थीं।

मगर इस सबके अतिरिक्त अन्ना मारकोवना को, जिसका दिमाग़ छोटा और अच्छी तरह विकसित नहीं था, चीज़ों का कुछ ऐसा अन्तरज्ञान सा था कि समय से

* एक शराब का नाम।

पहले ही वह दुर्घटनाओं और बदमग़ज़ियों से हमेशा अपनी ज़िन्दगी में बचकर ठीक रास्ते पर चलती रही थी। अस्तु, रोलीपोली की एकाएक मृत्यु और उसके दूसरे ही दिन जेनेका की मृत्यु होने के बाद उसकी अन्तरज्ञानी आत्मा को लगा कि भाग्य जिसकी अभी तक उस पर कृपा रहने के कारण वह फलती-फूलती और आफ़तों से बचती रही थी, अब उसकी तरफ़ से मुँह मोड़ने की तैयारी कर रहा था। अस्तु उसने ही मुँह मोड़कर भागने का निश्चय कर लिया।

लोग कहते हैं कि किसी मकान में आग लगने या जहाज़ के बर्बाद होने से पाहिले ही चूहे उसमें से निकलकर भाग जाते हैं। न जाने चूहों में आनेवाली आपत्ति को पहले से ही जान लेने की कौन-सी शक्ति होती है। परन्तु अन्ना मारकोवना में भी इन चूहों की तरह ही कोई शक्ति थी। उसका विचार ठीक निकला। जेनी की मृत्यु के बाद से ही इस चकले पर, जो पहले अन्ना मारकोवना शैब्स का था और अब ऐम्मा ऐडवार्डोवना टिज़नर्स का हो गया था, आफ़तों के पहाड़ टूटने लगे। मौतें, मुसीबतें, बदनामी और झगड़े एक के बाद दूसरे लगातार, शेक्सपीयर के दुःखान्त नाटकों की तरह, घटने लगे और यही हाल कटरे के दूसरे चकलों में भी था।

ऐम्मा के हाथों में चकला आने के एक सप्ताह बाद सबसे पहली मृत्यु अन्ना मारकोवना की स्वयं हुई, परन्तु ऐसा अक्सर होता है कि लोग तीस बरस तक जो काम करते रहते हैं, उससे अलग होते ही मृत्यु का ग्रास बन जाते हैं। इसी प्रकार वे वीर योद्धा भी विरामकाल शुरू होते ही मर जाते हैं जिनकी वीरता के आगे युद्ध-क्षेत्र में सेनाएँ काँपती थीं, जिनका शरीर और मन फौलाद के बने लगते थे; इसी प्रकार अक्सर सटोरिये व्यापारी भी विराम शुरू करते ही—जुये के खतरों और लोभ से अलग होते ही—मर जाते हैं; इसी प्रकार रंगमंचों के मशहूर खिलाड़ी, व नर्तक नर्तकी अपना काम छोड़कर, विराम शुरू होते ही, जल्दी-जल्दी बूढ़े होने लगते हैं, झुकने लगते हैं और निकम्मे हो जाते हैं। अन्ना की मृत्यु बड़ी अच्छी, साधुओं की सी हुई। ताश खेलते-खेलते एक दिन उसे अपनी तबीयत कुछ ठीक नहीं लगी; अस्तु उसने अपने मित्रों से ज़रा खेल रोकने की प्रार्थना की—कहा कि मैं क्षण भर लेटना चाहती हूँ—सोने के कमरे में जाकर पलँग पर लेट गई, एक गहरी साँस ली और इस दुनिया से शान्तिपूर्वक उस दुनिया में चली गई। मरने के बाद उसके शान्त

मुख पर एक बूढ़ी मुसकान थी। इसाय जो जीवन-पथ पर उसका सदा सच्चा साथी रहा था और जो सदा उसके पीछे-पीछे चला था, उसकी मृत्यु के बाद मुर्झा गया और एक मास से अधिक जीवित न रह सका।

'चिड़िया' उसकी तमाम जायदाद की अकेली मालिक रह गई। उसने शहर के मकान को और शहर के छोर की ज़मीन को बड़े अच्छे दामों में बेच डाला और एक बड़े आदमी से, जैसा कि अन्ना का विचार था, सफलता पूर्वक विवाह करके वह आनन्द से रहने लगी। उसे आजतक इस बात का पक्का विश्वास है कि उसका पिता ओडेसा का एक बड़ा गल्ले का व्यापारी था जिसका एशिया माइनर से बड़ा भारी व्यापार चलता था।

× × ×

उसी दिन शाम को, जिस दिन जेनी की लाश चुपचाप चकले से ऐसे वक्त पर निकालकर, जब कि कोई मेहमान भूलकर भी वहाँ नहीं आता, अस्पताल भेजी गई थी, ऐम्मा एडवार्डोवना के हठ पर सभी छोकरियाँ बैठक में इकट्ठी हुईं। उनमें से एक की भी इस बात पर बड़बड़ाने की हिम्मत नहीं हुई कि आज के अभागे दिन भी जब कि वे जेनी की भयंकर मृत्यु से मन में दुःखी थीं, उन्हें हमेशा की तरह सजना और बनना होगा और जाकर चमचमाती हुई बैठक में बैठना होगा, जहाँ नाच नाचकर और गाना गाकर उन्हें अपने शरीरों के हाव-भाव से कामी मनुष्यों को लुभाना होगा।

उन सबके कमरे में आकर बैठ जाने के बाद ऐम्मा स्वयं कमरे में आई। आज उसकी शान हमेशा से कहीं अधिक थी। वह एक काला रेशमी चोगा पहने हुए थी जिसमें से उसकी बड़ी बड़ी छातियाँ किले से तोपें दागने के स्थानों की तरह बाहर को लटक रही थीं और उन पर ऊपर से दो बड़ी ठुड्डियाँ रखी थीं। हाथों में उसके काले दस्ताने थे, गले में उसके सोने की एक भारी तीन लड़ों की जंजीर पड़ी थी, जिसके बीच में लटकता हुआ एक भारी लटकन उसका पेट छू रहा था।

'श्रीमतियो···'उसने शान से कहना शुरू किया :

'मैं.. खड़ी हो जाओ!' उसने एकाएक हुक्म देते हुए कहा, मैं जब कुछ कहूँ तो तुम्हें खड़ी होकर सुनना चाहिए।'

छोकरियाँ एक दूसरे का मुँह ताकने लगीं; क्योंकि ऐसा हुक्म चकले में आज

उन्हें पहली बार ही मिला था। ख़ैर, वे एक-एक करके भौंचक्की, एक दूसरे का मुँह देखती हुई उठ खड़ी हुईं।

'मैं तुम्हें यह बताना चाहती हूँ' ऐम्मा ने फिर गम्भीरता और शान से कहना शुरू किया कि 'आज से तुम्हें मुझसे उसी अदब से पेश आना चाहिए जैसे मालकिन के साथ पेश आया जाता है। आज से इस चकले की मालकिन अन्ना मारकोवना शैब्स के स्थान पर मैं—ऐम्मा वार्डोवना टिजनर—हूँ; इसकी बाक़ायदा क़ानूनी तौर पर मालकिन हो गई हूँ। मुझे उम्मेद है कि तुम मुझसे झगड़ा नहीं करोगी और बुद्धिमान्, वफ़ादार और सुशील छोकरियों की तरह मुझसे व्यवहार करोगी। मैं तुमसे तुम्हारी माता की तरह व्यवहार करूँगी; मगर सिर्फ़ एक बात याद रखना कि मैं काहिली, नशेबाज़ी, गुस्ताख़ी या झगड़े बर्दाश्त नहीं करूँगी। श्रीमती शैब्स ने—मैं तुम्हें बता देना चाहती हूँ—तुम सबको बड़ी ढील दे रखी थी। मैं तुम्हारे साथ सख़्ती का व्यवहार करूँगी; क्योंकि मैं नियमबद्धता को माननेवाली हूँ। यह बड़े दुख की बात है कि रूसी लोग इतने काहिल, गन्दे और मूर्ख होते हैं। इस सबको तुम सख़्ती मत समझना। मैं तुम्हारे हित के लिए ही यह सब तुम्हें सिखाना चाहती हूँ। समझती हो? 'तुम्हारे हित के लिए' क्योंकि मेरा मुख्य विचार ट्रेपेल की पेढ़ी से भी बढ़कर इस पेढ़ी को बना देने का है। मैं चाहती हूँ कि हमारे यहाँ अच्छे-अच्छे और बढ़िया मेहमान आया करें न कि इधर-उधर के लुँगाड़े विद्यार्थी और नाचने-कूदनेवाले लोग। मैं चाहती हूँ कि इस घर की छोकरियाँ तमाम दूसरे चकलों की छोकरियों से अधिक सुन्दर, अधिक सुशील, अधिक स्वस्थ और खुशमिज़ाज हों। मैं रुपया खर्च करके अच्छा से अच्छा सजावट का सामान रखना चाहती हूँ। तुम्हारे कमरों में तमाम रेशमी फर्नीचर और बढ़िया कम्बल होंगे। तुम्हारे पास आनेवाले मेहमान बीयर शराब पीनेवाले नहीं होंगे; बल्कि बोरडो और बरगण्डा की अच्छी शराबें और शेम्पेन पीनेवाले होंगे। याद रखना अमीर और काफ़ी उम्रवाले लोग तुम्हारा यह आम और भोंड़ा प्रेम पसन्द नहीं करेंगे। उन्हें तो लाल-लाल मिर्चें चाहिए; उन्हें व्यापार पसन्द नहीं होता, वे कला चाहते हैं और वह कला भी तुम जल्दी ही सीख लोगी। ट्रेपेल के यहाँ एक बार के तीन रुपये और एक रात के दस रुपये लिये जाते हैं। मैं ऐसा इन्तज़ाम करूँगी कि एक बार के तुम्हें पाँच रुपये और एक रात के पचीस रुपये मिला करेंगे; मैं ऐसा इन्तज़ाम करूँगी कि तुम्हें बाद में छोटे चकलों में जो सिपाहियों

और चोरों के अड्डे होते हैं, फिर जाने की कभी नौबत न आयेगी। मैं हर महीने तुम्हारी आमदनी में से रुपया बचाकर तुम्हारे नामों पर बैंक में जमा करा दिया करूँगी, जहाँ वह तुम्हारे लिए जमा होता रहेगा और उस पर दिन पर दिन ब्याज और चक्रवृद्धि बढ़ता जायगा। अस्तु तुममें से कोई जब थक जायगी या किसी भले आदमी से शादी करना चाहेगी तो हमेशा उसके पास बहुत नहीं तो काफ़ी रुपया ज़रूर होगा। रीगा शहर के अच्छे चकलों में और दूसरे देशों में ऐसा प्रबन्ध किया जाता है। मैं किसी को यह कहने का मौक़ा नहीं दूँगी कि ऐम्मा ऐडवार्डोवना मकड़ी, लोमड़ी या जोंक थी; मगर मेरा हुक्म न मानने पर, काहिली करने पर, घमण्ड दिखाने पर तथा प्रेमियों से फँसने पर मैं बड़ी क्रूरता से दण्ड दूँगी और दूध की मक्खी की तरह निकालकर बाहर सड़क पर फेंक दूँगी या उससे भी बुरी गति करूँगी। बस मुझे जो कुछ कहना था, मैं कह चुकी। नीना, मेरे पास आओ और बाद में तुम सब भी बारी-बारी से आओ।'

नीना चुपचाप चलती हुई ऐम्मा के पास गई और ऐम्मा ने जब अपना हाथ उसके मुँह की तरफ़ चूमने के लिए बढ़ाया तो वह चौंककर पीछे को हट गई।

'मेरे हाथ को चूमो!...' शान से, दृढ़तापूर्वक, ऐम्मा ऐडवार्डोवना ने आँखें सिकोड़कर और सिर पीछे को फेंककर, तख़्त पर चढ़कर बैठनेवाली महारानी की अदा से कहा।

नीना इतनी घबरा गई कि वह हाथ से सलीब का इशारा करने लगी। मगर उसने शीघ्र ही अपने को सँभाला और ज़ोर से अपनी तरफ़ बढ़े हुए ऐम्मा के हाथ को चूमकर एक तरफ़ हट गई। उसके बाद ज़ो, हेन्रीटा, वैन्डा और दूसरी छोकरियों ने भी जाकर उसी तरह उसका हाथ चूमा। केवल टमारा दीवार के पास आईने की तरफ़ अपनी पीठ किये खड़ी रही; उस आईने की तरफ़ जिसमें कभी बैठक में घूम-घूमकर जेनेका अपना रूप देखा करती और ख़ुश हुआ करती थी।

ऐम्मा ऐडवार्डोवना ने नागिन की तरह घूरकर उसकी तरफ़ देखा, मगर उसका जादू उस पर न चला। टमारा ने चुपचाप उसकी घूरती हुई आँखों से अपनी आँखें मिला दीं; वह उससे ज़रा भी नहीं डरी, परन्तु साथ ही उसने अपने चेहरे का भाव भी नहीं बदला। नई मालकिन ने अपना हाथ नीचे गिरा दिया और चेहरे पर एक तरह की मुसकराहट लाते हुए, भर्राई हुई आवाज़ में कहा:

'और टमारा, तुमसे मुझे कुछ बातें अलग, दिल खोलकर करनी हैं। चलो, मेरे कमरे में चलो।

'अच्छा ऐम्मा ऐडबार्डोवना!' टमारा ने शान्ति से उत्तर दिया।

ऐम्मा ऐडवार्डोवना उठकर उस छोटे कमरे में आई, जहाँ पहले अन्ना मारकोवना बैठकर काफ़ी और मलाई पिया करती थी। यहाँ आकर वह दीवान पर बैठ गई और अपने सामने की एक जगह पर टमारा को बैठने का इशारा किया। कुछ देर तक दोनों स्त्रियाँ चुप रहीं। ये खोजती हुई और अविश्वासपूर्ण दृष्टि से कुछ देर तक एक दूसरे को देखती रहीं।

'तुमने ठीक ही किया टमारा' ऐम्मा ऐडवार्डोवना अन्त में बोली, 'कि तुम उन भेड़ों की तरह मेरा हाथ चूमने के लिए आगे न बढ़ीं। ख़ैर, मैंने तुम्हें ख़ुद ही वैसा करने से रोक दिया होता। मैं तो तुम्हारा स्नेह से हाथ दबाकर—यदि तुम आगे बढ़ी होतीं—वहीं उन सबके सामने बड़ी ग्वाला की जगह पर तुम्हें नियुक्त करना चाहती थी-समझीं? अपनी मुख्य सहायक और बड़ी अच्छी शर्तों पर, मैं तुम्हें बनाना चाहती हूँ...'

'धन्यवाद...'

'ठहरो, ठहरो, मेरी बात मत काटो। मुझे जो कहना है, कह लेने दो, फिर तुम्हें जो कुछ कहना है, शौक़ से कह सकती हो; मगर एक बात तो तुम कृपया मुझे समझाओ कि कल तुम मुझे पिस्तौल क्यों दिखा रही थी? तुम्हारा मेरी तरफ़ पिस्तौल करने से क्या मतलब था? क्या तुम मुझे मार डालना चाहती थीं?'

'उल्टी बात है ऐम्मा ऐडवार्डोवना' टमारा ने उत्तर में कहा, 'मुझे तो ऐसा लगा कि तुम मुझे पीटना चाहती थीं।'

'फु! क्या कहती हो टमोरच्का! क्या तुम यह नहीं जानती कि इतने दिनों से तुमसे जान-पहिचान होने पर भी मैंने तुम्हें मारना तो दूर, कभी कोई सख़्त शब्द भी आज तक नहीं कहा है। क्या कहती हो, क्या कहती हो? मैं तुम्हें इस रूसी कूड़े-कर्कट से भिन्न समझती हूँ...ईश्वर की कृपा से मुझे दुनिया का कुछ अनुभव है...मैं आदमियों को पहिचानती हूँ। मैं अच्छी तरह समझती हूँ कि तुम सचमुच एक शिष्ट जवान स्त्री हो...मुझसे भी कहीं अधिक पढ़ी लिखी हो। तुम चतुर हो, सुशील हो और लोगों से अच्छा व्यवहार करना जानती हो। मुझे तो यह भी विश्वास है कि तुम

सङ्गीत भी बुरा नहीं जानती और कैसे तुमसे कहूँ, शुरू ही से मैं इस प्रकार से तुम पर आशिक़ भी रही हूँ। और तुम मुझे पिस्तौल का निशाना बनाना चाहती थीं! मुझको जो कि तुम्हारी सच्ची दोस्त हो सकती हूँ! क्यों, क्या कहती हो?'

'ख़ैर...मुझे कुछ नहीं कहना है ऐम्मा ऐडवार्डोवना' टमारा ने बड़ी नम्र और विश्वास दिलानेवाली आवाज़ में कहा, 'बात बिल्कुल सीधी-सादी थी। मैंने जेनी के तकिये के नीचे उस पिस्तौल को रखा पाया था, मैं उसे लेकर तुम्हें देने को बढ़ी, मगर तुम ख़त पढ़ रही थीं, जिसमें मैंने विघ्न डालना पसन्द नहीं किया। अस्तु, जब तुमने ख़त पढ़ चुकने के बाद मेरी तरफ बढ़ाया और कहना चाहती थी, देखो ऐम्मा ऐडवार्डोवना, मुझे यह क्या मिला!' क्योंकि मुझे इस बात पर बड़ा ही आश्चर्य हो रहा था कि जेनी के पास पिस्तौल होते हुए भी उसने फाँसी लगाकर मरने की भयङ्कर मौत क्यों पसन्द की? बस इतनी-सी सारी बात थी!'

ऐम्मा ऐडवार्डोवना की भयङ्कर, झाड़ी की तरह गहन भौंहें ऊपर को उठीं; उसकी आँखें ख़ुशी से चौड़ी हो गईं और एक सच्ची, बेलाग मुसकराहट उसके चौड़े गालों पर फैल गई। उसने जल्दी से अपने दोनों हाथ टमारा की तरफ़ बढ़ाकर कहा:

'बस, इतनी ही बात थी? हे मेरे ईश्वर! और मैंने न जाने क्या-क्या अपने मन में सोच लिया! लाओ, मुझे अपना हाथ दो टमारा, अपने नन्हें-नन्हें दूध-से सफेद हाथ मुझे दो, मैं उन्हें अपने दिल से लगाना और तुम्हे चूमना चाहती हूँ।'

उसने टमारा को सीने से लगाकर इतनी देर तक चूमा कि वह घबरा उठी और बड़ी मुश्किल से अपने आपको उसके आलिङ्गन से छुड़ा सकी।

'अच्छा, अब मतलब की बातें करें। देखो, मैं तुम्हें इन शर्तों पर बड़ी खाला बनाती हूँ। तुम घर का इन्तज़ाम देखोगी और जो कुछ मुनाफ़ा मुझे होगा, उसमें से पन्द्रह फ़ीसदी मैं तुम्हें दूँगी। समझीं टमारा? पन्द्रह फ़ीसदी तुम्हारा हिस्सा और इसके अलावा तुम्हें खर्च के लिए तीस-चालीस या पचास रुपये तक माहवार और वेतन अलग दूँगी! क्यों, हैं न बहुत अच्छी शर्तें? मुझे पूरा यक़ीन है कि तुम ही मेरे इस चकले को न सिर्फ इन तमाम शहर में बल्कि सारे दक्षिण रूस में, सबसे बढ़िया और शानदार चकला बनाने में मदद कर सकती हो। तुम शौक़ीन तबियत हो और चीज़ों को समझती हो!.. इसके अलावा तकल्लुफ़ी-मेहमानों को ख़ुश कर सकती

हो। कभी-कभी कोई बहुत बड़ा मेहमान, जिसको रूसी लोग सुनहरी मछली कहते हैं, तुम पर मोहित हो जाय, क्योंकि तुम इतनी सुन्दर हो प्यारी टमोरच्का—मालकिन ने मीठी आँखों से उसे देखते हुए कहा—तो तुम भी उसके साथ आनन्द कर सकती हो। मुझे उसमें कोई उजर न होगा। सिर्फ अपने रुतबे का, अपने ओहदे का ख्याल रखते हुए...वह जोश में भरकर जरमन भाषा बोलने लगी...तुम जरमन भाषा तो अच्छी तरह समझती हो न ?'

'मैं जरमन फ्रान्सीसी भाषा से भी कम जानती हूँ, मगर थोड़ी-बहुत बातचीत कर सकती हूँ।' टमारा ने जरमन भाषा में उत्तर दिया।

'वाह, क्या कहने हैं !...तुम बिल्कुल रीगावालों की तरह जरमन बोलती हो ! रीगावाले ही सबसे सही जरमन बोलते हैं। अच्छा, तो अब मैं अपनी मातृभाषा में ही तुमसे बातें करूँगी, क्योंकि अपनी मातृभाषा में बोलना मुझे बड़ा प्रिय है ; ठीक है न ?'

'अच्छा !' टमारा ने जरमन में उत्तर देना शुरू कर दिया।

'अच्छा तो इन 'सुनहरी मछलियों' को ख़ूब देर तक छकाकर, अन्त में मानो बड़ी अनिच्छा से, मानो सचमुच उनके प्रेम में पड़कर, क्षणिक लोभ से, मानो मुझसे छिपाकर तुम उनकी बात मान लेना। समझती हो ? वे मूर्ख इसके लिए बड़ा रुपया देते हैं। ख़ैर, मैं समझती हूँ यह सब मुझे तुमको सिखाना नहीं पड़ेगा।' उसने अपनी मातृभाषा में बड़े उत्साह से कहा।

'हाँ, प्रिय श्रीमतीजी। बातें तो तुम बड़े पते की कहती हो, मगर अब यह कोरी ही नहीं है···इन पर अमल करना होगा जिसमें सोचने और समझने की ज़रूरत है।' टमारा इतना उत्तर जरमन भाषा में देकर फिर रूसी भाषा में बोली, 'अस्तु रूसी भाषा में ही बातचीत करना मुझे आसान पड़ेगा···मैं आपकी आज्ञा हर तरह से मानने को तैयार हूँ।'

'हाँ, तो मैं तुम्हारे प्रेमी के बारे में कह रही थी !...मैं तुम्हें उस आनन्द से वंचित रखने की हिम्मत तो नहीं करूँगी...मगर हमें इस मामले में होशियारी से काम करना होगा। उसे यहाँ नहीं आना चाहिए, अथवा जितना कम हो सके, उतना सिर्फ गाहे-बगाहे आना चाहिए। मैं बाहर जाने के लिए तुम्हारे दिन मुकर्रर कर दूँगी ; जब तुम चाहे जो चाहो सो कर सकोगी, मगर बेहतर तो यही होगा कि

तुम किसी से भी न फँसो। तुम्हारा भी इसी में भला है, क्योंकि वह एक बड़े बोझ के सिवाय और कुछ नहीं होता। मैं यह तुमसे अपने अनुभव से कह रही हूँ। थोड़े दिन ठहर जाओ। तीन चार ही वर्ष में हम लोग इस पेढ़ी का व्यापार ऐसा बढ़ा देंगे कि तुम्हारे पास अपना काफ़ी रुपया हो जायगा। फिर मैं तुम्हें अपना पक्का साझीदार ही इस काम में कर लूँगी। दस वर्ष के बाद भी तुम काफ़ी खूबसूरत और जवान होगी और फिर तुम चाहे जितने मर्दों को प्यार करो, खरीदो और मजे करो। उस वक्त तक तुम्हारे दिमाग़ से जवानी की सारी बेवकूफ़ियां भी निकल चुकी होंगी और तब तुमको मर्द नहीं चुनेंगे, बल्कि तुम मर्दों को छाँट-छाँटकर चुना करोगी जैसे जानकार जौहरी हीरे-मोतियों को चुन-चुनकर ले लेता है। क्यों, मैं सच कहती हूँ न ?'

टमारा ने आँखें नीची कर लीं और थोड़ा मुसकराकर बोली, 'बहुत सच और अनुभव की बातें कहती हो ऐम्मा ऐडवार्डोवना ; मैं अपने प्रेमी को छोड़ दूँगी, मगर फौरन नहीं छोड़ सकती। कम से कम मुझे इस काम के लिए दो हफ़्तों की ज़रूरत होगी। मैं कोशिश करूँगी कि वह यहाँ न आया करे। मैं तुम्हारी बात मानती हूँ।'

'बहुत अच्छा, टमोरच्का!' ऐम्मा ऐडवार्डोवना ने उठते हुए कहा, 'अच्छा तो अब हमारा-तुम्हरा वायदा पूरा है, आओ इस पर बोसे की मुहर लगा दें।'

यह कहकर उसने फिर टमारा को सीने से लगाकर ज़ोर-ज़ोर से चूमना शुरू कर दिया। टमारा नीची निगाह किये खड़ी, भोली-भाली एक जवान छोकरी-सी लग रही थी। आखिरकार मालकिन से अपने आपको छुड़ाकर टमारा रूसी भाषा में बोली :

'देखो, ऐम्मा ऐडवार्डोवना, मैंने तुम्हारी सब बातें मान ली हैं, मगर, एक प्रार्थना तुम्हें मेरी माननी होगी। मैं तुम्हारा खर्च कराना नहीं चाहती। सिर्फ तुम मुझको और दूसरी सब छोकरियों को जेनी की लाश के साथ-साथ क़ब्रस्तान तक चले जाने की इजाज़त दे दो।'

ऐम्मा ऐडवार्डोवना का चेहरा सूख गया।

'आह, अगर तुम ऐसा ही करना चाहती हो, मेरी प्यारी टमारा, तो मैं उसका विरोध नहीं करूँगी ; मगर तुम ऐसा करना क्यों चाहती हो ? इससे मृतक को न तो कोई लाभ ही पहुँच सकता है और न वह फिर जी सकती है। सिर्फ़ अपने मन को दुखी करोगी...खैर, जैसी तुम्हारी मर्ज़ी। मगर शायद तुम्हें मालूम ही है कि

'देखिए, मैं अच्छी तरह समझती हूँ' टमारा कहने लगी, 'कि मैं तुम्हारी नौकरानी की तरह रहूँगी...'

'सहायक की तरह।' ऐम्मा ने स्नेह-पूर्वक सुधारा।

'यह तुम्हारी मेहरबानी है,' टमारा ने उसकी तरफ़ सिर झुकाकर कहा, 'मगर तुमने अभी कहा कि खास मौक़ों पर कुछ बड़े आदमियों को मैं फँसाकर ख़ूब दुह सकती हूँ!'

'हाँ, हाँ, ज़रूर।'

'अस्तु, मैं तुमसे प्रार्थना करूँगी कि मुझे कुछ रुपया पेशगी देने की इनायत करो। तुम यह तो मानोगी ही कि जिस तरह का ठाट-बाट का यह घर अब तुम बनाना चाहती हो, उसमें मुझे काफ़ी शान-बान से रहना उचित होगा। अस्तु, मैं अपने लिए कुछ अच्छे कपड़े, फीते और इत्र ख़रीदना चाहती हूँ...'

ऐम्मा ख़ुशी से फूल उठी।

'आह मेरी प्यारी टमारा, तुम मेरे विचारों को उड़ान में ही पकड़ लेती हो!'

'मुझे यह जानकर बड़ी ख़ुशी है। फ़ौरन ही मुझे अपने कपड़े ठीक करने पड़ेंगे, मगर मुझे अफ़सोस है कि मेरे पास इस वक्त उसके लिए रुपया नहीं है...'

'आह, मेरी प्यारी, मैं ऐसे मामले में छोटा दिल नहीं दिखाऊँगी! कहो, कहो, तुम्हें कितने रुपये चाहिए?'

'दो...मैं समझती हूँ दो सौ रुपये काफ़ी होंगे!' टमारा ने झिझकते हुए कहा।

'तीन सौ लो!'

टमारा ने बनकर ऐम्मा को चूम लिया।

फिर जब वह ऐम्मा से रुपया लेकर चली तो मन ही मन दयार्द्र होकर सोचने लगी 'चलो अब हम एक स्त्री को, जिसे हम प्यार करते हैं, इन्सान को तरह दफ़ना सकेंगे।'

लोग कहते हैं कि प्रेतात्माएँ लाभदायक होती हैं। अगर इस बात में कुछ भी सत्य है तो आज इस शनिवार से अधिक अच्छा उसकी सत्यता का प्रदर्शन नहीं हो सकता था। आज रात को जितनी मेहमानों की भीड़ इस चकले में रही, उतनी किसी शनिवार को भी नहीं रहती थी। यह सच ज़रूर है कि छोकरियाँ जेनेका के कमरे के सामने से निकलती हुई जल्दी-जल्दी चलने लगती थीं, काँपती हुई तिरछी नज़रों से

उस कमरे की ओर देखती थीं और कुछ भगवान् का नाम भी लेने लगती थीं ; मगर काफ़ी रात बीत जाने पर मृत्यु का भय किसी तरह ख़त्म हो गया, सहन करने योग्य हो गया। तमाम कमरे घिर गये थे। बैठक में एक नया नौजवान बेला बजानेवाला, जिसकी आँख में फुली थी और जिसको पियानो का उस्ताद कहीं से ढूँढ़कर ले आया था, लगातार बेले की धुन पूर रहा था।

टमारा को खाला के पद पर नियुक्ति छोकरियों ने आश्चर्य से सुनी और चुपचाप मुँह बनाने लगीं। मगर टमारा ने कुछ दिन ठहरकर, मौक़ा पाते ही एक दिन नन्हीं मनका के कान में कहा ;

'सुनो मनका, तुम सबसे कह देना कि वे इस बात का बिल्कुल ख़्याल न करें कि मैं अब ख़ालाजान हूँ। किसी को खाला होना ही था। छोकरियों के जो जी में आये करें, सिर्फ़ मुझसे भिड़ें नहीं। मैं पहले की तरह ही उनकी मित्र और सहायक हूँ... आगे भगवान् मालिक है !'

सैंतीसवाँ अध्याय

दूसरे दिन रविवार को टमारा को बहुत-से काम थे। उसने अपनी मित्र को, कुछ भी हो, इस तरह दफ़नाने का दृढ़ संकल्प कर लिया था जिस तरह कि कोई अपने नज़दीक से नज़दीक और प्यारे से प्यारे को दफ़नाता है—ईसाई धर्म के रिवाज के अनुसार उसी दुःखपूर्ण गम्भीरता के साथ जिससे दुनियादार आदमी दफ़नाये जाते हैं।

वह उन विचित्र लोगों में से थी, जिनके ऊपरी सुस्त, शान्त, लापरवाह, गम्भीर, कछुए की गर्दन की तरह अपने अहंभाव को अन्दर कर लेने के स्वभाव के पीछे एक अथाह शक्ति होती है, जो सोती रहती है और आधी आँखें खोले मानो अपने आपको खर्च होने से बचाती रहती है, परन्तु जो ज़रूरत पड़ने पर विघ्नों और बाधाओं की चिन्ता न करके झपट पड़ने को तैयार रहती है।

बारह बजे वह एक मोटर-गाड़ी में बैठकर पुरानी बस्ती में गई और एक तङ्ग गली में होते हुए एक मैदान में जा पहुँची, जहाँ पैंठ लगती थी। वहाँ पहुँचकर वह एक गन्दी चाय की दूकान के आगे रुकी और गाड़ीवाले से वहीं ठहरे रहने को कहा। दूकान में घुसकर उसने एक लाल-लाल रीछों के-से बालोंवाले छोकरे से, जिसने अपनी

माँग ठीक रखने के लिए बालों में मक्खन चुपड़ा हुआ था, पूछा कि सेनका तो यहाँ नहीं आया था ? उस छोकरे ने, जिसकी बातों और खातिरदारी से ऐसा लगा कि वह टमारा को बहुत दिनों से जानता था, कहा कि 'नहीं श्रीमतीजी, सेमेन इगानिश अभी तक नहीं आया है और न उसके शीघ्र ही आज आने की आशा है, क्योंकि कल वह सैर-सपाटे में गया था ; जहाँ से रात को बहुत देर में लौटा था। वह अपने कमरे पर ही होगा। अगर आपका हुक्म हो तो मैं उसे जाकर अभी यहाँ बुला लाऊँ।'

टमारा ने एक कागज और पेन्सिल माँगकर, वहीं खड़े-खड़े एक खत सेनका को लिखा। वह खत उसने उस छोकरे को सेनका के पास पहुँचा देने के लिए दिया और उसको आठ आना इनाम देकर गाड़ी में बैठकर चल दी।

वहाँ से वह कलाविद् रोविन्सकाया के पास गई, जो टमारा को बहुत दिनों से मालूम था, शहर के सबसे मशहूर 'यूरूप' नाम के होटल में कई-कई बड़े-बड़े कमरे लेकर रहती थी। कलाविद् से मिलना आसान काम नहीं था। नीचे दरवान ने कहा कि शायद वे कमरे में नहीं हैं, बाहर गई हैं। ऊपर पहुँचने पर, कमरे का द्वार टमारा ने जब खटखटाया तो नौकरानी ने अन्दर से निकलकर कहा कि श्रीमतीजी के सिर में दर्द हो रहा है, जिससे वह किसी से मिल नहीं सकतीं। फिर टमारा को मजबूर होकर एक कागज़-पेन्सिल मँगाकर खत लिखना पड़ा :

'मैं उस घर से, जिसका नाम ज़ोर से नहीं लिया जाता, उस छोकरी के पास से आई हूँ, जो एक रोज़ तुम्हारा सङ्गीत सुनकर, तुम्हारे पास घुटनों पर गिरकर रोने लगी थी। तुमने उसके साथ उस रोज़ जो व्यवहार किया था, बड़ा ही उच्च और सुन्दर था। क्या उसकी आपको याद है ? आप डरिए नहीं, उसे अब किसी की सहायता की ज़रूरत नहीं है, क्योंकि कल वह मर गई; मगर आप उसकी यादगार में एक बड़ा खास काम कर सकती हैं जिसमें आपको कोई कष्ट न होगा। मैं वही छोकरी हूँ जिसने अपनी मूर्खता में आपकी साथिन बैरोनेस को बहुत-सी बुरी-भली बातें कह डाली थीं — जिनके लिए मैं आज भी लज्जित हूँ और माफ़ी चाहती हूँ।'

'लो, यह ख़त ले जाकर दे दो !' उसने नौकरानी से कहा।

नौकरानी दो मिनट में लौट आई। आकर बोली :

'श्रीमतीजी ने आपको अन्दर ही बुलाया है, मगर उन्होंने माफ़ी चाही है कि वह आपसे लेटे-लेटे ही मिल सकेंगी।'

वह टमारा को अपने साथ लेकर एक द्वार तक गई और उसे खोलकर टमारा को अन्दर करके, द्वार धीरे से फिर बन्द कर दिया।

कलाकारनी एक बड़े तुर्की तख़्त पर लेटी हुई थी जिस पर एक बड़ा बेशकीमती कालीन बिछा था और उसके चारों तरफ़ रेशमी तकिये और मसनद लगे थे। उसके पैर सफेद रुपहले फरों[1] से ढके हुए थे। उसकी उङ्गलियों में बहुत-सी अँगूठियाँ थीं, जिनमें जड़े हुए हरे-हरे पन्ने चमक-चमककर आँखों को अपनी ओर खींचते थे।

कलाकारनी के लिए आज का दिन अच्छा नहीं था। कल सबेरे थियेटर के मैनेजर से उसकी तू-तू मैं-मैं हो गई थी और कल शाम को जनता ने उसका वैसा अच्छा स्वागत नहीं किया था, जैसा कि वह चाहती थी कि उन्हें करना चाहिए था—कम से कम उसे ऐसा लगा था; और आज के अख़बार में एक मूर्ख आलोचक ने, जिसको कला का इतना ज्ञान लगता था जितना बैल को ज्योतिष का, उसकी प्रतिद्वन्द्वी टिटानोवा नाम की कलाकारनी की एक बड़ा लेख लिखकर बेहद तारीफ़ की थी। एलेना विक्टोरोव्ना ने यह मान लिया था कि आज उसका सिर दुखता है; कनपटियों के पास की रगों में चटचट होती है और दिल धड़ककर एकाएक बैठने लगता है।

'कहो कैसी हो, मेरी प्यारी?' टमारा के कमरे में घुसते ही वह कुछ कुछ नाक के स्वर से धीमी, कमज़ोर, गिरती और ठिठकती हुई आवाज़ से इस प्रकार बोली जैसे नाटक में अभिनेत्री प्रेम अथवा क्षयरोग से मरती हुई बोलती है, 'यहाँ बैठो,...मैं तुम्हें देखकर बड़ी ख़ुश हूँ...नाराज़ मत होना...मैं उठ नहीं सकती...सिर के दर्द और दिल की बीमारी से मरी जा रही हूँ। माफ़ करना, ..मुझे बोलने में भी तकलीफ़ होती है। मैं समझती हूँ कि मैंने बहुत गाया जिससे मेरी आवाज़ बैठ गई है।...'

रोविन्सकाया को उस दिन की चकले में जाने की अपनी बेवकूफ़ी और टमारा की याद अच्छी तरह आ रही थी, मगर आज पतझड़ का थकानेवाला और सूखा दिन होने से और उसका मन ठीक न होने से उसे अपनी उस रोज़ की हरकत व्यर्थ की डींग-सी लगी, जो कि कृत्रिम-कल्पित और लज्जित और दुखी करनेवाली थी। मगर साथ ही उसे सचमुच वह संध्या सच्ची भी लगी जिसमें उसने अभिमानी जैनेका का सिर अपनी कला के ज़ोर से अपने आगे झुकवा लिया था—इस समय भी जब उसने उस शाम की याद थकावट, आलस्य और कलाविद् की घृणा से की तब भी उसे वह

---

१. बालदार खालें।

संध्या सच्ची ही लगी। वह दूसरे तमाम प्रख्यात कलाविद् और कलाकारनियों की तरह हमेशा अभिनय ही करती रहती थी—कभी आत्म-स्थित नहीं रह पाती थी, हमेशा हर काम में अपने आपको अभिनेत्री के स्थान पर रखकर, स्वयं दर्शक की तरह दूर से अपने शब्दों को स्वय सुनने और अपने हाव भाव और कामों को देखने का प्रयत्न करती रहती थी।

उसने सुस्ती से अपना पतला और सुन्दर हाथ तकिये से उठाया और माथे पर रखा, जिससे उसके हाथ की अँगूठियों के रहस्यपूर्ण और पन्ने ऐसे हिलकर चमके, मानो उनमें जान हो।

'मैंने अभी तुम्हारे खत में पढ़ा कि वह बेचारी···माफ़ कीजिए, उसका नाम मुझे याद नहीं रहा···'

'जेनी।'

'हाँ, हाँ, धन्यवाद! अब मुझे याद आ गया। वह मर गई! कैसे मरी?'

'फाँसी लगा ली...कल सुबह जब डाक्टर मुआयने के लिए आया तब उसने अन्दर जाकर फाँसी लगा ली···

रोविन्सकाया की आँखें, जो निरी निर्जीव और मुर्झाई हुई दीख रही थीं, एकाएक विस्फारित हो गईं और ऐसी जैसे कोई करिश्मा हो गया हो, सजीव होकर हरी-हरी चमकीं जैसे उसकी अँगूठियों में लगे हरे-हरे पन्ने चमक रहे थे—उनमें कौतुक, भय और घृणा की झलक थी।

'हाय ईश्वर! ऐसी प्यारी, ऐसी सुन्दर, ऐसी जोशीली...हाय बेचारी, हाय बेचारी! उसने ऐसा क्यों किया?'

'आप जानती ही हैं...उसने आपसे कहा था...उसको वह बुरी बीमारी हो गई थी जिससे उकताकर···'

'हाँ, हाँ···मुझे याद है, उसने कहा था···मगर उससे उकताकर फाँसी!...क्या भयंकर काम उसने कर डाला!...मैंने उसको तभी इलाज कराने की सलाह दी थी। आजकल दवाएँ करिश्मे करती हैं। मैं कई ऐसे आदमियों को जानती हूँ जो इलाज कराकर बिल्कुल...बिल्कुल अच्छे हो गये हैं। समाज में सभी उनकी इस बीमारी का हाल जानते हैं और उनका स्वागत करते हैं···हाय बेचारी! व्यर्थ में ही फाँसी लगाकर मर गई!'

'अस्तु, मैं आपके पास आई हूँ, ऐलेना विक्टोरोवना । मैं आपको हरगिज़ तक़लीफ देने की हिम्मत नहीं करती, मैं बड़ी परेशानी में हूँ, और मेरा कोई ऐसा नहीं है जिसके पास जाकर मैं सहायता ले सकूँ । आपने उस रोज़ हम लोगों पर इतनी दया, इतनी कृपा, इतना स्नेह...जिससे मैंने आपसे सिर्फ़ सलाह लेने की और शायद आपके असर का फ़ायदा उठाने और आपकी शरण लेने की हिम्मत की है...'

'आह, मेरी प्यारी !...जो कुछ मैं कर सकती हूँ, करूँगी...हाय, मेरा सिर कैसा दुखता है !...और इस भयङ्कर ख़बर को सुनकर तो और भी ! कहो, कहो मैं तुम्हारी क्या सहायता कर सकती हूँ ?'

'सच तो यह है कि मुझे ख़ुद यह नहीं मालूम', टमारा ने उत्तर में कहा, 'देखिए, वे लोग उसकी लाश को अस्पताल उठा ले गये हैं...मगर जब तक पुलिस ने रपट बनाई और लाश को ले जाकर वह अस्पताल पहुँची, तब तक क़रीब-क़रीब शाम हो चुकी थी और लाशें लेने का वक्त ख़त्म हो चुका था। अस्तु, मेरा ख़्याल है कि लाश अभी तक वैसी ही रखी है । उसकी चीरफाड़ नहीं हुई है । मैं चाहती हूँ कि उसे चीरा-फाड़ा न जाय...वैसी ही रहने दी जाय । आज रविवार है । आज भी शायद वे कुछ न करेंगे । अस्तु, कल तक का समय हमारे पास इस काम को रोक देने के लिए है...'

'मैं कुछ कह नहीं सकती, मेरी प्यारी...ठहरो ! . मैं सोचती हूँ शायद डाक्टरों या प्रोफेसरों में मेरा कोई ऐसा मित्र निकल आये जो इस काम में मदद कर सके ।... मैं अभी अपनी नोटबुक में लिखे मित्रों के नाम देखती हूँ . शायद उनमें कोई ऐसा निकल आये जो इस काम में कुछ कर सके ।'

'इसके अलावा', टमारा कहने लगी, 'मैं उसको दफ़न भी करना चाहती हूँ... अपने ख़र्च पर...मैं मरते दम तक उसे दिल से प्यार करती रही हूँ...'

'मैं उसमें तुम्हारी रुपये-पैसे से सहायता कर सकती हूँ...'

'नहीं, नहीं !...हज़ार धन्यवाद !...मैं सारा खर्च ख़ुद ही करूँगी । मैं आपकी कृपा का ज़रूर फ़ायदा उठाती, मगर...इस मामले में...आशा है, आप बुरा न मानेंगी... इस मामले में मैं किसी की सहायता लेना पसन्द न करूँगी...मैं ख़ुद अपने ख़र्च से उसका सारा क्रिया-कर्म करूँगी ; क्योंकि इसे मैं अपना उसके प्रति और उसकी याद में अपना धर्म समझती हूँ । मुख्य कठिनाई यह है कि उसको क्रिया-कर्म के साथ दफ़-

नाया कैसे जाय। वह धर्म में विश्वास नहीं करती थी या बहुत थोड़ा ही करती थी, मैं भी आज इत्तफ़ाक से ही धर्म-कर्म में भाग लूँगी ; परन्तु मैं यह नहीं चाहती कि उसको कुत्ते की तरह क़ब्रस्तान के उस पार, चुपचाप, बिना प्रार्थना या भजन के यों ही दफ़ना दिया जाय. . .मालूम नहीं, क्या वे उसे इस प्रकार बाजे-गाजे और पुरोहितों के साथ दफ़नाने देंगे ? इस मामले में आपकी सलाह और मदद की ज़रूरत है। आप जो ख़ुद कर सकती हैं, ख़ुद करें या मुझे कहीं और किसी के पास भेजें तो मैं वहाँ जाने को तैयार हूँ।'

अब धीरे-धीरे रोविन्सकाया को रस आने लगा था और वह अपनी थकान और सिर का दर्द और चौथी सीन में अभिनेत्री की क्षय से मृत्यु का अभिनय भूलने लगी थी। वह अब अपने आपको एक पतित स्त्री की कृपालु सहायक और रक्षक के स्वरूप में मन ही मन देखने लगी थी। अपना यह स्वरूप उसे अपने मन में बड़ा मौलिक, सुन्दर, नाट्यपूर्ण और दुःख से भरा लग रहा था। रोविन्सकाया अपने दूसरे बहुत से साथियों की तरह ; एक दिन और हो सके तो एक घण्टा भी, ऐसा नहीं गुज़ारना चाहतो थी, जब कि वह भीड़ से अलग रह जाय। वह चाहती थी कि तमाम लोग उसकी ही बातें करते रहें, अतएव एक दिन वह देश-भक्तों के जलूस में शरीक होती तो दूसरे दिन किसी सभा के मंच से साईबेरिया भेजे जानेवाले देशभक्तों की सहायता में जोशीली कविताएँ पढ़ती। कभी वह बड़े आदमियों के खेलों में अस्पतालों की सहायता के लिए फूल बेचती तो कभी नाचघरों में शैम्पेन बेचती। वह ऐसे मौक़ों पर गाने के लिए छोटे-छोटे गीत पहले से सोचकर चुन रखती थी जो कि उसके गाने के बाद फिर गली-कूचों में हर तरफ़ गाये जाने लगते थे। वह चाहतो थी कि हर जगह और हमेशा भीड़ सिर्फ़ उसकी तरफ़ ही देखे, उसी का नाम ले, उसी की मिश्रानी हरी-हरी आँखों और उसके लोभी और उत्तेजक मुँह को और उसकी पतली-पतली उङ्गलियों के ऊपर जड़े हुए पन्नों को सराहती रहे।

'मेरी अच्छी तरह समझ में यह सब नहीं आ रहा है' कुछ देर तक चुप रहकर वह बोली, 'मगर जिस काम के करने की हृदय से इच्छा की जाती है वह हो ही जाता है और मैं तुम्हारी मदद हृदय से करना चाहती हूँ। ठहरो, ठहरो !. . .एक बड़ी अच्छी बात मुझे याद आ रही है···उस दिन मैं जब तुम्हारे यहाँ गई थी, तब बैरोनेस के अलावा मेरे साथ कोई और भी तो था ?. . .'

'हाँ, मगर मैं नहीं जानती कि वे लोग कौन थे···एक उनमें से आप सबके कुछ देर बाद कमरे से निकलकर गया था। उसने जेनी का हाथ चूमकर कहा था कि कभी ज़रूरत पड़े तो मुझे याद करना, मैं तुम्हारा हमेशा सहायक रहूँगा। यह कहकर उसने अपना कार्ड जेनी के हाथ में दे दिया था, मगर उसने जेनी से कहा था कि वह उस कार्ड को किसी और को कभी न दिखाये, मगर बाद में फिर उसका कभी किसो को ख़्याल भी न रहा। न मैं ही कभी जेनी से पूछ पाई कि वह कौन था। कल मैंने जेनी के सामान में उस कार्ड को बहुत ढूँढ़ा, मगर वह न मिला...'

'ठहरो !...ठहरो !.. मुझे याद आ गया !' रोविन्सकाया ने एकाएक उत्साह से कहा, 'आहा !' उसने जल्दी से तख़्त पर से उठते हुए कहा, 'रायज़ानोव था !.. हाँ, हाँ, हाँ...वकील अर्न्स्ट ऐन्ड्रीविश रायज़ानोव, सब ठीक हो जायगा। यह बड़ा अच्छा रहा !'

वह उस छोटी मेज़ की तरफ घूमी जिसपर टेलीफोन रखा हुआ था और टेलीफोन की घण्टी बजाकर बोली :

'सेन्ट्रल—१८-३५.. कृपया.. हेलो !...अर्न्स्ट ऐन्ड्रीविश को टेलीफोन पर बुलाओ। कहो रोविन्सकाया बुलाती है...धन्यवाद.. हेलो ! अर्न्स्ट ऐन्ड्रीविश बोलते हो ? बहुत अच्छा, बहुत अच्छा, लेकिन छोटे हाथों का काम नहीं है। तुम कुछ कर नहीं रहे हो न ?.. बेवकूफ़ी की बातें छोड़ो !...गम्भीर मामला है। क्या तुम पन्द्रह मिनट के लिए फ़ौरन यहाँ नहीं आ सकते ?.. नहीं, नहीं हाँ...सिर्फ़ एक मिहरबान और होशियार आदमी की तरह। अपनी बदनामी ख़ुद क्यों करते हो...अच्छा, बहुत अच्छा, सच.. मैं ठीक तरह कपड़े नहीं पहिने हूँ, मगर उसका कारण है... मेरा सिर दुख रहा है। नहीं, एक स्त्री, एक लड़की···तुम ख़ुद ही आकर देख लोगे। जितना शीघ्र हो सके, आ जाओ।···धन्यवाद ! बन्दगी !···'

'वह अभी आता है', रोविन्सकाया ने टेलीफोन रखते हुए कहा, 'वह बड़ा सुन्दर और चतुर आदमी है। वह सब कुछ कर सकता है सब कुछ उसके लिए सम्भव है...जो किसी को सम्भव नहीं है, वह भी उसे सम्भव है···मगर तब तक···माफ़ कीजिए···आपका नाम ?'

टमारा शर्मा गई, मगर फिर अपने ऊपर मुसकराती हुई बोली :

'मेरा नाम आपके जानने लायक़ नहीं है, ऐलेना विक्टोरोव्ना ! मेरा नामा टमारा

है...असली नाम तो ऐनास्टासिया निकोलेवना है, मगर एक ही बात है—आप मुझे टमारा कहकर पुकारिए...क्योंकि उसी नाम से पुकारी जाने की मैं अधिक आदी हूँ...'

'टमारा ?...बड़ा सुन्दर नाम है !...अच्छा श्रीमती टमारा, तो शायद आपको मेरे साथ नाश्ता करने में कोई उज्र तो नहीं होगा ? शायद रायजानोव भी हम लोगों के साथ नाश्ता करेगा...'

'माफ़ कीजिए, मेरे पास नाश्ते के लिए वक्त नहीं ।'

'यह बड़े अफ़सोस की बात है !.. अच्छा, तो मुझे आशा है, आप फिर कभी आयेंगी.. शायद आप सिगरेट पीना पसन्द करेंगी ।' यह कहते हुए उसने अपना सिगरेट रखने का डिब्बा, जिसके ऊपर पन्ने में उसके नाम का पहिला अक्षर 'ई' बना था, टमारा की तरफ़ बढ़ाया ।

इतने में रायज़ानोव भी आ गया ।

टमारा ने उस रोज़ ध्यान से उसे नहीं देखा था। आज उसकी शक्ल-सूरत देखकर वह दङ्ग रह गई । क़द का लम्बा, बदन गठा हुआ, प्रख्यात सगीत-शास्त्री बीथोवन की तरह घनी भृकुटियाँ, जिनके ऊपर लापरवाही से बिखरे हुए काले-काले बाल ; जोशीले व्याख्यानदाताओं का-सा बड़ा मुँह, साफ़, चमकीली, चतुर और हँसोड़ी आँखें—अर्थात् उसकी शक्ल-सूरत ऐसी थी कि हज़ारों में उसी पर निगाह पड़े ; बड़ा महत्त्वाकांक्षी और जीवन से अभी तक न अफरा हुआ, अभी तक ज्वलन्त प्रेमी और सौन्दर्य का लोभी 'अगर मेरा भाग्य यों न फूट गया होता तो', टमारा ने उसकी तरफ़ प्रसन्नतापूर्वक देखते हुए सोचा, 'तो ऐसे आदमी पर मैं अपने आपको लुटा देती .. हँसते हुए, बड़ी खुशी से, मुँह पर मुसकान के साथ, मै अपना जीवन एक गुलाब के फूल की तहर तोड़कर चढ़ा देती...'

रायजानोव ने आकर रोविन्सकाया का हाथ चूमा और बिना किसी हिचक के, बड़ी सादगी से, टमारा को प्रणाम करके कहा :

'हम लोगों का एक दूसरे से उस पागलपन की शाम को परिचय हो चुका है जब आपको फ्रेञ्च भाषा बोलते सुनकर हम लोग भौंचक्के रह गये थे। जो कुछ आपने कहा, वह केवल मेरे और आपके बीच की बात है, पर वह तो मेरी समझ में नहीं आया—जिस ढङ्ग से आपने कहा !...वह आज तक मेरे कानों में गूँज उठता है . अच्छा, एलेना विक्टोरोव्ना', उसने रोविन्सकाया की तरफ़ मुड़कर

एक नीची कुरसी पर बैठते हुए कहा, 'कहो, मैं क्या आपकी सेवा कर सकता हूँ ? हाज़िर हूँ ।'

रेविन्सकाया ने फिर सुस्ती से अपनी उङ्गलियाँ अपनी कनपटियों पर रखीं ।

'आह, सचमुच, मैं इतनी परेशान हूँ, मेरे प्यारे रायज़ानोव,' वह जानबूझकर, अपनी आँखें मुर्झाकर बोली, 'तिस पर, यह मेरा सिर और दुख रहा है...कृपया मुझे वह दवा की शीशी मेज़ पर से उठाकर दे दो...श्रीमती टमारा तुम्हें सब बतायेंगी... मैं नहीं बोल पाऊँगी···सिर के दर्द के मारे मरी जा रही हूँ !...'

टमारा ने संक्षेप में रायज़ानोव को जेनेका की दुःखद मृत्यु का सारा हाल सुनाया; उसको जेनी के पास अपना कार्ड छोड़ आने की याद दिलाई और कहा कि जेनी उस कार्ड को सदा अपने पास बड़ी हिफ़ाजतसे रखती थी और उसका, ज़रूरत पड़ने पर जेनी की मदद करने का, वायदा याद दिलाया ।

'हाँ, हाँ, अवश्य !' रायज़ानोव ने उसके कह चुकने पर आश्चर्य से कहा और फ़ौरन उठकर जल्दी-जल्दी कमरे में इधर से उधर, हाथ से अपने बाल अपनी आदत के अनुसार, पीछे को फेंकता हुआ टहलने लगा। फिर वह कहने लगा :

'तुम सचमुच बड़ा अच्छा कर रही हो...अच्छी दोस्ती निभा रही हो ! यह बहुत अच्छा है !...बहुत ही अच्छा है !...मैं तुम्हारी हर तरह से मदद करूँगा···क्रिया-कर्म के लिए तुम्हें इजाज़त चाहिए···हूँ···देखो, मैं अभी सोचकर बताता हूँ !...'

वह अपना माथा मलने लगा ।

'हाँ···हाँ···मैं गलती नहीं करता हूँ तो यह दफ़ा एक सौ···एक सौ अठहत्तर में आता है···माफ कीजिए···मैं समझता हूँ यह दफ़ा मुझे ज़बानी याद है...हाँ, यों है, 'किसी ऐसे शख़्स को, जो आत्महत्या करता है, दफ़नाते वक्त न तो धार्मिक प्रार्थना ही पढ़ी जा सकती है और न धार्मिक भजन ही गाये जा सकते हैं, जब तक कि उसके चेहरे से दिमाग़ के ख़राब हो जाने का भाव न टपकता हो'···हूँ...तो पहली बात···तुमने कहा कि डाक्टर ने उसकी रस्सी काटकर उसे उतारा था···शहर के सरकारी डाक्टर ने...उसका नाम ?···'

'क्लीमेन्को !'

'मुझे लगता है कि मैं उससे कहीं मिला हूँ···अच्छा···अच्छा···और तुम्हारे थाने का दारोगा कौन है ?'

'बरकेश ।'

'ओहो...मैं उसे जानता हूँ ...बड़ा हट्टा-कट्टा और मज़बूत है...पंखे की तरह फैली हुई उसकी लाल लाल दाढ़ी है...है न ?'

'हाँ, हाँ, वही है ।'

'मैं उसको अच्छी तरह जानता हूँ । उसे किसी न किसी दिन जेल ज़रूर हो जायगी...दस बार तो वह बदमाश मेरे हाथों से किसी न किसी तरह बच गया .. उसे भेंट चढ़ानी होगी । अच्छा, अच्छा ; और उसके बाद अस्पताल में...तुम उसका क्रिया-कर्म कब करना चाहती हो ?'

'सचमुच मैं कुछ नहीं जानती...जितनी जल्दी हो सके, मैं करना चाहती हूँ .. हो सके तो आज ही !'

'हूँ...आज ही...मैं इसका वायदा तो नहीं कर सकता...इतनी जल्दी इन्तज़ाम करना कठिन होगा...परन्तु मैं अपनी डायरी में आपका नाम और पता लिखे लेता हूँ । दो घण्टे में मैं आपके पास जवाब भेजूँगा । ठीक है, क्यों ? मगर फिर मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि आपको शायद क्रिया-कर्म कल ही के लिए रखना होगा . और... माफ़ कीजिए मेरी गुस्ताखी .. आपको शायद रुपये की भी ज़रूरत होगी ?'

'नहीं, धन्यवाद !' टमारा ने इनकार करते हुए कहा, 'मेरे पास रुपया है । आपकी चिन्ता के लिए धन्यवाद !...अच्छा, तो अब मैं जाती हूँ । मैं आपकी तहे-दिल से शुक्रगुज़ार हूँ, ऐलेना विक्टोरोवना !...'

'दो घण्टे में मेरा जवाब आपके पास पहुँच जायगा,' रायज़ानोव ने द्वार तक उसे पहुँचाते हुए कहा ।

टमारा इसके बाद गाड़ी में बैठकर घर की तरफ़ नहीं चली । वह कैथोलिचेस्काया स्ट्रीट की तरफ़ मुड़ी और वहाँ पहुँचकर एक छोटी-सी काफ़ी की दूकान में घुस गई जहाँ सेनका उसका इन्तज़ार कर रहा था । सेनका एक खुशमिज़ाज आदमी, अच्छी शक्ल का, नीलापन लिये हुए काले बालों का था जिसकी काली-काली आँखों में पीला-पन और सफ़ेदी झलकती थी । वह निश्चय में दृढ़ता और काम में हिम्मत दिखाता था और इस शहर के चोरों में बड़ा प्रख्यात था । वह उनका सबसे अनुभवी और सच्चा सरदार था जो आम तौर पर रात भर जुआ खेला करता था ।

'कैसी हो टमोरच्का ? बहुत दिनों से तुमसे मुलाक़ात नहीं हुई—मैं तो ना-उम्मीद हो चला था...कहो, काफ़ी पियोगी ?'

'नहीं, काम की बात पहले सुनो...कल जेनेका की अन्त्येष्टि-क्रिया करनी है... वह फाँसी लगाकर मर गई...'

'हाँ, मैंने एक अखबार में पढ़ा,' सेनका ने बड़ी लापरवाही से दाँतों में से बोलते हुए कहा, 'क्या हुआ ?'

'मुझे पचास रुपये फ़ौरन लाकर दो।'

'टमोरच्का, मेरी प्यारी—मेरे पास इस वक्त एक रुपया भी नहीं है। ..पचास तो दूर रहे।...'

'मैं जैसा कहती हूँ करो—फ़ौरन लाकर दो!' टमारा ने तेज़ी से कहा—मगर क्रोध नहीं किया।

'हे मेरे ईश्वर। . मैं तुमसे सच कहता हूँ...मेरे पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं है . और आज रविवार होने से सेविङ्ग बैंक भी बन्द है...'

'बन्द होने दो।...कहीं से लाओ।...मगर मुझे लाकर फ़ौरन पचास रुपये दो।'

'पचास रुपये तुम्हें फ़ौरन किस लिए चाहिए, मेरी प्यारी ?'

'इससे तुम्हें क्या मतलब, मूर्ख ?...अन्त्येष्टि-क्रिया के खर्च के लिए...'

'ओह। अच्छा, बहुत अच्छा!' सेनका ने एक गहरी साँस ली, 'अच्छा, तो मैं खुद कहीं से लेकर तुम्हारे पास शाम को आऊँगा ...ठीक है न, टमोरच्का ?... तुम्हारे बिना मुझे रहना बड़ा मुश्किल हो रहा है। आह, मेरी प्यारी, मैं तुम्हें सीने से लगाकर चूमना चाहता...मैं चूमते समय तुम्हें आँखें बन्द नहीं करने दूँगा।...मैं तुम्हारे पास आऊँगा।'

'नहीं, नहीं।..जैसा मैं कहती हूँ वैसा तुम करो, सेनेच्का।...मेरी बात माना करो। वहाँ तुम अब हरगिज़ न आना, क्योंकि मैं अब खालाजान बन गई हूँ और सारे घर का इन्तज़ाम मेरे सिर है।'

'ऐ, तुम खालाजान ? सारे घर का इन्तज़ाम तुम्हारे सिर ? घर का इन्तज़ाम तुम क्या जानो।...' कहकर वह आश्चर्य से सीटी बजाने लगा।

'हाँ, अब तुम मुझसे मिलने वहाँ न आना, मगर बाद में पीछे मेरे प्यारे, जो

कुछ तुम चाहोगे वही होगा···मैं सब छोड़-छाड़कर बिल्कुल तुम्हारी ही होकर रहूँगी !'

'आह, मुझसे अब नहीं रहा जाता ; जल्दी छोड़कर आ जाओ !'

'जल्दी आ जाऊँगी ; एक हफ़्ता और रुक जाओ, मेरे प्यारे ! तुम वह बुकनी ले आये ?'

'अरे वह बुकनी कुछ नहीं है !' असन्तोष से सेनका ने कहा, 'और बुकनी भी नहीं, वे गोलियाँ हैं।'

'मगर जैसा तुम कहते थे, वह फौरन ही पानी में तो घुल जाती हैं न ?'

'हाँ. वह तो मैंने खुद अपनी आँखों से देखा है।'

'मगर उससे वह मर तो नहीं जायगा, सेनका ? क्यों उससे वह मर तो नहीं जायगा ? सच बताओ !'

'नहीं, नहीं, कुछ नहीं होगा . कुछ देर तक सिर्फ़ छींकें आयेंगी···आह टमारा !' उसने एक गहरी साँस लेते हुए कहा और एक असह्य भाव से उसने ऐसी ज़ोर से अँगड़ाई ली कि उसके जिस्म के सारे जोड़ चटख उठे, 'जल्दी खत्म करो यह क़िस्सा ईश्वर के लिए जल्दी ही सब छोड़-छाड़कर मेरे पास आ जाओ !...हम तुम दोनों मिलकर अपना काम शुरू करें...और क़िस्सा ख़त्म ! जहाँ तुम जाना चाहो, मेरी प्यारी, वहीं मैं तुम्हारे साथ जाने को तैयार हूँ ! मैं बिल्कुल तुम्हारी उङ्गली के इशारे पर हूँ ! ओडेसा जाना चाहती हो तो अभी ओडेसा चलने को तैयार हूँ... और कहीं विदेश जाना चाहती हो तो वहाँ भी अभी चलने को तैयार हूँ। जल्दी सब ख़त्म करके आ जाओ ! ..'

'जल्दी ही आ जाऊँगी, बड़ी जल्दी ! ..'

'तुम्हारी आँख के इशारे की ज़रूरत है और मैं बुकनी, औज़ार और पासपोर्ट लेकर हाज़िर हूँ।···और फिर···वाह ! वाह ! फिर क्या कहने हैं, मेरी प्यारी टमोरच्का ! फिर हम दोनों मिलकर ग़ज़ब ढायेंगे ! मज़ा करेंगे !...'

और वह जो हमेशा गम्भीर रहता था, इस वक्त बिल्कुल यह भूलकर कि वह दूकान में खड़ा है और लोग देख लेंगे, टमारा को पकड़कर सीने से लगाने लगा।

'अरे, अरे !'...जल्दी से बिल्ली की तरह फुर्ती से टमारा कुर्सी से उछलकर खड़ी हो गई, 'ओ अभी नहीं ; फिर, फिर ! मेरे प्यारे सेनका, बाद में !···बाद में

मैं बिल्कुल ही तुम्हारी हो जाऊँगी, प्यारे...फिर कोई रोक या इनकार न होगा? मैं तुम्हें थका डालूँगी,...अच्छा अभी बन्दगी! बड़े मूर्ख हो!'

और जल्दी से अपने हाथ से सिर के बाल ठीक करती हुई वह काफ़ी की दूकान से चली गई।

अड़तीसवाँ अध्याय

दूसरे दिन सोमवार को, करीब दस बजे सुबह, चकले की सारी छोकरियाँ—उस चकले की जो पहले अन्ना का था और अब ऐम्मा ऐडवार्डोवना का हो गया था—गाड़ियों में बैठकर शहर की तरफ़ अस्पताल को चलीं। सिर्फ बड़ी अनुभवी और दूरदर्शी हैन्राटा, कायर और बेदिल निनका और कमज़ोर तबियत की पाशा नहीं गई। पाशा दो दिन चुपचाप चारपाई पर पड़ी थी और उससे कोई बात पूछी जाती थी तो उत्तर में एक निर्जीव और निर्बुद्धि मुसकान मुसकराने लगती थी और जानवरों की तरह धीमी-धीमी कुछ निरर्थक आवाज़-सी करती थी। यदि खाने को भी उसे कोई नहीं लाता था तो वह नही माँगती थी, मगर खाना उसके पास लाया जाता था तो वह उठकर बड़े लालच से उसे फ़ौरन जानवरों की तरह खाने में लग जाती थी। उसे ज़रूरी नित्य क्रिया-कर्म की भी याद दिलानी होती थी, तब वह उठती थी; वरना उसकी भी उसे याद या चिन्ता नही रहती थी। एम्मा ने पाशा को उसके रोज़ाना के ग्राहकों के पास नही भेजा था जो रोज़ आ-आकर उसे पूछा करते थे। पहले भी पाशा को इस तरह के दौरे हो चुके थे, परन्तु इतने दिनों तक वे नहीं रहे थे। ख़ैर, ऐम्मा ने किसी न किसी तरह पाशा को अच्छा करने का निश्चय किया था, क्योंकि वह इस चकले को सबसे अधिक चलती रक़म थी, जिसकी बड़ी माँग रहती थी; अस्तु, जो इस सस्था की सबसे भयङ्कर शिकार भो थी।

अस्पताल में चीर-घर की इमारत लम्बी-लम्बी, इकमँज़िला और ख़ाकी रङ्ग की थी, जिसकी खिड़कियों और द्वारों की चौखटें और किवाड़ सफेद रङ्ग के थे। इस इमारत को बाहर से देखने से ही लगता था कि वह बैठी-सी ज़मीन में घुसी-सी जा रही थी। वह किसी जादूगर या भूतों का घर-सी लगती थी। छोकरियाँ इस इमारत के द्वार पर ठिठकीं और एक-एक करके झिझकती हुईं, उसके द्वार में होकर आँगन

में होती हुईं, आँगन के उस छोर पर बने हुए गिरजे में घुसीं। इस गिरजे का रङ्ग भी वैसा ही ख़ाकी था और उसके द्वारों और खिड़कियों की चौखटें और किवाड़ भी वैसे ही सफेद थे।

गिरजे के द्वार पर ताला लगा था। उसकी चाबी चौकीदार के पास थी, जिसको ढूँढ़ने की ज़रूरत थी। टमारा ने बड़ी मुश्किल से एक बूढ़े, गंजे आदमी को, जिसकी मूछों पर काई-सी जमी लगती थी और जिसकी आँखें छोटी-छोटी और नाक लाल-लाल और बहुत आगे को लटकती थी, ढूँढ़कर निकाला। उसने द्वार में लटकते हुए बड़े ताले को खोला, चटखनी को धक्का देकर हटाया और जंग लगे हुए द्वार को धक्का देकर खोला जो गाता हुआ-सा खुला। द्वार के खुलते ही गिरजे के अन्दर से एक ठण्डी और नम हवा का झोंका जिसमें पत्थरों की नमी, धूल और मुर्दा मांस की गन्ध मिली हुई थी, आकर छोकरियों को लगा। वे कांपती हुई पीछे को हटकर एक दूसरे से सटकर खड़ी हो गईं; केवल टमारा बिना कांपे चौकीदार के साथ-साथ अन्दर गई।

गिरजे में अन्दर लगभग अन्धकार था। पतझड़ की धीमी-धीमी रोशनी छोटी-छोटी और पतली-पतली खिड़कियों से होकर आ रही थी, जिन पर जेलख़ाने की तरह सींखचे जड़े थे। दो-तीन मूर्तियाँ दीवारों पर लगी थीं, जो अन्धकार में साफ़-साफ़ नज़र नहीं आती थीं। फ़र्श पर मामूली तख़्तों के बने हुए लाशों को उठाने के कई बक्स टिकटियों पर रखे हुए थे। बीच का एक बक्स ख़ाली था और उसका ऊपर का ढक्कन पास ही में अलग पड़ा था।

'तुम्हारी लाश कैसी है?' चौकीदार ने एक चुटकी हुलास भरकर सूँघते हुए मोटी आवाज़ में पूछा, 'तुम उसका चेहरा देखकर पहिचान सकती हो?'

'हाँ, मैं उसे पहिचान लूँगी।'

'अच्छा, तो आओ, देखो। मैं सब लाशें तुम्हें दिखाता हूँ। देखो, यह तो नहीं है?...'

यह कहकर उसने एक लाश के बक्स का ढकना जो कीलों से जड़ा नहीं था, उठाया। एक झुर्रे चेहरे की बुढ़िया जिसका शरीर चीथड़ों से ढका था और जिसका मुँह नीला और सूजा हुआ था, उस बक्स में लेटी थी। उसकी बाँई आँख बन्द थी और दाहिनी जिसकी चमक जा चुकी थी और जो पुरानी भुड़भुड़ की तरह दीखती थी, एकटक भयङ्कर ढङ्ग से घूर रही थी।

'यह नहीं है ? अच्छा, और देखो... यह देखो।' चौकीदार ने कहा और एक-एक करके उसने सभी बक्स खोल-खोलकर दिखाये, जिन सबमें बड़े ग़रीबों की लाशें लगती थीं, जो कि सड़कों पर से, नशे से चूर होकर गिर पड़ने, अथवा गाड़ियों से कुचल जाने पर उठाकर ले आये गये थे, जो अङ्ग-भङ्ग रूप में विकृत होकर सड़ने लगे थे। कुछ लाशों पर सड़न शुरू हो जाने के नीले नीले दाग़ साफ़ दिखाई देने लगे थे। एक आदमी की नाक ग़ायब थी, ऊपर के होंठ के फटकर दो टुकड़े हो गये थे और मुँह पर, जिसमें छोटे-छोटे सूराख हो गये थे, तमाम सफ़ेद-सफ़ेद कीड़े रेंग रहे थे। एक औरत का पेट, जो जलन्धर से मरी थी, पहाड़ की तरह ऊपर को उठा हुआ, बक्स का ढक्कन ऊपर को उठाये दे रहा था।

चीरफाड़ के बाद इन लाशों को जल्दी-जल्दी सी-साकर चौकीदारों ने इन बक्सों में धोकर बन्द कर दिया था। इसकी चिन्ता चौकीदारों को नहीं रहती थी कि लाशें सीते वक्त वे दिमाग़ पेट में रखते हैं अथवा सिर में जिगर रखकर वे जल्दी-जल्दी प्लास्टर से बन्द कर देते हैं। वे शराब पीकर अपने इस भयङ्कर और असाधारण काम को इसी प्रकार करने के आदी हो गये थे और आम तौर पर ऐसा होता था कि उनके इन बेज़बान ग्राहकों की पूछताछ करनेवाले कोई नाते-रिश्तेदार और परिचित भी नहीं होते थे...'

गिरजे में सड़ते हुए मांस की भारी और गोंद की तरह ऐसी चिपकनी बदबू भर रही थी कि टमारा को लगा कि उसके सारे शरीर को उसने ढाक लिया है।

'सुनो चौकीदार' टमारा ने पूछा, 'यह मेरे पाँवों के नीचे बराबर कर्र-कर्र क्या होता है ?'

'कर्र-कर्र ?' चौकीदार ने फिर पूछा और सिर खुजलाने लगा, 'ओह, कीड़े होंगे!' उसने लापरवाही से कहा, 'लाशों में यह कम्बख्त कीड़े बड़ी जल्दी पड़ने लगते हैं!.. मगर तुम्हारी लाश औरत की है या मर्द की ?'

'औरत की' टमारा ने उत्तर दिया।

'इसका मतलब है कि इन सबमें से तुम्हारी कोई नहीं है ?'

'नहीं, ये सब अनजान लोगों की लाशें हैं।'

'अच्छा, तो फिर!...इसका मतलब यह हुआ कि लाश-घर में चलकर ढूँढ़ना पड़ेगा। किस रोज़ वह लाश यहाँ आई थी ?'

'शनिवार के दिन, दादाजी' और टमारा ने यह कहकर अपना बटुआ निकाला, 'शनिवार को दिन में लाई गई थी। यह लो, तम्बाकू पीने के लिए, दादा!'

हाँ, अब ठीक है! शनिवार के रोज़, दिन में तुमने कहा? क्या कपड़े पहिने थी?'

'कपड़े? कपड़े तो कुछ नहीं थे—एक कुर्ती और एक लहँगा सिर्फ़ पहिने थी...दोनों सफ़ेद रङ्ग के थे।'

'अच्छा, तो वह नम्बर दो सौ सत्रहवाली होगी...उसका नाम क्या था? . '

'सुसन्ना राइटज़ौना।'

'मैं जाकर देखता हूँ—शायद वही है। अच्छा, तो अब श्रीमतियो,' उसने छोकरियों से, जो द्वार में एक दूसरे से चिपटी खड़ी रोशनी रोक रही थीं, कहा, 'आपमें से सबसे बहादुर कौन है? अगर आपके मित्र की लाश यहाँ परसों आई थी तो वह उस दशा में पड़ी होगी, जिसमें भगवान् ने सबको रचा है, अर्थात् बिल्कुल नङ्गी होगी... बताइए, आपमें से बहादुर कौन हैं...कौन दो आप में से दिल कड़ा करके आ सकती हैं? लाश को कपड़े पहिनाने की ज़रूरत होगी।'

'अच्छा, अच्छा, मनका तुम जाओ,' टमारा ने अपनी साथिन से कहा, जो ठण्डी और पीली होकर घबराई हुई लाशों को घूर-घूरकर आँखें मिचकाती हुई देख रही थी। 'डर मत, मूर्ख; मैं भी तेरे साथ आऊँगी! तू नहीं जायगी तो और कौन जायगा?'

'अच्छा, मैं? अच्छा, मैं...?' नन्हीं मनका धीरे से होंठ हिलाकर बड़-बड़ाई, चलो, चलो। मुझे सब एक-सा ही है...'

गिरजे के पीछे ही लाशघर भी था। यह एक ज़मीन के नीचे का कमरा था जिसमें पहुँचने के लिए छः सीढ़ियाँ उतरनी होती थीं।

चौकीदार दौड़कर कहीं गया और एक मोमबत्ती और फटी किताब लेकर लौट आया। लाशघर में उतरकर जब उसने मोमबत्ती जलाई तो छोकरियों ने सामने फ़र्श पर पड़ी हुई बहुत-सी लाशें देखीं। क़तारों में रखी हुई—फैली, पीली-पीली, विकृत चेहरों की, सिर फटे हुए, चेहरों पर ख़ून के दाग़, दाँत बाहर को निकले हुए।

'अभी लीजिए...अभी लीजिए...' चौकीदार अपनी उङ्गलियों से इशारा करता

हुआ बोला, 'परसों...इसका मतलब हुआ शनिवार के दिन...शनिवार को...क्या नाम बतलाया आपने ?'

'राइटज़ीना सुसन्ना...'टमारा ने उत्तर में कहा ।

'राइटज़ीना सुसन्ना'...चौकीदार ने इस तरह दुहराया मानो वह गा रहा हो, 'राइटज़ीना सुसन्ना । जैसा मैंने कहा था.. दो सौ सत्रह नम्बर ।'

झुककर मोमबत्ती की रोशनी में लाशों के चेहरे देखता हुआ वह बढ़ने लगा । अन्त में वह एक लाश के पास जाकर रुक गया जिसके पाँव पर २१७ नम्बर बड़े-बड़े काले अक्षरों में लिखा था ।

'यही है ! मैं उठाकर बाहर बरामदे में लिये चलता हूँ और सारा सामान अभी लाये देता हूँ...ज़रा ठहरो !'

बड़बड़ाते हुए मगर ऐसी आसानी से जो उसकी उम्र के लिए आश्चर्य-जनक थी, उसने पैर पकड़कर जेनेका की लाश उठाई और अपनी पीठ पर इस तरह डाल ली जैसे कि वह कोई मृतक भेड़ या बकरी हो अथवा आलुओं का बोरा हो !

बाहर बरामदे में कुछ रोशनी ज़्यादा थी । वहाँ पहुँचकर चौकीदार ने जब लाश ज़मीन पर रख दी और छोकरियों ने उसे देखा तो टमारा ने अपना मुँह दोनों हाथों से ढाँक लिया और मनका मुँह फेरकर रो पड़ी ।

'तुम्हें किसी चीज़ की ज़रूरत हो तो मुझसे कहो,' चौकीदार ने उन्हें समझाते हुए कहा, 'तुम अपने मित्र की लाश को अच्छे, उसके योग्य कपड़ों से ढाँकना चाहती हो तो मैं अभी ला सकता हूँ । हम लोग सुनहरे कपड़े, मालाएँ, मूर्त्तियाँ, कफ़न इत्यादि सब चीज़ें तैयार रखते हैं...जो कुछ आप चाहें, हमसे ख़रीद सकती हैं... जूते भी मिल सकते हैं...'

टमारा ने उसके हाथ में रुपया दिया और मनका को अपने आगे करके कुछ देर के लिए बाहर हवा में चली गई ।

कुछ देर के बाद दो मालाएँ लाई गईं । एक टमारा की तरफ़ से थी, जिस पर काले अक्षरों में लिखा था—जेनी के लिए एक मित्र की तरफ़ से,' दूसरी रायज़ा-नोव की तरफ़ से लाल फूलों की एक माला थी जिस पर सुनहरे अक्षरों में लिखा था, 'तपकर सोना पवित्र होता है ।' उसने एक खत भी भेजा था जिसमें ज़रूरी काम में लगे होने के कारण न आ सकने के लिए टमारा से माफ़ी माँगी थी ।

इसके बाद रोमन कैथलिक पन्थ के अनुसार अन्त्येष्टि के समय संकीर्तन करनेवाले, पन्द्रह शहर में सबसे अच्छे बाजे बजानेवाले आये, जिनको ढूँढ़कर टमारा ने बुलाया था।

इन बाजेवालों का उस्ताद एक लम्बा ख़ाकी ओवरकोट और ख़ाकी टोप पहिने हुए था, जिससे ऐसा लगता था मानो वह ख़ाक से ढका हो। उसकी मूछें लम्बी-लम्बी और फ़ौजी अफ़सरों की तरह सतर थीं। उसने देखते ही वेरका को पहिचान लिया और आश्चर्य से मुसकराते हुए उसने वेरका की तरफ़ आँख मारी। महीने में दो-तीन बार और कभी-कभी अधिक भी, वह अपने पेशे के धार्मिक बाजेवालों और पुजारियों के साथ कटरे में जाया करता था और तमाम चकलों को देखकर वह अन्त में अन्ना के यहाँ ठहरता था और ख़ासकर वेरका को पसन्द करता था।

वह बड़ा खुशमिज़ाज़ और रङ्गीला आदमी था; जोश में भरकर बड़ी फुर्ती से नाचता था और ऐसे हाव-भाव करता था कि देखनेवाले हँसी से लोट-पोट होने लगते थे।

बाजेवालों के पीछे-पीछे दो घोड़ों की जनाज़ा ले जानेवाली गाड़ी आई। उसका रङ्ग काला था और उस पर सफ़ेद-सफ़ेद पर लगे हुए थे और उसके साथ सात मशालची थे। वे अपने साथ एक सफ़ेद शीशे का जनाज़ा भी लाये थे जो काली छींट से ढके हुए एक पायदान पर रखा था। जल्दी न दिखाते हुए, परन्तु आदत के अनुसार फुर्ती से उन्होंने लाश को उठाकर इस जनाज़े में रख दिया। लाश का मुँह उन्होंने कपड़े की जाली से ढक दिया और लाश को सुनहरे कपड़े में लपेटकर, एक मोमबत्ती जलाकर सिर पर और दो दोनों पाँवों पर रख दीं।

अब मोमबत्ती की पीली-पीली काँपती हुई रोशनी में, जेनेका का चेहरा और भी साफ़ दीखने लगा। चेहरे का नीलापन लगभग चला गया था; सिर्फ़ यहाँ-वहाँ कनपटियों पर, नाक पर, आँखों के बीच में, टेढ़ा-मेढ़ा, धब्बों में, थोड़ा-थोड़ा रह गया था। खुले हुए होठों के बीच में से दाँतों की सफ़ेदी कुछ-कुछ दीखती थी और दाँतों से कटी हुई जीभ का सिरा भी दीखता था। खुली हुई गर्दन की हँसली पर, जिसका रंग पुराने काग़ज़ का-सा हो गया था, दो लकीरों के निशान थे। एक काला-काला रस्सी का निशान था और दूसरा लाल-लाल उस चोट का निशान था जो सिमियन ने लगाई थी। ये निशान दो डरावने कण्ठ-मालाओं की तरह लग रहे थे। टमारा ने लाश के

पास जाकर कुर्सी का कालर ठुड्डी तक चढ़ाकर एक सेफ्टी पिन से बन्द कर दिया जिससे गर्दन के निशान दिखाई न दें।

क्रिया-कर्म कराने के लिए तीन पादरी भी आये। एक छोटा-सा भूरा पादरी था जो आँखों पर सुनहरा चश्मा और सिर पर एक छोटी-सी टोपी लगाये था। दूसरा एक पतला, लम्बा, पतले-पतले बालों का, बीमार सा दिखनेवाला पादरी था, जिसका चेहरा ऐसा गहरा पीला था कि मिट्टी का-सा लगता था। तीसरा एक फुर्तीला लम्बा चोगा पहिने हुए धार्मिक भजन गानेवाला था, जो बड़े उत्साह से अपने साथी गाने-बजानेवालों से रास्ते में रहस्यपूर्ण इशारों में बातचीत करता चला आ रहा था। टमारा ने आगे बढ़कर पहले पादरी से पूछा :

'पिताजी, आप लोग किस तरह अन्त्येष्टि क्रिया की प्रार्थना पढ़ेंगे—सब के लिए एक साथ या अलग-अलग ?'

'हम लोग सबके लिए एक साथ ही प्रार्थना पढ़ा करते हैं,' पादरी ने अपने चोगे पर गर्दन के पीछे से लटकनेवाले सिरों को चूमकर और उनकी धज्जियों से अपनी दाढ़ी सुलझाते हुए कहा, 'आम तौर पर ऐसा ही होता है, मगर ख़ास तौर पर, आप चाहें तो अलग भी प्रबन्ध हो सकता है। मृत्यु किस तरह से हुई थी ?'

'आत्महत्या से, पिताजी।

'ऐं···आत्महत्या से ?···मेरी प्यारी लड़की, तुम्हें पता है कि धार्मिक क़ानून के अनुसार आत्महत्या करनेवाले के लिए कोई प्रार्थना नहीं की जा सकती! ..अस्तु, कोई प्रार्थना नहीं हो सकती ! हाँ, मगर अपवाद भी होते हैं—ख़ास प्रबन्ध से भी की जा सकती है...

'यह देखिए, पिताजी ; मेरे पास पुलिस और डाक्टर दोनों के सर्टीफ़िकेट मौजूद हैं...उसका दिमाग़ ठीक नहीं था...पागलपन में उसने आत्महत्या कर डाली···'

यह कहते हुए टमारा ने पादरी की तरफ़ दो काग़ज़ जो पिछली शाम को रायज़ानोव ने उसके पास भेजे थे, तीन दस-दस रुपये के नोटों के साथ बढ़ाकर कहा, 'मेरी आपसे प्रार्थना है पिताजी, कि हर काम अन्त्येष्टि-क्रिया का पूरा पूरा धार्मिक रूप से ईसाई धर्म के अनुसार होना चाहिए। वह बड़ी अच्छी स्त्री थी और उसने बड़े दुःख सहे। क्या आप कृपया जनाज़े के साथ क़ब्रस्तान तक चलकर वहाँ भी एक आख़िरी प्रार्थना नहीं पढ़ सकते ?'

'मैं क़ब्रस्तान तक चल तो सकता हूँ, मगर वहाँ प्रार्थना करने का मुझे अधिकार नहीं है, क्योंकि वहाँ का पादरी दूसरा है...और देखिए मुझे फिर यहाँ एक बार लौटकर आना होगा, इसलिए आप कुछ गाड़ी के किराये के लिए और देने की कृपा करें तो ठीक होगा...'

टमारा के हाथ से रुपया लेकर पादरी, धूप के पात्र को जिसे धार्मिक भजन गानेवाला ले आया था, आयतें पढ़-पढ़कर पवित्र करने लगा और उस पात्र को फिर हाथ में लेकर लाश के चारों ओर घुमाने लगा। सिर के पास पहुँचकर वह रुका और नम्र और बनावटी दुःख की आवाज़ से कहने लगा :

'हे ईश्वर, तेरी महिमा अपार है! जैसी तेरी महिमा सृष्टि के प्रारम्भ में थी, वैसी ही अब भी है और वैसी ही हमेशा आगे भी रहेगी!'

भजनीक ने गुनगुनाना शुरू किया ; पवित्र पिता, पवित्रतम त्रिदेव और हमारे पिता ईशु! ..'

धीरे-धीरे, मानो किसी दुःखपूर्ण, गहन और धार्मिक रहस्य को कह रहे हों, गानेवालों ने जल्दी-जल्दी, मीठी आवाज़ में उच्चारना शुरू किया, 'प्रभु, तुम्हारे साधु-सन्तों की ख्याति इस जग में जगमगाती है! अपने इस दास की आत्मा को भी, जो सो रही है, शान्ति दो! हे प्रभो, इस दास की आत्मा को भी उसी प्रकार सुख और शान्ति दो, जिस प्रकार तुम मानवजाति पर कृपा करते हो!'

भजनीक ने सबके हाथ में एक-एक मोमबत्ती पकड़ा दी और उनकी गरम कोमल तथा जीवित ज्योतियाँ वहाँ की भारी और अन्धकारपूर्ण हवा में जल-जलकर स्नेह से स्त्रियों के चेहरे चमकाने लगीं। करुण संगीत के सुमधुर स्वर हवा में दुखी फ़रिश्तों की आहों की तरह मिल रहे थे।

'हे प्रभो, शान्ति दो अपने इस दास को और अपने स्वर्ग में इसे जगह दो, जहाँ न्यायियों और तुम्हारे सन्तों के चेहरे, हे प्रभो, तुम्हारे चिराग़ों की तरह दमकते हैं अपने इस दास की सारी ग़लतियाँ भूलकर प्रभो, इसे शान्ति प्रदान करो!'

टमारा इन शब्दों को, जिनसे वह बहुत दिन तक परिचित थी और अब बहुत दिनों से भूल चुकी थी, ध्यानपूर्वक सुन रही थी और घृणा से मन ही मन मुसकरा रही थी। उसको जेनेका के आवेशपूर्ण, पागल शब्द याद आ रहे थे, जो वह हताश होकर अविश्वास से कहा करती थी...'क्या महाकृपालु और महादयालु भगवान् सचमु

उसकी गन्दी, धुआँधार, घृणित और अपवित्र जिन्दगी को भूलकर उसकी आत्मा को क्षमा करेगा ? क्या सर्वव्यापी और सर्वज्ञ परमात्मा सचमुच जेनेका की नास्तिकता और अनिच्छुक व्यभिचार को और अपने पवित्र नाम के विरुद्ध एक बच्चे के वितण्डावाद और बकवास को भूलकर, क्षमा कर देगा ? हे भगवान् !…हे दयावान् !…हे सबके आधार !'

धीमा-धीमा शोक-प्रदर्शन और विलाप एकाएक चीखने और चिल्लाने में बदल गया और उसकी प्रतिध्वनि गिरजे में गूँज उठी, 'हाय जेनेच्का !' यह नन्ही मनका की आवाज़ थी, जो घुटनों पर खड़ी हुई, अपना मुँह रूमाल से बन्द करने का प्रयत्न कर रही थी। दूसरी छोकरियाँ भी उसको देखकर, घुटनों पर खड़ी हो गईं और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगीं और उनके रोने, सिसकियों और आहों की आवाज़ों से गिरजा गूँज उठा . ।

'तू ही एक अमर है, जिसने मनुष्य को सिरजा और बनाया है ! हम लोग ख़ाक से बने हैं और ख़ाक ही में मिल जायेंगे। तूने हमें बनाते हुए हुक्म भी दिया था कि, 'ख़ाक के तुम पुतले हो और अन्त में ख़ाक ही में मिल जाओगे।'

टमारा चुपचाप, बिना हिले-डुले, गम्भीर मुख से, पत्थर की तरह खड़ी थी। उसके हाथ की मोमबत्ती में से प्रकाश सुनहरे मण्डलों में उसके बालों पर पड़ रहा था। उसकी आँखें जेनेका के नम और पीले माथे और नाक के छोर पर, जो उसे अपनी जगह से दीख रहे थे, गड़ी हुई थीं।

'ख़ाक का पुतला अन्त में खाक ही में मिल जायगा…' वह मन ही मन दुहरा रही थी, 'क्या सचमुच यही दृश्य है—बस एक पृथ्वी रह जायगी और कुछ नहीं ? क्या अच्छा है—कभी न होना या कुछ होना ?…खराब से खराब भी कुछ होना… किसी तरह भी ज़िन्दा होना ?'

और गानेवालों ने मानो उसका समर्थन करते हुए, मानो उसका आख़िरी सहारा भी उससे छीनते हुए, अपनी अकेली ध्वनि में गाया :

'और सभी मनुष्य नष्ट हो जायेंगे…'

फिर गानेवालों ने 'अमर याद' नाम का भजन गाया और मोमबत्तियाँ बुझा दी गईं जिनमें से धुआँ निकल-निकलकर धूप के धुयें से मिलकर, नीला-नीला, उड़ने लगा। पादरी ने अन्तिम प्रार्थना पढ़ी ; सब चुप हो गये और भजनीक के दिये हुए फावड़े

से पादरी ने थोड़ी-सी बालू उठाकर लाश के ऊपर आड़ी-तिरछी डाली। बालू छोड़ते हुए उसने ये महान् शब्द उच्चारे, जो गम्भीर और दुःखपूर्ण घटना के रहस्यपूर्ण क़ानून की व्याख्या है, 'दुनिया ईश्वर की है और इसका चरम उद्देश्य सृष्टि है, जिसमें सब कुछ विद्यमान है।'

छोकरियाँ जनाज़े के साथ-साथ क़ब्रस्तान तक गईं। रास्ते में एक जगह पर कटरे की गली आकर मिलती थी, इस गली में होकर जनाज़ा मुड़ता तो आधी देर में ही क़ब्रस्तान पहुँच सकता था, मगर जनाज़ों के कटरे में होकर जाने की मुमानियत थी।

मगर फिर भी जनाज़े के इस गली के मोड़ पर आते ही, तमाम चकलों से छोकरियाँ, जैसी बैठी थीं वैसी ही, स्लीपर पहिने, नंगे पाँवों, रात के चोगों में, सिर पर रुमाल बाँधे, दौड़ती हुईं, निकल-निकलकर, गली के मोड़ पर आ खड़ी हुईं और जनाज़े को देखकर भगवान् का नाम लेती हुईं और सिसकती हुईं, रुमालों और कपड़ों के सिरों से अपनी आँखों से आँसू पोंछने लगीं।

दिन खुल गया था। सूर्य नीले-नीले, ठण्डे आकाश में चमक रहा था; घास अपनी आखिरी हरियाली तथा मुर्झाई हुई पत्तियाँ अपनी लाली और सुनहरापन चमका रही थीं...और स्वच्छ, ठण्डी, गम्भीर और दुःखी वायु से ध्वनि आ रही थी, 'पवित्र परमेश्वर! पवित्र सर्वशक्तिमान्! पवित्र अनन्त आत्मा, हम पर दया करो!' जीवन के लिए किस लालसा से, जो कभी नहीं भरती; अनित्य, स्वप्न की तरह क्षणिक, जीवन के सौन्दर्य और सुख के लिए किस पिपासा से और मृत्यु की शान्ति के लिए किस भयङ्कर दुःख से, ईश्वर के लिए ये शब्द निकल रहे थे!

फिर क़ब्र पर पहुँचकर एक छोटी-सी प्रार्थना पढ़ी गई और जनाज़े पर धड़-धड़ मिट्टी पड़ने लगी और शीघ्र ही उसके ऊपर ताज़ी मिट्टी का एक छोटा-सा टीला खड़ा हो गया।

'क़िस्सा ख़त्म हो गया!' टमारा ने सबके चले जाने पर अपनी साथिनों से कहा, 'मरना तो कभी न कभी सभी को है!...परन्तु मुझे जेनेका के लिए बड़ा दुःख है... बड़ा ही दुःख है...ऐसी साथिन हमें फिर कभी नहीं मिलेगी। फिर भी बहिनो, इस गढ़े में लेटकर वह आज हम लोगों के उस गढ़े से कहीं अच्छी है, जिसमें हम पड़ी सड़ती रही हैं...ख़ैर, आओ भगवान् का आख़िरी नाम लो और...चलो!...'

जब सब भगवान् का नाम ले चुकीं, तब टमारा के मुख से ये दुःखपूर्ण विचित्र और भयङ्कर शब्द निकले :

'और हे भगवान्, इससे बिछुड़कर अब अधिक दिन तक हम साथ-साथ न रहेंगी; शीघ्र ही वायुदेव हमें इधर-उधर बिखरा देंगे। जीवन बड़ी प्यारी चीज़ है...देखो, सूर्य कैसा चमक रहा है! कैसा आकाश नीला-नीला है। कैसी स्वच्छ वायु बह रही है!...मकड़ी के जाले उड़ते फिरते हैं.. कैसी भारतीय ग्रीष्म है!*...दुनिया कितनी अच्छी है!. हम ही सिर्फ...हम छिनालें बस कूड़ा कर्कट हैं! चलो, अब चलें।'

छोकरियाँ घर की तरफ़ चलीं, मगर रास्ते में कहीं से, एक स्मारक के पीछे से, एक लम्बा और मज़बूत विद्यार्थी निकला और उसने आकर लियूबा की बाँह कोमलता से पकड़ ली। लियूबा ने मुड़कर देखा तो सोलोवीव को अपने पास खड़ा देखा।

देखकर वह चौंकी। उसका चेहरा एकदम पीला पड़ गया, आँखें निकल आईं और होंठ काँपने लगे।

'भाग जाओ, यहाँ से!' उसने धीरे से, पर अपार घृणा से उससे कहा।

'लियूबा...लियूबोच्का...' सोलोवीव बड़बड़ाया, 'मैं तुमको ढूँढ़ता-ढूँढ़ता हार गया। मैं...ईश्वर की क़सम खाकर कहता हूँ...मैं उस लिखोनिन की तरह नहीं हूँ ...मैं सच कहता हूँ.. मैं...अभी...इसी वक्त...आज ही...'

'भाग जाओ!' लियूबा ने और भी गम्भीरता से कहा।

'सच कहता हूँ...बिल्कुल सच कहता हूँ.. मजाक नहीं करता हूँ...मैं तुमसे विवाह करना चाहता हूँ...'

'ओह, तू नहीं मानेगा!' लियूबा ज़ोर से चिल्लाई और जल्दी से, किसान औरत की तरह, सोलोवीव के मुँह पर ज़ोर का एक तमाचा जड़कर बोली, 'तो ले, यह ले! हम सबकी तरफ़ से यह इनाम लेता जा!'

सोलोवीव कुछ देर तक झूमता हुआ खड़ा रहा। उसके नेत्रों में शहीदों का-सा भाव था...मुँह आधा खुला था और उसके दोनों ओर दुःख की झुर्रियाँ थीं।

'भाग जा, भाग जा! मुझे तेरे जैसों की शक्ल देखना भी गवारा नहीं!' लियूबा ने फिर चिल्लाकर कहा, ! 'जल्लाद! सूअर!'

सोलोवीव ने दोनों हाथों से मुँह ढक लिया और मुड़कर इस प्रकार चल दिया,

---

* भारतीय ग्रीष्म के लिए ठण्डे देशों में रहनेवाले यूरोपीय लोग लालायित रहते हैं।

मानो न तो उसे अपने रास्ते का पता था और न वह यही जानता था कि वह किधर जाना चाहता है।

उनतालीसवाँ अध्याय

और टमारा के वचन सच्चे साबित हुए। जेनी की मृत्यु के बाद, दो सप्ताह में ही, एम्मा ऐडवार्डोवना के घर पर एक के बाद दूसरी, ऐसी भीषण घटनाएँ घटीं, जैसी आम तौर पर वर्षों में भी नहीं होती हैं।

जेनी की अन्त्येष्टि के दूसरे ही दिन अभागी पाशा को पागलखाने भेज देना पड़ा, क्योंकि उसके दिमाग़ ने बिल्कुल ही काम करना बन्द कर दिया था। डाक्टरों ने राय दी कि उसका अब अच्छा होना असम्भव है; और सचमुच उसको पागलख़ाने के अस्पताल में जैसा एक गद्दे पर ले जाकर रखा गया था, वैसी ही वह उस पर, बिना उठे, मरते दम तक पड़ी रही। दिन पर दिन उसका दिमाग़ और ख़ाली होता गया और वह वैसी ही चुप-चाप पड़ी की पड़ी रही; मगर उसकी मृत्यु अस्पताल में पहुँचने के छः मास बाद, बिस्तर में पड़े-पड़े शरीर में घाव हो जाने और उससे ख़ून में जहर फैल जाने पर हुई।

उसके बाद टमारा की बारी आई।

पन्द्रह दिन तक लगभग उसने ख़ाला का काम बड़ी मुस्तैदी से किया। हर वक्त वह कुछ न कुछ करती हुई इधर-उधर बड़ी फुर्ती से घूमती-फिरती थी, मगर उसके मन में भीतर ही भीतर कुछ हो रहा था, जिसमें वह व्यस्त दीखती थी। एक दिन शाम को वह भी ग़ायब हो गई और फिर चकले में न लौटी . ।

बात यह थी कि शहर के एक अमीर वकील से, बहुत दिनों से, वह प्रेम करती थी, जो था तो बड़ा धनवान्, मगर साथ ही बड़ा कंजूस भी था। साल भर हुआ, जब उसकी इस वकील से जान-पहिचान एक जहाज पर हो गई थी, जिससे दोनों एक पड़ोस के बन्दरगाह को जा रहे थे। चतुर और सुन्दर टमारा, उसकी चितवन और मुसकान, उसकी चटपटी बातें और उसकी सादगी ने इस अमीर वकील को मोह लिया था। टमारा ने भी मन ही मन इस बूढ़े, पर शान-शौकतवाले आदमी को, जो किसी बड़े कुल का लगता था, अपने लिए चुन लिया था; परन्तु टमारा ने उसे अपना असली पेशा नहीं बताया। उसे रहस्य में रखना टमारा को अच्छा

लगा। उसने कुछ-कुछ इतना इशारा ज़रूर किया कि वह एक औसत घराने की शादी-शुदा औरत है, जिसका गृह-जीवन सुखी नहीं है, क्योंकि उसका पति बड़ा कठोर और जुआरी है और दुर्भाग्य से उसके कोई बाल-बच्चा भी नहीं है। जुदा होते वक्त जब वकील ने उससे अपने साथ एक शाम गुज़ारने को प्रार्थना की तो उसने साफ़ इनकार कर दिया। यहाँ तक कि फिर कभी मिलने तक का उसने इरादा नहीं दिखाया। हाँ, ख़त-किताबत जारी रखने के लिए उसने कोई उज्र नहीं किया और उसको अपना एक झूठा नाम बताकर डाकख़ाने की मारफ़त ख़त भेजने को कह दिया। फिर उन दोनों में ख़त-किताबत शुरू हुई और वकील साहब ने अपने प्रेम-पत्रों में अपने दिल की सारी कविता उड़ेल-उड़ेलकर रख दी; परन्तु उसने अपना वही रहस्यपूर्ण ढङ्ग जारी रखा।

फिर वकील साहब की बड़ी प्रार्थनाओं के बाद वह उनसे प्रिन्स पार्क में मिलने पर राज़ी हुई, जहाँ मिलने पर उसने वकील साहब से प्रेम का बड़ा ललचाने और लुभानेवाला व्यवहार किया; परन्तु उनके साथ कहीं जाने पर राज़ी नहीं हुई।

इस प्रकार वह बड़ी चतुराई से अपने प्रेमी के मन में बुढ़ापे की प्रेमाग्नि भड़काती और बढ़ाती रही जो कि जवानी की प्रेमाग्नि से कहीं भयंकर होती है। आख़िरकार अबकी ग्रीष्म में, जब कि वकील साहब के घर के लोग कहीं बाहर चले गये, उसने वकील साहब के घर जाना निश्चय किया। वहाँ जाकर आँखों में आँसू लाकर, मानो उसका मन अपनी ग़लती पर बड़ा दुखी हो, परन्तु साथ ही ऐसे कोमल और उत्तेजित प्रेम से, पहली बार उसने वकील साहब को ऐसा प्रभावित किया कि बेचारे वकील साहब बिल्कुल आपे में न रहे और उस बुढ़ापे के प्रेम में ग़र्क हो गये जो निरा अन्धा और पागल होता है और जिसमें पड़कर मनुष्य को अपनी आख़िरी चीज़ अर्थात् हँसी का डर भी जाता रहता है।

टमारा उससे बहुत कम मिला करती थी, जिससे बूढ़े की बेसब्री और भी बढ़ती थी। वह उससे भेंट में फूल ग्रहण करने और उसके साथ एक साधारण होटल में मामूली नाश्ता करने को तो राज़ी हो जाती थी, परन्तु कोई कीमती चीज़ भेंट में उससे लेने को वह कभी राज़ी नहीं होती थी, जिससे वकील साहब को कभी उसे कुछ रुपया देने की हिम्मत नहीं होती थी। एक बार जब वकील साहब ने उससे सकुचाते-सकुचाते एक अलग मकान और दूसरी आसाइशों का प्रस्ताव किया तो उसने

उनकी तरफ़ ऐसे क्रोध से घूरकर देखा कि वकील साहब का चेहरा, सफेद बालों के बीच में, बच्चों की तरह शर्म से लाल हो गया और वह उसके हाथ चूमते हुए, सिट-पिटाकर न जाने क्या गिटपिट-गिटपिट करते हुए माफ़ियाँ माँगने लगे।

इस प्रकार टमारा वकील साहब को छकाती रही और दिन पर दिन उनका विश्वास अपने ऊपर बढ़ाती रही। धीरे-धीरे उसने यह जान लिया कि वकील साहब किस रोज़ अपनी लोहे की तिज़ोरी में ख़ासतौर पर अधिक रुपया रखा करते हैं, मगर उसने किसी मामले में जल्दी कभी नहीं दिखाई, जिससे कहीं काम वक्त से पहले बिगड़ न जाय।

आख़िरकार जिस दिन का टमारा इन्तजार कर रही थी, आ गया। हाल ही में एक बड़ा मेला ख़त्म हुआ था, जिससे वकीलों के दफ़्तरों में व्यापारियों का बहुत-सा रुपया लेनदेन के लिए आ रहा था। टमारा को मालूम था कि वकील साहब शनिवार को जाकर सारा रुपया बैंक में जमा कर देते हैं, जिससे रविवार के दिन वह निश्चिन्त होकर मौज उड़ा सकें; अतएव शुक्रवार के दिन एक आदमी वकील साहब के पास यह ख़त लेकर पहुँचा।

'मेरे प्यारे! मेरे उपास्य राजा सोलोमन! तुम्हारी बगीची की छोकरी सुलामिथ के गरम-गरम बोसे तुम्हारे पास पहुँचें...मेरे प्यारे, आज मुझे छुट्टी है और मैं बड़ी ख़ुश हूँ। आज मैं भी ख़ाली हूँ और तुम भी ख़ाली होगे। मेरा पति एक दिन के लिए काम से बाहर चला गया है और मैं सारी शाम और सारी रात, तुम्हारे यहाँ गुजारना चाहती हूँ। आह, मेरे प्यारे! मैं तमाम ज़िन्दगी तुम्हारे पास में गुजारने को तैयार हूँ। दूसरी जगह मैं कहीं न जाऊँगी! होटलों और नाचघरों से मेरा जी ऊब गया है। मैं तुम्हारे...केवल तुम्हारे पास...अकेले में...रहना चाहती हूँ। अतएव मेरे प्यारे, आज शाम के दस-ग्यारह बजे मेरी राह देखना। काफ़ी तादाद में ठण्डी सफ़ेद शराब, मीठे अखरोट और ताश तैयार रखना, मैं तुमसे मिलने के लिए मरी जा रही हूँ! शाम तक ठहरना भी मेरे लिए मुश्किल हो रहा है! मुझे लगता है, मैं तुम्हें थका डालूँगी! मेरा सिर घूम रहा है, आँखें जल रही हैं और हाथ-पाँव बर्फ की तरह ठण्डे हुए जाते हैं। मैं तुम्हें आलिङ्गन करती हूँ।

तुम्हारी
वेलेनटीना'

उसी दिन रात्रि को ग्यारह बजे, टमारा ने बड़ी चतुराई से, बातों ही बातों में, वकील साहब की अमीरी को सराहते हुए, उनसे अपनी तिजोरी खोलकर दिखाने को कहा। वकील साहब बड़ी ख़ुशी से जब अपनी तिजोरी उसे खोलकर दिखाने लगे तो उसने चुपचाप उन गुप्त अक्षरों को देखकर याद कर लिया, जिनके मिलाने पर तिजोरी खुलती थी। जल्दी से तिजोरी की भीतरी दराज़ों और डिब्बों पर एक नज़र डालकर उसने बड़ी होशियारी की एक जँभाई ली, मानो उसे उसमें कोई रस न हो और बोली :

'हाय राम रे, वक्त कैसे मुश्किल से कटता है !'

और यह कहकर वकील साहब की गर्दन अपनी छाती से लगाकर, उनके कान पर अपने होंठ रखकर, वह अपनी गरम साँसों से जलाती हुई, धीरे से बोली :

'बन्द करो इस वाहियात को, मेरे निधि ! चलो...यहाँ से चलें !'

और यह कहकर वह उठकर खाना खाने के कमरे में चली गई और वहाँ से चिल्लाकर बोली :

'आओ बोलोद्या ! यहाँ आओ ! जल्दी आओ ! मुझे शराब चाहिए और शराब के बाद प्रेम.. अथाह...प्रेम...अनन्त प्रेम प्रेम...प्रेम...प्रेम !.. नहीं ! पूरा जाम पियो ! ख़त्म कर डालो ! इसी तरह आज हम दोनों प्रेम भी पूरा-पूरा करेंगे !'

वकील साहब ने अपना गिलास उठाकर उसके गिलास से लगाया और गटगट एक घूँट में सारी शराब गले से उतार गये। मगर फिर वह होंठ सिकोड़कर बोले।

'अजीब बात है !.. आज शराब कड़वी क्यों है ?'

'हाँ !' टमारा ने उसकी तरफ़ ग़ौर से देखते हुए कहा, 'इस शराब में हमेशा ही कुछ कड़वापन होता है। राइन की बनी शराबें ऐसी ही होती हैं...'

'मगर आज की शराब विशेष तौर पर कड़वी है' वकील साहब ने कहा. 'नहीं, धन्यवाद मेरी प्यारी—और मैं नहीं पियूँगा !'

पाँच मिनट के बाद वकील साहब, कुर्सी पर बैठे-बैठे ही, सिर पीछे को फेंककर और जबड़े लटकाकर, खुर्राटे लेने लगे। टमारा कुछ देर तक चुप रही और फिर उन्हें जगाकर देखने लगी, मगर वकील साहब टस से मस न हुए। उसने उठकर जलती हुई मोमबत्ती उठाकर सड़क की तरफ़ खिड़की पर रख दी और बाहर के द्वार पर जाकर खड़ी होकर, किसी के आने की आहट सुनने लगी। धीरे से उसने द्वार खोला और सूट-

बूट में, जैन्टिलमैन की तरह, हाथ में एक बिल्कुल नया चमड़े का बैग लिये हुए, सेनका घुसा।

'तैयार है ?' चोर ने धीरे से उसके कान में पूछा।

'सो रहा है,' टमारा ने उसके कान में जवाब दिया, 'देखो, यह है तिज़ोरी की चाबी।'

दोनों तिजोरीवाले कमरे में गये। तिजोरी के ताले को टॉर्च की रोशनी से देखकर, सेनका धीरे से बड़बड़ाया :

'कम्बख़्त ! बूढ़ा जानवर ! मैं पहले ही सोचता था कि तिजोरी के ताले में कोई भेद ज़रूर होगा ! इन अक्षरों को ख़ास तौर पर मिलाने पर ही यह ताला खुल सकता है ! उनका भेद तो मालूम नहीं है ; अतएव बिजली से इस ताले को गलाना होगा ! न जाने गलाने में कितना समय लग जाय ?'

'नहीं, गलाने की ज़रूरत नहीं है' टमारा ने जल्दी से उत्तर में कहा, 'मुझे अक्षरों का भेद मालूम है...जेड.. ई...एन...आई...और टी...मिलाओ...एच छोड़ दो।'

दस मिनट के बाद दोनों सीढ़ियों से उतरकर, मकान से चल दिये। जान-बूझकर वे कई गलियों का चक्कर काटते हुए गये। पुरानी बस्ती में पहुँच जाने पर उन्होंने दूकान के लिए गाड़ी किराये पर की, और फिर दोनों, भले आदमियों की तरह, बाकायदा पासपोर्टों के साथ, स्टेविन्स्की और उसकी स्त्री के नाम से, शहर छोड़कर चले गये। बहुत दिनों तक उनका कोई समाचार नहीं मिला। अन्त में सेनका मास्को में एक बड़ी चोरी में पकड़ा गया और पुलिस के जिरह करने पर टमारा का नाम भी बता दिया। दोनों पर मुक़दमा चला और सज़ा हो गई।

टमारा के बाद भोली-भाली, सब पर विश्वास कर लेनेवाली, प्रेम के रङ्ग में रँगी बेरका की बारी आई। बहुत दिनों से वह एक नीम-फ़ौजी आदमी से प्रेम करती थी, जो अपने आपको फ़ौजी विभाग में शहरी क्लार्क बताता था। उसका नाम डिलेक्टोरस्की था। वेरका उसपर लट्टू थी और वह एक देवता की तरह बेरका से प्रेम की भेंट लेता था। ग्रीष्म के अन्त से वेरका ने देखा कि उसके प्रेमी का उसके प्रति स्नेह दिन पर दिन ठण्डा और लापरवाही का होता जाता था। उससे बात-चीत करते हुए उसका मन कहीं दूर रहा करता था, अतएव वेरका बड़ी दुखी रहने लगी थी और

ईर्ष्या में भर-भरकर उससे तरह-तरह के प्रश्न पूछती थी ; मगर हमेशा उत्तर ऐसे-वैसे ही पाती थी जिनमें कुछ-कुछ किसी आनेवाले दुर्भाग्य और शायद अकाल मृत्यु की सम्भावना की झलक होती थी।

सितम्बर के शुरू में उसने आख़िरकार स्वीकार लिया कि उसने सरकारी रुपया ग़बन कर लिया था। क़ाफ़ी रुपया करीब तीन हज़ार। पाँच-छः दिन में हिसाब-किताब की जाँच होनेवाली थी, जब उसकी बेईमानी मालूम हो जायगी और वह पकड़ा जायगा, जिसमें बदनामी होगी, मुकदमा चलेगा और आख़िर में जेल हो जायगा। इतना कहकर फ़ौजी विभाग का शहरी क्लार्क सिसकियाँ भरने लगा और दोनों हाथों से अपना सिर पकड़कर कहने लगा, 'मेरी ग़रीब मा! हाय, उस बेचारी का क्या होगा? उसको यह अपमान असह्य होगा...नहीं, इस सबसे तो मौत ही अच्छी है!'

यद्यपि वह इस प्रकार उपन्यासों के पात्रों की तरह—जैसा वह हमेशा करता था—नाटक ही कर रहा था, जो कर-करके उसने भोली वेरका का प्रेम जीत लिया था, फिर भी एक बार आत्महत्या का विचार उसके मन में आ जाने पर फिर वह उसे लगातार सताने लगा।

एक दिन वह बड़ी देर तक किसी तरह प्रिन्स पार्क में वेरका के साथ टहलता रहा। पतझड़ से बर्बाद इस प्राचीन पार्क में, वृक्षों में रङ्ग-विरङ्गी ; तरह-तरह की लाल, पीली, नीली, नारङ्गी और अंगूरी पत्तियों की कोंपलें फूट निकली थीं, जिससे ठण्डी-ठण्डी हवा में से भीनी-भीनी सुगन्ध निकलकर फैल रही थी, परन्तु फिर भी झाड़ियों, पेड़ों और घास से मृत्यु की एक अजीब गन्ध भी आती-सी लग रही थी।

डिलेक्टोरस्की द्रवित हो गया और अपना दिल खोलकर, अपने ऊपर तरस करने और रोने लगा। वेरका भी उसके साथ रोने लगी।

'आज मैं आत्महत्या कर डालूँगा!' डिलेक्टोरस्की ने अन्त में कहा, 'अब क़िस्सा खत्म है.'

'नहीं मेरे प्यारे नहीं! मेरे सर्वस्व हरगिज़ नहीं!...'

'नहीं, अब असम्भव है' डिलेक्टोरस्की ने बड़ी गम्भीरता से कहा, 'वह कम्बख़्त रुपया!...क्या चीज़ प्यारी है—इज़्ज़त या मृत्यु?'

'मेरे प्यारे...'

'नहीं-नहीं, कुछ न कहो, ऐनेटा !' चूँकि उसे वेरका नाम पसन्द नहीं था ; इसलिए वह इस शानदार नाम से वेरका को बुलाया करता था—वह बोला, 'कुछ न कहो। सब तय हो चुका है !'

'हाय, काश मेरे पास इतना रुपया होता !' वरका ने दुखी होकर कहा, 'मैं तुम्हारे लिए अपनी ज़िन्दगी तक देने को तैयार हूँ...अपना क़तरा-क़तरा खून तुम्हारे लिए दे देने को तैयार हूँ...'

'ज़िन्दगी क्या है ?' डिलेक्टोरस्की ने सिर हिलाकर, निराशा का नाटक करते हुए कहा—'आख़िरी सलाम लो, ऐनेटा मेरा आखिरी सलाम लो ! ..'

छोकरी हताश होकर सिर हिलाने लगी, 'नहीं, मैं नहीं चाहती ! . मैं ऐसा सह नहीं सकती !...मुझसे यह न सहन होगा !.. मुझे भी ले चलो ! ..मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगी !...'

शाम को काफ़ी देर हो जाने पर डिलेक्टोरस्की ने जाकर एक बढ़िया होटल में एक कमरा किराये पर लिया। वह जानता था कि कुछ घण्टे बाद वह और वेरका दोनों ही लाश हो जायँगे, अतएव उसकी जेब में सिर्फ़ ग्यारह रुपये ही होने पर उसने नवाबों की तरह शराब और खाने-पीने की बढ़िया-बढ़िया चीज़ें इस तरह मँगानी शुरू कर दीं, मानो वह हमेशा का बड़ा ऐय्याश और खर्चीला हो। काफ़ी और शराब के साथ-साथ उसने दो बोतलें शैम्पेन की भी मँगाईं। उसे पूरा विश्वास था कि वह आज अपने ऊपर गोली मार लेगा, परन्तु फिर भी वह कुछ दिखावा-सा कर रहा था, मानो कि एक तरफ़ खड़े होकर वह अपने आपको देखता हो और अपने दुःखान्त नाटक को स्वयं सराहता हो और अपनी मृत्यु पर अपने रिश्तेदारों की निराशा और अपने साथी दफ़्तरवालों के आश्चर्य पर ख़ुश हो रहा हो। वेरका भी यह कह चुकने के बाद कि वह भी अपने प्यारे के साथ जान दे देगी, अपने निश्चय में पूरी तरह दृढ़ हो गई थी। उसको आनेवाली मौत से कोई डर नहीं लग रहा था।

'कहीं सड़क पर मरने से, मेरे प्यारे, यह कहीं अच्छा है कि आज मैं तुम्हारे साथ-साथ मरूँगी ! यह मौत कम से कम मीठी तो होगी !'

यह कहकर वह उसे बार-बार चूमती थी, हँसती थी और अपने घूँघर वाले बाल बिखेरे, आँखें चमकाती हुई, सदा से कहीं अधिक सुन्दर लग रही थी।

आखिरकार अन्तिम विजय की घड़ियाँ भी आ गईं।

'हम दोनों ने जी भरकर मज़ा कर लिया, एनेटा...हमने अपने जमा का आखिरी बूँद तक पी लिया है, अतएव कवि के शब्दों में अब, 'उसे फेंककर तोड़ डालने के लिए तैयार हो जाना चाहिए!' डिलेक्टोरस्की ने कहा—'तुम्हें पश्चात्ताप तो नहीं हो रहा है, मेरी प्यारी?...'

'नहीं, नहीं!...'

'तैयार हो?'

'हाँ, हाँ!' उसने मुसकराते हुए धीरे से कहा।

'तो फिर दीवार की तरफ़ मुँह फेरकर आँखें बन्द कर लो!'

'नहीं, नहीं, मेरे प्यारे, मैं इस तरह नहीं चाहती!..यों मैं नहीं चाहती! मेरे पास आओ! हाँ, ऐसे ठीक है अब! और नज़दीक आओ और नज़दीक! अपनी आँखें मेरी तरफ़ करो—मैं उनको घूरती रहूँगी। अपने होंठ इधर करो—मैं तुम्हें चूमती रहूँगी और तुम...मैं बिल्कुल नहीं डरती!...हिम्मत करो!...और ज़ोर से मुझे चूमो!...'

उसने वेरका को गोली मार दी और फिर जब उसने अपने हाथों के भयंकर कृत्य को देखा तो वह डर से काँप उठा। वेरका का आधा नङ्गा शरीर पलंग पर पड़ा अभी तक छटपटा रहा था। डिलेक्टोरस्की के पाँव काँप रहे थे, मगर कायर और कुकर्मी की बुद्धि काम कर रही थी; उसने अपनी बग़ल के पास की खाल खींचकर उसमें गोली मार लेने की अभी तक शक्ति बाक़ी थी, अतएव जब पिस्तौल का घोड़ा खींचकर दर्द से चीख़कर वह गिरा, तब वेरका के शरीर की आधी तड़प बन्द हो रही थी।

वेरका की मृत्यु के दो सप्ताह बाद भोली, खिलाड़ी नम्र और झगड़ालू नन्हीं मनका भी चल बसी। चकलों में आम तौर पर होनेवाले झगड़ों में से एक झगड़े में किसी ने उसके सिर पर एक बोतल इतने ज़ोर से मारी कि उसका सिर फट गया और वह वहीं मरकर गिर पड़ी; मगर किसने उसे मारा, इसका पता आखीर तक नहीं चला।

ऐम्मा ऐडवार्डोवना के चकले में ऐसी, एक के बाद दूसरी, भीषण घटनाएँ घटीं कि वहाँ की एक भी निवासिन भयङ्कर मृत्यु और बदनामी से न बच सकी।

आख़िरी, सबसे भयंकर और सबसे बड़ी जो घटना घटी, वह सैनिकों के द्वारा कटरे के चकलों का सर्वनाश था।

दो सिपाहियों को रात में रुपया भुनाने के समय दाम कम दिये गये और उन्हें पीटकर सड़क पर फेंक दिया गया था, अतएव फटे कपड़ों और ख़ून से लथपथ वे जब अपनी फ़ौज में पहुँचे तो उनके दूसरे साथी सिपाही जो दिन भर छुट्टी मनाकर अब उसे ख़त्म कर रहे थे, उनकी हालत देखते ही आग-बबूला हो उठे और आधे घण्टे के अन्दर-अन्दर लगभग सौ सिपाही कटरे पर टूट पड़े और घर के बाद घर को लूटने और उजाड़ने लगे। उनके साथ और भी असंख्य आदमी, सड़कें और मोरियाँ साफ़ करनेवाले भङ्गी, आवारे, गुण्डे, ठग और औरतों के दलाल भी इस काम में शामिल हो गये। मकान की सारी खिड़कियों के शीशे और पियानो तोड़-फोड़कर चूर-चूर कर डाले गये। परों से भरे हुए पँलगों के गद्दे चीर-फाड़कर सड़कों पर फेंक दिये गये। उनके पर दो रोज़ तक तमाम कटरे में बरफ़ के सफ़ेद-सफ़ेद टुकड़ों की तरह उड़ते हुए फिरते रहे। वेश्याएँ नंगे सिर, बिल्कुल नङ्गी, सड़कों पर निकाल दी गईं। चौकीदारों और दरवानों को पीट पीटकर मार डाला गया। ट्रेपेल की पेढ़ी के तमाम सुन्दर फर्नीचर और रेशमी सामान भीड़ ने चीर-फाड़कर टुकड़े-टुकड़े कर डाला, और शराब की तमाम दूकानें, विश्रामगृह, और होटल भी लूट-पाटकर तबाह कर डाले गये।

शराबी, ख़ूनी तथा भयंकर मारकाट कई घण्टे तक जारी रही। आख़िरकार फौजी अधिकारियों ने, आग बुझाने के इञ्जनों की मदद से, पानी फेंक-फेंककर, बड़ी मुश्किल से भीड़ को काबू में किया। अठन्नीवाले दो चकलों में आग भी लगा दी गई थी, परन्तु शीघ्र ही उनकी आग बुझा दी गई; मगर दूसरे दिन ही बलवा फिर शुरू हो गया और अबकी बार तूफ़ान सारे शहर में और उसके चारों और फैल गया। अचानक बलवे ने उन यहूदियों की मारकाट का स्वरूप धारण कर लिया जो अक्सर यहूदी विरोधी बस्तियों में यूरूप में हो जाया करती थीं। तीन दिन तक भयंकर मारकाट और लूटमार जारी रही।

आख़िरकार एक सप्ताह के बाद गवर्नर जेनरल ने कटरे और सारे शहर भर में चकलों के बन्द कर देने का हुक्म निकाल दिया। चकलों की मालकिनों को सिर्फ़ एक सप्ताह अपनी जायदाद सम्बन्धी मामले और हिसाब-किताब ठीक कर लेने के लिए दे दिया गया। तबाह, बर्बाद, लुटी तथा सारी पुरानी शानो-शौक़त ख़त्म हो जाने पर बेचारी, दयनीय, मुर्झाई हुई मालकिनें और मोटे चेहरों और भारी आवाज़ की खालाजानें जल्दी-

जल्दी अपना बोरिया-बिस्तर बाँधने लगीं और एक महीने के बाद कटरे के नाम में सिर्फ़ उन रङ्गीले, चमकीले, भड़कीले और झगड़ों और फिसादों के घरों—भयंकर चकलों—की याद ही बाक़ी रह गई।

शीघ्र ही कटरे का नाम भी बदलकर एक सुन्दर और अच्छा नया नाम रख दिया गया, जिससे उन भयंकर बातों की याद भी फिर लोगों को न आ सके।

और तमाम हेन्रीटा, किटी, लेलका, पोलका इत्यादि छोकरियाँ और स्त्रियाँ, जो भोली-भाली; मूर्ख, हास्यास्पद और दयनीय थीं और अधिकतर छली हुई और बिगड़ी आदतों के बच्चों की तरह थीं, इस मुहल्ले से निकलकर शहर भर में फैल गईं और शहर की बस्ती में घुल-मिल गईं। इनसे एक नया समाज उत्पन्न हुआ—घूमने-फिरने और गलियों में चक्कर लगानेवाली वेश्याओं का नया समाज। उनके जीवन का हाल जो कि बिल्कुल ऐसा ही दयनीय और बेढब है, परन्तु जिसके रस और तरीके दूसरे हैं, इस उपन्यास का लेखक, जो कि इस उपन्यास को नौजवानों, युवतियों और माताओं की भेंट करता है, फिर कभी एक दूसरे उपन्यास में लिखेगा।

आख़िरी बात

मनुष्य-समाज के एक प्राचीन, अधम और भयंकर रोग का, जो आधुनिक काल की यांत्रिक और बाज़ारू सभ्यता में दिन पर दिन अधिक जटिल और विस्तृत होता जा रहा है, नग्न और वास्तविक स्वरूप इस उपन्यास में देखकर पाठकों के मन में तरह-तरह के विचार उठने लगे होंगे! कुछ मित्र समझते हैं कि इस उपन्यास को पढ़कर अपरिपक्व विचार के नौजवानों के मन पर बुरा असर हो सकता है; मैं नौजवानों को इतना बुरा नहीं समझता। मैं तो मानता हूँ कि नौजवान स्वभाव से सत्य को अधिक समझते हैं और सत्य के अधिक निकट रहते हैं। उनके मन पर सत्य का असर अच्छा ही होने की सम्भावना है। मैं उस विचार के लोगों से सहमत नहीं, जो सत्य को नौजवानों से छिपाना चाहते हैं, अथवा कुछ विषयों का ज्ञान नौजवानों को देना ख़तरनाक समझते हैं। सच तो यह है कि अज्ञान ही सबसे खतरनाक होता है और जिस विषय का यह उपन्यास है, उसका अज्ञान तो हमारे देश के नौजवनों को ही नहीं, अपने आपको ज्ञानी समझनेवाले प्रौढ़, बड़े-बूढ़ों और

समाज-सुधारकों को भी बहुत कुछ है। जिनके मन में गन्दगी घुस चुकी है—खुली या छिपी हुई—वे तो संसार के पवित्र से पवित्र ग्रन्थ से भी अपने मन की गन्दगी को सींच सकते हैं। उनका इलाज किसी के पास नहीं; परन्तु जिनका मन स्वस्थ है, उनपर मुझे विश्वास है—इस उपन्यास का असर अच्छा ही होगा। वे इस उपन्यास को पढ़कर फिर कभी वेश्याओं को क्रोध और अपमान की दृष्टि से न देखकर समाज की उन प्रथाओं, रूढ़ियों, संस्थाओं और शक्तियों को—समाज के उन स्तम्भों और पुरुषों को—क्रोध और अपमान की दृष्टि से देखेंगे, जो वेश्यावृत्ति के मूल कारण हैं; परन्तु ऐसे पाठकों के मन में यह सन्देह उठ सकता है कि क्या सचमुच भारतवर्ष में भी वेश्यावृत्ति की समस्या ऐसी ही है, जैसी लेखक ने इस उपन्यास में दिखाई है। मैं भूमिका में इसका ज़िक्र करते हुए कह चुका हूँ कि मेरी राय में भारतवर्ष में भी वेश्यावृत्ति की मूल समस्या बिल्कुल वैसी ही है; जैसी कि एलेक्जेन्डर कुप्रिन ने अपने इस उपन्यास में दिखाई है। हाँ, ऊपरी और छोटी-मोटी बातों में कुछ फर्क भले हो ही सकता है। इस विचार की पुष्टि में, मैं श्री ठाकुर शिवनन्दन सिंह के प्रख्यात ग्रन्थ 'देशदर्शन' के कुछ अंश पाठकों की सेवा में उद्धृत करता हूँ। श्री ठाकुर शिवनन्दन सिंहजी अपने ग्रन्थ 'देशदर्शन' के तीसरे संस्करण में 'अन्यान्य रुकावटें' नाम के अध्याय में १७९ पृष्ठ पर लिखते हैं:—

'ख़ैर, जो हो; मुझे इस लेख में यह दिखाना अभीष्ट नहीं है कि भारतवर्ष में विलायत से, अथवा विलायत में भारत से अधिक व्यभिचार है। मेरे इस कथन का अभिप्राय केवल इतना ही है कि दूसरों की फूली देखना और अपना ढेंढर न देखना अच्छा नहीं; अर्थात् हम दूसरों का दोष देखकर उन पर हँसते हैं, परन्तु अपने दोष पर आँखें बन्द कर लेते हैं। इस बात की जाँच के लिए मैं आपको ब्रिटिश राज्य के—जहाँ, कि चौबीसों घण्टे सूर्य अस्त नहीं होता—दूसरे नम्बर के शहर में, भूमण्डल के प्रधान बारहवें नम्बर के शहर में और भारत के सबसे बड़े शहर कलकत्ते में, जो जन-संख्या के हिसाब से बम्बई, दिल्ली, लाहौर आदि सब शहरों से बड़ा है, ले चलता हूँ। आइए, पहले इस शहर की जाँच घूमकर करें। घबराइए नहीं। लोगों को उङ्गली उठाने दीजिए, हँसने दीजिए। शर्म की बात तो उस समय होती जब हम तमाशबीनी करने या ऐशो-इशरत करने जाते होते। हम लोग तो मर्दुमशुमारी के अफ़सरों की तरह देश की सच्ची दशा की जाँच करने चल रहे हैं।

मछुआ बाज़ार

मीलों तक सड़क के दोनों तरफ़ मकानों के ऊपर के खण्डों में वेश्याएँ खचाखच भरी हैं। ये बहुधा मारवाड़िनें और एतद्देशीय हैं। जैसे दरबे में कबूतर कसे रहते हैं, वैसे ही मकान का किराया अधिक होने से एक-एक कमरे में चार-चार, पाँच-पाँच वेश्याएँ सड़ा करती हैं। सड़क की पटरियों पर जगह-जगह आठ-आठ दस-दस बंगाली लड़कियाँ एक कतार में नाके-नाके पर खड़ी हैं। इनका स्थान उसी नाके की ठीक सामनेवाली गली में है। खुले आम, बीच सड़क में लोग इन अनाथ लड़कियों से मज़ाक करते हैं। उस झुण्ड या कतार में, जिसकी तरफ इशारा हो जाता है, उसे पुरुष के साथ अपने स्थान को प्रस्थान करना पड़ता है—कैसी अनोखी सभ्यता है!

लोअर चितपुर रोड के पीछे कोई महल्ला

इस महल्ले का नाम स्मरण नहीं आता। यहाँ की दुर्दशा देखकर कलेजा फट जाता है। ख़ून पानी हो जाता है। कई सौ घर बङ्गाली वेश्याओं के हैं। गलियों से भीतर का कोई कोई हिस्सा दिखाई देता है। आनन्द-पूर्वक निडर होकर लोग तख़्तों पर मसनद लगाये, ताश खेल रहे हैं और लज्जा त्यागकर खुले आम हर तरह का मज़ाक कर रहे हैं। सबसे घृणित बात यह है कि इन वेश्याओं में बहुतों की आयु दस वर्ष से अधिक न होगी। पर हाय पेट, हाय री दरिद्रता और उन्हें गहरी कन्दरा में गिरानेवाले पुरुषों की सभ्यता! हम, तुम तीनों को नमस्कार करते हैं।

सोनागाछी

यहाँ भी वही हृदय-विदारक दृश्य है। रास्ता चलना मुश्किल है। कामकाजी लोग इस रास्ते से होकर नहीं जाते, रास्ता बचाकर किसी दूसरी तरफ़ से निकल जाते हैं। यहाँ वेश्याएँ राह चलते हाथ पकड़ लेती हैं, टोपी या डुपट्टा ले भागती हैं! समाज से गिरी हुई लड़कियों की अत्यन्त दीन दशा, बेहयाई की आखिरी हद और भारत की सभ्यता की तीसरी झलक यहाँ दीखती है!

इनके अतिरिक्त एक महल्ला गोरी (यूरोपियन) वेश्याओं से भरा है। यहाँ अँगरेज़ तो बिरले ही देख पड़ते हैं। हाँ मनचले भारतवासी ठोकरें खाने के लिए अवश्य आया करते हैं। एक नवयुवक अग्रवाल ग्रेजुएट डिप्टी कलेक्टर (शायद हमी लोगों की तरह जाँच करते हुए!) एक मित्र के साथ इन्हीं गोरी वेश्याओं में से एक

के यहाँ पहुँच गये। एक तुच्छ बात पर मतभेद होने से उस अभिमानिनी वेश्या ने डिप्टी साहब पर .गुस्से से हाथ चला दिया! डिप्टी साहब अपने मुँह से कहते थे कि दोनों मित्र यदि जूता हाथ में ले दौड़कर भाग न जाते, तो .खूब ही पिटते और ऊपर से पुलिस के हवाले कर दिये जाते!

वे कहने लगे—'इस दुर्घटना से मेरे मित्र जिनका मैं मेहमान था, बहुत दुखी हुए। अपनी और मेरी झेंप मिटाने के लिए मुझसे कुछ न कहकर वे मुझे एक मनोहर बेल, लता और पुष्पों से सुशोभित सुन्दर बँगले में ले गये। यह सुनकर कि वह एक वेश्या का बँगला है, मैं सन्न रह गया। डरा कि कदाचित् यहाँ भी न ठुक जायँ, पर यहाँ का बर्ताव देशी वेश्याओं के बर्ताव से भी अच्छा निकला! यह एक यहूदिन वेश्या का बँगला था। ऐसे बहुत से बँगले कलकत्ते में हैं। मैं पन्द्रह दिन तक कलकत्ते में रहा और अक्सर शाम को किसी ऐसे ही बँगले में आनंदपूर्वक समय व्यतीत करता रहा।' गिनते जाइए, यह सभ्यता का चौथा नमूना है!

एडेन गार्डन

मैं—(चौंककर) क्यों जी, यह अनोखी विक्टोरिया सब्ज़ा पेयर तो मोतीबाबू की है न?

मेरे मित्र—(मुसकराकर) .खूब, गाड़ी और जोड़ी तो पहिचान गये, पर उसके मालिक सवारों पर आँखे नहीं ठहरती।

मैं—अरे, यह तो स्वय मोती बाबू हैं; पर उनके बग़ल में यह कौन है?

मेरे मित्र—उन्हीं की घरवाली।

मैं—अजो जाओ भी, क्या मैंने उनकी बीवी को नहीं देखा है? यह तो रंग-ढंग से कोई वेश्या मालूम पड़तो है। लेकिन…।

मित्र—वेश्या बीबी नहीं तो और क्या है? 'लेकिन' के बाद चुप क्यों हो गये? तुम्हें आश्चर्य है कि मोती बाबू गौहरजान के साथ बैठकर हवा खाने निकले हैं। अरे, यह कलकत्ता है। वह देखो, जौहरी जी मलका को लिये उड़े जा रहे हैं।

मैं—और सामने बच्चा किसका बैठा है?

मित्र—जौहरी महाशय का। अभी से सीखेगा नहीं तो आगे बाप का नाम कैसे रखेगा!

मैं—छिः! क्या बेहयाई है, कैसी बेशर्मी है!

यह रिपोर्ट हम लोगों के भ्रमण करने की है। अब सरकारी कागज़ों से देखिए कि इस शहर की क्या दशा है।

सन् १८११ की मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि कलकत्ते शहर में १४,२७१ वेश्याएँ हैं। कलकत्ते की कुल स्त्रियों में से जिनकी उमर २० से ४० वर्ष की है, प्रत्येक बारह स्त्री में एक वेश्या है! बारह से बीस वर्ष तक की आयु की स्त्रियों में प्रति सैकड़ा ६ वेश्याएँ हैं! और १०९६ वेश्या लड़कियों की आयु १० वर्ष से भी कम है! नब्बे फी सदी वेश्याएँ हिन्दू हैं।

भगवन्! बारह, दस या इससे भी कम आयु की वेश्याएँ!...इस अन्धेर के विषय में डाक्टर एस० सी० मैकेंजी एक स्थान पर और खाँ बहादुर मौलवी तमीज़ खाँ दूसरे स्थान पर लिखते हैं कि—'बेचारी दीन लड़कियाँ पानी में फूलनेवाली लकड़ी के साथ पानी के टब में बिठाई जाती हैं; जिससे कि वे पुरुषों के समागम के लिए तैयार हो जायँ। कहीं-कहीं यह काम केले से लिया जाता है।' Inser a piece of sola and then make the unfortunate girls sit in water tubs or use plantains to train up more girls for prostitution?

डा० चेवर्ग लिखते हैं—'Means are commonly employed even by parents to render the immature girls oplivitis by mechanical means'*

बस यहाँ तो सभ्यता का अन्त हो गया। २

सन् १८५२ ईसवी में कलकत्ते में १२४१९ वेश्याएँ थीं और उनमें से १०४६१ हिन्दू थीं।

× × ×

यह दशा केवल कलकत्ता शहर की ही नहीं है। इस खुले व्यभिचार का साइन-बोर्ड भारत के प्रत्येक शहर के ख़ास बाज़ार या चौक में दिखाई देगा। बम्बई का व्हाइट मारकेट (सफ़ेद गली), लाहौर की अनारकली, दिल्ली की चावड़ी बाज़ार

---

* अर्थात् माता-पिता तक स्वयं अपनी छोटी-छोटी कम उम्र की छोकरियों को कृत्रिम उपायों से पुरुषों से समागम के लिए तैयार करते है।

२ सभ्यता क्यों मनुष्यता का अन्त हो गया।

और लखनऊ का खास चौक वेश्याओं से भरे पड़े हैं। तीर्थराज, पापनाशक, पवित्र काशी नगर में संयुक्त प्रान्त के सब शहरों से अधिक वेश्याओं की संख्या है। डाक्टर और वैद्य भी यहाँ युक्तप्रान्त के सारे शहरों से अधिक हैं। (वेश्याओं की अधिकता के साथ डाक्टरों की संख्या ज़्यादा होनी ही चाहिए।) प्रयाग, मथुरा, वृन्दावन और हरिद्वार तक इनका डेरा जमा रहता है। पवित्र भूमि 'कनखल' में भी आप इन्हें देख लीजिए। नैनीताल आदि पहाड़ों के ऊपर लोग कुछ ही महीनों के लिए जाते हैं। पर बाबू साहबों के साथ-साथ बाइयों (वेश्याओं) का डेरा बदायूँ, मुरादाबाद तथा बरेली तक से वहाँ पहुँच जाता है। अँगरेज तो शाम के वक्त बोटिङ्ग करते हैं, नीचे क्लब में फुटबाल आदि अनेक खेल खेलते हैं और बाबू साहबान किसी प्रेमिका के सड़े डेरे में अपने स्वास्थ्य का सर्वनाश करते हैं। पहाड़ से लौटे हुए एक अँगरेज़ और हिन्दुस्तानी का स्वास्थ्य उनके आचार की गवाही देने लगता है।

भारत के कुल शहरों की वेश्याओं को संख्या —जो मर्दुमशुमारी के समय अपना यही पेशा बताती हैं—४,७२,९९६ है। बहुतेरी वेश्याएँ डर से अथवा लाज से अपना पेशा कुछ और बता देती हैं, इसलिए उनकी संख्या इसमें शामिल नहीं है। इन पौने पाँच लाख के लगभग वेश्याओं की वार्षिक आमदनी ६२,४६,००,००० रुपया है।

शोक है कि इस प्रकार का खुला व्यभिचार भारत में दिनों-दिन कम होने के बदले बढ़ता जाता है और वेश्याओं की संख्या में अधिकता होती जाती है। पंजाब की हिन्दू सभा लिखती है कि 'इस प्रान्त के प्रत्येक मुख्य-मुख्य शहर में व्यभिचार के लिए लड़कियों की ख़रीद-फ़रोख्त बढ़ रही है। सन् १९११ में प्रान्तीय लाट महोदय ने इस बात की तसदीक़ की है।'

अस्पतालों के रजिस्टर, दवा बेचनेवालों के इश्तहार और कोढ़ियों की संख्या से भी इस देश के व्यभिचार की झलक मालूम पड़ती है। कोढ़ का रोग चाहे पैतृक भी हो, पर इस रोग के पीछे सिफलिस (गर्मी) अवश्य हुआ करती है। प्रोफेसर हिगिन बाटम जिन्होंने कोढ़ियों में बहुत काम किया है, कहते हैं कि आज तक उन्हें कोई कोढ़ी ऐसा न मिला, जिसे ख़ुद अथवा जिसकी छूत से उसे यह रोग हुआ, गर्मी न हुई हो। कोढ़ की जड़ गर्मी है। यह तो खुले हुए व्यभिचार की कथा हुई। इससे तो कोई इन्कार ही नहीं कर सकता। अब रहा गुप्त व्यभिचार, सो उसका जाँचना

मनुष्य की शक्ति से बाहर है। ईश्वर ही उसकी सच्ची जाँच कर सकता है।

इस देश में समाज का ऐसा कड़ा नियम है तथा इसके लिए ऐसी कड़ी सामाजिक सज़ाएँ रखी गई हैं कि ऐसे लोगों का प्रत्यक्ष पता लगना कठिन ही नहीं असम्भव है, पर अनुभव अवश्य किया जा सकता है।

पहले घर की मजदूरनियों को ले लीजिए। ये विवाहिता तो अवश्य होती हैं, पर युवावस्था में अपने मालिक के घर, किसी न किसी नवयुवक सरदार की शिकार होने से शायद ही बचती हैं। हाँ, अवस्था ढल जाने पर चुपचाप अपने पति के साथ पतिव्रता बनकर बैठ रहती हैं। मर्दुमशुमारी के सुपरिण्टेण्डेण्ट ने लिखा है—'मज़दूरनियों में से बहुत-सी तो सचमुच ही वेश्याएँ हैं।'

इसी तरह दूकानों पर बैठनेवाली स्त्रियों को अर्धवेश्या समझना चाहिए ; कम से कम कुचरित्र स्त्रियों में तो इनकी गिनती अवश्य होनी चाहिए।

दक्षिण भारत (मद्रास आदि) में बालिकाओं को मंदिरों में देव-सेवा के निमित्त चढ़ा देने की चाल है। वहाँ उन्हे 'विभूतिन' कहते है। वे तीर्थयात्रा करती हुईं, इस प्रान्त तक आ जाती हैं और अपनी सच्चरित्रता का परिचय दे जाती हैं।

× × ×

भारत में २ करोड़ ५.४ लाख से अधिक विधवाएँ हैं। मैं इनके आचरण पर आक्षेप नहीं करता, पर विचार करने की बात है कि इनमें से प्रायः सभी मूर्खा हैं ; देव, शास्त्र, धर्म और ज्ञान से सर्वथा अनभिज्ञ हैं। केवल यह जानती हैं कि उनके कुल में विधवा-विवाह नहीं होता। उन्हीं का हृदय प्रश्न करता है कि क्यों नहीं होता ? इसका वे कुछ उत्तर नहीं दे सकतीं। केवल भाग्य में लिखा है, कर्म फूट गया है, आदि कहकर मन की तरङ्गों को शान्त करती हैं, पर इन स्त्रियों की शैतान पण्डों, पुरोहितों या ऐसे ही अन्य पाखण्डियों से भेट हो जाने पर और मौक़ा मिलने पर, भाग्य के बल पर ये कब तक कामदेव से लड़ सकती हैं ? आखिर मूर्खा स्त्रियाँ ही तो ठहरीं न ? उनकी कमज़ोरी उन्हें यह समझाकर सन्तोष कर लेने के लिए लाचार कर देती है कि 'यह दुराचार भी विधाता ने उनके भाग्य में लिख रखा होगा, वे स्वयं धर्मच्युत नहीं हो रही हैं, बल्कि यह उनके दुर्भाग्य का परिणाम है'—जिस दुर्भाग्य ने उन्हें जर्जर पति की पत्नी बनाया और उसे भी न रहने दिया, वही भाग्य-पिशाच उन्हें आज गढ़े में फेंक रहा है। चलो, यह भी सही—विधि का लिखा को

मेटनहारा—बस खतम । हाँ, यह बात बहुत ज़रूरी अवश्य है कि कहीं बात खुल न जाय, नहीं तो जन्म-जन्मान्तर, पुश्त-दर-पुश्त के लिए खानदान भर को जातिच्युत होना पड़ेगा, सो इसके लिए जब तक तीर्थयात्रा के लिए द्रव्य, पापों को धोनेवाली बड़ी-बड़ी नदियाँ, घरों की पुरानी चाल की संडासें या अन्धे कुएँ मौजूद हैं, इससे भी भय नहीं ।

भगवन् ! क्या ही दीन-दशा है ! विश्वबंधु के मकान के पास ही एक कुलीन ब्राह्मण महाशय का घर था । उनके यहाँ एक परम रूपवती युवती विधवा थी । उनके घर में परदे का कड़ा नियम था, तो भी विश्वबन्धु उनके यहाँ बेरोक-टोक जाया करते थे । कुछ दिनों बाद जब न जाने क्यों ब्राह्मण महाशय ने मकान छोड़ देने का निश्चय किया, तब विश्वबधु ने अपनी मा से कह-सुनकर उस मकान को खरिदवा लिया । ब्राह्मण महाशय सपरिवार अपने देश (कन्नौज) चले गये और उस मकान की मरम्मत शुरू हुई । एक कोठरी जिसे पण्डिताइन 'ठाकुरजी को कोठरी' कहा करती थीं और जो साल में केवल कुलदेव की पूजा के समय खोली जाती थी, बड़ी सड़ी, नम और बदबूदार थी । उसे पक्की करा देना निश्चय हुआ । नम मिट्टी को खोदकर फेंक देने के लिए मज़दूर खोदने लगे । सुना जाता है कि उसमें से एक ही उमर के कई बच्चों के पञ्जर निकले ! एक तो बिलकुल हाल ही का दफ़नाया जान पड़ता था ! प्रभो, भारत को ऐसे भयकर पापों से बचाइए ! हमें बल और निर्मल बुद्धि प्रदान कीजिए, जिससे हम इन कुरीतियों का अन्त कर सकें ।

सिविल सर्जन साहब जेल और अस्पताल आदि से लौटकर लगभग एक बजे बँगले पर आये । टेबुल पर एक तार मिला, जिसका आशय यह था कि 'रोगी सख्त बीमार है । जल्दी आने की कृपा कीजिए ।--देवदत्त ।' साहब बड़े ही दयालु थे । उसी समय घोड़े पर सवार होकर रवाना हो गये । उन्होंने देवदत्त के घर पहुँचकर पूछा कि रोगी कहाँ है ? देवदत्त हाँफते-हाँफते आये और बोले—हुजूर, बड़ी ग़लती हुई, माफ़ कीजिए । साहब ने डपटकर पूछा कि बतलाओ रोगी कहाँ है ? देवदत्त गिड़गिड़ाते हुए साहब के हाथ में फीस रखकर, पैरों पर लोट गये और एबारशन की (गर्भपात करने की) दवा पूछने लगे । साहब लाल हो गये । ज़मीन पर ज़ोर से पैर पटककर और 'छिः' कहकर लौट गये । बँगले पर पहुँचकर उन्होंने इस बात की सूचना पुलिस-कप्तान के पास भेज दी ।

उसी दिन रात को देवदत्त की चचेरी बहिन अकस्मात् मर गई और रातों-रात चिता पर भस्म कर दी गई। यह विधवा थी। कई दिन बाद देवदत्त की तलबी कोतवाली में हुई। सुना जाता है कि वहाँ के देवता ने अपनी पूजा पाई और रिपोर्ट में लिख दिया कि देवदत्त प्रतिष्ठित रईस हैं। उस दिन उनकी बहिन को हैज़ा हो गया था, इसी लिए साहब को बुलाया था। वे एबारशन नहीं, बल्कि रेस्ट्रिक्टिव चेक (restrictive check) की या बन्धेज की दवा पूछना चाहते थे और यह कानूनन कोई जुर्म नहीं है!

यह दोहरे ख़ून का नमूना है। यहाँ तो समाज में, जब तक बात छिपी है, तब तक सब ठीक और खुलने की नौबत आई तो बस 'विष' या 'त्याग'! ले जाकर कहीं दूर के शहर में या तीर्थ-स्थान में छोड़ आये; कुछ दिनों तक मुहब्बत के मारे कुछ खर्च भेजा और फिर बन्द कर दिया! ऐसी अनाथ स्त्रियों की क्या दशा होती होगी, उसे पाठक स्वयं विचार सकते हैं।

भारत की ऊपर बतलाई हुई कई लाख वेश्याएँ कौन हैं? हम भारत-वासियों के घरों की विधवाएँ, हमारी ही बहिनें और बेटियाँ या उनकी संतति। हमारी ही असावधानी, निर्दयता और निष्ठुरता के कारण उनकी यह दशा हुई है।

१. रामकली, विन्ध्याचल—'मैं क्षत्राणी हूँ। बाल-विधवा हूँ। मेरे भाई दर्शन कराने के हीले से मुझे छोड़ गये। उनके इस तरह मुझे त्याग देने का कारण मैं समझ गई, इसलिए मैंने कभी पत्र नहीं भेजा और न लौटने की चेष्टा की। अब भीख माँगकर अपना गुज़र करती हूँ। मैं सर्वथा असहाय हूँ और कोई जरिया पेट पालने का नहीं है। उमर बीस-इक्कीस वर्ष की है। यहाँ मुझ-सी अभागिनें आठ-नौ स्त्रियाँ और हैं। उनका चरित्र ठीक नहीं है।

२. लछमी, वृन्दावन—'मैं ब्राह्मण हूँ। मेरी सास आदि कई स्त्रियाँ मुझे यहाँ छोड़कर चल दीं। पत्र भेजने पर उत्तर मिला कि अपने कारनामे स्मरण करो, यहाँ लौटकर क्या मुँह दिखाओगी! वहीं जमुना में डूब मरो। मेरी मा नहीं है। पिता ने मेरे पत्र का कभी उत्तर नहीं दिया।'

३. श्यामा, हरिद्वार—'मेरे पिता मुझे यहाँ छोड़ गये हैं।'

४. रामदुलारी, गया—'मेरे ससुराल के लोग बड़े धनी हैं। यहाँ मुझे पुरोहितजी

छोड़ गये हैं। कुछ दिनों तक पाँच रुपया मासिक आता रहा, अब कोई खबर नहीं लेता। पत्रोत्तर भी नहीं आता।'

५. नलिनी और सरोजिनी, काशी—'हम दोनों अभागिनें बंगाल की रहनेवाली हैं। हम दोनों का एक ही घर में विवाह हुआ था। नलिनी विधवा हो गई। मेरे पति मुझे, एक लड़की होने पर वैराग्य लेकर चल दिये। मेरे ससुरजी पन्द्रह रुपये मासिक पेंशन पाते थे। काशीवास करने यहाँ आये और हम दोनों को साथ लाये। तीन महीने के बाद मर गये। एक परिचित बंगाली महाशय सहायता देने के बहाने से मिले और एक दिन हम दोनों का कुल ज़ेवर चुरा ले गये। फिर इसी से लगी हुई पुलीस की एक घटना से बलपूर्वक हम अनाथाओं का सर्वनाश किया गया और हमें इस दीन-हीन दशा को पहुँचाया गया। एक सौ बीस रुपया कर्ज़ हो गया है। इस पुत्री के सयानी होने पर, इसी को बेचकर अथवा वेश्या बनाकर कर्ज़ अदा करूँगी।'

× × ×

'देशदर्शन' ग्रन्थ से उद्धृत इन अंशों को पढ़कर पाठकों का यह भ्रमपूर्ण विश्वास कि हमारे देश में वेश्यावृत्ति की समस्या शायद वैसी नहीं है, जैसी कि यूरोपीय देशों में है, बहुत कुछ दूर हो जाना चाहिए। उपर्युक्त ग्रन्थ के आँकड़े सन् १९११ ई० की मर्दुमशुमारी से लिये गये थे। उसके बाद बड़ा ज़माना गुज़र चुका है। इस बीच में हमारे युग की यांत्रिक और बाज़ारू सभ्यता ने और क्या-क्या गुल खिलाये हैं, कितनी गन्दगी गंगा के अथाह जल में मिल चुकी है, उसके आँकड़े मेरे पास इस समय नहीं हैं, जो मैं पाठकों के सामने रख सकूँ। उन आँकड़ों को एकत्र करना और इस पुस्तक के कलेवर में भरना, इस पुस्तक के अनुवाद को हिन्दी भाषा-भाषी जनता के सामने रखते समय हमारा उद्देश्य भी नहीं है। केवल उन महाशयों का भ्रम दूर करने के लिए, जो अलेक्जेण्डर कुप्रिन के इस महान् उपन्यास को पढ़कर ...पवश अथवा अनजाने अपने मन की गन्दगी का पर्दा फाश न हो जाने के डर से, ...-भौं सिकोड़कर यह कहने लगते हैं कि, 'यह उपन्यास गन्दा है अथवा लोगों में ...ी फैलानेवाला है। भारतवर्ष में वेश्यावृत्ति की समस्या वैसी ही नहीं है, जैसी ...ीय देशों में, इत्यादि-इत्यादि', मैंने एक भारतीय ग्रन्थ से कुछ ऐसे अंश लेकर ... सामने रखने की चेष्टा की है जिससे भारत में वेश्यावृत्ति की समस्या के कुछ ... सामने आ जाते हैं।

ऊपर उद्धृत 'देश-दर्शन' के अंशों में सन १९११ ई० की मर्दुमशुमारी की बुनियाद पर केवल कलकत्ते में वेश्यावृत्ति के आँकड़े दिये गये हैं। मेरा ख़्याल है कि उसके बाद सन १९२१ ई० और १९३१ ई० में जो दो मर्दुमशुमारियाँ हुई हैं, उनमें कलकत्ते में वेश्यावृत्ति और भी बढ़ गई होगी; क्योंकि दिन-पर-दिन एक तरफ़ ग़रीबी की खाई जैसी गहरी होती जाती है, उसी तरह दूसरी तरफ़ दौलत के ढेर ऊँचे होते जाते हैं। जिनको इस विषय में अधिक विस्तार से ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हो, वे इन मर्दमशुमारियों की रिपोर्टों से खोज कर सकते हैं। हमारा उद्देश्य तो एलेक्जेन्डर कुप्रिन का महान् उपन्यास हिन्दी-भाषा-भाषियों के आगे रखने में इतना ही है कि उनका ध्यान मनुष्य-समाज के इस अत्यन्त अधम रोग की तरफ खिंचे और वे उसके वास्तविक स्वरूप को समझें और इस भ्रम में रहकर कि भारतवर्ष में वेश्यावृत्ति की समस्या एसी नहीं है, बालू में शुतरमुर्ग की तरह सिर घुसेड़े न बैठे रहें। भारतवर्ष में वेश्यावृत्ति की समस्या ऐसी ही है जैसी कि एलेक्जेन्डर कुप्रिन ने अपने अमर उपन्यास में दिखाई है—बल्कि शायद उससे भी कहीं गई-गुजरी है। एलेक्जेन्डर कुप्रिन ने अपने उपन्यास में यूरोपीय वेश्यावृत्ति के लगभग सारे पहलू और चित्र हमारे सामने रख दिये हैं, परन्तु उसके इस हृदय-विदारक उपन्यास में भी कहीं दस वर्ष की उम्र की वेश्याओं का ज़िक्र नहीं आता है। शायद इतनी कम उम्र की वेश्याएँ यूरोप में न होती हों। काफ़ी कम उम्र की वेश्याएँ यूरोप में होती हैं, जिनका ज़िक्र कुप्रिन करता है कि कम उम्र की लड़कियों का सतीत्व भङ्ग करके उन्हें वेश्यावृत्ति की तरफ़ ढकेल दिया जाता है, परन्तु दस वर्ष से कम उम्र की बच्चियों को पुरुषों से समागम के लिए कृत्रिम उपायों से तैयार शायद ऋषि-मुनियों के इस पवित्र भारतवर्ष में ही किया जाता है, जहाँ के साहित्य में महाकवि वयःसन्धि की बच्चियों से प्रेम के लिए आहें भरते हैं, जहाँ रजस्वला पुत्री को अविवाहित रखने से पिता घोर नरक में चला जाता है है। वह यह भी लिखता और जहाँ लड़कियों के विवाह की उम्र कम से क चौदह वर्ष से अधिक करने का घोर विरोध देश के धुरन्धर धार्मिक नेता करते हैं! कानूनन दस वर्ष से कम उम्र की वेश्याओं का कलकत्ते में होना, कि सन् १९११ की मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट में ज़िक्र है, भारतवर्ष के माथे पर ऐसी अधमता की छाप लगाता है, जो संसार में, उसका मुँह उससे भी कहीं काला बनाती है जो कि उसके अछूतों के प्रति व्यवहार से है। हम

कि यूरोप में इतनी कम उम्र की वेश्याएँ अवश्य न होती होंगी, वरना कुप्रिन जैसा सत्य का पुजारी उनका ज़िक्र अपने उपन्यास में करते कभी न चूकता। दस वर्ष से कम उम्र की वेश्याओं का इस देश में होना ही उन महानुभावों का मुँह बन्द कर देने के लिए काफ़ी है, जो इस ख़याल से कुप्रिन के इस उपन्यास के अध्ययन के विरोधी हैं कि भारतवर्ष में वेश्यावृत्ति की समस्या उतनी बुरी नहीं है जितनी कि यूरोप में।

परन्तु यह एक बात उनके सामने रखकर ही हम उनका मुँह बन्द करने का प्रयत्न नहीं करेंगे। हम उनकी और भी शङ्काओं का सामाधान करना चाहते हैं। कुप्रिन अपने उपन्यास में दिखलाने का प्रयत्न करता है कि यूरोप में वेश्याएँ निम्न प्रकारों से बनती हैः—

१—कुछ मालिक अपने घर की नौकरानियों को ग़रीबी का फायदा उठाकर उनका सतीत्व भङ्ग करते हैं और उन्हें वेश्यावृत्ति की तरफ़ ढकेल देते हैं।

२—कुछ ग़रीब माता-पिता अपना और अपने आश्रितों का पेट भरने के लिए अपनी अबोध लड़कियों को वेश्यावृत्ति सिखाकर उन्हें सदा के लिए इस नरक में डाल देते हैं, जिससे उन्हें फिर निकलना असम्भव हो जाता है।

३—कुछ बदमाश लोग अबोध ग़रीब लड़कियों को लालच देकर भगालाते हैं अथवा अनाथ और निस्सहाय लड़कियों को फाँस लेते हैं और उन्हें वेश्याओं के हाथ बेच देते हैं, जो उनके द्वारा रुपया कमाती हैं।

४—कुछ आश्रमों में रहनेवाली छोकरियों को आश्रमवाले भ्रष्ट करके वेश्यावृत्ति सिखा देते हैं, इत्यादि।

क्या 'देशदर्शन' से उद्धृत अंशों को पढ़ने के बाद भी इससे कोई इनकार कर सकता है कि भारतवर्ष में भी वेश्याएँ इन्हीं कारणों से बनती हैं? भारतवर्ष में तो इन कारणों में एक-दो और भी भयङ्कर कारण वेश्या बनने के, जोड़े जा सकते हैं। भारतवर्ष में एक बहुत बड़ी तादाद बाल-विधवाओं की है, जिनके पुनर्विवाह के विरुद्ध आम तौर पर लोग रहते हैं। जिस कामदेव से सफलता-पूर्वक युद्ध करने के लिए के दो भगवान् को शक्ति और तपस्या की ज़रूरत होती है, उससे मुकाबला करने के बैठो दी यह बेचारी अबोध छोकरियाँ हमारे घरों में छोड़ दी जाती हैं। इस बेजोड़ युद्ध मे मिठाई-सी बालिकाएँ असफल होती हैं। उनके गर्भ रह जाने पर उन्हें जात-पाँत

और घर से निकाल दिया जाता है, जिससे वेश्यावृत्ति के सिवाय उनके पास प्रायः और कोई चारा नहीं रह जाता। कोई हुनर या कोई शिक्षा उनके पास ऐसी नहीं होती जिससे वे अपना पेट पाल सकें और इस अधम धन्धे की शरण न लें। हमारे देश में स्त्रियों को केवल एक ही धन्धा सिखाया जाता है—किस तरह पुरुष को ख़ुश करना चाहिए—अतएव जब कोई पुरुष उन्हें अपना नहीं बनाये रखता तो वे बेचारी अपना पेट, जो पुरुष मिले, उसी को ख़ुश करके, भरा करती हैं। कहिए ऐसा करने के लिए दोषी हम और हमारा समाज है, जिन्होंने उन्हें ऐसी अबला बनाकर रखा है, अथवा वे बेचारी अबला और असहाय स्त्रियाँ हैं? आप ही इसका उत्तर दीजिए। पुरुष जो स्वय महापुरुष ईश्वर का अङ्ग माना जाता है, एक पत्नी के मरने पर दूसरा विवाह कर लेता है और स्त्री से, जो चचल प्रकृति का अङ्ग मानी जाती है, शङ्कर भगवान् के समान अटल रहने की आशा की जाती है और अगर वह उसमें असफल हो जाती है तो उसका ऐसा कठिन बहिष्कार किया जाता है कि बेचारी के पास वेश्यावृत्ति के सिवाय और कोई उपाय नहीं रह जाता! वाह री हमारी बुद्धि और वाह री हमारी सभ्यता!

हमको इसमें सन्देह नहीं है कि भारतवर्ष में भी वेश्यावृत्ति की समस्या उतनी ही भयङ्कर है, जितनी कि यूरोप में, जिसका चित्रण कुप्रिन अपने इस उपन्यास में करता है; बल्कि भारतवर्ष में उससे भी कहीं गई-गुजरी है। हम लोग अपनी गन्दगी को लुकाते, छिपाते और गाड़ते हैं जिससे वह अन्धकार में और भी सड़ती, गलती और रोग को बढ़ाती है। जब कि यूरोप में स्वतन्त्र और साहसी विचारों के लोग अपनी सामाजिक गन्दगी को प्रकाश में लाते हैं, जिससे कि धूप में तपाने से उसके सूखकर नष्ट हो जाने की सम्भावना रहती है। 'देश-दर्शन' से उद्धृत ऊपर के अंशों से हमें अपनी गन्दगी का कुछ पता चलता है, जो हमें हमारी गाढ़ी निद्रा से जगा देने के लिए काफ़ी है। कलकत्ते के जैसे दृश्य, लेखक ने 'देश-दर्शन' में दिये हैं, वैसे ही इस देश के दूसरे शहरों में भी मिलते हैं। सुना जाता है कि बम्बई में विरले ही ऐसे बड़े आदमी हैं, जिनका किसी वेश्या से सम्बन्ध न हो। अहमदाबाद से शनिवार की रात को बम्बई के लिए जो रेलगाड़ी चलती है, उसमें काफ़ी संख्या अमीरों की होती है जो हर रविवार को बम्बई में जाकर अपने मन की प्यास हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो प्रायः बम्बई से यूरोप हर साल इसी काम के लिए ज

बहुत-से लोग बम्बई से गोआ भी इसी लिए जाते हैं। जिनके पास रुपया है, वे रुपये के बल से दुनियाभर की स्त्रियों को अपनाने का प्रयत्न करते घूमते हैं और क़ानून उनका इस अधमता में साथ देता है। एक छोर पर ऐसे रुपयेवाले व्यभिचारी हैं और दूसरे छोर पर ग़रीबी इतनी है कि पेट भरने के लिए व्यभिचार के सिवाय और कोई चारा नहीं रहता। फिर भला बताइए वेश्यावृत्ति कैसे बन्द हो? कुप्रिन अपने उपन्यास में यही दिखाने का प्रयत्न करता है कि वेश्यावृत्ति को आम तौर पर ऐसी ही स्त्रियाँ अपनाती हैं, जो समाज और कुटुम्ब से बहिष्कृत अथवा अज्ञानी होती हैं और जो अपना पेट किसी और धन्धे से पालने में सर्वथा असमर्थ होती हैं। कोई स्त्री ख़ुशी से वेश्यावृत्ति करना नहीं चाहती। अज्ञान, निस्सहायता और पेट की भूख उसे इस अधम धन्धे की तरफ खींचती है, जिसे रुपयेवाले व्यभिचारी पुरुषों ने समाज में क़ायम रखा है।

दिन पर दिन हमारे देश में ग़रीबी के साथ-साथ वेश्यावृत्ति भी बढ़ती जा रही है। बम्बई शहर की क़रीब सोलह लाख की आबादी में, कहा जाता है, आधी संख्या ऐसे लोगों की रहती है जो धन कमाने के लालच से बम्बई में रहते हैं, परन्तु अपने बाल-बच्चों और कुटुम्ब को, काफ़ी रुपया पास न होने से साथ नहीं रख सकते। यह साधारण कोटि के लोग ब्रह्मचर्यव्रत से रहने के आदी नहीं होते। घर-बार, नातेदारों-रिश्तेदारों से दूर, एक ऐसे शहर में होने से, जहाँ एक पड़ोसी दूसरे का नाम, ग्राम, और काम कुछ नहीं जानता, उनकी हया-शर्म जिससे साधारण लोगों की बहुत-सी कुप्रवृत्तियाँ दबी रहती हैं, छूट जाती है। रुपया भी कमाते ही हैं, अतएव भूखे जानवरों की तरह वेश्याओं के द्वार जा-जाकर खटखटाते हैं। धन का जो अभाव स्त्रियों को वेश्याएँ बनाता है, वही इन पुरुषों को, जो अपने गाँव और क़स्बों में सच्चरित्र किसान और सद्गृहस्थ कारीगर होकर रह सकते थे, बम्बई में घर-गृहस्थी से दूर रखकर वेश्यागामी बनाता है। भायखल्लाब्रिज से कालबादेवी जानेवाली ट्रामगाड़ी के ऊपरी दर्जे में, शाम को खिड़की के पास बैठ जाइए। आपकी गाड़ी एक ऐसे स्थान में होकर गुजरेगी, जहाँ आपको इधर-उधर मुँह उठाकर देखने में शर्म आयेगी। सड़क के दोनों ओर गन्दे कमरों की लम्बी क़तारों में, दर्बों में कबूतरों की तरह, वेश्याएँ बैठी दीखती हैं, जिनसे खुले आम सड़क पर खड़े हुए लोग भाव-ताव करते हैं, मानों वे मिठाई या तरकारी खरीद रहे हों। लाहौर में एक मुहल्ले में से गुज़रते हुए कई

मकानों की खिड़कियों और द्वारों के सामने शाम को बड़े जमघट खड़े देखे। साथ के मित्र से पूछने पर ज्ञात हुआ कि वे वेश्याओं के मकान थे और सामने उम्मीदवारों की भीड़ें खड़ी थीं। न मालूम बेचारी एक-एक अभागी वेश्या को एक रात में कितने उम्मीदवारों की उम्मीदें पूरी करनी पड़ती होंगी। रावी नदी पर नाव में सैर करने गये तो पास से एक नाव गुजरी जिसमें दो आदमी और एक स्त्री थी। स्त्री बेहयाई से खुले आम एक आदमी की गोद में लेटी थी जो उसे प्यार कर रहा था। लाहौर के इन नज़ारों से घबराकर पूछा तो पता चला कि दिन पर दिन वहाँ इस बेहयाई का नङ्गा नाच बढ़ता ही जाता है। सड़कों पर से परदे पड़े हुए ताँगे गुजरते हैं ताँगेवालों से लोग खुले आम चिल्लाकर पूछते हैं, 'ताँगा ख़ाली है?' ताँगावाल कहता है 'जी'। इस साङ्केतिक प्रश्नोत्तर का अर्थ यह हुआ कि ताँगे में वेश्या है, जिसे पूछनेवाला पा सकता है। यहाँ तक सुना जाता है कि कालिजों के प्रोफेसर और विद्यार्थियों में वेश्याओं के ग्राहक बहुत बढ़ते जा रहे हैं। लाहौर के कालिजों के विद्यार्थियों की बेहयाई की वहाँ के सद्गृहस्थ यह तो आम शिकायत करते ही हैं कि उनके पास से पार्कों में बहू-बेटियों का साथ लेकर गुज़रना अथवा सिनेमाओं में बैठना वहाँ असम्भव हो गया है। वहीं क्या, विद्यार्थियों की इस प्रकार की बेहयाई और भी शहरों में बढ़ती देखी जा रही है। बनारस की एक वेश्या ने एक मुक़दमे में अपना बयान देते हुए, कुछ वर्ष हुए, कई प्रोफ़ेसरों और कालिज के विद्यार्थियों के नाम अपने ग्राहकों में दिये थे। कुछ दिन बाद वह एक कालिज के विद्यार्थी के साथ अपनी खाला से पीछा छुड़ाकर भाग भी गई। फिर भी न जाने उसका परिणाम वही हुआ जो कुप्रिन के इस उपन्यास में लिखोनिन के साथ भागनेवाली बेचारी लियूब का हुआ, अथवा और कुछ! कुछ भी हो, हमने जो थोड़ी बहुत खोज की है, उससे तो यही पता चलता है कि भारत में भी वेश्यावृत्ति की बिलकुल वैसी ही समस्या है, जैसी कुप्रिन ने अपने इस उपन्यास में दिखाई है। केवल एक बात का जिसका ज़िक्र हमने प्रस्तावना में किया है, हमें सन्देह हुआ था। कुप्रिन अपने उपन्यास में एक स्थान पर एक वेश्या के मुँह से एक स्त्री से कहलाया है कि भाई बहिनों को और पिता पुत्रियों तक को भ्रष्ट करते हैं। मैंने सोचा कुप्रिन महाशय अपने प्रचार में हद से गुज़र गये हैं, परन्तु फिर याद आया कि कुछ और रूसी यथार्थवादी उपन्यासों में भी पशुवत् मूर्ख किसान पिताओं ने अपनी पुत्रियों को भ्रष्ट कर डालने के